

शरत्चन्द्र
व्यक्ति और साहित्यकार

शरत्चन्द्र :
व्यक्ति और साहित्यकार

समयनाथ गुप्त

नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली

शरत्चन्द्र :
व्यक्ति और साहित्यकार

मन्मथनाथ गुप्त

नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली

मेसलस पब्लिशिंग हाउस

२६ ए, पन्डालाज अबाहर नगर दिस्ती

बिबीकेन्द्र मई सडक दिस्ती

प्रथम स्तीकरण

दिसम्बर १९६३

मुख्य

६

मुद्रक

भारत मुद्रणालय (पब्लि०)

टाहदरा दिस्ती-३२

भूमिका

बहुत दिन पहले मैं अंग्रेजों पर एक पुस्तक लिखी थी पर इस बीच अंग्रेजों की बीबनी पर बहुत नव उपकरण उपलब्ध हुए हैं साथ ही राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय क्षमताओं तक साहित्य का प्रचार भी अधिक हुआ है। यह कहा जा सकता है कि अब पर उनका काम उनका साहित्य का धौर भी अधिक समझने का मौका मिला है। यह सुनिश्चित है कि अंग्रेजों का स्वागत कथाकार के रूप में वास्तविक के उन बहुत से बड़े महारथियों में आता है जिन्होंने समय-समय पर मोहन पुरस्कार में सम्मानित किया गया है। उनकी कला के सम्बन्ध में इस पुस्तक में विस्तार के साथ चर्चा करना ही मर्त है। इनलिखे इस सम्बन्ध में यहाँ कुछ नहीं कहा जायगा।

यहाँ सबसे एक बात की धौर दृष्टि व्यक्त करना चाहूँगा कि अंग्रेजों की अतिशयता को देखकर हिन्दी में जो देखा जा उनका साहित्य का अनुवाद कर रखा है एक तरह जहाँ इस पर लुमी मनात की बात है। दूसरी तरह धरिया अनुवादों में उनकी कला का समझने में धौर उनका मुख्य काम करने में दिक्कत हो सकती है। इनलिखे पाठकों में धनुराव है कि अंग्रेजों का या तो मूल बचना में पर या अथवा अनुवादों में हा परे। धरिया साहित्य अकादमी का ध्यान अंग्रेजों की धार नहीं गया है। धरिया इस लिखे कि उनका यों ही बहुत प्रचार है पर उनकी रचनाओं के प्रामाणिक धौर सुन्दर अनुवाद करने का काम अभी ही मस्त्राओं का धरने ऊपर बना चाहिए। अथवा धरिया पुस्तकों के महत्त्व मध्यम दर्जे के कुछ मन्त्रों को सुदगुहा देने के लिए लेख भाषाओं में अनुवाद करने की बजाय राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय महत्त्व के भारतीय लेखकों की रचनाओं का

मातृभाषापर मायाघा मे प्रामाणिक अनुवाद कराना चाहिये ।

सरस्वती की इच्छा थी कि उनकी रचनाओं का योरोपीय भाषाओं में अनुवाद हो गा प्रौढों और बच्ची में उनकी कुछ रचनाओं क अनुवाद हो चके हैं । हन यह स्मरण रखना चाहिये कि सरस्वती-साहित्य को राष्ट्रीय तथा धर्मराष्ट्रीय धर्म में ध्यान बढ़ाने क लिए धार्मिकनिराकरण की तरह एक पूरी मस्या तथा कृतबिद्य शिष्यमण्डली नहीं है । फिर भी सरस्वती का प्रचार भारत क घर-घर मे है । उनका पाठक-समाज न गीबा सम्बन्ध स्थापित हुआ । सब कुछ कइ-मुक्त होने पर भी यह निश्चित है कि अब तक क भारतीय-साहित्य मे उपग्यामकार के रूप में सरस्वती का स्थान ही अत्यन्त श्रेष्ठ है । आशा है इस पुस्तक में सरस्वती-साहित्य को समझने में सहायता मिलेगी ।

इधर हि बी क कुछ नये लम्बको न यह जो प्रचारकार्य हुआ चिन्या है कि सरस्वती-श्रीमच्छन्द बानी पढ गए हैं और इस प्रकार अपने मेंडकी पैरा का ध्यान बढ़ाकर नात अड़बाग की इच्छा दिवाकर अपने का पग प्रबलन बनाना चाहा है बड़ हास्यास्पद है । नये तो धाग धाएंम और बुर की नई-नई कौडिया साएगे भी पर जैसे जायस और इतियत क ध्यान से एकमपियत का कुछ नहीं बिगडेगा बल्कि उन पर नई रोगनी पडी उसी प्रकार सरस्वती का कुछ नहीं बिगडेगा । सब तो यह है कि 'सेप प्रबल में सरस्वती नये लम्बकों क कलाभने संसार का बहुत कुछ परिषय करा गए हैं ।

धर्म में एक बात और । इधर सरस्वती बोधनी पर कई समसनीमुखक लक्ष्य सामन साए जा रह है । सायब साहित्य का दृष्टि में कम और मत समनीबाह की दृष्टि में धार्मिक । जब सरस्वती स्वय ही बता गए कि वह कभी 'धारावी-कबाडी ध मो फिर नस दिशा में धार्मिक बिष्ठा गटागत ना बया धर्म है ? वह मे कम इसमे साहित्य का कोई प्रयाजन नो गिऊ न जामा गया मेरा बिदबास है ।

क्रम

१ उपक्रमविज्ञा	१- -१
२ प्रारम्भिक जीवन	२- - ६
३ मफ़न साहित्यकार	६७- ८७
४ आधुनिक परतनु का विचल	८८-१०३
५ महात्रन्धान	१०६-१११
६ दारतु-साहित्य पर एक विह्यम दृष्टि	११-११
७ दारतु का कहानी-साहित्य	११४-१२२
८ दारतु क उपयाम चरित्रहीन हबशाम शामुनरमय पबग्दाशी थीकान भय प्रदन	१२२-२८०
९ दारतुचन्द्र की अन्तिम हृति 'जागरण	८१-३ -
१० साहित्य-मञ्जन पर दारतु क विचार	३ २-३१८
११ दा महाकवियों मे टकगब	३१६-३ ८
१२ अद्भुत अ्यकित्य	३०६- ४७



उपक्रमणिका

कहानी मूलन की इच्छा मनुष्य में घायल उठनी ही प्राचीन है जितनी उसमें बोलकर अपने भावों का दूसरों पर जाहिर करने की शक्ति बढ़ा-
 किन्तु यह उससे नी पुरानी हो। इसी इच्छा की पूर्ति के लिए अत्यन्त
 प्राचीन युग से ही पुगा गया इतिहास व्यक्त्यन्त जाहिर रख गये हैं।
 युग की रचि के अनुसार जो नाम जिस युग में प्रधान थे उन्हीं को लेकर
 उस युग में कहानों का ठानाबाना मूल जाता रहा। जिस युग में प्रकृति
 की अत्यन्त तथा अपरानन्द शक्ति का इस्तेमाल मनुष्य मय धारण्य तथा
 अपनी क्षमता के ज्ञान से विह्वल हो जाता था उस युग की कहानियों में
 बृह देव पिशाचों का प्रादुर्भाव था जब धम का बोसबासा हुआ तो
 पुण्य आदि के दृष्ट पर कहानियाँ बनी गईं इनमें से कुछ तो बिस्तुप्त
 ने जिसे स मड़ी गईं पर कुछ में कबल पुगनी कहानियों का युगानुसार
 नया संस्करण किया गया। ठीक उसी प्रकार अस यज्ञियों की कहानियों
 को ईसाईयों ने तथा ईसाइयों की कहानियों को मुसलमानों ने नया रूप
 दे दिया। चाहे घोस की पौराणिक कहानियों को पड़िय चाहे भारत की
 (और इन्हीं दो स्थाओं के पुराने सबसे अधिक विचित्र तथा विचित्र
 हैं यूसी ईसाई तथा मुस्लिम पुगनों में तो कोई दिव्यत्व या रोमांच-
 काठी बात ही ही नहीं) घाप हलेंगे कि ये दबता तथा देवियाँ प्रति
 मानव (Supermen) तथा प्रतिमानवियाँ नयी प्रकार के श्रेम करती
 हैं विश्व में उससे मग्नी हैं प्रतिद्वन्द्वी को दण्डकर जसती हैं
 उसके विरुद्ध पर्यन्त करती हैं नूत बोलती हैं जिस प्रकार मर्यसोक
 के रहन नाम मनुष्य। दबता या बीर नी अपनी श्रियतमा की शृंगु पर
 नाम गोंचकर राते हैं फिर कुछ दिनों बाद सब भूल जात हैं और दूसरी

सुन्दरी से घपना बिल मगाते हैं। हवाहूँ बीसे ही बीसे हम घास-भास के भासो को करते बेसठ है या बीसा हम स्वयं करते हैं। तमी तो ये देवता तथा देवियाँ हमार अन्दर दीर्घजीवी हो सकी हैं। धीर तब तक जीती रहेगी जब तक उनका मनुष्योचित आवेदन (human appeal) मौजूद रहेगा चाहे बर्म रहे या न रहे। रोम तथा एबन्स में इस समय रोमन या ग्रीक पुराण को धर्म के धर्म के रूप में मानने वाले कोई भी नहीं हैं। फिर भी जुपिटर मिनर्वा और पाडास की कहानियाँ समी पढ़ते हैं। इसका कारण वही मनुष्योचित आवेदन है। अस्तु।

पर देवता आकर देवता ही थे उनकी कहानियों को एक हृद तक ही ल जाया जा सकता था। नब-नय बलक एक बायरे के अन्तर ही इन कहानियों को सोड़-मरोड़कर अपनी कल्पना के बोड़े बीड़ा सकते थे। बली मायाघा की बातें जान बी जायें तो इसी नब-नय डङ्ग से कहानी का कहने की प्रवृत्ति के कारण संस्कृत में ही रामायण आदि धर्मग्रन्थों के कई कई संस्करण हुए। इन संस्करणों में केवल बर्षन-सँधी ही मिल नही थी बल्कि छोटी-मोटी घटनाओं में भी अनेक अन्तर थे। मुख्य घटनाओं में अन्तर हो ही कैसे सकता था? उस अमाने का समाज धार्मिक रय म रेंया था इसलिये वह कहानी के अन्त में भी एक सीमा तक ही अहंकाया जा सकता था। वह घपने बीरो को हम प्रकार बरसते बेसना न तो पगन्द ही करता था न बर्बास्त ही पर सकता था अतएव कहानी मन्त्रकों का घब दूसरा रास्ता बेचना पड़ा।

इस प्रकार कहानी घब नूत प्रैत पिघाब धीर बेवताओं के स्वयं मरक न उतरकर मन्त्रसोक के साधारण मनुष्यों में उतर आई, किन्तु फिर भी वह मन्त्रसोक की न हो सकी। बेसकों की घारत कैसे जाती? इनका मनुष्य हमे धर्मिअर्त्तसा बोवनाधिया तथा उस मुय के उपन्यासों म मिलना है। ये रचनाएँ मनुष्यों को संकर ही लिपी गई थी किन्तु ये मनुष्य थे मनुष्य नहीं थे जिन्हें उनके पाठक बेसते थे। धर्मिअर्त्तसा में

है कि पौराणिक कथा-साहित्य के बाद ऐसे काव्य महाकाव्य तथा नाटका की उत्पत्ति हुई, जिनमें मनुष्य मुख्य वे और अन्य योनियों के लोग गौण वे फिर भी वे मनुष्य साधारण मनुष्य न होकर कवियों की कल्पना-जयत् के मनुष्य थे।

हिल्ली बेंगसा आदि भाषाओं की उत्पत्ति उस युग में हुई जब संस्कृत साहित्य में इसी प्रवृत्ति का प्रसार था। अत उत्तराधिकार-युग से इन साहित्यों में भी इसी प्रवृत्ति का संचार हुआ। साथ ही साथ संस्कृत साहित्य में जो प्रवृत्ति अब अप्रचलित-सी हो जाती थी प्राचीन पौराणिक भाषा पर कहानी-संछन की प्रवृत्ति उनका भी इन भाषाओं में प्रचलन हुआ। पुराणों की कहानियों को लेकर प्राकृत भाषाओं में बड़ा-बड़ा ग्रन्थ काव्य तथा महाकाव्य लिखे जाने लगे। बेंगसा आदि के मजक अन्तर संस्कृत से घनमिश्र थे इसलिये उन्होंने जनश्रुति पर निर्भर रहकर या दूसरों से सुनकर जो कुछ मिला उसमें और संस्कृत के मौखिक कथा नाम में बहुत अन्तर पड़ गया। उन लक्षकों को जहाँ मान्य नहीं था वहाँ उन्होंने कल्पना से नाम लिया कुछ लोगों ने संस्कृत जानते हुए भी अपने पाठकों की बदली हुई रसिके अनुसार कथानाम में परिवर्तन कर लिया जैसे तुमसीदास ने बास्मीकि के धामिपासी धीरामचन्द्र को पक्का निरामिपमोत्री बना दिया प्राचीन देव-देवियों तथा बीरों के साथ स्पानीय देव-देवियाँ भी आ गई, उनका एक होना बतलाया गया पर इन सबका नतीजा और जो कुछ भी हो साहित्य के लिए अच्छा ही हुआ। इस साहित्य के मुकुट में हम सब काम को अधिक अच्छी तरह प्रतिदर्शित पाते हैं। कृतिदास की रामायण को लिया जाय या तुमसीदास की रामायण को तो हम इनमें प्रागैतिहासिक युग की अयोध्यापुरी का चित्र न पाकर सामयिक अयोध्या या अयोध्या-काशी का चित्र पाते हैं। हमारे वर्तमान विषय से बाहर होना के कारण कवन मूलरूप से इस टुकड़े और यह याद दिलाकर कि मेरेक कल्पना-जयत् में भी अपने समय से बाहर नहीं जा सकता हम आशय बढ़ जाते हैं।

ब्रह्म प्रवेश भारतवर्ष में आये उस समय मोटे-तीर पर हमारे साहित्य में मही सब बातें हो रही थीं तथा इन्हीं का युग था। मजे की बात है कि बंगाल तथा हिन्दी साहित्य का यह काल कई सदियों तक स्थायी रहा। पहले-पहल इस युग का प्रादुर्भाव होने पर इन भाषाओं में कुछ प्रथमे मौखिक साहित्य का सूचन हुआ पर बाद का सफ़ीर की ऊकीरी तथा स्वास्थ्यकर कल्पनारूपी रक्त के प्रभाव के कारण साहित्य में प्रभाव डला था। मुस्लिम शासकों के साथ ही अरबी तथा फ़ारसी साहित्य के साथ संस्पर्ध क्रियम होने के कारण भारतीय साहित्य में एक स्फूर्ति-सी आ गई थी। किन्तु इन साहित्यों में स्वयं रक्ताल्पता था जाने के कारण यह भाषान-श्रदान का प्रवाह क्रियम न रह सका। साहित्य में कुछ विस्तार प्रभव हुआ पर उसमें न तो कोई नया कस्ता ही फूटा न कोई मौखिक परिवर्तन ही हुआ। नवानुगतिकता का ही दीरवीर रहा। कुछ हसन्न पैदा हुई, पर रक्त का स्पर्धन नहीं। हमारे इस युग का साहित्य इस युग की राजनीति की तरह एक प्रबन्ध (stagnant) वस्तु थी। राष्ट्र की या जनता की आत्मा के साथ इस साहित्य की नाड़ी का सम्बन्ध नहीं था। वह तो दरबारों तथा उसके आस-पास के कुछ बड़े लोगों के विभाष की वस्तु थी।

हमारे इस समय के साहित्यों की दृष्टिता इसी से स्पष्ट हो आयी कि जिस समय भारतवर्ष में प्रवेश आये उस समय हमारे साहित्यों में कोई कहन प्रामक पद्य ही नहीं था। कहना न होना कि ऐसी प्रवस्था में जो कहानियाँ या उपख्यान मौखिक से से पद्य के रूप में ही थे। स्वामन-दिक रूप से वह एक stereotyped पुराने ढङ्ग की प्रस्तरीभूत बीज के रूप में थी जिसे हम आधुनिक प्रबन्ध में कहानी या उपख्यास नहीं कह सकते। समस्त यूरोप में troubadour तथा trovare (चारम) के युग का प्रवनाम होकर सुन्दर पद्य-नेतकों का बोसबासा हो रहा था किन्तु बंगाल में अभी भारतचन्द्र और रामू राय का ही युग था। राष्ट्रोंके दर्जे का या सिर पर चढ़ाया हुआ glorified प्रसूत-मान था किन्तु भारतपत्र की

मापामयेयुग की भाषा की अग्रवृत्ती थी। उसे पढ़कर यह कहना कठिन न होता कि उसमें धाने बनकर रबीन्द्रनाथ या शरत्चन्द्र के भाषों के बाह्य के रूप में परिणत होने की सम्भावना निहित थी।

राजा राममोहन राय को ही हम आधुनिक बंगला गद्य के जनक मान सकते हैं। यद्यपि यह बात याद रहे कि बंगला की जो प्रथम गद्य पुस्तक मानी जाती है वह राममोहन की लिखी हुई नहीं बल्कि राम बसु का सिद्धा ह्युषा 'प्रथापादित्य-चरित्र' था। राजा राममोहन राय का जन्म कुछ लोगों के मत से १७७४ में ह्युषा कुछ लोगों के मत से १७८० में। प्रथापादित्य-चरित्र १८०१ में प्रकाशित हुआ था इस पुस्तक की पांडुलिपि का राममोहन राय ने कुछ तो किया था किन्तु उनकी लिखी कोई पुस्तक १८११ के पहले प्रकाशित नहीं हो पाई। राजा राममोहन ने अपने गद्य का प्रयोग सपत्न्यास लिखने में नहीं किया, बल्कि उसे अपने मठों के प्रचार का वाहन बनाया। उन्होंने कठोपनिषद् पथ्यप्रदान वेदान्त जैसी पुस्तकें लिखीं। नामों से ही पुस्तकों के विषय स्पष्ट हैं। राममोहन राय बंगला गद्य के जनक थे फिर भी श्री ईश्वरचन्द्र विद्यासागर को ही यह श्रेय प्राप्त हुआ कि उन्होंने उसे पढ़ने योग्य बनाया। बंगला साहित्य में उनकी बाल बढ़ा ही महत्त्वपूर्ण है। संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् होते हुए भी विद्यासागर ने बंगला को सुन्दर तथा सुसमित बनाया। पाठ्य पुस्तकों में ही अक्सर लोमो का विद्यासागर से परिचय होता है और वह परिचय बही समाप्त होता है। इसीसे धामतीर से लोगों की यह चारणा है कि उनका गद्य सुबोध तथा संस्कृतबहुल है पर यह बात सत्य है। कई जगह बन्धिम का गद्य उनसे नहीं कुछ है।

विद्यासागर ने कोई भी महत्त्वपूर्ण मौलिक पुस्तक नहीं लिखी। उन्होंने संस्कृत ग्रंथों की भाषाओं की पुस्तकों का बंगला में अनुवाद कर दिया पर इसमें संदेह नहीं कि उन्होंने बंगला गद्य को विस्तृततर भाषों का वाहन बनाया। जो कुछ भी हो जब हमारे यहाँ गद्य का जन्म ही हो रहा था तब यूरोप में बिक्टर ह्यूगो जैसे शक्तिशाली उपन्यासकार

बस धंधल भातवर्ष में घाये उधं-समय मोटे-तीर पर हूारे साहित्य मे यही सब बाते हो रहीं थीं तथा इन्हीं का मुन था। मजे की बात है कि बँगला तथा हिन्दी साहित्य का यह काल कई सदियों तक स्वायी रहा। पहले-पहल इस युग का प्रादुर्भाव होने पर इन भाषाओं में कुछ घञ्जे मौलिक साहित्य का सुजन हुषा पर बाह को मदीर की छकीरी तथा स्वास्थ्यकर कल्पनास्पी रक्त के घभाव के कारण साहित्य में घाव डटा था यई। मुस्लिम घासकों के घाव ही छरसी तथा घरबी साहित्य के घाय संसर्घ कायम होने के कारण भारतीय साहित्य में एक स्फुति-धी घा गई थी। किन्तु इन साहित्यों में स्वयं रक्ताल्पता घा जाने के कारण यह घावान-अवान का प्रवाह कायम न रह सका। साहित्य में कुछ बिस्तार घबस्य हुषा पर उसमें न तो कोई मया बस्ता ही फूटा न कोई मौलिक परिवर्तन ही हुषा। गठानुगतिक्ता का ही दीरधीर रहा। कुछ हलचल पैदा हुई, पर रक्त का स्पर्ग नहीं। हूारे इस युग का साहित्य इस युग की राजनीति की तरह एक घावड (stagnant) बस्तु थी। राष्ट्र की या जनता की आत्मा के साथ इस साहित्य की माड़ी का सम्बन्ध नहीं था। यह तो दरबारों तथा उसने भास-पास के कुछ बड़े मोपों के बिभास की बस्तु थी।

हूारे इस समय के साहित्यों की बखिता इसी से स्पष्ट हो आयी कि जिस समय भारतवर्ष में धंडेज घाये उस समय हूारे साहित्यों में कोई बहने मायक पछ ही नहीं था। कहना न होमा कि ऐसी प्रबस्था में जो कहानियाँ या उपाख्यान मौजूद थे वे पछ के रूप में ही थे। स्वाभाविक रूप से यह एक stereotyped पुराने ढङ्ग की प्रस्तरीभूत चीज के रूप में थी जिसे हम घाबुतिक घब में कहानी या उपमास नहीं कह सकते। समस्त यूरोप में troubadour तथा trovare (चारण) के युग का घवमान होकर मुन्दर गछ-नेलकों का बोसबाला हो रहा था किन्तु बंगाल में अभी भारतवर्ष और दाधू राय का ही युग था। बागूँके दर्जे का या गिर पर बड़ाया हुषा glorified घस्टैत-मात्र था किन्तु भारतवर्ष की

भाषामय युग की भाषा की अप्रवृत्ति थी। उसे पढ़कर यह कहना कठिन न हाता कि उसमें धामे बसकर रवीन्द्रनाथ या शारदाचन्द्र के भाषों के बाह्य के रूप में परिचित होने की संभावना निहित थी।

राजा राममोहन राय को ही हम धार्मिक बैंगला यद्य क जनक मान सकते हैं। यद्यपि यह बात याद रहे कि बैंगला की ओ प्रथम गद्य पुस्तक माने जाती है वह राममोहन की लिखी हुई नहीं बल्कि राम बसु का लिखा हुआ 'प्रतापारित्य-चरित्र' था। राजा राममोहन राय का जन्म कुछ मोर्षों के मत से १७७४ में हुआ कुछ लोगों के मत से १७८० में। प्रतापारित्य-चरित्र १८०१ में प्रकाशित हुआ था इस पुस्तक की पांडुलिपि को राममोहन राय ने छुड़ तो किया था किन्तु उनकी निजी कोई पुस्तक १८१५ के पहले प्रकाशित नहीं हो पाई। राजा राममोहन न अपने गद्य का प्रयोग सपग्यास लिखन में नहीं किया बल्कि उसे अपने मतों के प्रचार का वाहन बनाया। उन्होंने कठोपनिषद् पद्मप्रदान वेदान्त जैसी पुस्तकें लिखीं। नामों से ही पुस्तकों के विषय स्पष्ट हैं। राममोहन राय बैंगला यद्य क जनक के फिर भी श्री ईश्वरचन्द्र विद्यासागर को ही यह श्रेय प्राप्त हुआ कि उन्होंने उसे पढ़ने योग्य बनाया। बैंगला साहित्य में उनका शान बड़ा ही महत्त्वपूर्ण है। संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् होते हुए भी विद्यासागर ने बैंगला को सरस तथा सुलभित बनाया। पाठ्य पुस्तकों में ही अनेक लोगों का विद्यासागर से परिचय होता है और वह परिचय वहीं समाप्त होता है। इसलिये धामतीर से लोगों को वह धारणा है कि उनका गद्य दुर्बोध्य तथा संस्कृतबहुल है, पर यह बात गमत है। कई जगह बहिम का गद्य उनसे कहीं बुरा है।

विद्यासागर न कोई भी महत्त्वपूर्ण मौखिक पुस्तक नहीं लिखी। उन्होंने संस्कृत धर्मशास्त्रों की पुस्तकों का बैंगला में अनुवाद कर किया पर इसमें समझ नहीं कि उन्होंने बैंगला यद्य को विस्तृत भाषों का वाहन बनाया। जो कुछ भी हा अब इमार यहाँ यद्य का जन्म ही हो रहा था तब यूरोप में विकसित हुए ऐसे व्यक्तिगामी उपन्यासकार

की कला का चमत्कार जगजाहिर हो चुका था। उस समय तक यूरोप में उपन्यास एक सामाजिक प्राबल्यता के रूप में धनिबाप हो चुका था। फिनीबेर घोरेडा ने अपने *Romanoliers et viveurs* नामक ग्रंथ में लिखा है कि समय ज्यों-ज्या उन्नीसवीं सदी के मध्यभाग की ओर बढ़ रहा था त्यों-त्यों फ्रांस में उपन्यासों की तरक्की दिन दूनी रात चौधनी हो रही थी। स्त्रियों द्वारा से जर्जरितों बीमारों तथा मुसाफिरो के निकट उपन्यास एक प्राबल्यक वस्तु हो चुकी थी। डाक्टर बीमारी के बाव पथ्य रूप में लोगों को उपन्यास सेवन का पुस्तका देने लगे थे।

फिर भी यहाँ पर यह याद दिला देने की प्राबल्यता है कि यूरोप के जिन उपन्यासकारों का संस्पर्ध में बँगना साहित्य प्राया वे उन्नीसवीं के थे जिनको यूरोपीय भाषाओं में रोमांटिक कहते हैं। हिन्दी में इसका कोई प्रतिपादक न होने के कारण हम इसे रोमांचिक कहेंगे। वास्टर स्काट विकटर ह्यूगो पाक व वाक फस्टेड व विन्सि फ्लेक्सेडर बयुसा आदि सैरक इन्ही रोमांचिक कर्मी के उपन्यासकार व। इन उपन्यासों में साधारण को त्याग कर घसाधारण घटनाओं पर ही जोर डाला गया है। इन लोगों ने मर्मत्र मूल प्रेष्ठ विधाएँ आदि को अपने उपन्यासों का मुख्य या मौल पाव बनाकर अस्वाभाविकता की सृष्टि की है ऐसी बात नहीं पर व अपने कर्तव्यों को यदि अस्वाभाविक रूप में नहीं तो कम से कम रङ्गीन कदम के धन्दर से लेते हैं इसमें मन्वेह नहीं। फगस्वरूप व पात्रों तथा घटनाओं को जिन रङ्ग में रचकर हमारे सम्मुख उपस्थित करते हैं वह उन पर गिनता तो गूब है पर वह उनका स्वाभाविक रङ्ग नहीं है। इस कर्मी व मरगवान अविवाग एतिहासिक घटनाओं तथा पुरणों का निवर ही अपनी प्रतिभा की आजमाइश की। बात यह है कि ऐसी घटनाओं तथा पुरणों का इर्दगिर्द यों ही बहुत-सा रोमांच यानी रङ्गीन क्वास जमा है ऐसी अथम्मा में उनका उपनय बनाकर उपन्यास निर्माण करने में मरगव भायूरी कौतिल से ही अपना अमीष्ट रङ्गीन जगत् पाठना की प्रांग क नामने साइर उपस्थित कर सक्ता था पर रोमांचिक क्षेत्रको मैं हमेजा

इस सहज मार्ग को ही तरजीह दी हो ऐसा नहीं। कई बार उन्होंने ऐसा न करके धर्मतिहासिक पात्रों को ही अपनाया। समुद्रयात्रा की विपत्तियों को केन्द्र बनाकर तथा अंगसी महामखोर जातियों के बीच में पड़न के विषय को लेकर बहुत से रोमांचकारी उपन्यास लिखे गये। इन उपन्यासों का समाज से कोई सम्बन्ध नहीं था ऐसा नहीं कहा जा सकता। इस प्रकार के उपन्यास यूरोप के उदीयमान पूँजीवादी वर्ग की बाजार के लिए दुनिया की शक्ति छानने की बात को प्रतिप्रसिद्ध करते हैं। आज भी केवल भारत में ही नहीं यूरोप में भी ऐसे उपन्यासकार हैं जो वस्तुवादी होन का दावा करते हैं पर हैं वे रोमांचिक। स्मरण रहे हम इनमें उन उपन्यासकारों को नहीं गिन रहे हैं जो उस खेती के उपन्यासों को लिखते हैं जिन्हें जासूसी कहा जाता है। इसमें तो सन्देह नहीं कि जासूसी उपन्यासकार जमीन फोड़कर उद्भूत नहीं हुए हैं। सीबी गिनती में वे द्यूमा (Dumas) पास द काक तथा स्काट के ही उत्तराधिकारी हैं। पर यहाँ तो मरा मठ सब उन उपन्यासकारों से है, जो अपने कथानक को अक्षरों के पास फटकने भी नहीं देते फिर भी वे रोमांचिक ही हैं, वस्तुवादी तो उन्हें कदापि कहा ही नहीं जा सकता जैसे मरी कारेसी। जो कुछ भी हो यूरोप में समासिक युग का बहुत पहले ही अन्तगम होकर रोमांचिक युग का सूत्रपात हो चुका था पर भारतवर्ष में अभी वही युग आया इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं। ऊपर गिन पुस्तकों के नाम गिनाने पय हैं उनके लेखकों का अक्षर उद्देश्य पाठ्यार्थ सम्मता से अभिभूत चिन्तित बङ्गाल की व्यावृत्तियों तथा जलस-पुष्यम मन्थन वामे गयेपन का परिहास करना था। 'उनमें समसामयिक जीवन का कुछ अत्यन्त सजीव चित्र मौजूद हैं जिनको यदि बटोरा जाय तो सामाजिक इतिहास के लिखने के लिए कुछ बहुत ही उत्कृष्ट मसाला मिल सकता है। सत्य के प्रति अनिश्चय धडा का साप-छाप उनमें अतिशयोक्ति की धार रचि स्पष्ट है पर उनमें इसी व्यंग के साथ ममानाश्रर रेखा में कई संस्कृति को समझकर पुराने और नय की समन्वय केटा भी स्पष्ट है। इस गंभीरता के वातावरण का कारण इन

उपन्यासों में यत्रतत्र हितापवेष की मरमार है। इसलिये इनमें बिलचस्पी कहीं-कहीं बहुत ही कम रह जाती है। बल्कि इनको पढ़ने में कष्ट-सा मामूम होता है। हाँ इसी कारण ऐतिहासिक दृष्टि से उनका मूल्य बढ़ गया है।^१

प्यारिषाद मित्र उर्फ़ टेकचार्ड ठाकुर 'भारतानेर बरेर दुसास' के लेखक तथा काशी प्रसन्न सिंह 'हुतोम 'योचार नकदा' के लेखक थे। डैपोल्ट पुस्तक की भाषा सोवों को नहीं खैची तथा उसका व्यंग भी ज़रा था किन्तु 'भारतानेर बरेर दुसास' की भाषा बहुत से सोवों को बिद्यासागर के मुस भित्त बघ से अधिक पसन्द आई क्योंकि इसमें बोलचाल की भाषा प्रयत्नायी गई थी। इसी कारण कुछ सोवों ने उसकी बहुत तीव्र समालोचना भी की कि यह भाषा को बिगाड़ना है। लेखक के अनुसार इस पुस्तक में मड़कों का उचित तरीके से पासन न करने के सुपरिचाम को दिखाने के साथ ही साथ वर्तमान विद्या-प्रणाली के गुणबोध तथा हिन्दू-समाज के रीति रिवाजों पर दृष्टि डाली गई थी। स्वयं बंकिमचन्द्र ने बँगला साहित्य में टेकचार्ड का स्थान को माना है। इसी समय में श्री और अश्वे गण-लेखक पत्तये एक मूदेब मुगोपाध्याय दूसरे मदनमोहन ठाकुर। कसबचन्द्र सेन ने भी इसी युग में बँगला साहित्य में हाथ डाला व भी बँगला के प्रमुख लेखकों में हैं। उन्होंने 'जीवन वेद' तथा 'प्रार्थना' मिस्री पर ब कोर् उपन्यासकार नहीं बल्कि धर्मप्रचारक थे। फिर भी इसमें सन्देह नहीं कि उन्होंने बँगला गद्य को सजीवता धोज तथा काट प्रदान की। इन गद्यकारों के मस्तूज के बलावित्तों के अनुकरण तथा अनुवाद के युग के बाद किन्ती नये युग का प्रारम्भ नहीं हुआ था। इन साहित्य की चारि चित्र विधेयताका वर्धन पहल ही हो चुका है।

बंकिमचन्द्र का पहल भी बँगला में उपन्यास भित्त गम था पर उन उपन्यासों को गायब किसी भी खेची-विभाग में डालना मुश्किल है। न ती उनमें कोई चरित्रचित्रण था न मनोवैज्ञानिक विरलेपण न स्वाभाव

१ डॉ० ए० अजुनार बनर्जी का लेख History of Bengali Novel, पन्ना २१४

विक्रता। 'भव-बाबू-विज्ञान' (१८२३) 'भानासेर घरेर बुसाम' (१८२७) 'हुतोम प्याचार नकशा' (१८६२) आदि पुस्तकों को आज बेयास में कोई भी नहीं पढ़ता, पर इसमें सन्देह नहीं कि चाहे वे कितनी भी प्रथम रचनाएँ हों तो भी बंकिम रसेय की रचनाओं की श्रद्धागामिनी थी। जिस भाषा का गद्य परिपक्वता प्राप्त कर चुका हो तथा जिसमें एक स्टीडनेस या मानदंड व्ययम हो चुका हो उसमें रचना करना तुलनात्मक रूप से आसान है पर उस समय बेयास में कोई गद्य नहीं था। उसमें गद्य भी बनाते आना और साब ही साव सिखाना बीसा ही कठिन प्रयास था जैसे किसी मेखक को कामकाज बनाकर तब उस पर सिखाना पड़े बल्कि इससे भी कठिन था। इस भगीरथ प्रयास में बंकिम से पूर्व-युग के लेखकों की प्रतिभा का अभिक्रांश मात्र यदि नष्ट हो गया तो संयुक्त साधना विक्रम हो गई, ऐसी बात नहीं बंकिम में आकर उम्मी की दकी हुई साधना सफलता के स्वयं-मुकुट से मण्डित हुई। केवल गद्य-निर्माण की दृष्टि से नहीं बरकर साहित्य को बलासिक से रोमांसिक युग में ले जाने की दृष्टि से भी वे लेखक बंकिम के अग्रदूत थे। भाषा तथा भाव के क्षेत्र में दीन होते हुए भी वे उपन्यास किसी साहित्य के प्रारम्भिक उपन्यासों से निकृष्ट नहीं थे।

बेयास के प्रथम सफल उपन्यासकार बंकिमचन्द्र थे इसी दृष्टियत् से उन्होंने अज्ञान भारतीय स्वाति प्राप्त की। वे मुख्यतः ऐतिहासिक उपन्यासकार ही समझे जाते हैं। यद्यपि उनके अभिक्रांश उपन्यासों में कुछ न कुछ ऐतिहासिक व्यक्ति पात्र-प्राप्ती रूप में हैं पर स्मरण रहे कि अपने उपन्यासों में केवल दो-चार ऐतिहासिक व्यक्तियों का पात्र बना कर छोड़ा कर देने से ही कोई ऐतिहासिक उपन्यासकार नहीं हो सकता। उससे लिए सबसे आवश्यक बात है कि उस समय के वातावरण की दृष्टि की जाय चाहे एक भी पात्र इतिहासप्रसिद्ध व्यक्ति न हो। इन दृष्टि से जांच की जाय तो मृगालिनी दुर्गेश्वरिणी अश्वमेधर तथा कृपासकृष्णता को ऐतिहासिक उपन्यास नहीं कहा जा सकता। यद्यपि करीब-करीब ऐतिहासिक उपन्यास हो गया है यद्यपि उसमें इतिहास के साथ काफी मन

बिक्रता । 'नव-बाबू-बिभास' (१८२३) 'भामासेर घरेर दुसास' (१८३७) 'हुसोम प्याचार मकसा' (१८६२) आदि पुस्तकों को आज बँगाल में कोई भी नहीं पढ़ता पर इसमें सम्वेह नहीं कि चाहे वे कितनी भी प्रथम रचनाएँ हों तो भी बंकिम रसेदा की रचनाओं की प्रयोगात्मिकी थी । जिस माया का यद्य परिपक्वता प्राप्त कर चुका हो तथा जिसमें एक स्टैण्ड या मानदंड कायम हो चुका हो उसमें रचना करना तुलनात्मक रूप से आसान है पर उस समय बँगला में कोई गद्य नहीं था । उसमें गद्य भी बनाते जाना और साथ ही साथ सिक्तता बैसा ही कठिन प्रयास था जैसे किसी मत्तक का कागज बनाकर तब उस पर सिक्तना पड़े बल्कि इससे भी कठिन था । इस भगीरथ प्रयास में बंकिम से पूर्व-युग के मत्तकों की प्रतिभा का अभिकोश भाग यदि नष्ट हो गया तो संयुक्त साधना विफल हो गई, ऐसी बात नहीं बंकिम में जाकर उन्हीं की दली हुई साधना सफलता के स्वर्ण-मुकुट से मण्डित हुई । केवल गद्य निर्माण की दृष्टि से नहीं बँगला साहित्य को न्यायिक से रोमांचिक युग में न जान की दृष्टि से भी बंकिम के अग्रदूत थे । भाषा तथा भाव के क्षेत्र में दीन हात हुए भी ये उपन्यास किसी साहित्य के प्रारम्भिक उपन्यासों में गिनाए नहीं जाते ।

बँगला के प्रथम सफल उपन्यासकार बंकिमचन्द्र थे इसी तैमियत में उन्होंने प्रसिद्ध भारतीय व्यापार प्राप्त की । वे मुख्यतः ऐतिहासिक उपन्यासकार ही समझे जाते हैं । क्योंकि उनके अभिकोश उपन्यासों में कुछ न कुछ ऐतिहासिक व्यक्ति पात्र-पत्री रूप में हैं, पर स्मरण रहे कि अपने उपन्यासों में केवल दा-बार ऐतिहासिक व्यक्तियों की पात्र बना कर धड़ा कर देने से ही कोई ऐतिहासिक उपन्यासकार नहीं हो सकता । उसके लिए सबसे आवश्यक बात है कि उस समय के वातावरण की दृष्टि की जाय चाहे एक भी पात्र इतिहासप्रसिद्ध व्यक्ति न हो । इस दृष्टि से जाय की जाय तो मृगानिनी दुर्वेसतमिनी चन्द्रदेव तथा कपामकुन्द को ऐतिहासिक उपन्यास नहीं कहा जा सकता । गद्यविद् करीब-करी ऐतिहासिक उपन्यास हो गया है यद्यपि उक्त उपन्यास

मानी की गई है। सर बास्टर स्वाट ने अपने उपन्यासों में घटनाओं के क्रम में बहुत गमती की है फिर भी वे ऐतिहासिक वातावरण पैदा करने की सामर्थ्य के कारण ऐतिहासिक उपन्यासकार माने गये हैं।

उपन्यासकार बंकिम से धर्मशास्त्रज्ञ बंकिम इतने दूर गये कि बहुत से लोग तो जानते ही नहीं कि बंकिम ने धर्मशास्त्र पर भी अपनी निखली चमामी है पर उनकी अपनी दृष्टि में उन्होंने धर्मशास्त्र पर एक नवीन विस्तारप्रारम्भ पद्धति से जो कुछ लिखा है वह अति महत्त्वपूर्ण था। इसमें सन्देह नहीं कि उनके युग को बखते हुए उनके धर्मशास्त्रज्ञ मठ भी शान्तिकारी नहीं तो प्रगतिशील भवस्य थे। उन्होंने समाज के रथ को गठानुपतिष्ठता के कीचड़ से निकालकर बुद्धिवाद के षट्पदों के रोड पर चढ़ाने की चप्टा की मद्यपि वे स्वयं सोमहों धान बुद्धिवादी के ऐसा कहना आज कठिन है। फिर भी वे प्रगतिशील थे इसमें सन्देह का भवकाण नहीं। उन्होंने लिखा था— 'तीन चार हजार वर्ष पहले भारतवर्ष के नियम जो कानून बने थे आज उनको हरफ-बहरफ मानकर चलना सम्भव नहीं। यदि आज वे श्रुति स्वयं मौजूद होते तो नहूते—नहीं ऐसा नहीं हो सकता यदि तुम हमारी विभिन्न-व्यवस्थाओं को पूरा रूप से कायम रखकर चले तो उससे हमारे धर्म के मर्म का बिखाराव ही होगा। हिन्दू धर्म का वह मर्ममाय धमर है हमेशा रहेगा और मनुष्यों का उससे बन्धाव ही होगा क्योंकि मनुष्य-प्रकृति में ही उसकी मीब है। सभी धर्मों की विशेष विधियाँ सामयिक ही होती हैं। वे समय भेद के अनुसार परिहार्य तथा परिवर्तनीय हैं। इत्यादि।

बंकिमचन्द्र के धर्मशास्त्र की प्रवृत्तारणा मैंने इसलिये की कि उनकी साहित्य-जाचना धर्मानुशीलता में बिल्कुल भिन्न पर्याय की वस्तु नहीं थी यदि वे प्रत्यक्ष रूप से स्वाजाति स्वयं तथा स्वतन्त्र से अपने साहित्य की प्रेरणा प्राप्त करते व ती परोक्ष रूप से मनुष्य के प्रकृत तथा मनुष्यता के धारण की शक्ति से ही उन्हें प्रेरणा मिलती थी।^१ बंकिमचन्द्र साहित्य

१. बंकिम साहित्यिक रचना-साहित्य—श्री मोहितपाल मनुमन्त्र

में भावसहायी ये उन्होंने सिखा है— 'काम्य का मुख्य उद्देश्य नीतिज्ञान नहीं है किन्तु नीतिज्ञान का जो उद्देश्य है वही काम्य का भी उद्देश्य है यानी चित्तसुद्धि। उन्होंने उत्तरचरित की समालोचना करते हुए धीर भी लिखा था—“जो लोग कृष्णकाम्य का निर्माण करके दूसरों के चित्त को कलुषित करने की चेष्टा करते हैं वे जोरों की तरह मनुष्यजाति में शत्रु हैं और उनको भी जोरों के लिए निहित सारौरिक दंड दिया जाना चाहिए।

ऊपर के उद्धरणों से स्पष्ट है कि बँगला के प्रथम हिन्दुत्ववादी उपन्यासकार साहित्य में किस मूल को लेकर चलने के पक्षपाती थे पर सौभाग्य से वे उपन्यास लिखते समय हमेशा अपने इस मूल को स्मरण में न रख सकें। जितने वे जसा समझते थे, उन्हीं सामाजिक शक्तियों ने उन्हें दिग्गम दिया और उन्हें बहुत कुछ वास्तविकता से बाँध रखा। अथवा ऐसा भी है कि धर्म तक चलकर उन्होंने स्त्रीशोषणकर अपने धारणों को निमा ही दिया। उपन्यासों की त्रसाई के हक में एक और भी झण्डी बात हुई, वह यह कि बंकिमचन्द्र के सामने उपन्यास के धारणों के रूप में प्रवेजी के रोमांचिक लेखकों की रचनाएँ थीं। बँगला के सुप्रसिद्ध आदर्शवादी कवि-समालोचक भी मोहिततात न बंकिमचन्द्र के उपन्यासों की संक्षिप्त समालोचना इस प्रकार की है।

“उनके पहले उपन्यास ‘दुर्घोषनन्दिनी’ में साहित्यिक प्रेरणा के अतिरिक्त कुछ भी नहीं था। ‘दुर्घोषनन्दिनी’ बँगला का पहला रोमांस है जो प्रवेजी रोमांसों के सुपरिचित धारणों पर लिखा हुआ है। ‘मृणातिनी’ ‘युगलाङ्गीय’ ‘गंगागणी’ भी इसी धारण पर रचित हैं। हाँ ‘मृणातिनी’ की कल्पना में रीत प्रेम ने पहल-पहल प्रवेश किया है। उनके द्वितीय उपन्यास ‘कपासकृष्णा’ को एक उत्कृष्ट काम्य कहा जा सकता है। ‘विद्वंस’ ‘अज्ञेय’ और ‘कृष्णकान्त’ जिस समाज-समस्या और मनोवैज्ञानिक दृष्टि से लिखे गये थे। ‘घान्दमठ’ और ‘राजसिंह’ में देश प्रेम की प्रधानता है ‘चेबी चौधुरानी’ तथा ‘मीठाराम’ में धर्मसमस्या प्रधान है ‘रजनी’ में निरा मनोविज्ञान तथा ‘इन्दि’ में अस्परशना का

ही मान्य है। देखा गया कि ऐसे विद्युत् उपग्रहों की संख्या बहुत कम है जिनमें समाज-नैतिक तथा धर्म-नैतिक कोई उद्देश्य नहीं है। ऐसी रचनाओं में 'कपासकृषि' सबसे सुन्दर कृति है। जिन उपग्रहों में स्वयंसेवक समाज धर्म या नीति से प्रेरणा ली गई है उनमें जगह-जगह पर कल्पना की चरम स्तुति हुई है। चरित्र की महिमा तथा घटना-विन्यास की चतुरता के कारण वे नाटकीय सौन्दर्य से मण्डित हो गये हैं। समस्या की सींचा तानी में बहुत-सी भ्रमंकर बुटियाँ रहन पर भी बंकिम की जो कुछ मृदुल शक्ति है उससे मानो इन्हीं समस्याओं के भावप्रतिपात में पड़कर पत्थर पर पिसे हुए इस्पात के फले की तरह चिनमारियों की बर्षा की है।"

बंकिमचन्द्र ने यूरोप के रोमांचिक सीसी के पीछे जो भारत में सागर स्थापित ही नहीं किया बल्कि उसको सम्पूर्ण रूप से यहाँ की धारोहवा का धम्मस्त (acclimatise) करके यहाँ की मिट्टी से रस ग्रहण कर पल्सबिल-पुष्पित होना सिद्धसाया। इसमें तो सन्देह नहीं कि बंकिम यूरोपीय साहित्य का श्रेणी है पर इस श्रेणी के परिमाण के सम्बन्ध में लोगों का ज्ञान अक्षमर अतिरिक्त है। एक विद्वान् लेखक श्रीकुमार बगर्जी का कथन है कि इस बात का कोई प्रमाण नहीं कि बंकिम जग अस्टेन डिक्सेस बँकरे तथा जार्ज इमिण्ट से परिचित थे। हाँ स्काट के साथ उनका परिचय निःसन्देह है। उनके एक उपग्रह में मार्टिन्स की छाया भी है पर 'उनकी कला सम्पूर्ण रूप से मौलिक' है। इन विषयों का अनुकरण-मात्र नहीं। मैंने जो उपमा इस पैरा के प्रारम्भ में दी है वह बिस्मय तथ्य है उन्होंने पाश्चात्यों से यह ठो सीखा कि उपग्रह का स्वल्प तथा हाँसा कैसा होना चाहिये पर इसके अलावा उनके उपग्रहों का मानप्रसन्नता सनी स्वदेयी है। बंकिम से पौराणिक-क्यासिक साहित्य युग का अक्षय हीचर बँगला साहित्य का मूलपाठ होता है। पहले ही बताया जा चुका कि यूरोप में बहुत पहले साहित्य की यह रोमांचिक धारा पूर्ण परिपक्वता को पहुँच चुकी थी।

रोमांचिक साहित्यकार साहित्य को *art d'amuser les oisifs* यानी निटलेने लोगों के मनोरंजन की सामग्री समझते थे। इमिण्ट बाण्ड

बिक्रम जगत से उनका कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं था यानी वास्तविक जगत से उनका उतना ही सम्बन्ध था जिसके बगैर उनके रस का परिपाक ही असम्भव होता। रोमांस और बस्तुवादी साहित्य के प्रभेद का स्पष्टीकरण करते हुए डाक्टर सुबोध सेन ने कबित्वपूर्ण शब्दों में कहा है— 'रोमांस सत्य को सुन्दर की सहायता से प्राप्त करता है और बस्तुवादी साहित्य सत्य के बरिये से सुन्दर का अनुसन्धान करता है।' रोमांचिक शैली के उपमास कपी पीछे के लिए जो मिट्टी उपयोग में आती थी वह मूलतः देश की मिट्टी ही थी पर ऐसी मिट्टी भी जो यमले के अन्दर बन्द होने के कारण देश की मिट्टी से अब कोई सम्बन्ध नहीं रखती थी और वह यमले में कैस कि जो रंगीन तथा उद्दाम कल्पना के ठारों के सहारे धूम्य में सटक रहे हों। बंकिम-साहित्य को हम इसी प्रकार एक धूम्य में सटकते हुए टक में लगा हुआ विचित्र छटासमन्वित सुन्दर पीसा करके कल्पना कर सकते हैं इस टक में जो मिट्टी है वह भारतीय साहित्यिक परम्परा (literary tradition) से प्राप्त नार्स्ट्रोबन के अतिरिक्त पंचमी साहित्य से साय हुए अन्य बहुत तरह की खादों तथा उर्वरक रबीन्द्रनाथ ठाकुरी उपकरणों से युक्त है। बंगला के एक समालोचक रबीन्द्रनाथ और बंकिमचन्द्र की तुलना करते हुए यहाँ तक कह गये हैं— 'रबीन्द्रनाथ की तरह विषुद भारतीय मन बंकिमचन्द्र को भी नहीं मिला था बल्कि इस दृष्टि से बंकिम यूरोप के ही मामलपुत्र हैं।'¹

इस प्रकार अब तक बंगला उपन्यास के विकास में निम्नलिखित बातें हुई—

(१) पंचमी साहित्य के संस्पष्ट में आने के बाद ही बंगला में गद्य का निर्माण हुआ इसलिये गद्य उपन्यास यानी वास्तविक उपन्यास का निर्माण तभी होना शुरू हुआ।

(२) पहल-पहल जो उपन्यास-लेखक हुए उनको कुर्पा पोशना और पानी पीना दोषों करना पड़ता था यानी साय-शाब गद्य भी गड़बड़े आना

¹ रविने रचन्द्रनाथ निम्न—माहितनाथ यजुनरत

और उपन्यास भी लिखना पड़ता था इस प्रकार उनकी प्रतिभा का अधिकतम मास प्रयोज्य प्रयास में ही खप ही जाता था।

(१) बंकिमचन्द्र चैतन्य के प्रथम सफल उपन्यासकार हैं उनका 'हुमैयानमिनी चैतन्य का पहला रोमांस है। बंकिमचन्द्र ने यूरोप के १९ वर्ष उम्र में चार वर्ष लगा दिये। उन्होंने ही इतिहास के कंकाल में प्राण फूँककर एक साहित्यिक सम्राज्य की रचना की।

डाक्टर मुंबाब सेन ने बंकिमचन्द्र के उपन्यासों को तीन वर्गों में विभक्त किया है। 'राजसिंह' एक सुदृढ़ ऐतिहासिक उपन्यास है 'इन्दुबान्धेर बिम' विप्लव आदि उपन्यासों में सामाजिक और पारिवारिक जीवन का चित्र लीखा गया है 'हुमैयानमिनी' 'कपाल-कुण्डला' 'मृषामिनी' आदि में इतिहास है पारिवारिक जीवन का चित्र भी है पर य फिर भी न तो ठीक-ठीक ऐतिहासिक उपन्यास ही है और न पारिवारिक जीवन की कहानी ही क्योंकि इनमें कल्पना का एक ऐसा ऐतदर्थ है जो पारिवारिक जीवन की वास्तविकता को सांग गया है मात्र ही जिनमें इतिहास के दाने को सम्पूर्ण रूप से स्वीकार नहीं किया है। कल्पना की यह समृद्धि न कबल हमारे पिताये हुए तीसरी क्रम के उपन्यासों में परिलक्षित हुई है बल्कि बंकिम के सामाजिक और ऐतिहासिक उपन्यासों में भी इनी समृद्धि का वासनामा है। बंकिम के ऐतिहासिक उपन्यास में अतीत युग के मुजबिबहा या सामाजिक जीवन का पुद्गामुद्ग और बाल्य विषय चित्र नहीं दिया गया है। उनका ऐतिहासिक उपन्यास अथवा ऐतदर्थ के हनरी ऐतदर्थ अथवा के उपन्यास से सम्पूर्ण रूप से भिन्न है। उनकी कल्पना ने इतिहास का विविध वर्णमय बनाया है। बंकिम के पात्रों का प्रधान गुण यह नहीं है कि उनमें विभिन्न प्रकृतियों का समावेश है बल्कि एक प्रकृति का अन्वय है। केवल दो-एक पात्रों में ही उन्होंने साधारण मनुष्य का चित्र लीखा है। ऐसे साधारण मनुष्यों में पहल ही अनेकप्रकार या नाबिद्यमान का स्मरण हो पायेगा। डाक्टर श्रीगुमार के अनुसार

बंकिम में पाप के प्रति स्वामाबिक विद्रुष्या की वर्तमान युग के वस्तु
बादी उपन्यासकारों की तरह पाप का बिदलेपण करना उन्हें पसंद नहीं
था। बंकिमचन्द्र ने अपने कई उपन्यासों में इतिहास का आश्रय लिया
है फिर भी उन्होंने विद्रुष ऐतिहासिक उपन्यास एक ही—'राजसिंह—
मिसा है। उनके अपने मतानुसार भी 'राजसिंह' ही उनका एकमात्र
ऐतिहासिक उपन्यास है। 'जहाँ तक काल्पनिक कथन में उड़ने की बात
है बंकिमचन्द्र देवकीनन्दन लक्ष्मी की ही जाति के थे पर बंकिम तथा लक्ष्मी
म फर्क यह था कि एक ने परिष्कृत स्वरूप को अपनाया दूसरा ऋसजसूत
कल्पना-जगत् में बिचरता रहा एक ने धामुनिक कथा को अपनाकर
कल्पना की उड़ान मरी दूसरा केवल बंधुलानों में मटकता रहा। बंकिम
कल्पना की उड़ान मरी दूसरा केवल बंधुलानों में मटकता रहा। बंकिम
का मनोबिज्ञान से कोई सम्बन्ध नहीं था। उनके उपन्यासों में मानसिक
इन्द्र धीरे परिवर्तन का चित्र बहुत कम है। जहाँ मानसिक परिचयन भी
है वहाँ यह धाकस्मिक है सतक उसको वचित परिस्थितियों में स्वामा
बिक करके दिखा नहीं पाये।

हमने बंकिमचन्द्र को जरा बिस्तारपूर्वक समझने की चेष्टा की क्योंकि
उनको समझे बिना भारत-प्रतिमा को समझना असम्भव है। बंकिम के
बाद बैपसा साहित्य में रोमांस की एक बाढ़-सी घा गई इसमें रमछन्द
घारि कई लेखक घब भी पड़े जाते हैं। "घेनसपियर क नाटक तथा स्काट
के रोमांसों को पढ़कर बङ्गाल में" (अर्थात् बंगाली धंधेजी घिलित मध्य
बिस्त तथा उच्च धेनी के सोपों में) "जब रस की भूख लगी" तो उन्होंने
अपने घास-पास मूँह केरा बंकिम घारि की उत्पत्ति उठी से हुई। बंकिम
रमेग घादि को पढ़कर उस भूख की कुछ तृप्ति हुई। इसमें तो कोई भी
सन्देह नहीं कि यह पढ़ी मिसी घमस धेनी का साहित्य था फिर भी इन
उपन्यासों न माया को लक्ष्मी रूप प्रदान कर उसमें दाम बैपवान में
(crystallise) तथा बहुत-सी सुन्दर कल्पनाओं को जमप्रिय बनान म
सहायता दी।

बंगला के बूसरे सक्तिदासी युगप्रवर्तक उपन्यासकार रबीन्द्रनाथ न बकिम-बुद में ही अपनी दिग्बिजय की यात्रा शुरू कर भी इससिये यह कोई प्राश्न्य की बात नहीं कि 'राजपि' तथा 'बीठकुच्छीर हाट' में उन्होंने भी रोमांचिक साहित्यिक धारा को ही अपनाया है। रबीन्द्रनाथ केवल प्रौढसाहित्य नहीं हैं वे एक ही साधक कवि नाटककार, गल्पलेखक समालोचक अभिनेता चित्रकार, संगीतज्ञ धारि हैं। उनकी प्रतिभा बहु-मुष्ठी है। रबीन्द्रनाथ प्राण्य और पाश्चात्य साहित्य रचन कला के मर्मज्ञ पंडित हैं उनकी प्रतिभा में बंगला भाषा को जो रूप दिया उसकी तुलना नहीं हो सकती। 'उन्होंने बंगला भाषा को सज्जीत रस में विमलित कर जो रूप दिया उसका प्रभाव अजेय है इस प्रकार भाषा में जो सौष्ठव तथा ममनीयता प्राप्त की वह सब से सब तरह के साहित्य-निर्माण में कलाकार मात्र के लिए अपरिहार्य होने वाली थी।'^१

रबीन्द्रनाथ के उपन्यासों में शीघ्र ही एक नवीन धान सुनाई पड़ने लगी। उनको बस्तुवादी कहना तो कठिन है रोमांचिक भी नहीं कह सकते पर इतना प्रबल्य है कि बङ्गाली मध्यमवित्त मधी में जिन विचारों के संबधों के कारण उदम-नुबल मधी हुई थी उनका परिचय उनमें है। रबीन्द्रनाथ संभ्रान्त बाह्य परिवार म पैदा हुए थे उनकी पिता-प्रीता राजा राममोहन केसवचक्र बेबन्नाथ ठाकुर धारि के उदार विचारों की छत्रछाया में हुई थी। गतानुमतिङ्ग सनातन समाज और प्रगतिशील बह्य समाज में वा संबध हो रहा था उसका चित्र हम रबीन्द्रनाथ में पाते हैं यहाँ तक तो यह बस्तुवादी हैं पर बाकी सब धंसों में हम कबीन्द्र के उपन्यासों में बस्तु-वार और धारदर्शवार में समग्रय की बेष्टा पाते हैं।

क्या रबीन्द्रनाथ सम्पूर्ण रूप से रोमांस से मुक्ति प्राप्त कर सके ? इस प्रश्न का उत्तर डाक्टर मुषोप सेम निम्नलिखित रूप से देते हैं— उन्होंने नी एक नय ङङ्ग के रोमांस की नृष्टि की है और इस प्रकार के रोमांस की पूर्ण धनिध्वंस्त उदक धन्तिम कथों में सिगित उपन्यास 'चार धप्याय'

‘शेदेर कविता, ‘भारत’ ‘चतुरंग’, आदि में हुई है। इन उद्योगियों में दैनिक जीवन की कबा को काव्य के बल-शोक में उठाकर प्रपञ्चता प्रदान की गई है। जिन नर-नारियों की बात इनमें लिखी गई है वे घना भारण नहीं हैं न उनके जीवनो में घसोचिक घटनाएँ ही सन्निविष्ट हुई हैं, पर इनकी प्रसुप्ति इतनी सूक्ष्म और तीव्र है कल्पना इतनी रङ्गीन है, बुद्धि इतनी कमनीय है कि उनकी जीवन-यात्रा को वास्तविक जीवन की प्रतिच्छवि नहीं कहा जा सकता। इन सब उपन्यासों के कथामकों में यह परिपुष्टता नहीं है जिसे उपन्यास का अपरिहाय अर्थ समझा जाता है। वे जैसे जीवन के कुछ कवितापूर्ण मुहूर्तों की समष्टिमात्र हैं इनमें उपन्यासों और काव्यों के प्रभेद को दूर कर देने की चपटा की गई है। इनमें सम्मेलन विरमपथ नहीं है केवल कविकल्पना के जलिय से तीव्र अंतर्दृष्टि का परिचय प्राप्त होता है। इस प्रकार के उपन्यासों को विमुक्त उपन्यास कहा जा सकता है या नहीं इस पर तरह-तरह का सबिह किया गया है। डाक्टर श्रीकृष्णर का भी इन उपन्यासों के सम्बन्ध में यह कहना है कि “इन उपन्यासों में विस्मय और सन्निकता दोनों के समन्वय को अच्छी तरह नहीं लिखा गया।” पर यह तो रवीन्द्रनाथ के उन उपन्यासों की बात हुई जो अरुण-साहित्य के बाह्य रचित हुए, इसलिये उनमें अरुण साहित्य के बीच इतना अन्तर्निहित तथा आस्थास्पद प्रयत्न होता। इसलिये हम यहाँ रवीन्द्रनाथ के उन्हीं उपन्यासों का उल्लेख करेंगे जो प्राच्यभारत युग में रचित हुए थे।

यहाँ पर रवीन्द्रनाथ के उपन्यास ‘योग’ को लिया जाय उसका नायक श्रीमोहन बघाली मैथिल का कट्टर परिवार में पालित अंग्रेज का लड़का है। उसके माँ-बाप का पता न पाकर एक ब्राह्मण-व्यक्ति ने परि त्यक्त शिशु श्रीमोहन को पास लिया। उसका पालन-पोषण एक ब्राह्मण बामक की ही भाँति होता है पर भीतर भीतर उसे उसके पालक पिता बघाकर चलता है। यह सड़का कट्टर सनातनी है और बड़े जोर से सना तनियों की ओर से ब्रह्म श्रमाजियों से लोहा लेता है। एक दफे मोहा

मेना हूँ बच्चों को पहुँच जाता है उस समय उसके पासक पिता एकाएक उसे बुसाकर उसका घसली परिचय उसे बता देते हैं। वह घररर बम् से वह अपने को समाज बर्ग के सिद्धर से गिरठा हुआ पाता है। उसे वह एक अर्थर का बच्चा उसके लिए सब बड़ा समाज के अतिरिक्त और कहीं कोई अगह नहीं रहती। यही संक्षेप में कथा भाग का धार है। ही इसमें प्रेम भी धाता है मित्रता भी धाती है कवि की कल्पना की छटा भी है पर मुख्य समस्या यही है। उपन्यास के दौरान सम्बी-सम्बी बहसों हैं जिनमें बर्ग तथा समाज के अनेक पहलुओं के बाज की लाल निकाली गई है। उपन्यास जमा भी खूब है पर रोमांस की ओर इसका मुकाब पय-पय पर स्पष्ट है। रबीन्द्रनाथ घोषर्ष और वस्तु के बीच में बराबर डमकते दृष्टिमोचर होते हैं।

'बोडेर बालि' या अर्थर की किरकिरी उपन्यास में रबीन्द्रनाथ बंकिम युग से बिम्बुस धपना छुटकारा कर चुके हैं। कहा गया है कि 'युयुध नम्बिनी' के बाद किसी उपन्यास ने यदि उपन्यास-साहित्य में सबयुग का प्रवर्तन किया है तो वह 'धाल की किरकिरी' ही है। स्वयं शरत्चन्द्र ने रबीन्द्रनाथजी के एक उत्सव के उपसठ्य में भाषण देते हुए यह कहा था कि वे साहित्य में पुरवार मानते हैं, इस सिनसिने में उन्होंने 'धाल की किरकिरी' का उल्लेख किया था। धवरय इससे यह अनुमान करना उचित होया कि उन्होंने 'धाल की किरकिरी' का अनुकरण मात्र किया सम्भव है कि वे अनुकरण से ही बने हों किन्तु वे उससे घाने बढ़ गये। रनि धालू जहाँ केवल उस समय के सामाजिक नियमों से अजित बहुत-से विषयों को जैसे विषया में प्रेमसिप्ता को स्वाभाविक बताकर रह गये वहाँ शरत् ने कहीं धागे बढ़कर समाज के सम्मुख प्रर्नों की अड़ी लया थी। बाकटर सेन की भाषा में शरत् प्रीतिहीन बर्ग तथा समाहीन समाज से पूछ बैठे हैं कि तुम से कुछ मानवीय कस्यान भी हुआ है? प्ररन ऐसे ढंग से पूछा गया है कि उसका मतसब यही निकलता है कि कस्यान नहीं है। 'धाल की किरकिरी' में 'विषया की प्रबयानंदा का चित्र है, किन्तु रबीन्द्र

नाथ ने वहीं पर भी बिनोदिनी को बाधुक नहीं लगाये हैं। उन्होंने उसकी धार्मिकता को समझी ही सहजात स्वाभाविक आकांक्षा रूप में ग्रहण करके उसका विरमोपपन्न तथा बर्नम किया है। उन्होंने इस उद्दाम प्रवृत्ति का उपपात नहीं गाया है बल्कि यह उच्छ्वस्तता किस प्रकार के प्रलय की सृष्टि करती है, इसी का विनोदनीचा है पर बूढ़ि बिनोदिनी विचबा है इस लिए उसका किसी पुरुष पर आसक्त होना अनुचित होना ऐसी बद्धमूल चारणा लेकर रबीन्द्रनाथ उपन्यास मिलने के लिए प्रवृत्त नहीं हुए बल्कि बीसी अवस्था में उसका महेश्वर या बिहारी के प्रति आसक्त होना ही उनके लिए स्वाभाविक था यही इस उपन्यास का प्रतिपाद है। किसी भी विषय में सम्पूर्ण तटस्थता ही रक्षा करना कठिन हो जाता है धीर कला के लिए तटस्थता अनुकूल भी नहीं है। इसी कारण उपन्यास के अन्तिम अंश की ओर बिनोदिनी का चरित्र अद्भुत हो गया है। ऐसा मात होता है जैसे सत्यक ने एक ऐसे चरित्र की सृष्टि की है, जिसकी परिभाषित के सम्बन्ध में के अपने मन को स्थिर नहीं कर पाये। फिर भी वे प्रवृत्तित कुसंस्कारों से मुक्त होकर नर-नारी के बिच कीचक की चेष्टा करते हैं, यही आस बात है। इसीलिए 'घोस की किरकिरी' से बगना उपन्यास में एक मधुपुत्र की मूचना होती है।^१ रबीन्द्रनाथ ने 'मौकादूबी' में प्रवृत्तित संस्कारों को माला है किन्तु 'घोस की किरकिरी' में वे नई चार को लेकर चलते हैं।

यही रबीन्द्रनाथ के उपन्यासों की बिसृष्ट आलोचना करने की न तो आवश्यकता हो है न आवश्यक ही है कबल "यदि हम उनके पल्पगुच्छ को नें जो बेणला कथा-साहित्य में उनकी सबसे सुन्दर तथा मौलिक सृष्टि है, तो हमें ज्ञात होना कि बंकिम की साधुता ने जिस वास्तविकता से मूह मोड़कर रस की कोच की ही रबीन्द्रनाथ की धारणावादिता ने उसी वास्तविकता को एक अपूर्व महिमा से मण्डित कर दिया है। जो कल्पना सम्पूर्ण रूप से व्यक्तिगत या subjective है उसी कल्पना के रूप में जो निरालम्ब साधारण तथा सुपरिचित है यही एक कि सुख हीर जुड़ है, यही

प्रपूर्व सुन्दर हो गया है। वास्तविकता के बीच से ही भोकोत्तर चमत्कार का विस्मय रस संचारित हुआ है। वास्तविकता के प्रतिपरिचय के आचरण को मुक्त कर वस्तु के अन्तर्निहित सौन्दर्य का आविष्कार कर देता ही उनकी कल्पना की मूल प्रवृत्ति है। वह कल्पना वस्तु को एकदम अचानक रित कर देती है पर प्रतिभासित होता है जैसे यही इसका वास्तविक रूप है। × × × यही रबीन्द्रनाथ की साहित्य-सृष्टि का रहस्य है। सोच कर देखा जाय तो बात हा पामगा कि यह Idealism—यह आदर्शवाद कितना दुबल कितना महान है जिसमें पृथ्वी की भूम-मिट्टी को सोने में परिवर्तित कर देना पड़ता है। अक्सर ही मनुष्य के साधारण सुख-दुःख तथा आशा-आशोषा को विरवसृष्टि के रहस्य के अन्तर्मुक्त करके देसना कोई मामूली आदर्शवाद नहीं है।^१

रबीन्द्रनाथ के युग से कही पहले बंकिमचन्द्र के प्रभाव के युग में ही तारकनाथ मञ्जोपाध्याय नामक एक लेखक ने 'स्वर्गसता' नामक एक उपन्यास लिखकर साहित्य में एक बुररी ही बाग की विराट सम्भावना दिखाकर लोगों को अक्षित कर दिया था। 'स्वर्गसता' में बंयासी समाज के मुग-मुक्त की हूबहू तस्वीर की गई थी परन्तु स्वल्प इस पुस्तक के सस्करण पर सस्करण निकल। बंकिम-युग में किमी भी पुस्तक का इतनी सफलता नहीं प्राप्त हुई। 'स्वर्गसता' की अद्भुत सफलता की देवकर बहुत से लेखकों ने इसका अनुकरण किया किन्तु उनको कोई सफलता नहीं मिली। यहाँ तक कि स्वयं तारकनाथ ने अन्य कई पुस्तकें लिखीं पर उनमें से इस प्रकार सफल न हो सके उनकी प्रतिभा मानो एक बार जमकर के ही बुझ गई थी। बंकिम और रबीन्द्रनाथ की रचनाओं के बीच में 'स्वर्गसता' की रचना एक अद्भुत घटना है पर तारकनाथ की प्रतिभा एक बार जम कर के ही बुझ जाने वाली प्रतिभा होने के कारण यह पाठ अपनी निजी शिष्यमण्डली द्वारा न कर सकी।

रबीन्द्रनाथ किमी मानवीय घटना को पृथक करके देगने में असमर्थ

प । वे उसे हमेशा विश्वप्रकृति के साथ मिलाकर ही देखते थे, और उनके विश्वप्रकृति के देखने के ढंग में बूँक घटिप्रकृतिक उद्देश्य तथा मूर्धसा प्रामिस थी इसलिये वे वास्तव को देख तो पाये, पर साथ ही साथ उनकी रचना में पय-पय पर वास्तविकता के परे की कथित वास्तविकता भ्रमक गई । फलस्वरूप वे बस्तुवादी न हो पाये । रवीन्द्रनाथ कुराई देख नहीं पाये ऐसा नहीं पर उन्होंने कुराई के साथ-साथ वा उसके ठीक पीछे मलाई को भी खड़ी पाया, बलीया यह है कि वे कुराई को उस रूप में नहीं देख दिया पाये जिस रूप में उसे मुक्तमोक्षी देखते हैं । इसलिये स्वभावतः उनकी धनुभूति और धामसोवों की धनुभूति में धाकास-यातास का भेद पड़ गया । उनकी कल्पना की पादुपरी के कारण यह एक निरासी पीछे हुई, पर यह बस्तुवाद नहीं हुआ ।

रवीन्द्रनाथ के ही मंडस में एक घस्तिघासी कहानीकार का धाविर्भाव हुआ जो उनसे बिल्कुल बिभिन्न पाठे पर गये वे ये प्रभातकुमार । इनकी कहानियों में वास्तविकता की जो कल्पना है उसके साथ विश्वप्रकृति का कोई सम्बन्ध बूँडा नहीं गया था । उनकी घौसी सहज बरस है, उसमें किसी की राह बूँडन वा बताने की घेप्टा नहीं है । रवीन्द्रनाथ पयचित उत्पी-दित, ऐहिक रूप से बंधित एक देघ के दार्शनिक कवि तथा लेखक थे । रवीन्द्र मुखत उस बर्न के कवि थे जिघमें वास्तविकता को वास्तविकता के रूप में लेने का साहस नहीं रहना था तो प्रभातकुमार उस घेपी के दार्शनिक तथा लेखक हैं जो धाविक सोचना नहीं यवार करघट्टी यह घेनी या तो जो कुछ उसके पास है उसी के लिये भगवान की मुकुम्बार है या उसकी परेघानी हतनी धाविक है कि कहानी में यह इससे दूर ही रहना चाहती है ।

रवीन्द्रनाथ जिस समय धपनी घटा से साहित्य-नयन का दूर-दूर तक भाभोकप्तावित कर चुके थे, उसी समय एक कोने में कोरों से बिजली धमकी । एक मनीन रोसनी से धाकास में हलधस पैदा हो गई यही धादुबान्ध थ ।^१

१

प्रारम्भिक जीवन

१८७६ के १३ सितम्बर को बंगाल के हुगली जिले के एक छोटे से गाँव देवानन्दपुर में चरत्चन्द्र का जन्म हुआ। उनके पिता मोतीलाल चट्टोपाय्याय गाँव के एक मामूली बृहस्प के उनकी माता श्रीमती भुवना मोहिनी एक मामूली महिला थी। देवानन्दपुर का बाताबरण एक मामूली गाँव का बाताबरण था। इस गाँव में यदि कोई विशेषता थी तो यही कि बंगाल के सुप्रसिद्ध कवि भारतचन्द्र ने यहाँ अपना कौशूर बिताया था। कहना न होया कि यह कोई विशेषता नहीं है क्योंकि भारतचन्द्र ने यदि इस गाँव में अपनी वह उम्र व्यतीत की जब वे कवि नहीं थे तो इससे वहाँ के बाताबरण में कुछ साहित्यिकता नहीं आ गई। हमें आश्चर्य है कि चरत्चन्द्र के भक्त लेखकों ने इस बात को इतना महत्व क्यों दिया। चरत्चन्द्र की प्रतिभा का उत्पत्तन हमें दूसरी ओर ढूँढ़ना पड़ेगा।

चरत्चन्द्र के पिता मोतीलाल साहित्यानुष्ठी के धायद के जितना साहित्यानुष्ठीजन करते थे उससे कहीं बढ़कर कल्पना का थोड़ा बीड़ाने के प्रीकीन थे। उन्होंने चित्रकारी भी की उपस्थास भी सिखा पर कभी किसी रचना को सम्पूर्ण नहीं कर पाये। कुछ दूर तक स जाकर वे अपनी रचना को मंभधार में छोड़कर घामे बढ़ जाते थे और दूसरे काम में लग जाते थे। वे जगम मर टाजना ही करते रहे सिद्धि का मुँह उन्होंने कभी नहीं देसा। सांसारिक चप से वे भितान्त घसकम व्यक्ति थे चरत् की माँ घामदनी कम होते हुए भी प्यो-स्यो परिवार का नाम काज जमाठी रहीं। उनके मरने के बाद कल्पना-बिसासी मोठी बाबू की घाटे-बास का माब मामूम हुआ फिर तो चारा परिवार ही विवर-बिजल

हो गया।

मोठी बाबू की नी संतानें हुई। पहली संतान एक कम्पा थी अनिता बेबी इसके बाद ही सरत् बाबू पैदा हुए। इसके बाद एक के बाद एक बार लड़के पैदा हुए, पर वे बचपन में ही मर गये। इनके बाद दो पुत्र तथा एक कम्पा और हुई। मोठी बाबू अपने बच्चों के प्रति या तो मिठप स्नेहशील थे या कल्पनाशील होने के कारण उन पर कोई शासन नहीं करते थे। फलस्वरूप बालक धरत् के जी में जो आता था वे बही करते थे धरत् बाबू ने स्वयं ही अपने बचपन के विषय में लिखा है—

“बचपन की बात याद है। पाँच में मछली का चिकार कर, डोपियो को डकेलकर तथा मास खेकर बिन कटते थे। कभी-कभी मौटखी (यात्रा) के दम में जाकर घानिर्वा करते थे फिर उससे भी जी ठम आता था तो झँदोछा कबै पर रखकर निकल पड़ते थे। यह निकल पड़ना विश्व कवि के काव्य की निरुद्धय यात्रा नहीं थी, हमारी यात्रा बरा दूसरे कज़्ज की थी। वह भी अब खतम हो जाती थी एक दिन फिर अपने भाट जाये हुए बरषों तथा निर्जीव वेह को लेकर पर बापस होते थे। वही अब भावमयत की बारी समाप्त हो जाती तो फिर पाठशाला में चालान किया जाता। वही फिर एक बार भावमयत होने के बाद ‘बोपोदय’ तथा ‘पयपाठ’ से बिन सजाते। फिर एक दिन सब की-कहाँ प्रतिज्ञा भूल जाते थे दुष्ट सरस्वती कण्ठ पर सकार हो जाती थी। फलस्वरूप फिर घानिर्वा चुक जाती, फिर बरषे नी दो म्यारह हो जाते फिर एक बार भावमयत की भड़ी सय जाती। इस प्रकार ‘बोपोदय’ तथा ‘पयपाठ’ बहुत-बहुत बचपन का एक सम्भाव समाप्त हो गया।”

इस बचन में साहित्य प्रेम का तो कहीं पता नहीं है बल्कि उससे विमुक्तता ही सूचित होती है। यदि कोई लड़का ऐसा घाबरन करे जैसा धरत् बाबू ने लड़कपन में किया, तो उसका साहित्यिक मरिच्य के सम्बन्ध में घाघाम्बित न होकर हम तो उसका विषय में सब तरह से निरपत्त

ही होंगे। पर नहीं शरत्चन्द्र में एक बात भी जो उनकी प्रतिभा के विकास के लिए बहुत ही अहाबक थी वह भी उनकी पर्यवेक्षणशीलता। शरत्चन्द्र बाब को बचकर उस बंब के उपन्यासकार नहीं होने वाले थे जो मज के सामने सगी कुर्सी पर बैठकर समस्याओं तथा उसमनों की कल्पना करते हैं वे उन परिस्थितियों समस्याओं और उसमनों के बीच में से स्वयं गुजरने वाले थे। शरत्चन्द्र ने अपने या अपने अत्यन्त निकट के लोगों की जीवनी ही अपने उपन्यासों में लिखी है।

‘देवदास’ उपन्यास के पूर्वार्द्ध में शरत्चन्द्र ने अपनी ही जीवनी लिखी है। मुझे तो आठ होता है कि देवदास नाम भी देवानन्दपुर गाँव के ही सम्बन्ध रखता है। जो कुछ भी हो शरत्चन्द्र की लिखी हुई उपरोक्त आत्मकथा से उन्हीं के लिखे हुए ‘देवदास’ के बचपन का वर्णन कितना मिलता है इसको पाठक देखें। ‘देवदास’ उपन्यास का जो प्रारम्भ होता है—

‘एक दिन देवदास के बुपहर में न तो धूप का ही धोरछोर या न बर्मी की ही कोई सीमा थी। ऐसे समय मुखर्जी बराने का देवदास पाठघासा की कोठरी के एक कोने में पट्टी बटाई पर पीठकर स्नेट हाथ में लेकर धाँस खोमकर फिर बन्दकर, पैर फैलाकर, जमुठाई लेकर, अंत तक एकदम अत्यन्त बितामस्त हो गया और एक ही मुहूर्त में वह इस नगीरे पर पड़ेगा कि ऐसे परम रमणीय समय में बितों में फलन उड़ाने के बदले इस प्रकार पाठघासा में बन्द रहना कुछ नहीं है। उसके उपबाळ विमाण में एक तरकीब भी नूढ गई। स्नेट हाथ में लेकर वह उठ खड़ा हुआ।

“पाठघासा में हम समय टिफिन की छुट्टी थी। लड़के तरह-तरह की घाबाज करते हुए पाम ही एक बटवूत के भीले मुल्सीदंवा मिल रहे थे। देवदास में एक बार उनकी धोर देखा। टिफिन की छुट्टी देवदास को नहीं मिलती थी क्योंकि गोबिन्द पंडित न बहुत बड़े देना था कि एक बार पाठघासा के बाहर ही जाने के बाद वहाँ बापन घाना देवदास मागत्य

करता है। उसके पिता की भी मनाही थी। विविध कारणों से यह तय पाया था कि टिफिन के समय वह मुख्य छात्र भुमो के बिन्ने रहेगा।” इत्यादि।

यह मोक्षिन्द पंडित सायब धरए बाबू के बिलक पिपारी पंडित से बार को यह पाठसामा बर्नाभ्युत्तर स्कूल में परिवर्तित हो गई थी। इसी स्कूल में एक अद्भुत लड़की उनकी सहपाठिनी थी। यह लड़की उनके हर लठिके के काम में सहायिका थी। स्कूल में किसी लड़के से उनकी विशेष पटती नहीं थी पर यह लड़की उनके सम्भब-असम्भब हर लठिके के काम में काम देती थी। इस लड़की को वे बहुत ही प्यार करते थे, पर साथ ही साथ जब शोक आता था तो उसे बैदहीं के साथ मारते थे, पर वह लड़की ऐसी मुसीबा थी कि कभी कहीं मार साईं बताकर अपने मित्र को पिटवाती नहीं थी। दोनों में मझा भी घासानी से होता था और फिर येन उससे भी घासानी से होता था। धरएबन्ध के उप ग्वासों में यह लड़को बारबार आती है। भाव होता है कि 'देवदास' की पार्वती या 'धीकांत' की राजलक्ष्मी यही लड़की थी। पता नहीं देवा-नन्दपुर के बाद भी इस लड़की से धरएबन्ध का कभी साबका पड़ा था नहीं। धरएबन्ध ने इस लड़की का असली नाम कभी किसी से नहीं बताया पर पार्वती तथा राजलक्ष्मी के चरित्रों की सजीबता ही इस बात का प्रमाण है कि 'देवदास' उपन्यास की पार्वती तथा 'धीकांत' की राजलक्ष्मी एकदम रूपोक-रूपिण चरित्र नहीं हैं। धरए-साहित्य के ये दो नारीचरित्र बंधना साहित्य की अमर मृष्टि हैं।

मोती बाबू कल्पनाशील लो से ही 'साप ही साप' बीकरी करने के मामले में बरा कल्पे पढ़ते थे। बहरि बंधेजी सायब में उत्पन्न मध्यवित्त सेनी का स्वर्ण-भुष घनी तक समाप्त नहीं हुआ था। मोकगियों के बाजार में अजी तक बंधेजी-चिकित्तों की मांग काफी थी। मोती बाबू बंधेजी बंधना दोनों जानते थे। कई बार उन्होंने अनिच्छापूर्वक भीकरी कर भी थी कुछ दिनों तक बन्धी लख् जसे करते भी रहे। फिर एक दिन एकाएक

सब छोड़छाड़कर पर बैठ जाते थे। कहना न होगा मध्यमिष्ठ श्रेणी की लक्ष्मी (नौकरी) के प्रति उनकी इस प्रकार घस्प श्रद्धा के कारण सोम उन्हें श्वाशुरगर्भ समझते थे और उनसे ऐसा ही व्यवहार करते थे। मोती बाबू इन बातों की परवाह न कर कबिता नाटक कहानी उपन्यास लिखते थे बिना भीखते थे या घस्पयन में मग्न हो जाते थे। सोम जिसे काम-काज या रचना कहते हैं उसके प्रति यह उदासीनता मोती बाबू से उनके पुत्रों में आई। शरत् बाबू की बीवनी तो एक प्रख्यात गम्बर श्वाशुरगर्भ की बीवनी ही थी उसकी तो हम विशद आलोचना करने ही आ रहे हैं पर शरत् बाबू के एक भाई प्रकाशचन्द्र सम्पादी होकर आजीवन मारे-मारे फिरते रहे दूसरे एक भाई प्रकाशचन्द्र ने शरत् बाबू के कहने पर बड़ी कठिनाता से शादी धादि करके घर खूना स्वीकार किया। नुक के जीवन में वे भी श्वाशुरगर्भ थे।

शरत्चन्द्र पढ़ने-लिखने से भावते थे पर मछली पकड़ने के लिए उनके विस में घटम्य भाससा थी इस काम के लिए वे किसी भी बोझिम को तुच्छ समझते थे। उन्होंने मुग रखा था कि बसंतपुर में मछली पकड़ने का प्रण्डा सरंजाम मिला था। बहुत दिनों से वे इसकी टोह में थे कि किसी तरह इस बाँध में पहुँचें पर मौझा नहीं बन रहा था। एक दिन उन्होंने मुना कि उनका पड़ोसी नयन सरदार बड़ा भाय खरीदने आ रहा है, बस चुपके से वे उसे भी थ बठाकर उसके पीछे हो गिये। नयन सरदार प्रसिद्ध लठैठ था वह धकेले ही बना। जब वह काफी दूर पहुँच गया तो उसे मामूम हुआ कि बालक शरत् उसके साथ है, किन्तु जब वह इतनी दूर था चुका था कि पीछे सौटने का अवसर न था। मजदूर होकर उसे घाठ नी बर्य के इस सड़के को अपना साथी बनाता पड़ा। भाय खरीदते बैर हो गई, रास्ते में बकैतों ने रात को इन्हें बेर मिया पर नयन सरदार ने साठी के ओर से अपनी तथा भाबी उपन्यासकार की रक्षा की।

बीवित तितनियों का पकड़ने का भी उन्हें बड़ा पीक था। इसके साथ ही वे बापबानी के भी पीकीन थे। उनके पिता मोती बाबू को लड़के

की इन बातों पर कुछ विशेष ध्यान नहीं था। शायद लड़कें के सब बीहड़ों का उनको पता भी नहीं लगता था पर जब उन्होंने सरलचन्द्र को विस्तृत ही विद्याविमुख पाया तो वे लड़कों को लेकर भागसपुर पहुँचे। इसके बाद सरलचन्द्र के मुँह से ही उनकी जीवनी सुनी जाय—

“यह सहर में था। केवल ‘बोबोय’ की विद्या पर ही गुरुजनों ने छात्रवृत्ति खेपी में भर्ती कर दिया। उसमें ‘सीतार बनबास’ ‘भारपाठ’ ‘सद्भाव सवपुत्र’ और ‘प्रकाश व्याकरण’ पढ़ना पड़ता था। यह कोई पढ़ जाना नहीं था मासिक या साप्ताहिक में समाप्तोचना मिलना नहीं था बल्कि स्वयं बंदिताजी के सामने खड़े होकर प्रतिदिन परीक्षा देनी थी। इसलिये यह बात निःसंकोच ही कही जा सकती है कि साहित्य के साथ यद्यत् प्रथम परिचय छात्रों के साथ हुआ। फिर किसी तरह दुःख के ये दिन भी कट गये। उस समय मुझे मामूम ही नहीं था कि मनुष्य को कुछ पहुँचाने के असाध भी साहित्य का कोई उद्देश्य हो सकता है।”

भायसपुर में आकर सरलचन्द्र जिस खेपी में भर्ती हुए, उसके भी उपयुक्त विद्या उनमें नहीं थी। बुद्धियान सरलचन्द्र ने इस बात का जल्दी ही पता था लिया। उनकी तरह धर्मिणी बालक मता इस बात को कब बर्दाश्त करने वाला था इसलिये उन्होंने पढ़ना शुरू कर दिया और जल्दी ही ‘अध्मे लड़के’ गिने जाने लगे। इन दिनों उनका स्वातःपारिक उन्नति असाध आदि की घोर गया। इस युग में चाह जो कुछ भी हो पर उस जमाने में मध्यवित्त खेपी के गुरुजनों में यह भी मुँहई म धामिल था, इसलिये सरलचन्द्र ने छिपकर ही इस घोर व्याग दिया था। पड़ोस में एक मुतहा मकान था उसी के धायन में सरलचन्द्र ने धपपी धिष्यभंडारी के साथ रातोंरात एक असाध चढ़ा कर दिया। एक वैराजेत बार की बनी पड़ती थी तो लड़के इसे कहीं से करीबते इसलिये सरलचन्द्र ने तय किया कि बाँस का वैराजेत बार बनाया जाय। तदनुसार बाँस का वैराजेत बार बनाकर छिपे-छिपे कसरत की जाने लगी।

भायसपुर में भाया के मकान पर एक पुस्तक थी ‘ससार-कोष’।

क्या भी भाग्यमयी का पिटाप था। मेलक ने धायक ही कोई विषय ऐसा हो जिस पर अपनी मूर्खता से राय बाहिर न की हो। जहाँ मेलक को कुछ मामूली न था वहाँ उन्होंने कल्पना से काम लिया था। बालक धरत्पत्र को इतना क्या मामूली था वे तो संसार-कोप की हरेक बात को बेदबाक्य ही समझते थे। भासिर जब छापे के श्रक में है तो क्या भूट होगा। धरत्पत्र जब इस बात की कल्पना ही नहीं कर सकते थे। किसी विपत्ति से बचने के लिए उसमें एक मंत्र दिया हुआ था धरत्पत्र ने स्वयं इस मंत्र को सीपकर अपने छाबियों को भी सिखाया। वह मंत्र यों था—

धौइम् ह्रीं धुं धुं रत्न रत्न स्वाहा—

धरत्पत्र के 'भीकांत' नामक उपन्यास में मन्त्र सीखने के पागल पन का बारबार वर्णन आता है। उस वर्णन की सजीवता तथा मर्मसाहित्य का कारण इस घटना को जानने के बाद मनीषाति समझ में आ जाता है।

'भीकांत' में है कि साँपों की बड़ीबूटी बालने के लिए ही भीकांत तथा इन्द्रनाम साहूजी के यहाँ बड़ी विपत्तियों का सामना करके भी भाया करते थे तथा उससे साँपों को बच में करने का मन्त्र और पत्थर लेने के लोभ में बेट पर बेट चढ़ाते थे। धरत्पत्र स्वयं इसके पीछे बहुत दिनों तक हीराने रहे। जमी संसार-कोप में लिखा था कि यह तो एक धौलों की बनी हुई बात है कि यदि बैल की जड़ ह्रास में रत्नकर किसी भी साँप को पकड़ा जाय तो वह चाहे जितना ही विषमता हो पीरल ही पत्न उतारकर चुप हो जायगा। फिर क्या था धरत्पत्र ने बैल की जड़ भिकारी पर संसारकोप की बात की सत्यता की जाँच के लिए साँप कहाँ से मिसठा। मन्त्र धरत्पत्र और उनके साथी धरत्पत्र त्यागकर साँप की तमास में पड़ गये वर जो साँप घनावास ही मिस जात थे उस दिन बाकूर हो गये थे। धरत्पत्र में एक साँप के बन्धे का पठा गया। धरत्पत्र मारे मृगी के फूले न समाए, वे अपनी बैल की जड़ लेकर पहुँचे। लड़कों के धरत्पत्र से तथा भापने का रास्ता न पाकर वह साँप जो कि घसमी कासा मान था लड़ा हो गया। यही तो बीका था। धरत्पत्र ने धाये बढ़कर बैल की

बड़ उसके सामने कर दी पर धरे यह क्या साँप ने निस्तेज होकर फिर पड़ने की बजाय संसार-कोप की अक्षयता का प्रमाण देते हुए उसी बड़ को कई बार बस मिया। इस प्रकार सारत्बन्ध को सर्पजगत् पर आधिपत्य प्राप्त करने की अभिलाषा त्याग देनी पड़ी। इसी बीच छोकरो में से एक ने साठी साकर सनावन रीति से साँप का संहार किया।

सारत्बन्ध मोल बाँधकर शरारत करने के अन्वेष होने पर भी कभी कभी इस प्रकार मायब हो जाते थे कि उनके नन्ही म पी सहचर उनका प्रतापता नहीं पाते थे। यदि कोई पूछता कि तुम कहाँ गये थे तो इसके उत्तर में वे कहते थे—तपोवन में पर बहु तपोवन कहाँ था इसका पता वे किसी को नहीं देते थे। एक बार उनके बेल-कूब के एक साथी पी सुरेन्द्रनाथ मङ्गोपाध्याय ने (जो उनके दूर के मामा भी समते थे पर ब्रह्म में कम थे) बड़ी मुस्किमों से उनके इस तपोवन में साव जाने की अनुमति प्राप्त की। वे लिखते हैं—

“बोप घराने के दूटे मकान के उत्तर में यज्ञा के ऐन पास ही एक कमरे के नीचे कुछ गीम और करौंदि के पेड़ों के बोड़ी-पी बगह को बिस्कुम धँसेरा कर रखा था। सतामों ने इस बगह को ऐसा बेरबार रखा था कि किसी आदमी के सिवा उसमें बुसना कठिन था। सारत्बन्ध बड़ी सावधानी से एक बगह की सतामों को हटाकर उसके भीतर बसे। भीतर बोड़ी पी साफ-सुमरी बगह थी। हरी-हरी सतामों के अन्दर से ऊनकर सूर्यकिरण उसके अन्दर जाती थी वह रोघनी ऐसी भीठी थी कि देखकर लक्षित प्रसन्न हो जाती थी और चित्त शांत हो जाता था। पास ही एक बड़ा-सा परवार था। उस पर अम्भी तरह पक्षी मागकर बैठते हुए सारत्बन्ध ने साँप को सप्रेम बुझाया—था”

साँप डरते-डरते अन्ध्रम से साव पास जा बैठा। नीचे खरलोठा यज्ञा वह रही थी। दूर पर यज्ञा के उस पार का बुस साफ-साफ लिखाई रहता था। मन्द-मन्द वायु शरीर में एक कोमल स्पर्श देकर बह जाती थी। साँप ने मुग्ध होकर कहा—यह स्वान तो बड़ा सुन्दर है ? — —

धरत्चन्द्र यों ही बड़े सराएँ के तिस पर भागलपुर की ट्रेनिंग। जब धरत्चन्द्र अपने प्रागे किसी को कुछ समझते ही नहीं थे और जब बुधारा घुसा बैकर फिरते थे। इस घुरे के कारण तथा अन्य कारणों से नाब के सब सराएँ लड़क धरत्चन्द्र के अनुमायी हो गये। धरत्चन्द्र के इस विरोह के लिए दूसरे के पोसकों से मछली तथा बाबो से फस चुराना बापों हाथ का खिस था। यह लोग अपने खाने भर का चुराकर ही सन्तुष्ट नहीं होते थे बल्कि जिनको वे गरीब तथा अरुणतमंड समझते थे उनके पर भी पहुँचा घाते थे। श्रीकान्त उपन्यास में धरत्चन्द्र ने इन्द्रनाथ तथा श्रीकान्त के एक साथ बड़ी विपत्तियों का सामना करते हुए मछली चुराने के सबीब बर्नन से जो पन्ने के बाह पन्ने रंग आते हैं वह किसी प्रसस कास्पनिक का कल्पना बिलास नहीं है। घासपास के नाब वाले धरत्चन्द्र तथा उनके गिरोह से इतना परेघात हो गये थे कि उन्हें रँपे हाथों पकड़कर रगड़ डालना चाहते थे पर नाब बाल यदि डार डार थे तो वे पाठ-पाठ थे इसलिये बच पये नहीं तो किसी वोरस्टम बेल में उनकी प्रतिमा को जिन्या दफना दिया जाता।

बहुत से गरीब जिनको अरुणत भी धरत्चन्द्र के पास घाते थे धीर उनकी लूट के मास से किसी तरह उन चारन करके रहते थे। धरत्चन्द्र भी दस्युना मद्यपि फल धीर मछलियों तक ही सीमित थी पर इसका पैमाना छोटा न था। इन सब कामों में सदानन्द नाम का एक मरका उनका सेफिटनेष्ट बना। धरत बाबू ने 'सुभवा' नामक उपन्यास में इसका विहित किया है। जब सदानन्द के घरवालों को ज्ञात हुआ कि वह धरत्चन्द्र के साथ उठता-बैठता है तो उस पर कड़ी नियतमी रखी जाने लगी धीर उस पर परवालों की यह प्रार्था जारी हुई कि वह धरत्चन्द्र के साथ कभी न मिले। एक बार निगरानी से बचकर बीनों मित्र मिल तो उन्होंने जस्टी से तय कर लिया कि प्रविष्य में कैसे मुजादात हुआ करेगी। यह तय हुआ कि सदानन्द के मकान से ली हुए घाम के पेड़ से सीढ़ी लगाकर वे रोज रात के समय सदानन्द के मकान की छत पर पहुँचेंगे।

वहाँ घटरज सगा-सगामा रखा रहेगा फिर दोनों मित्र भूपचाप केनेये । इसके बाद दोनों अपनी मँघ याचाघों में निकसेये फिर दोनों अपने-अपने घर सीटये । वे ऐसा ही करते थे और घर लौटकर अच्छे लड़के की भाँति सोते थे ।

देवानम्हपुर में लौटकर जबकी बार वे बिन लोपों के उत्सर्ग में आये उनमें से केबस सदानम्ह को ही उन्होंने अपनी रचनाघों में स्थान दिया हो एसा नहीं है । 'बिसासी' कल्प का मृत्युञ्जय इसी नाम का रहने वाला समाज से निकाला हुआ एक समाया था । मृत्युञ्जय का अपराध बस इतना ही था कि वह एक कथित नीच जाति की लड़की के साथ प्रेम में पड़ने के बाद उसे उपपत्नी के रूप में न रखकर उसके साथ ही रहने लगा, और उसे पत्नी की मर्यादा देने की बेव्यव की । इसी पर समाज क उकेघारों न उसे समाज से निकाल दिया । जब उसने इस पर भी प्रायश्चित्त करके उस लड़की को त्यागने की बजाय समाज को ही त्याग दिया तो समाज ने जबरदस्ती उसकी स्त्री को अपमानित करके उसे अपमानित किया फिर भी उसने समाज के सामने मुँदने नहीं टेके । अन्त में बड़ी कष्टम परिस्थितियों में उस बेचारे की मृत्यु हुई । लड़की ने आत्महत्या कर ली ।

मृत्युञ्जय की मृत्यु से धरत्बगद समाज की निन्दुरता पर इतने क्रुड हो गये हैं कि कहानी के अन्तिम पैराघाओं में वे इस बात की प्रतीक्षा नहीं करते कि पाठक कहानी से अपना उपसंहार प्राप्त निकास में बल्कि वे स्वयं ही आशेय में धाकर तिलते हैं—

“मुझे मामूम होता है कि जिस देश के नर-नारियों में परस्पर हृदय भीत कर विवाह करने की प्रथा नहीं है बल्कि ऐसा करमा निष्ठा का विषय है जिस देश की नर-नारियाँ घासा करने का सीमाप्य तथा घासाता करने के घवार घानम्ह से हुमेघा के नियु बंधित हैं जिनकी जीवन में न हो कभी जय का मक और न चराय की ब्यथा मोगनी पड़ती है वो भूम करने के दुस्त तथा भूम न करने क आत्मप्रसाद दोनों में से किसी

बसा को भी नहीं पालते जिनके प्राचीन तथा धर्मिक समाज ने देशवासियों को सब तरह के हंगामों से बड़ी सावधानी से प्रभय रक्षकर उनको घाबीबन निरा भ्रष्टा ही बनाव रखा है वहाँ विवाह केवल एक ठका है चाहे वैदिकमर्थों के द्वारा उसका बस्तावेज कितना ही पक्का किया गया हो वहाँ के लोगों के लिए मृत्युञ्जय के संग्राम को समझना टेढ़ी सीर है। बिसासी को जिन लोगों ने बुरा-भसा कहा था मैं जानता हूँ वे सभी साधु गुरुत्व धीर साध्वी बुद्धिगिर्या थीं प्रभय सतीसोक उन्हें मिलेवा यह भी मैं जानता हूँ पर सेख सपेर की सड़की जब उस धर्म्यागत व्यक्ति मृत्युञ्जय को तिस-तिस कर जीत रही थी उसके उस धीरव के एक कस का भी अनुभव करना तो बुर रहा सायब इन लोगों ने कमी घाँस से देखा भी नहीं है।

'पंडित मछाई' उपवास का कुञ्ज बंध्याव भी देवानम्बपुर का रहने वाला था। 'धीकाम्ठ' में जिध 'गलाम छोड़े' बाग का खिकर है कहा जाता है वह धब भी देवानम्बपुर में मौजूद है। देवानम्बपुर के रघुनाथ घोस्वामी के भच्छाई को ही 'धीकाम्ठ' में धीकृष्णपुर का भयाड़ा करक विखलाया गया है।

मोठीबाबू बीर में तो देवानम्बपुर जमे घाये वे पर जब वहाँ बसा नहीं तो वे फिर भागसपुर पहुँचे। धरत्पत्र उन दिनों स्कूल की निम्न खेची में पढ़ते थे। भावसपुर में घाकर वे फिर स्कूल में भर्ती हुए धीर १८२४ वाली १८ साल की उम्र में एट्रेंस पास हुए।

एट्रेंस पास करने के पमाने में ही उन्होंने साहित्य-वर्षा बुरु की धीर 'भासा' (धर) नाम से एक उपवास मिस डाला पर यह रचना उनकी पसन्द के मुताबिक न होने के कारण उन्होंने उसको फाड़ कर फेंक दिया। उनके पिता मोठीबाबू तो किसी रचना को मिसते ही मिसते बीच में निराश होकर छोड़ देते थे किन्तु पुत्र में रचना लभाव्य तो कर भी। यही रीरियत थी। इन प्रकार उन्होंने अपनी कई रचनाओं को फाड़ डाला था बहुत से लोग जो तमभने हैं कि धरत्पत्र में एकाणक परिपूर्ण

प्रतिभा का अधिकारी होकर साहित्य-क्षेत्र में पदापन किया वे कितनी प्रकृति पर हैं यह इसी बात से प्रमाणित है। मन्त्रों के सम्बन्ध में उनका धारणा उच्च था तभी वे अपनी अस्पष्ट रचनाओं को बमठा के समल लागाना नहीं चाहते थे। यह भीरव साधना क्यों तक चमती रही।

एकदम पास करने के बाद शरत्चन्द्र भागलपुर के मेखनारायण जुबिनी कामेज में भर्ती हुए। वे रबीन्द्र साहित्य के साथ बँकने विकसित मिले हैं। उच्च धारि के उपस्थास पढ़न मने। उन्होंने हेनरी उच्च के प्रमिष्ठ उगम्यास ईस्टीन के आधार पर 'अभिमान' नाम का एक उपग्यास लिखा था साब ही उन्होंने येरी शारंसी के 'आईटी ऐम' पुस्तक का बमना अनुवाद किया था पर इनको उन्होंने कभी छपने न दिया। जब तो इन सब पुस्तकों का कोई अस्तित्व भी नहीं रहा। शरत्चन्द्र ने जब मिलने पढ़न की धोर ग्यान दिया था पर इनका धर्म यह मही कि उन्होंने अपना अचरती जीवन छोड़ दिया था। राजु जब भी मोपूद था जब तो इन विनयुमनों का राठ-राठमर पता नहीं मगता था न मामूम कहाँ य रात्रि म्यतीव करते थे। पर बामों ने समझया यह कुरी बात है पर वे माने नहीं। पर बालों ने इनसे अधिक समझ कर उार दासना उचित नहीं समझ क्योंकि ऐसा करने पर शायद वे पर छोड़कर आम निकलते। फिर पढ़ने-लिखने में वे धम्ये हो ही बने न इजलिय पर बामे अधिक धड़छाड़ करना ठीक नहीं समझते थे।

उनके लड़कपन के साथी श्री सुरेन्द्रनाथ यङ्गोपाध्याय न सिखा है—कामेज के प्रथम वर्ष में विज्ञान की परीला से पहले की राठ सं शरत्चन्द्र ने हम सोपों से कहा थाय राठ को कोई मेरे पास पढ़न मठ घाना जिसका जो पुछना हो कस धाकर पूछे। हम मीय तो बने मने वे पढ़ने मने। हम हमरे विम मबेरे गय तो वे नाचन होकर कहने मने— हमने तो तुम सोपों में धमी कहा था कि कोई न घाना, मैं धाय न पढ़ाऊँगा फिर तुम सोम क्यों धाये। हम लीगों ने जब दशाया टि सवेरा पत्र का हो बुझा है तब उन्होंने जीपते लोमै तो उन्हें पता मवा कि राठ बीन

बसा जो भी नहीं पासते जिनके प्राचीन तथा धर्मिष्ठ समाज ने देशवासियों को सब तरह के हंगामों से बड़ी सावधानी से प्रसव रलकर उनको प्राचीनन निरा प्रच्छा ही बनाये रका है जहाँ बिबाह केवल एक ठका है बाहे बैदिकसंनों के हाथ उसका बस्ताबेज चिठना ही पबका क्रिया गया हो जहाँ के लोगों के लिए मृत्युञ्जय के संश्राम को समझना टैडी लीर है । बिबासी को जिन लोगों ने कुरा-जला कहा बा, मैं जानता हूँ के सभी सामु ब्रह्म घीर साम्नी बुद्धिबियाँ भी प्रसव सठीलोक उन्हे मिलेगा यह भी मैं जानता हूँ पर सेज सपेर की सङ्की जब उस प्रम्यागत व्यक्ति मृत्युञ्जय को तिस-तिस कर पीत रही थी उससे उस पौरज के एक कण का भी प्रनुभव करना तो कुर रहा सायब इन लोगों ने कनी प्रीत से बेसा भी नहीं है ।”

‘पंडित मसाई’ उपन्यास का कुञ्ज बन्धन भी देवानम्पुर का रहने वाला बा । ‘श्रीकान्त’ में जिस ‘पलाय बोई’ बाण का बिकर है कहा जाता है वह घब भी देवानम्पुर में मौजूब है । देवानम्पुर के रतुनाथ योत्सामी के सजाड़े को ही ‘श्रीकान्त’ में श्रीकान्तपुर का प्रग्राका करके दिखामा गया है ।

मोतीबाबू श्रेष्ठ में ही देवानम्पुर जमे प्राये से पर जब जहाँ बना नहीं तो के फिर भागतपुर पहुँचे । छारद्वन्द्व उन दिनों स्कूल की निम्न श्रेणी में पढ़ते से । भागतपुर में प्राकर के फिर स्कूल में मर्ठी हुए और १८६४ यात्री १८ साल की उम्र में एन्ट्रेस पाठ हुए ।

एन्ट्रेस पाठ करने के बमाने में ही जन्होंने साहित्य-बर्षा धुक की घीर ‘बासा’ (घर) नाम से एक उपन्यास लिख जाला पर यह रचना उनकी पठन्य के मुताबिक न होने के कारण जन्होंने उइको फाड़ कर फेंक दिया । उनके पिता मोतीबाबू तो किसी रचना को लिखते ही लिखते बीच में निराध होकर डौड़ देते से किन्तु पुत्र ने रचना समाप्त तो कर बी । यही लीरियत थी । इस प्रकार जन्होंने अपनी कई रचनाओं को फाड़ जाला बा बहुत से लोग जो समझते हैं कि छारद्वन्द्व ने एकाएक परिपूर्ण

प्रतिभा का अधिकारी होकर साहित्य-राज में पदार्पण किया है किन्तु नी जसवी पर है यह इसी बात से प्रमाणित है। मैत्रों के सम्बन्ध में उनका भावसे उच्च वा सभी के अपनी अपुष्ट रचनाओं को जसता के समस्त माना नहीं चाहते थे। यह नीरव साधना क्यों तब जसती रही।

एम्प्रेस पास करने के बाद सरत्चन्द्र भागलपुर के लेखनाराम्य बुबिली कामेज में जती हुए। वे रबीन्द्र साहित्य के साथ धीकरे, डिसेम्बर मियेज हैनरी उड बाबि के उपन्यास पढ़ने लगे। उन्होंने हैनरी उड के प्रसिद्ध उपन्यास ईस्टीन के आधार पर 'समिमान' नाम का एक उपन्यास लिखा था साब ही उन्होंने मेरी कारंसी के 'माईटी ऐटम' पुस्तक का बँमजा अनुवाद किया था पर इनको उन्होंने कभी अपने न दिया। जब तो इन सब पुरखों का कोई अस्तित्व भी नहीं रहा। सरत्चन्द्र ने अब मिलने पढ़ने की ओर ध्यान दिया था पर इतका धर्म यह नहीं कि उन्होंने अपना घरघरती जीवन छोड़ दिया था। राजू जब भी मौजूद था जब तो इन भिन्नयुगलों का रात रातभर पता नहीं समठा था न मामूम कहीं वे राजि व्यतीत करते थे। घर वालों ने समझाया यह कुरी बात है पर वे माने नहीं। घर वालों ने इससे अधिक समझ कर ओर डासना उचित नहीं मयमा क्योंकि ऐसा करने पर साबद व घर छोड़कर माम निकलते। फिर पढ़ने लिखने में वे धमसे हो ही पये थे इतलिव घर वाले अधिक सेइकाइ करना ठीक नहीं समझते थे।

उनके लड़कपन के साथी श्री सुरेन्द्रनाथ बङ्गोपाय्याय ने लिखा है—कामेज के प्रथम वर्ष में विज्ञान की परीक्षा से पहले की रात में सरत्चन्द्र ने हम लोगों से कहा आज रात को कोई मेरे पास पढ़ने मत आना जिसको जो पुछना हो कम साकर पूछे। हम लोग तो जने बने थे पढ़ने लगे। हम दूसरे दिन सबेरे लगे तो वे नाराज होकर कहने लगे— हमने तो तुम लोगों से सभी कहा था कि कोई न आना मैं आज न पढ़ाऊँगा फिर तुम लोग क्यों आये। हम लोगों ने जब बताया कि सबेरा कम का ही बुका है तब उन्होंने बोपने लगे ता उन्हें पता गया कि रात बीत

बुकी है। इस प्रकार छात्रचन्द्र पुनः के पूरे पत्रके से धीर पुनः के सामने बिन-पात एक कर देते थे।

छात्रचन्द्र ने स्वयं ही अपने विषय में लिखा है—“जिस परिवार में मैं पनपा वहाँ काव्य-उपन्यास पढ़ना असम्भारिता का प्रतीक तथा संगीत असुरम था। वहाँ सभी लोग परीक्षा पास करके बकील बनने में ही अपनी इतिकर्तव्यता समझते थे पर अकस्मात् यहाँ भी एक अश्लि-सी हो गई। हमारे एक रिस्तेदार बिदेस में रहकर कामेज में पढ़ते थे वे घर में आते तो देखा गया कि वे संगीत में धनुराम रहते हैं धीर काव्य में भी जगदी बिलचस्पी है। एक दिन उन्हें पर भर की घीठों को इकट्ठी कर रबीन्द्रनाथ लिखित ‘प्रकृतिर प्रतिरोध’ सुनाया। किसने कितना समझ पटा नहीं पर जो पढ़ रहे थे उनके हाथ मेरी धाँसों में भी धाँसू धा बने फिर भी दुर्बलता न जाहिर हो जाय इसलिये मैं उठकर बस्ती से बाहर चला गया। फिर रबीन्द्र काव्य के हाथ दुबारा परिचय हुआ तो उसका पहला यथार्थ परिचय मिला। अब ऐसा हुआ कि इस परिवार के बकील बनने के बातावरण में भी बबड़ा गया धीर में लौटा पुराने गाँव के मकान में। पर अब की बार ‘बोभोरब’ नहीं पिताजी की टूटी हुई झलमारी खोसकर मैंने ‘हरिदास की पुस्त बाँटें’ तथा ‘भवानी पाठक’ निकाला। बुजुर्गों को बोध नहीं दे सकता ये पुस्तकें स्कूल की पाठ्य पुस्तकें तो थीं नहीं इसलिये बुरे लड़कों के योग्य अपाठ्य पुस्तकें थीं। अतः उनको पढ़ने के लिए मुझे चाँदी का आभय देना पड़ा। मैं पढ़ता चाँची सुनते। अब पढ़ता नहीं हूँ लिखता हूँ उन्हें भीम पढ़वा है, पता नहीं।

“मास्टर साहब ने स्नेहबश एक बिल मुक्तो इतना इशास किया कि एक स्कूल में अधिक बिल पढ़ने से बिद्या अधिक नहीं आती। अतएव फिर सहर लौटा। इसके बाद फिर स्कूल बदलने की जरूरत न हुई। अब मुझे बंकिम चंदावनी का पता लगा। उपन्यास-साहित्य में इनके आगे भी कुछ हो सकता है, यह मैं उस जमाने में सोच ही नहीं सकता था।

इसको मैंने इतनी बार पढ़ा कि पुस्तकें जैसे कंठस्थ हो गईं। चायव यह मेरा एक दोष है। मैंने उनके ध्वज धनुकरण की भी नैप्टा की। रचना की दृष्टि से देखा जाय तो वे एकदम व्यथ हुए थे पर यदि छाषना की दृष्टि से देखा जाय तो उनका संशय मन में धक् भी धनुमक् करता है।

“इसके बाद ‘बपवर्धन’ पत्रिका के क्व पर्याय का मुय छाया र्जीमनाय की ‘घाँब की किरकिरी’ (कोडेर बालि) उस समय उसमें वारावाहिक रूप से प्रकाशित हो रही थी। माया तथा धमिक्मिक् की नवीन रोपनी घाँब में भाकर जैसे चुन गई। उस दिन की घम्भीर तथा कुटीरध धनुमृति की वह स्मृति मैं कभी नहीं भुमूंगा। किसी बात को ऐसे कहा जा सकता है दूसरे की कस्यना की तसबौर में पाठक धपने मन को ऐसे देक पाता है, इसके पहले मैंने कभी स्वप्न में भी नहीं सोचा था। इतने दिनों के बाद मुझे केवल साहित्य का ही नहीं अपने मन का भी एक परिचय मिला। बहुत पढ़ने पर ही बहुत हासिम होता है यह बात नहीं। इन कुछ पत्रों के जरिये वे जिन्होंने इतनी बड़ी सम्बदा मेरे हाप में पहुँचा दी उनको कृतज्ञता प्रकट कर्हें तो कैसे कर्हें ?

“इसके बाद साहित्य के साथ पेरु बिछोह हुमा मैं मूस हो गया कि कभी मैंने एक पंक्ति भी लिखी है। बहुत दिनों तक प्रकाश में ही कटता रहा इस बीच मैं कवि को केन्द्र बनाकर किस भाँति बँपना साहित्य इतता के साथ उन्नति करने मया मैंने उसका कुछ पता भी नहीं पाया। कवि के साथ न तो मुझे कभी धनिप्यता का ही सीमाप्य हुमा न उनके पास बँठकर मैंने कभी साहित्य की पिछा ही पाई, मैं एकदम बिच्छिन्न था। पर यह हुमा बाहरी साथ भीठरी साथ इसके बिजकुन ही विपरीत था। जस विदेश में मेरे साथ कवि की कुछ पुस्तकें काव्य तथा कथा साहित्य था। मन में उनक प्रति की परम भडा तथा बिरबास। उस बीरान मैंने धुम-निकरकर उणीं कुछ पुस्तकों को बार-बार पढ़ा। उनमें एम् कौन-सा है घदार बिठने हैं घाट क्या है उसकी परिभाषा क्या है कजन में कोई त्रुटि है कि नहीं इन सब बड़ी-बड़ी बातों को मैंने कभी

सोचा भी नहीं यह सब मेरे निकट बाहुस्यमात्र था। केवल मुझ प्रत्यय के लीर पर मेरे मन में यह था कि इससे पूर्वतर सृष्टि कोई नहीं हो सकती क्या काव्य क्या कथा-साहित्य में। यही मेरी पूंजी थी।

एक दिन जब एकाएक साहित्य-सभा की पुकार आई तब मैं जीवन पार कर प्रीतिता के इलाक में कदम रख चुका था। देह बकी हुई तथा उद्यम सीमित था सीखने की उम्र बीत चुकी थी। मैं प्रवास में रहता था सब से विच्छिन्न तथा सब के लिए अपरिचित फिर भी मेरे मन में मय नहीं आया।

मेरा बचपन तथा जीवन कठोर मरीची में बीते थे। पैसों की कमी के कारण ही मुझे छिछोरासाम का सीमान्त न हुआ। मैंने अपने पिता के निकट अस्तिर स्वभाव तथा मन्मीर साहित्यानुयाय के प्रतिरिक्त उत्तरा विकार-सूत्र में कुछ नहीं पाया। पिता से पाये हुए प्रथम मुज के कारण मैं बोड़ी ही उम्र में सारे भारत की परिक्रमा कर आया था और पिता से पाये हुए द्वितीय मुज के कारण मैंने जीवन भर स्वप्न ही देखा। मेरे पिता का पंडित्य अमात्र था। कहानी उपन्यास नाटक कविता-साहित्य के हरेक विभाग में उन्होंने हाथ डाला था पर इनमें से किसी को उन्होंने समाप्त नहीं किया। उनकी रचनाएँ अब मेरे पास नहीं हैं, अब कहीं कैंसे को मई यह भी याद नहीं पर यह याद है कि उनकी अक्षमाप्त रचनाओं को पढ़ते-पढ़ते मेरे बंटों कट जाते थे। वे इन्हें समाप्त क्यों नहीं कर गये इस बात पर मुझे बड़ा अफसोस रहता था। अक्षमाप्त अंध क्या हो सकते हैं यह सोचकर मैं रातें बिना सोए काट देता था। कदाचित् इसी कारण मैंने सबह सात की उम्र में कहानी लिखना शुरू किया। पर कुछ दिनों बाद यह कह कर कहानी लिखना छोड़ दिया था कि यह आससियों का काम है। उनके बाद कई सात निकल गये, मैंने कमी एक भी पंक्ति लिखी थी यह भूल गया।

“मठारह सात की उम्र के बाद एक दिन मैंने लिखना शुरू किया। इसका कारण वही पुर्बतना की तरह ही आकस्मिक था। मेरे कुछ पुराने

मित्र एक छोटा-सा मासिक पत्र निकालना चाहत था पर प्रतिष्ठित लेखकों में से किसी ने इस सामान्य पत्रिका में लिखना स्वीकार नहीं किया। मजबूरी से कुछ मित्रों ने मुझे स्मरण किया। बड़ी कोशिश के बाद वे मुझसे लेख लेखने का वादा करा पाये। यह १९१३ की बात है मैं मीनराजी था। किन्ती प्रकार उनके हाथों से झुटकारा पाने के लिए मैंने सख्त बेना स्वीकार किया था। मेरा उद्देश्य यह था कि एक दफे रद्द पहेँच जाऊँ तो फिर समझ लेंगा पर बिट्टी के बाद बिट्टी तथा तार के बाद तार पाकर मुझे फिर सचमुच ही काम पकड़नी पड़ी। मैंने उनही तब प्रकाशित 'यमुना' के लिए एक छोटी कहानी भेजी। यह कहानी प्रकाशित होते ही बंगला के पाठक-समाज में एसकी कद्र हुई। मैं भी एक ही दिन में प्रसिद्ध हो गया। फिर तो मैं जैस ही गया और तब से बराबर लिख रहा हूँ।"

परत्पन्ध की पिछा यों सतम हुई कि जब एक-एक की परीक्षा का समय आया तो प्रोस के २०) रुपये न जुटने के कारण उन्हें पढ़ना मिन्नता छोड़ देना पड़ा। इसका फल यह हुआ कि वे फिर बुरी तरह कुर्सपति में पड़ गये। पर उनमें साहित्यवर्षा की जो प्यास उत्पन्न हो चुकी थी जना उम्रस निवृत्ति जैसे होती। वे भीतर ही भीतर साहि त्यागुगीमन करने लगे। वे कविता के बहुत प्रेमी थे पर उनकी प्रतिभा कविता के समुद्रम न होकर लेंचों की तरह गछानुकूस थी इमी कारण वे यद्य ही मिला करत थे। पर एक-एक पन्थ तथा शब्द की उची माँति सापना करत थे जैसे कवि करत है। जब तक एक भी शब्द उनकी रचि के अनुसार हाल में रह जाता था और जब तक वे उसे हटा कर दूसरा मौजू न कर नहीं बैठे लेते थे तब तक उन्हें रचि नहीं पड़ती थी। यह बात नहीं कि कविता मिलान की उन्होंने बेपटा नहीं की 'पुनकने मपदे पापुन' नाम से उन्होंने एक अनुकाम कविता एक भी की थी पर बीच में ही 'हमसे यह नहीं होना का' कहकर छाड़ दिया। पापद के निर्मा भी कविता को कभी पूरी नहीं कर पाये पर बार-बार प्रसफम

सोचा भी नहीं यह सब मेरे निकट बाहुस्वभाव था। केवल मुझ प्रत्यम के तौर पर मेरे मन में यह था कि इससे पूर्वतर सृष्टि कोई नहीं हो सकती क्या काव्य क्या कथा-साहित्य में। वही मेरी पूँजी थी।

‘एक दिन जब एकाएक साहित्य-सेवा की पुकार आई, तब मैं जीवन पार कर प्रौढ़ता के इसाके में कदम रख चुका था। बेह पकी हुई तथा उच्चम सीमित था सीपने की उन्नत भीत चुकी थी। मैं प्रवास में रहता था सब से विभिन्न तथा सब के लिए अपरिचित फिर भी मेरे मन में मय नहीं आया।

‘मेरा बचपन तथा जीवन कठोर बरीबी में बीते थे। पैसों की कमी के कारण ही मुझे शिक्षाभाष का सीभाग्य न हुआ। मैंने अपने पिता के निकट यस्विर स्वभाव तथा यन्मीर साहित्यागुरुग के अतिरिक्त उत्तर-विकार-मूत्र में कुछ नहीं पाया। पिता से पाये हुए प्रथम गुण के कारण मैं थोड़ी ही उन्नत में सारे माण्ड की परिक्रमा कर आया था और पिता से पाये हुए द्वितीय गुण के कारण मैंने जीवन भर स्वप्न ही देखा। मेरे पिता का पांडित्य अभाव था। कहानी उपन्यास नाटक कविता-साहित्य के हरेक विभाग में उन्होंने हाथ डाला था पर इनमें से किसी को उन्होंने समाप्त नहीं किया। उनकी रचनाएँ अब मेरे पास नहीं हैं कब कहीं कैसे जो बर्द यह भी याद नहीं पर यह याद है कि उनकी असमाप्त रचनाओं को पढ़ते-पढ़ते मेरे बंटों कट जाते थे। वे इन्हें समाप्त क्यों नहीं कर बदे इस बात पर मुझे बड़ा अफसोस रहता था। असमाप्त अंश क्या हो सकते हैं यह सोचकर मैं रातों बिना सोए काट देता था। कदाचित् इसी कारण मैंने सत्रह साल की उन्नत में कहानी लिखना शुरू किया। पर कुछ दिनों बाद यह कह कर कहानी लिखना छोड़ दिया था कि यह आसक्तियों का काम है। उसके बाद कई साल निकल गए, मैंने कभी एक भी पंक्ति लिखी थी यह भुल गया।

‘घटरह साल की उन्नत के बाद एक दिन मैंने लिखना शुरू किया। इसका कारण बंधी दुर्बलता की तरह ही आकस्मिक था। मेरे कुछ पुराने

विश्व एक छोटा-सा साहित्य पत्र निकालना चाहते थे पर प्रतिष्ठित मजदूरों में से किसी ने इस सामान्य पत्रिका में लिखना स्वीकार नहीं किया। मजदूरी से कुछ दिनों में मुझे स्मरण किया। बड़ी कोशिश के बाद वे मुझे लेख लेखने का वादा करा पाये। यह १९१३ की बात है मैं नीमराजी था। किसी प्रकार उनके हाथों से छुटकारा पाने के लिए मैंने गन्ध देना स्वीकार किया था। मेरा उद्देश्य यह था कि एक दफे रुक पड़ने जाऊँ तो फिर समझ लूँगा पर चिट्ठी के बाद चिट्ठी तथा तार के बाद तार पाकर मुझे फिर मजबूत ही काम पकड़नी पड़ी। मैंने उनकी नव प्रकाशित 'यमुना' के लिए एक छोटी कहानी लिखी। यह कहानी प्रकाशित होते ही बीकानेर के पाठक-समाज में इसकी चर्चा हुई। मैं भी एक ही दिन में प्रसिद्ध हो गया। फिर तो मैं फेम ही गया और तब से बराबर लिख रहा हूँ।"

परशुराम की घिमाओं का वक्तुम हुई कि जब ए० ए० की परीक्षा का समय आया तो फीस के २०) रुपये न जुटने के कारण उन्हें पढ़ना लिखना छोड़ देना पड़ा। इसका फल यह हुआ कि वे फिर बुढ़ी तरह कुसयति में पड़ गये। पर उनमें साहित्यकर्मी की जो प्यास उत्पन्न हो चुकी थी भया उससे निवृत्ति कर्मे होती। वे भीतर ही भीतर साहित्य आनुनीपन करना लगे। वे कविता के बहुत प्रेमी थे पर उनकी प्रतिभा कविता के अनुकूल न होकर फेंकों की तरह गद्यानुकूल थी इनी कारण के वद ही लिखा करते थे। पर एक-एक पंक्ति तथा एक ही उनी मांति भाषना करते थे जैसे कवि करते हैं। जब तक ए० ए० की परीक्षा के अनुसार हान न रह जाता था और जब तक वे उसे हटा कर दूसरा मौजूदा नहीं बीटा मेटे थे तब तक उन्हें रीत नहीं पड़ती थी। यह बात नहीं कि कविता लिखने की उम्मीदें केप्टा नहीं की 'सुषमन लदेय पाठन' नाम से उन्होंने एक अनुकूल कविता शुक थी की थी पर बीच में ही 'हमसे यह नहीं होना का' कहकर छाड़ दिया। शायद वे किसी भी कविता को कनी पूरी नहीं कर पाये पर बार-बार प्रसक्त

होने पर भी उन्होंने कई बार कवि बनने की चेष्टा की। रबीन्द्रनाथ के युग में पैदा होकर तथा उन्हीं की भाषा में लेखनी चारणकर कवि बनने की यह चेष्टा जब समय में आयी है। आज भी बंगला के अनेक कहानी लेखक तथा उपन्यासकार कुछ न कुछ कविता लिखने की चेष्टा करते हैं यद्यपि उनमें से अधिकांश की प्रतिभा सम्पूर्ण रूप से गद्य की ही प्रतिभा है।

अन्ततः प्रोफेसर ने भी पहल-पहल कविता लिखना शुरू किया था पर सरल बाबू की तरह उनकी सब कविताएँ असम्पूर्ण ही नहीं रह गईं बल्कि उन्होंने तो एक कविता-संग्रह भी प्रकाशित किया था पर इसके बाद वे गद्य की ओर ही इत्ते धीरे धीरे प्रामाण्य गद्य ही लिखते रहे। चरत्चन्द्र की कोई कविता या कविता-संग्रह कभी प्रकाशित नहीं हुआ पर कविता लिखने के लिए उन्होंने जो साधना की थी वह उनके उपन्यासों की भाषा में स्पष्ट है। कहीं-कहीं तो उनकी भाषा उद्दीप्त होकर कविता मयी हो गई है।

चरत्चन्द्र के भेदुत्व में भागलपुर में एक साहित्यिक बोली कायम हो गई थी। इसमें सर्वश्री सुरेन्द्र गङ्गोपाध्याय गिरीशनाथ बङ्गोपाध्याय निरुपमा बेबी विभूतिभूषण मट्ट योसेलचन्द्र मजूमदार आदि थे। इस से सभी ने बाद में बंगला साहित्य में ख्याति प्राप्त की। इस बोली के समापति सरल बाबू थे। कविता तथा कहानी लिखना ही इस बोली का एकमात्र कार्यक्रम था। हाँ कबीन्द्र रबीन्द्र के काव्य की आलोचना करना भी इस बोली के सदस्यों का प्रिय कार्य था। समापति विषय वे देते थे सदस्यों को सात दिन के अन्दर अपनी रचनाएँ समापति के सामने पेश करनी पड़ती थी। समापति सबको नम्बर देते थे। इतनी उम्र में ही वे इस प्रकार नम्बर देते थे और यह सब होनहार नौजवान उनकी पेश-बाई को मान लेते थे इसी से यह बात स्पष्ट है कि उसी उम्र में वे इतना साहित्यिक उत्कर्ष को पहुँच चुके थे कि लोप बिना भीषण के उनका नम्बर देना स्वीकार कर लेते थे।

इसी बनाने में कुछ कट्टरपंथियों से चरत्चन्द्र का संघर्ष हुआ। चरत्

बन्धु को इस उम्र में ही जीवन के बहुत तरह के ठोस-नीप का अनुभव हो चुका था साहित्य से भी उनका परिचय गम्भीर तथा विस्तृत हो चुका था पर अभी सरत्चन्द्र बनने के लिए एक बात की कसर थी वह यह कि वे अपनी समाज के निष्ठर मूढ़ बुद्धि-विरुद्ध भावधरण तथा मति से कम परिचित थे। वह परिचय उन्हें अब मिलने वाला था। भागम पुर के बंगालियों में उन दिनों दो दल थे। एक तो बिलकुल कट्टर तथा पौरोपायनी था इसके नेता सरत्चन्द्र के माना श्री केदारनाथ गङ्गोपाध्याय थे दूसरा सुधारक दल था इसके नेता श्री सिबचन्द्र बन्धोपाध्याय थे। सिबचन्द्र विभागत हो भाये थे वहीं से सौदमे पर बकासत में उन्हें बड़ी सफलता मिली थी। ब्रिटिश सरकार ने उन्हें राजा की उपाधि भी दी थी। विभागत जाने के कारण सिबचन्द्र समाज से निकास भी दिये गये थे। कई बार उन्होंने प्रायश्चित्त आदि करके समाज में शामिल होना चाहा, इस पर भी जब कट्टरपंथी नहीं माने तो उन्होंने कट्टरपंथियों को बिलकुल झूठा दिखा दिया और अपने नेतृत्व में सुधारकों को संगठित किया।

बन्धोपाध्याय सागों के मकाम के पास ही सिबचन्द्र का मकान था। सिबचन्द्र की एक तो आर्थिक हासत घबड़ी थी दूसरे उनके यहाँ कोई सुभासुत का बिचार न होने के कारण बीरबान लोग बड़ी जमते थे। फिर बड़ी कसरत करन के साधन थे साथ ही वहाँ एक विक्टर पार्टी भी मौजूद थी। सरत्चन्द्र को पारिवारिक दृष्टि से तो गंगोपाध्यायों का साथ देना चाहिये था क्योंकि वे पौरोपायनियों के नेता केदार बाबु के परिवार के ही अन्तर्मुक्त थे पर यह बात सरत्चन्द्र का सिबचन्द्र के यहाँ एकदुई बीरबानों से अधिक दिन तक दूर न रस सकी। वे बहुत तो छिपकर जाने लगे पर जब बात जैस गई तो खुलेघास जाने लगे।

सरत्चन्द्र अपने गुणों के कारण जल्दी ही इस दल के एक मुख्य व्यक्ति हो गए। उनके मित्र राजु भी इस दल में दूब जमके। इन लोगों के प्रथि नय की इतनी प्रशंसा हुई कि भागमपुर के बंगालियों के बाहर भी इनकी पुम हो गई। इस बात से विरोधी दल बाल बहुत चबरा गये। वे इस प्रथि

नेतारस के पीछे हाथ भीकर पड़ गए, बुरे मन सब तरीके से इसका निष्ठा चरण किया और सभी ससि सी जब इस बल को तोड़ दिया। जिन परों के सड़के इन घमिनयो मे माय सेते ये वे सभी समाजभ्युत किये गये। पाठन स्मरण रखें कि यह कोई पबई पाँच की बात नहीं बल्कि भागलपुर म रहन बासे उच्च शिक्षाभिमात्री बंगालियों का अपरम वा। उसीसभी शताब्दी प्रथ पतम हा रही थी। सरत्चन्द्र को भी समाज निकासी दिया गया। मयोपाध्यायों के यहाँ बड़े समारोह के साथ जयदात्री पूजा होती थी। इस अवसर पर भागलपुर के सारे प्रवासी बंगाली एकज होते। यदि नहीं घासे ये तो कमल शिबचन्द्र और ऐसे ही कुछ लोग। सरत् चन्द्र हर साल ऐसे अवसर पर शतहस्त होकर प्रतिपियों की सेवा करते थे पर अब की बार सरत्चन्द्र को देखकर निमग्नित घम्यागत भावबभूता हो गये और उन लोगों ने कहा कि यदि सरत्चन्द्र ने जाना परोसने में हाथ बँटाया तो हम यहाँ पानी भी न पीकर उठ जायेंगे। इसका मतीबा यह हुआ कि सरत्चन्द्र अपने ही मामा के परिवार में प्रभूत की तरह कुतकार कर निकास दिये गये। रामचन्द्र ने बर्म की रक्षा के लिए सीता को बिना अपराध ही त्याग दिया था फिर उसी बर्म के ठकेवार सरत्चन्द्र का प्रभूत क्यों न समझते। इस बटना से सरत्चन्द्र के मातृक हृदय को बड़ी ठेस पहुँची और वे सब छोड़छाड़कर घर से चले पडे। इस समय वे एफ० ए० के द्वितीय वर्ष के छात्र थे। छ महीने बाद वे प्रोफेसर इन्वहाल वेन के लिए भागलपुर सँगे पर बीसा कि हम पहले ही निष्क चुक हैं २) ४ फ्रीड न चुटा पाने के कारण वे परीक्षा में न बैठ सके। २) ४ के इसी कारण नहीं चुटा पाय कि इनक ननिहाल के लोग इनके बिठठ थे। इस प्रकार छात्र जीवन की तां यही समाप्ति हुई।

१८९३ के नवम्बर म सरत्चन्द्र मातृहीन हा बडे। पिता की पिरौ धार्मिक हालत को देखकर सरत् बाबू ने बानसी इस्टेट के श्री शिबचंकर शाहू के यहाँ नौकरों कर ली। यहीं इनको धिकार का बरका मय मया तथा ये बीबी बसाने मे धुरन्धर हो गये। उबती बिड़ियों को भी ये मार सेते

ब। अपने उपन्यास 'भीकान्त' में उन्होंने पिबरांकर साहू को कुमार साहू के नाम से चित्रित किया पर साहूजी का नाम एक सेबक ने महादेव साहू मिला है साब ही कहा है कि धरतृचन्द्र साहूजी के नियमित पीकर नहीं ब बत्कि मुसाहिब के तौर पर ब। इस बर्नन के अनुसार धरतृचन्द्र और महादेव साहू की अंत प्रचालक हुई थी। संशोध की पारबसिठा के कारण साहूजी बारबार उन्हें बुलाते थे इसलिये धीरे-धीरे धरतृचन्द्र ने उनके यहाँ अपना स्थान बना लिया था। इन दोनों में से कौन-सा बर्नन सत्य है पता नहीं पर यदि 'भीकान्त' उपन्यास की गवाही की जाय तो वह द्वितीय बात के हक में ठहरेगी।

धरतृचन्द्र के पिता की तरह-तरह के पत्थरों के संग्रह करने का एक मज-सा बा, उनके इस शौक के कारण एक पूरा बक्स तरह-तरह के पत्थरों से भरा था। धरतृचन्द्र के निकट इनकी कोई कद नहीं थी उन्होंने पिता की अनुपस्थिति में इन पत्थरों को उठाकर एक घनी मित्र को दे दिया। जब माठीबाब को इस बात का पता लगा तो वे बहुत विगड़े धरतृचन्द्र को इस बात से इतनी खानि हुई कि वे फिर एक बार पर छोड़ कर निकस गये।

यह ही बार उन्होंने बेगमा प्रहल कर लिया और मारे-मारे फिरते रहे। भीकान्त में संम्पाद्य जीवन के तजबों का बड़ा रोचक वचन है। हम उनमें से कुछ ही बातों का बचन करेंगे। भीकान्त (धरतृ बाबू?) ने मटकते-मटकते एक दिन बेगमा कि एक घाम के बाग से चुर्पा निकस रहा है। वे तिलते हैं—“मुझे ख्यायवास्तव मातृम का इसलिय चुर्पा देखकर खाय का ज्ञान मैंने निश्चित समझा सब बात तो यह है कि मैंने घाम के हेतु का भी अनुमान कर लिया इसलिये बत्की ही उस तरह बड़ा तो बेगमा पया है कि यह तो मन्थामी का प्रच्छा लाता पायम है। प्रच्छा घूमि के रूप लटे में खाय का पानी बहा हुआ था। बाबाजी घामो घाँस मुँदे हुए सामने ही विचरमान के पीर उन्ही के घाम-वाय पीना पीने

साथ यह शरत् बाबू के जीवन की ही बटना है।

इस बार धरत्चन्द्र की प्रवारागर्दी का यह जीवन कई वर्षों तक चला। संन्यासी-जीवन के घासिरी दिनों में ब मुजफ्फरपुर में वे वहाँ १९०१ में उनको प्रकस्मात् अपने पिता की मृत्यु की खबर मिली बस ये साइकल पर वहाँ से भागलपुर पहुँच। यहाँ रहते समय उन्होंने 'ब्रह्मदेव्य' नाम से एक उपन्यास लिखा था पर जिनके पास रख गये थे उन्होंने इसकी पांडुलिपि लो वाली। साहित्य का परम दुर्भाग्य था और क्या कहा जाय ?

इस पितृविद्योग स्त्री भ्रंशकर विपत्ति के समय मी मामा-भूम की बिरहता के कारण उनको पिता का आश्रय छोड़ने के लिए एक कौड़ी की सहायता नहीं मिली। अतएव उन्हें अपनी एकमात्र चायदाद साइकल बेचकर किसी तरह यह सब काम करना पड़ा। अब उनके सामने बड़ा कठिन प्रश्न थाया छोटे भाई-बहनों का भार जन्हीं पर पड़ा। इस घुड़भार से उनका प्रवारागर्द मन बिहोड़ कर उठा पर साथ ही प्रेम तथा कर्तव्यबोध ने उन्हें विश्वास किया। वे फिर नीकर होने को तैयार हो गये। इसमिये वे कमकत्ता जाने को तैयार हुए, पर भाई-बहनों को वहाँ छोड़ते ? बंजरपुर के बिस भकान में मोतीबाबू रहते थे उसकी मासकिन उनकी छोटी बहिन को बहुत चाहती थी इसमिये वह तो नहीं रही। आसनसन में एक रिस्तेदार ने एक भाई को अपने पास रखकर तार का काम सिक माना स्वीकार किया। जलपाईपुड़ी के एक रिस्तेदार ने छोटे भाई को अपने पास रखना स्वीकार किया। कमकत्ते के एक बकीस रिस्तेदार ने पास शरत् बाबू स्वयं रहकर मीकपी की उलास करने मये पर इसके लिए उन्हें बकीस साहब के पास आवे हुए हिन्दी कागजात का अनुवाद करना पड़ता था तथा रोज जाकर ठरकारी करीयनी पड़ती थी। इस प्रकार मोतीबाबू के मग्ते ही शरत् परिवार तिठरबिठर हो गया। कहना न होमा कि प्रवारागर्दी में प्रम्यस्त शरत् बाबू को इस प्रकार बकीस साहब का नीकर बनकर रहना पसन्द न था सकता था। ऐसी निपछाजनक

तथा मीरस परिस्थिति में भी ब कहानी लिखते रहे ।

रोटी की तलाश में बर्मा

जिस बच उनके पिता की मृत्यु हुई थी उसी साल वे कलकत्ता में नौकरी न पाने से मिरास हाकर फिर से धारारामर्द जीवन में सौट जान का स्वप्न देखने लगे । इन दिनों एक बटना हुई जो धरतूचन्द्र की प्रतिभा की परिचायक है तथा यह बाहिर करती है कि उसी बर्माने में उनका घास-घास वाले उनके कहानी-रचन का मोहा मानन लगे थे पर उस बर्मान में बंगला में इतनी मासिक पत्रिकाएँ तथा प्रकाशक नहीं थे शायद कहानी लिखने की कोई धार्मिक समाजना नहीं समझी जाती थी इसलिये कहानी लिखना बड़े स बेपार भली के अनुसार बेकार खेपी की बात समझी जाती थी । उनके कुछ रिस्तेदारों का (जा जन्हीं के समबयस्क या उनसे कम उम्र थे) यह धुन सवार हुई कि एक हार्मोनियम खरीदा जाय पर वैसे के नाम पर सब के पास ईस्वर का नाम था । एकाएक इन लोगों के दिमाग में यह क्यास आया कि वे धरतूचन्द्र से एक कहानी लिखवाएँ, फिर उसे कुन्तलीन की प्रतियोगिता में भेज कर पुरस्कार प्राप्त करें और उससे एक हार्मोनियम खरीवें धरतूचन्द्र की अपनी समझ में अभी उनकी रचना प्रकाशन के योग्य नहीं हुई थी फिर भी मन ही मन इतनी उच्छास-कांक्षा थी कि वे अपने नाम से प्रतियोगिता में शामिल होत में हिस्सक रहे थे । अत तक उन्हें अनुरोध रक्षा के लिए कहानी लिखनी पड़ी पर इस कहानी को जिसका नाम 'मन्दिर' था उन्होंने भी सुरेन्द्रनाथ मगो पाप्प्याय के नाम से भेजा । प्रतियोगिता में यही कहानी अथ्थम आई यही 'मन्दिर' उनके इस युग की अन्तिम रचना है ।

इस पहली सांख्यिक संकलता से भी उनका घास-घास के लोगों में से किसी की धाँस नहीं लुमी और उनके परिचित तथा रिस्तेदारों में से किसी के दिमाग में यह बात नहीं आई कि यह एक प्रतिभावान व्यक्ति है इसे अन्न-विस्था से दूर रखा जाय जिनमे कि यह अमकर साहित्य की

सामना कर सके। वे फिर भी बकीम छाहब के यही नीरस हिन्दी बस्तावेजों का प्रतुवार करते रहे तथा सरकारी लपीयते रहे। अन्त में वे इस जीवन से चकता पये और एक बिग डेक पर रंगून के लिए रवाना हो गये। डेक का माबा देने के बाद उनके पास दो रुपये बचे।

इसके बाद के युग को बहुत से लेखकों ने छारद्वन्द्व के जीवन का अन्ध-कारमय युग कहकर स्मरण किया क्योंकि इस बीच में अन्ध-विश्वास ने ही उनका सात ध्यान बँटा दिया पर नतीजे की देखते हुए हमें तो ऐसा मानना होता है कि इस प्रकार रंगून जाना उनके साहित्य के हक में अच्छा ही हुआ। यदि वे इस प्रकार रंगून जाने पर मजबूर न होते तथा वहाँ बेकारी में मटकते रहते तो हम उनके लंबे-छोटे उपन्यासों के लंबे-छोटे दृश्यों से बचिबत हो जाते। 'चरित्रहीन' तथा 'भीकाँठ' में रंगून-यात्रा के सचीव दृश्य तो ही साथ ही मनुष्य जीवन की बहुत-सी प्रतियोगों पर भी रोसनी बारी गई है। छारद्वन्द्व को तकसीफ हुई, कपटों ने कु-सों ने अमासों ने उन्हें झिम्मेड़ बासा पर इससे उनके साहित्य को साथ ही पहुँचा उनमें बिबिभता आई, पीनापन आया काट पैदा हुई, जोट की सामर्थ्य उत्पन्न हुई।

छारद्वन्द्व इस पहली यात्रा के बाद कई बार रंगून भाए-गाए, हर बार वे डेक्यागी की तरह बाते-माते रहे। इन यात्राओं का मनोद्व बर्धन 'चरित्रहीन' तथा 'भीकाँठ' में है। छारद्वन्द्व की मामूली डेक्यागी के सब कष्ट छटाने पड़े व यहाँ तक कि उन्हें स्वारन्धीन में रहना पड़ा पर इत कष्ट-सागर में से उन्होंने बिग रत्नों का उधार कर साहित्य को अर्पित किया है वह अन्त दोनों पुस्तकों को पढ़ने वाले जानते हैं। हम इन पुस्तकों की आलोचना करते समय इन पात्रों की आलोचना करेंगे।

रंगून पहुँचकर छारद्व बाबू अपने मोठा अचोरनाथ अट्टोपाध्याय के घर में ठिके। वे धनी तथा विद्वान् व्यक्ति थे। उन्होंने छारद्व बाबू को देखते ही कहा—अरे तुम लीकपी की फिक मत करो पहले यहाँ बरा होग से र्हो तो फिर मैं तुम्हें किसी दफ्तर में साथ ले जाऊँगा और वहाँ बीछ-

कर ही वापस आऊँगा।—इसमें कोई संदेह नहीं था कि वे ऐसा ही करते पर इस प्रतिज्ञा को पूरी करने के पहले ही वे मर गये। उनके मरने पर पता चला कि उनके ऐश्वर्य के बोल के सम्बन्ध में भी फलस्वरूप उनकी मौसी भारत सौद आई। मौसी छिपकर ही ऐसा कर सकी क्योंकि मधोर बाबू जिनके कर्मदार वे थे अहम-वाट पर पहुँच रहने लगे। जब अखण्ड कुछ तो मन्तारामदी के प्रेम के कारण धीरे कुछ इस कारण कि मधोर बाबू के महाजन उनको न परेशान करें बर्मा के उत्तर में भाग गये और वहाँ बौद्ध भिक्षु के बीच में मन्तारामदी का कृत्क उद्यत रहे।

११०६ तक उन्हें फिर लौकरी करने की सूझी और उन्होंने 'एकटा मिनर मास पब्लिक वर्क्स एण्ड एकाउन्ट्स' विभाग में १०) ३० मासिक पर लौकरी कर ली। वे मन्मोहनकुमार मित्र नामक एक अध्यापकजी के साथ रहते थे। कहा जाता है इनके साथ सरल बाबू ने पाश्चात्य दर्शन का अध्ययन किया। समय बचता बीत रहा था पर अकस्मात् रूम में तारुण का प्रकीर्ण हुआ। उनके साथी तो रूम से भागकर किसी मास में रहने लगे पर वे छोटे मीकर वे वे कैसे जा सकते थे? अतएव वे अपने अप्पन के बाहुओं के मेस (mess) में आकर रहने लगे। यहाँ इनको बमचन्द्र के नामक एक साथी मिले। वे अजरत बड़ी ही धनीय प्रकृति के थे। एक तरफ तो वे बड़े विद्वान् थे और उनके सब धर्मजी यासिक पत्रों में छपन व दुसरी और वे पक्के सरात्री तथा दुस्वरिच थे। अखण्ड ने इनकी विद्या से आकृष्ट होकर इनके साथ अनिच्छता स्थापित की थी पर इनके साथ वे भी सराब पीने-पीने लगे। इस विषय में सभी सहमत हैं कि अखण्ड ने इन दिनों बहुत ही अन्तःकल जीवन बिताया। इसी समाने के बाद ही अखण्ड ने 'वरिन्हीन' निजा था उन्में मायिका का स्वाग मेग की एक लौकरीनी का दिया गया है तथा मस-जीवन का विषय बर्नन है। इस अपन्यास का अन्त्यतम नायक सतीस है जो मेस में रहता है और एक वरिन्हीन का जीवन बिताता है। पता नहीं इस अपन्यास को सिलने में अखण्ड ने अपन जीवन के इस धर्म का कितना भाग लिया।

बंगचन्द्र के बाद को ठाऊन में मरे। जिस समय बंगचन्द्र के ठाऊन से पीड़ित होकर मृत्युधम्या पर पड़े थे उस समय शरत् बाबू ने जाना पीना छोड़कर उनकी बड़ी सेवा की। 'श्रीकांत' में एक व्यक्ति ठाऊन से पीड़ित होकर श्रीकांत की ही गोद में सिर रखकर मरता है स्पष्ट है कि यह दुस्म उन्होंने अपने जीवन से ही लिया था। बंगचन्द्र की मृत्यु से शरत्बाबू को इतना धोका हुआ कि उन्होंने संगीत की चर्चा भी छोड़ दी।

इसी के बाद अत्यन्त रोमांटिक डङ्ग से एक सड़की से उनकी घारी हुई। शरत्चन्द्र जिस मकान में रहते थे उसके नीचे की मंजिल में एक बंगाली मिस्त्री रहता था। जाति से यह मिस्त्री ब्राह्मण था पर उसके यहाँ जो संघी-साथी संघ्या समय जमा होठ थे वे रंगून भर के छुटे हुए बंगाली सफ़िये थे। यह सोन बड़ी रात तक गाँजा धराब प्रादि पीते तथा हुस्मड़ मचाते। मिस्त्री की एक विवाहयोग्य कन्या थी इसके धमावा उसके धीर कोई न था। इस बैचारी सड़की को इन लफ़ाड़ों का यह सा बह सा हुनम मानना पड़ता था। घर का सब काम-काज भी बही संभालती थी फिर भी जब-तब उसके बाप खर-खर से बहाने पर उसे पीट डालता था।

शरत्चन्द्र सन्ध्या के बाद खर से निकल आते थे प्रसन्न धमिक रात पर ही सीटते थे। एक दिन वे ऐसे ही सीटे तो अपने कमरे के किबाड़े को नीतर से बन्द पाया। न मासूम किमने भीतर से किबाड़ों को बन्द कर रखा था। वे जने खोर-खोर से किबाड़ों पर बन्दका मारने धीर चिस्तान पर जब उसके प्रन्दर से किसी कुर्छे के बजने रोठी-विमलठी तथा खर-खर कापती हुई मिस्त्री की सड़की निकली तो उन्हें बड़ा धारचर्ब हुआ। जबहु पूछने पर सड़की ने बताया कि मिस्त्री ने पक्के सराबी घोपाल बुढ़ऊ से उसकी घारी ठय कर ली है धीर इसकी बाबत कुछ रुपये भी पैघगी ले लिये हैं। धात्र गधे के प्रावेश में बापाल बुढ़ऊ उसे अपनी पत्नी कहकर उसके सिपटने पर तैयार हुआ तो उसने खर के मारे इस कमरे में बुसकर उसे नीतर से बन्द करके धात्परछा की। सड़की शरत्चन्द्र के पैरों पर गिर पड़ी धीर रोने लगी। शरत्चन्द्र ने कहा—मात्र तुम यहीं सोधो

कम सवेरे इसकी जो कुछ भी हो उचित व्यवस्था ही की जायगी—यह कहकर वे उल्टे पाँच बर से रात भर के लिए निकल गये।

दूसरे दिन जब धरतूबाबू मिलनी से कहने गये कि भाई यह बर तुम्हारी बेटी के साथक नहीं तो उसने कहा—मुझे इससे धक्का नहीं मिसता तुम्हें इतना दर है तो तुम ही इससे घापी कर लो न—

जब धरतूबाबू कामस हाँ गये और इसी बाह्यम मिलनी की लड़की से उनकी घापी हुई। वे इस विवाह से मुन्नी भी हुए और एक पुत्र भी हुआ। रूत में जब फिर ताऊन घामा तो धरतूबाबू की यह स्त्री पुत्र के साथ उलकी गिराव हो गई। इस प्रकार धरतूबाबू फिर एक बार धरारायई हो गए। उन्होंने बार को एक घोर घापी की थी। यह घापी हिरण्मयी देवी नाम की एक मर्यदा बाह्यम महिला के साथ बंगाल में ही हुई थी पर यह बात बहुत ही कम लोग जानते थे इसलिए धरतूबाबू को पवित्राहित ही समझने थे। कोई-कोई तो बाद को समाधादि में उन्हें बिलेन्द्रिय और बहादागी धारि कट्ट ये तब ब मुकुरा कर रह जाते थे।

धरतूबाबू धरमर मानी घाम हो घाम में कसकता ही जात थे। कभी नौकरी में दो माह की छुट्टी मकर घात तो कभी छ माह की। इधर उनकी नौकरी में बराबर ठरकती होती रही। पहली घोर दूसरी घापी के बीच वे किसी समय एक उन्मत्तीय बाह्यम के होटल में टिके रहे। इस होटल का नाम था ठाकुरेर होटल था। वहाँ मिलनी सेमी के साथ लाना जाते थे। वा ठाकुर के इस होटल को धरतूबाबू ने 'भीकांत' में स्मरण किया है।

धरतूबाबू के एक मित्र ने लिखा है कि दिन का तो कोई सुमार नहीं रात को वे छ-ठाठ दफे उठकर तम्बाकू भर भरकर पीत थे। 'जरिज हीन' का सतीन तथा 'भीकांत' में स्वयं भीकांत इसी प्रकार तम्बाकू के सुनाम है। बर्षों में रहने समय धरतूबाबू पर होम्पोपैमी का सूत धरमर मवार हो जाता था। कहने हैं वे बवाइयों का पुरा बरस रमने से घोर मोगों की बिचिस्ता करत थे। उनके मर्तों में लिखा है कि उनकी

चिकित्सा से बहुत से लोग बड़ी जल्द व्याधियों से मुक्त होकर उनको बुझा देते बने जाते थे। 'बामुनेर मेये' के प्रियनाथ चरित्र में धरत् बाबू ने सतीकीन होम्योपैथी का प्रच्छा मजाक उड़ाया है। प्रियनाथ बाबू तो इस पर मखते थे कि लोग उनसे चिकित्सा करायें। इसके अतिरिक्त उनका लिए जीवन में कुछ स्पृहणीय नहीं था। 'चरित्रहीन' का सतीस तो होम्योपैथी के नासेब का छात्र ही था यानी वह इसी बहान करकते में रहकर मनमाना उच्छुस्तम जीवन बिताता था।

धरत्चन्द्र बर्मा में रहते समय बंगालियों के स्वभाव के अनुसार केवल बंगालियों से ही नहीं मिलते थे बल्कि बर्मावासियों के यहाँ भी उनका धामा-खाना रहता था। धरत्चन्द्र की एक प्रसिद्ध कहानी का नाम 'छवि' (उसबीर) है इस कहानी का नामक एक बर्मी चित्रकार था बिन है। यह था बिन धरत्चन्द्र की कल्पना से उत्पन्न नहीं बल्कि वास्तविक जीवन में ससरीर और था बिन के ही नाम से मौजूद थे। इस था बिन से धरत्चन्द्र की बड़ी मित्रता थी। धरत् बाबू भी सतीसचन्द्र बास को अपने साथ था बिन के घर से गये थे यह वास्तविक था बिन भी चित्रकार था। सतीस बाबू ने धरत् बाबू को उन्हीं के परिवार के एक सदस्य की तरह बातचीत करते तथा खाते-पीते पाया। सतीस बाबू ने इतना तो भिन्न मारा पर कहानी के साथ और किन-किन बातों में वास्तविक था बिन का सामंजस्य है यह नहीं मिला। ऐसे बीबनी-सेबकों को इन लोगों से क्या मतलब उन्हें तो केवल बुझिया का यह बिलनामा था कि वे धरत् बाबू को जानते थे। धस्तु।

धरत्चन्द्र बर्मा में कई जगह रहे। एक मकान में रहते समय पड़ोस में रहने वाले एक परिवार से उनका अनिष्ट परिचय हुआ। इस परिवार में केवल दो व्यक्ति थे एक मिस्त्री और उसकी बहू। एक बार मिस्त्री की स्त्री भयंकर बीमारी में पड़ी तो धरत् बाबू की चिकित्सा तथा कीसिध से वह बच गई। इस समय से वे दोनों धरत् बाबू को पिता कि समान मानने लगे। धरत् बाबू भी इन्हें बैठे तथा बड़े की तरह मानते

य। धरतू बाबू यही समझते थे कि वे विवाहित पति-पत्नी हैं पर एक दिन जब वे अपने मकान में लड़ रहे थे तो धरतू बाबू ने सब मुन लिया और वे प्रमत्ती बाल जाल गये। योही ही बेर में मिस्त्री ने धरतू बाबू को जैसे पचाह मानकर कहा— 'बेलिय बाबा ठाकुर मैंने इसकी इतनी प्रबल सेवा करके इसे धागम दिया और यह दिन-रात हमारे साम भय भय लगाये रहती है। यदि ऐसा ही करना था तो तुमने हमारे साथ 'कटीबन्धन' क्यों किया।' यहाँ बता दिया जाय कि बँट्यबों में 'कटीबन्धन' एक तरह की मगाई है, इसे शादी की मर्यादा प्राप्त नहीं।

मिस्त्री की स्त्री यों धरतू बाबू के सम्मुख कुछ प्रबल नहीं बोसती थी पर जब मिस्त्री ने इन प्रकार उल्लेख रहस्य का भँडाफोड कर दिया तो वह भी तिममिता गई और तम होकर बोली—बाबा ठाकुर क सामने तुम तो बूब के कुने भने मामुस बन रहे हो पर भनेमामुस बनकर मेरा सर्वनाश किसने किया? सब ऐसा बन रहे हो जैसे मारा दोष मेरा ही है? कम मौसी नहीं होती ता मुझे मार ही बैठने भसा मैं क्यों मार लाऊँगी! फिर बात-बात में कहते हैं निकल जा। प्रमत्ती बात तो यह है कि इनकी ध्याई धार है बही सबर पाकर म बैराव हो रहे हैं कि सब उल्लेख मिश्रू और फिर भद्र बनू। यहाँ जाना हो जायो मैं नहीं सहेगी—बहकर बह रोत जागी।

उम समय तो सब तय हो गया पर मिस्त्री को कारनामा जाने क नाम से निकलता तो फिर नहीं लींग। किम बात ये वह इरती थी बही हुई। बहुत दिन बर्मा में रहने क बाद यह स्त्री कागी बसी गई। मनीष बाबू का अनुमान है कि इगी स्त्री को संकर बिनाब-बहु निभार गया।

रंगुन के प्रबानो बङ्गाली नाहित्य-बर्बा करने बर्मा नहीं जान। मथ बात तो यह है कि स्पया कमाने के प्रसाबा इन बमकों का कोई काम नहीं होता था फिर भी यहाँ एक बपक था 'बैंगल मागल'। बही बमी कमी नाहित्यिक धालोबना भी हानी थी पर धरतू बाबू हमेसा यह बहकर कि वे इन सब बातों को ममक नहीं पाने प्रमग ही रहते य।

चिकित्सा से बहुत से सोप बड़ी उत्कट व्याधियों से मुक्त होकर उनको बुझा देते बसे जाते थे। 'बामुनेर मर्म' के प्रियनाथ चरित्र में धरत् बाबू ने सौकीन होम्पोपेयों का चप्का मझाफ उड़ाया है। प्रियनाथ बाबू तो इस पर मरते थे कि लोग उनसे चिकित्सा करायें। इसके अतिरिक्त उनका लिए जीवन में कुछ स्पृहणीय नहीं था। 'चरित्रहीन' का सटीक तो होम्पोपेयी क कामेब का छान ही था यानी वह इसी बहाने कलकत्ता में रहकर मनमाना उच्छ्वसन जीवन बिताता था।

सरत्चन्द्र बर्मा में रहते समय बंगालियों के स्वभाव के अनुसार केवल बंगालियों से ही नहीं मिलते थे बल्कि बर्मावासियों के यहाँ भी उनका घाना-बाना रहता था। सरत्चन्द्र की एक प्रसिद्ध कहानी का नाम 'उबि' (तसबीर) है इस कहानी का नायक एक बर्मी चित्रकार था बिन है। यह था बिन सरत्चन्द्र की कल्पना के उत्पन्न नहीं बल्कि वास्तविक जीवन में सफरीर और था बिन के ही नाम से मीबूब थे। इस था बिन से सरत्चन्द्र की बड़ी मित्रता थी। धरत् बाबू भी सतीशचन्द्र बाघ को अपने साथ था बिन के घर ल गये थे यह वास्तविक था बिन भी चित्रकार था। सतीश बाबू ने धरत् बाबू को उन्हीं के परिवार के एक सदस्य की तरह बातचीत करते तथा खाते-पीते पाया। सतीश बाबू ने इतना तो मिल मारा पर कहानी के साथ और किन-किन बातों में वास्तविक था बिन का सामंजस्य है वह नहीं लिखा। ऐसे बीबनी-मखकों को इन लोगों से क्या मतमब उन्हें तो केवल दुनिया को यह दिखाना था कि वे धरत् बाबू को जानते थे। धरत् ।

सरत्चन्द्र बर्मा में कई जगह रहे। एक मकान में रहते समय पञ्जाब में रहने वाला एक परिवार से उनका अनिच्छ परिचय हुआ। इस परिवार में केवल दो व्यक्ति थे एक पिस्वी और उसकी बहू। एक बार मिस्त्री की स्त्री मयकर बीमारी में पड़ी तो धरत् बाबू की चिकित्सा तथा कोशिश से वह बच गई। इस समय से वे दोनों धरत् बाबू को पिछ के समान मानने लगे। धरत् बाबू भी इन्हें बैठे तथा बहू की तरह मारते

प। धरतू बाबू यही समझते-ये कि वे विवाहित पति-पत्नी हैं पर एक दिन जब वे अपने मकान में लड़ रहे थे ता धरतू बाबू ने सब मुन मिया घीर के धमसी बात जान गय। धोड़ी ही देर में मिसत्री ने धरतू बाबू को जैसे गवाह मानकर कहा— 'खेलिये बाबा ठाकुर मैंने इसकी इतनी धमक सेवा करके इमे धाराम दिया घीर मह दिन-रात हमारे साथ भाय भाय मगाये रूठी है। यदि ऐसा ही करना था तो तुमने हमारे साथ 'कंटीबदल' क्यों किया।' यहाँ बता दिया जाय कि बैष्णवों में 'कंटीबदल' एक तरह की मगाई है इस घापी की मर्मावा प्राप्त नहीं।

मिसत्री की स्त्री यों धरतू बाबू क सम्पुन कस अधिक नहीं बोमती थी पर जब मिसत्री ने इस प्रकार उसक रहस्य का भंडाफोड कर दिया तो वह भी तिलमिला गई घीर तज होकर बोमी—बाबा ठाकुर के सामने तुम तो दूध के धुप मल मानुस बन रहे हो पर भलेमानुस बनकर मरा सबनाय किसन किया ? धब ऐसा बन रहे हो जैसे सारा दोष मेरा ही है ? कस मीमी नहीं होती तो मुझे मार ही बैठत नमा मैं क्यों मार लाऊंगी ! फिर बात-बात में कहते हैं निकम जा। धमनी बात तो यह है कि इनकी ब्याही घाई है बही सबर पाकर य बैठाब हो रहे हैं कि कब उसमे निर्तू घीर फिर मद्र बनुं। जहाँ जाना हो जाधो मैं नहीं मरूंगी— बरकर बह रोने मयी।

उम समय तो सब तप हो गया पर मिसत्री जा कारखाना जान क नाम मे निकला तो फिर गरी सीटा। जिन बात न बह डरती थी बही हुई। बहुत दिन बर्मा में रहने क बाद यह स्त्री कागी बमी गई। सत्रीय बाबू का अनुमान है कि इसी स्त्री को सकर 'विराज-बहु' मिया गया।

रंगत के प्रबानी बङ्गाली माहित्य-बर्मा करने बर्मा नहीं जात। मय बात तो यह है कि रुपया कमान के धसाबा इन कसकों का कोई काम नहीं जाना था फिर भी यहाँ एक कवब था 'बैसास गोगस'। बही कमी कमी माहित्यिक धालाबना भी होती थी पर धरतू बाबू इनगा यह बरकर कि वे इन सब बातों को समझ नहीं पाने धमम ही रहतू से।

एक बार इस क्लब में स्वी-अरिन के मनोविज्ञान पर बातचीत हो रही थी तो धरत् बाबू ने ताब में धाकर कह दिया कि यह ऐसा नहीं बैठा है और उसके प्रमाण में बहुत से यूरोपीय मेसर्सों को उद्धृत किया। लोग मुनकर हंग हो गये और कहा कि क्लब के धायामी अधिवेशन के लिए वे इस विषय पर कुछ लाएँ। वे राजी ठा हो गए, पर उन पर बल टूट पडा। वे सभा के सामने धाते बबड़ाते थे। मयले अधिवेशन का दिन धायामा तो धरत् बाबू नबारद। सभा के उद्योक्ता उनके घर मये तो वहाँ मी बड़ी मुस्किसें से उनका लेख 'मापीर इतिहास' मिला। इस लेख को पढ़ने में वो घंटे लये। जब यह लेख समाप्त हुआ तो लोग अय-अय कहने लये। कुछ का विषय है कि यह लेख बाबू को घर में धाम मगने से मष्ट हो मया। साथ ही और मी रचनाएँ तथा उनके अकित चित्र भी इस अधिकाश में स्वाहा हो लये।

धरत्चन्द्र बर्मा में कोई बीदह साम के समयग रहे।

यों तो माबलपुर में ही उन्होंने लिखना शुरू किया था पर बर्मा की भूमि में ही उनका तीसरा ज्ञाननेन कुमा और वे धरत्चन्द्र हुए। अब लोग इस विषय में एकमत हैं कि धरत् बाबू का पहला उपन्यास 'धुमदा' है जो मृत्यु के बाब प्रकाशित हुआ है। धरत् बाबू जब तक जीवित रहे, उन्होंने इसे प्रकाशित नहीं होने दिया पर अनुसम्बानकारियों की ज्ञान-पिपासा बुद्धि होती है वह लेखक की कला का पर्दा उठाकर ही अनुष्ट नहीं होती बल्कि उसकी तह में मी पहुँचना चाहती है। प्रकृति भी गौरव-साधना करती है कसी के अन्दर पुष्प बड़ाता है जब वह देखने योग्य हो जाता है प्रकृति उसे खोलकर रख देती है किन्तु अनुष्ट बड़ा ही कौतूहली है! वह गर्म से निकालकर भून को देखता है कोरक से निकालकर पुष्प को देखता है उसी प्रकार जब धरत् बाबू न रहे तो 'धुमदा' प्रकाशित हुआ। यह १८९८ के २० जून से २२ सितम्बर तक लिखा गया था। इस उपन्यास में धरत् बाबू की कला अपरिपक्व अवस्था में पाठक के सम्मुख धापी है। धुमदा नायिका का नाम है। धरत् बाबू

म एक सती-साध्वी की तरह चित्रित किया है। बाद को हम 'चरित्र हीन में सुरबासा के रूप में एक स्वीकृत सती को तथा श्रीकान्त' में सम्रदा दीया के रूप में एक प्रस्वीकृत सती को धारु-साहित्य में पाते हैं। इन चरित्रों से इन उपन्यासों की कसा पुष्ट ही हुई है भाव नहीं हुई पर सुमदा न कट्टरपन से उपन्यास का नाश ही हुआ है। फिर भी सुमदा न चरित्र में एक प्रतृप्ति का अस्तित्व स्पष्ट है। उपन्यास का कमानक निबिध और घटना-परम्परा सुप्रबिध नहीं है पर इन अपूर्णताओं के बीच में भी हम धारुचन्द्र की प्रतिभा के 'भीकने पाठ' देख पाते हैं। नारी-जीवन न चित्रकार सुक नारी को माया-दान करने नाम धारुचन्द्र का हम यही मे पा जाते हैं। उनके बाद के उपन्यासों में हम बन्ध्याओं का जो तिफ्तताहीन बस्त्रि सहानुभूतिपुक्त चित्रण पाते हैं उसका योग्यमेस नहीं हो सका है। कात्यायनी का चित्रण के कुली सहानुभूति से तो नहीं पर ऊपरी तटस्पता से करते हैं। 'सब जानना सब कुछ क्षमा करना है' इस प्रश्न कहावत के अनुसार न कात्यायनी का चित्रण करते हैं। वे उसे प्रभानुपी राजसी के रूप में नहीं बस्त्रि समाज की कस्ती न बीच पिनाता हुई एक प्रभापी स्त्री के रूप में देन करते हैं। कात्यायनी राजसी ता है ही नहीं वह पीड़ित लोगों के साथ सचमुच सहानुभूति करती है केवल नहीं उन्हें धार्मिक सहामता भी देती है। बाद का किरण-मयी और कमल के मूँह से जा बौद्धिक मन्तत्व हम सुनत-सुनत एक साथ ही कसा धीर बौद्धिकता का धानन्द घाता है सुमदा में भी उसका पुट है। परन्तु बाद न विकास का यह पहली कड़ी हमारे हाथ सगने ही से यह स्पष्ट हो जाता है कि धारु बाबू का नमविकास कैसे हुआ। प्रूल रूप में हम सुमदा में सारे धारु-साहित्य का पाठ है कम से कम उसकी महत्व-पुण प्रवृत्तियों को तो पाते ही हैं। मम्पबिध योगी की नारी न कुसवर्षों न चित्रकार धारु बाबू प्रारम्भ से ही ऐसे रहे, यह इष्टव्य है। सुमदा की समामोचना करण समय यह स्मरण रहे कि यह पुस्तक १८६८ में लिखी गई थी।

सोसहोँ घाना साहित्यिक जीवन

सरत्चन्द्र जिन समय बर्मा गये थे उस समय वे अपनी रचनायें (बिनको उन्होने तक तक मिला था) एच मित्र के पास रख गए। उस मित्र के पास कुछ साहित्यिक छाया-जामा करतें थे जिनमें उस जमाने की प्रसिद्ध पत्रिका 'भारती' से सम्बन्ध थी सौरीन्द्रमोहन मुखोपाध्याय भी थे। इन रचनाओं में सरत् बाबू का सुप्रसिद्ध उपन्यास 'नङ्गदिदि' (बड़ी दीबी) भी था। सरत् बाबू को बिना बताये हुए ही तथा उनकी अनुमति बिना प्राप्त किम ही सौरीन्द्र बाबू ने इस उपन्यास को आगबाहिक रूप से प्रकाशित करना शुरू कर दिया। यही तब कि जब प्रकाशित होता हुआ था तब भी सरत् बाबू को न तो कोई सूचना ही दी गई न पत्रिका की कोई प्रति ही भेजी गई।

जब १९१४ के ईशाख में (१९ ७) 'भारती' में 'बड़ी दीबी' की पहली किस्त निकली तबही लोग उसे पढ़कर आश्चर्य में पड़ गए। लिखने की परिपाटी इतनी सुन्दर थी कहानी इतनी यठी हुई थी और भाषा इतनी मनोहारी थी कि लोग हैरत में पड़ते कि यह लेखक कौन है। पहली किस्त में किसी का नाम नहीं निकला था। साहित्यपत्रों ने इसको पढ़ कर यही तय किया कि हो न हो नाम छिपाकर रबीन्द्रनाथ न ही इसे सिखा होगा। उन दिनों मजूमदार काश्मीरी से बबीन्द्र रबीन्द्रनाथ के संपादकत्व में 'बङ्गवर्धन' नव पर्याय निकल रहा था। मजूमदार काश्मीरी के मासिक की विशेष मजूमदार ने रबीन्द्रनाथ से शिकायत करते हुए कहा कि आपने इतनी उत्कृष्ट रचना हमारी पत्रिका में न देकर 'भारती' को क्यों दी? रबीन्द्रनाथ ने इस पर बड़ा आश्चर्य प्रकट किया क्योंकि अपनी जान में तो उन्होंने 'भारती' को कोई भेज नहीं दिया था। उन्होंने 'भारती' से उस घंघ को पढ़ा रचना बाकी बड़ी सुन्दर थी उन्होंने उसकी प्रशंसा की पर भी मजूमदार को ठाक बता दिया कि वे इसके लेखक नहीं। अन्त में अन्तकर 'भारती' में लेखक का नाम सरत्चन्द्र

चट्टीपाध्याय प्रकाशित हुआ था।

इसके माझे पीछे नाग बाद धरतूचन्द्र का इस उपन्यास के पारा बाहिक रूप में प्रकाशित होने का पता मिला। इन बीच धरतूचन्द्र की मायना बराबर जारी तो नहीं पर यह एक नरक की तरह ही रही। कलक को अपनी विपुल दक्षिण का कुछ पता न मिला था। श्री मीरीन्द्र मोहल ने इस सम्बन्ध में सिखा है

“१३१६ माग (बैशाख) की पूजा अर्चना दशहरे के समय धरतूचन्द्र अस्मान् प्रा बमरे घोष कर्हा—मुझे जग बड़ी दीदी कहानी पढ़ने दो।

मुझे अच्छी तरह पार है उस दिन कामीपूजा थी। दिन के आठ बजे य हमारे घर के बाहर के कमरे में धरतूचन्द्र उपन्यास तथा मैं था। बेसी हुई 'माग' में मैं 'बड़ी दीदी' पढ़ने लगा। धरतूचन्द्र सेटकर मुझे लगे। बीच-बीच में उठ बैठने से। मेरे हाथों का दबाकर कह उठने—बुन रहा।

उनकी आँखों में धाम्नी य गता का हुआ था। धरतूचन्द्र ने मुझे विस्मयचरित्त दृष्टि से कहा—यह मरी रचना है? इसे मैंने मिला है।

मालो उनको विस्वास ही नहीं होता था। हम लोगों ने उनको नरक—निखना छोड़कर तुमने विपना बड़ा अपराध किया है जग ममना था।

धरतूचन्द्र उदासीन होकर बड़ी देर तक बटे रहे फिर बोले—अच्छा निरपेक्ष मिलाता छोड़कर मैंने अच्छा नहीं किया रचना अच्छी है मेरा ही रूप हिन यथा था—उन्होंने रचकर कहा—मैं स्वयं मिला है बहूतों को देना पड़ता है। धीरे नी टीक नहीं है।

उन्होंने यह भी कहा—यदि मैं और अधिक बिल रमून रहा तो मुझे तदधिक हा जायगा।

मैंने कहा—बहरहाल तीन महीने की छुट्टी लेकर जेन आपो मैं स्वयं तुम्हें मिलें इसकी हम साथ व्यवस्था करेंगे।

शरत्चन्द्र ने कहा—देखूया ।

इसके कोई ठीक महीने बाद वे फिर कलकत्ता आये । 'यमुना' के सम्पादक फकीरनाथ पाल ने मुझ से कहा कि वे 'यमुना' को अपने जीवन का सर्वस्व बनाना चाहते हैं और इसके लिए मेरा सहयोग चाहिये ।

शरत्चन्द्र के आने पर मैंने उनसे कहा—साहब 'यमुना' के लिए तुम्हें सिद्धता पड़ेगा ।

शरत्चन्द्र ने कहा—'चरित्रहीन' उपन्यास सिद्ध रहा है पढ़कर देखना जैसा कि नहीं—उपन्यास का कोई एक सूठीमात्र उन्होंने मुझे दिया । मैंने पढ़ा । शरत्चन्द्र ने कहा—नायिका फिरजममी है वह तो अभी तुम्हारे सामने आई ही नहीं बड़ी भारी पुस्तक होगी ।

यह तब पाया कि 'चरित्रहीन' यमुना में छपेगा । उन्होंने अनिता देवी उपनाम से 'मारीर मूस्य' मुझ देकर कहा—मेरा प्रसन्नी नाम बिना प्रकाशित किये ही इसे छापी ।

ऐसा ही किया गया । फिर उन्होंने एक कहानी दी 'रामर सुमति' फिर बैंगाल की 'यमुना' के लिए एक कहानी दी 'पचनिबंस' ।"

मारीर बाबू के बिये हुए इस विवरण से बरा सी नुटि रह गई वह यह कि 'चरित्रहीन' उपन्यास की पाण्डित्यि दूसरी अपह से नीटाई जाकर 'यमुना' में छपने के लिये आई । उन दिनों बैंगला के सुप्रसिद्ध नाटककार श्री द्विवेन्द्रनाथ राय के संपादकत्व में 'भारतवर्ष' बड़े ठाट से निकल रहा था । इसके प्रकाशक धनी वै लेख भी अच्छे आते थे । इस प्रकाशन के सपोत्सर्गों में प्रमथनाथ मट्टाचार्य नामक एक व्यक्ति ने उन्होंने 'भारतवर्ष' प्रकाशन के काम में विमलचस्प्री मैत्रे ही मुखपत्रपुर के अपने पुत्राने मित्र शरत् बाबू को स्मरण किया । साथ ही द्विवेन्द्रनाथ ने जब 'यमुना' में 'रामर सुमति' चीपंक कहानी पढ़ी तो उन्होंने प्रमथ से कहा—तुम इनकी रचनाओं को 'भारतवर्ष' के लिए पाने की चेष्टा करो ये अभिप्य में बैंगला साहित्य में एक नये बुज की सूचना करेंगे ।

प्रमथ बाबू पहले से ही शरत् बाबू की तलाश में थे जब द्विवेन्द्र बाबू

ने भी कहा तो उन्होंने घरतू बाबू को पत्र लिखवा कर रघुन से 'चरित्रहीन' की धाबी पांडुलिपि भेजवा ली। द्विजेश्वरसाहब उन दिनों काष्मि म ब्यमि काग क बिरह घाम्दोसन कर रह थ इसलिये एक ऐसे उपन्यास को जिसका नाम ही चरित्रहीन हो और जिसमें शुरू से ही एक मस की लौक रानी नायिका के रूप में सामन धाई हो उन्होंने धपन मम्पादन म 'भारतवर्ष' में प्रकाशित करन से इनकार कर दिया। कहना न हागा ऐसा कर द्विजेश्वरसाहब ने मत ही धपनी कवित मुनीतिपरामर्शता क चरणा म पुष्पांजलि दी हो पर धपनी साहित्यमर्मज्ञता पर हमेषा के लिए एक धमिट बम्बा लपाया। हम धामे 'चरित्रहीन' की बिस्तृत घामाचना करेगे पर द्विजेश्वरसाहब न जिस मेस की लौक रानी को दलकर मुह बिचका लिया बहु कबल नाम से ही साबिनी नहीं सचमुच साबिनी थी। कवित मत धरों में उसस धपनी लिप्याप म्नी कही मिलती है? चरित्रहीन के अनुसार भी बहु धब्दे कुल की मुसीभा मुधिछिता सडकी थी फिर भी यदि द्विजेश्वर बाबू न उसे केवल इन कारण किसी उपन्यास में प्रमुक्त भाग दिये जान के धयोग्य समझ कि उसने दुर्दशा में पडकर लौक रानी का काम करके साधु उपाय से पैर पाया था तो यह उनका धर्मकर्मन वा ऐसा कहन में मुझ कोई हिचकिचाहट नहीं है। द्विजेश्वरसाहब न ऐसा नीतिबाध क कारण किटना धौर बयबोध (Class consciousness) क कारण किटना किया यह बिचारनीय है। उच्च तथा मध्यविस धवी की भाति के ठेकेदारों को यह धबधय ही नागवार है कि एक ऐसी धषा की जिसको के निम्न धवी समझत हैं सडकी उनके उपन्यासों में भी एक लौक रानी के सिवा धयिक सं धरिध र्भल के धसावा किसी धौर रूप में धाय। गोपय वा शोपय में सहायता के कारण प्राप्त धन के साथ में क दूमरों को नैतिक रूप से भी धपने से छाटा समझते हैं। धन्तु।

इस प्रकार घरतू बाबू का 'चरित्रहीन' 'भारतवर्ष' द्वारा दुकराया जाकर 'यमुना' में पया था। बहूतों के मत स मही इसकी सबसेच्छ रचना है और इनी की यह दुगति हुई। फिर द्विजेश्वर बाबू जैसे साहित्यमर्मज्ञ के

हाथों ऐसा होना और भी प्राक्कर्मबन्धक है। जब 'चरित्रहीन' उपन्यास प्रकाशित हुआ तो सरत् बाबू पर बहुत गाम्भीर्य पड़ीं पर इसी गाम्भीर्य की वीछार से वे प्रसिद्ध हो गये। 'भारतवर्ष' वालों ने इस प्रकार 'चरित्रहीन' सीमा तो बिया पर उनकी प्रतिभा के लोहे से शीघ्र ही उन्हें मजबूर बिया और वे अब की बार फिर सरत् बाबू के विवाह खटलाने पहुँचे तो उन्हें एक छोटा उपन्यास 'विराज-बहु' मिला। सरत् बाबू को स्वयं की खबरत की उन्होंने 'विराज-बहु' उपन्यास तथा 'रामेर सुमति' 'विभुर क्षेत्र' और 'पद्मनिर्देश' इन तीनों कहानियों को पुस्तक रूप में प्रकाशित करने का कापीराइट नाममात्र मूल्य ३००) रुपये में 'भारतवर्ष' प्रकाशक से हाथ बैच बिया। सुरदास चट्टोपाध्याय एण्ड सस ने (जिन्होंने इनको करीना) सरत् बाबू की इसी पुस्तकों के बरिये ऐसे कितने ३००) बनाए होये पर सरत् बाबू को ३) ही मिले। प्रकाशक और लेखक का सम्बन्ध पूजीपति और मजबूर का ही सम्बन्ध है, इस उदाहरण से यही बात पुष्ट होती है।

सरत्बाबू ने 'यमुना' में बहुत दिनों तक बड़ी दिनचस्पी की। हेमन्त कुमार राय का कहना है कि यह बीसी ही बात है कि एक सगमा जब तक पत्थर से बन्ध पड़ा रहा पड़ा रहा पर ज्यों ही उसका मुँह खोल दिया गया वह यत्ना फिर ज्यों किसी की सुनता। उस जमाने में उन्होंने रंग में जो पत्र लिखे उनको पढ़ने से जात होता है कि सम्पादक से कहीं बड़कर उन्हीं को 'यमुना' की जिम्ता सताती थी। वे धकेले ही लिखकर मन्ही-सी 'यमुना' के सारे पन्ने रंग बना चाहते थे। कहा जाता है एकाव बार उन्होंने ऐसा किया भी यथात् कविता के यत्ना उन्होंने 'यमुना' की सारी भीनी स्वयं ही भर ली। कई बार उन्होंने गुपनाम समासोचना भी लिखी। हेमन्त बाबू के अनुसार 'नारीर लेखा' तथा 'कानकाटा' उन्हीं का लिखा हुआ था। इन समासोचनाओं की सूझ बात में उन दिनों बूम मचा ही थी। 'रामेर सुमति' के प्रतिरिक्त 'विभुर क्षेत्र' तथा 'पद्मनिर्देश' भी 'यमुना' में ही प्रकाशित हुए थे। इसके प्रतिरिक्त 'परिधीता' 'बभ्रताम' तथा 'चरित्र हीन' भी यमुना में ही निकले। 'चरित्रहीन' को एम० सी सरकार ने

पहली बार पुस्तक रूप में प्रकाशित किया। इस साढ़े तीन रुपये की पुस्तक की पहले ही दिन चार सौ सापियाँ बिक गई, बापू को उनकी पुस्तक 'पञ्चेर बायीं' एक ही दिन में इससे अधिक बिकी।

इसके बाद तो धारवृक्ष का जीवन एक सफल साहित्यिक का जीवन है। वे साहित्य के छोटे से तालाब की छोटी मछली नहीं रह गये जब उनके बिचारण के लिए बिगट सागर के विपुल विस्तार की जरूरत पड़ी इस लिए यमुना का छिछमा पानी उन्हें बाधकर न रह सका और वे स्वच्छन्द हाकर विप्लवसाहित्य के महासागर में बिहार करम मये।

रंगून में धारवृक्ष का स्वास्थ्य गिर रहा था डाक्टरों ने कहा रंगून छोड़ दीजिये।

जब धारवृक्ष बर्मा में बसकर प तो उनका जीवन कैसा था और बपुत्र में उनको किस प्रकार कुछ मिलता था, उसका कुछ विवरण रंगून से लिखे हुए ११ x १२१४ ई० के एक पत्र में इस प्रकार मिलता है। उन्होंने उस पत्र में लिखा था— 'पहले मैं अपनी नौकरी की बात बताऊँ। हमारे बड़े साहब ग्युनाच नामक एक बंधन हैं। गोरख उपन्यास में रवीन्द्रनाथ ने कहलाया है 'मैं माधव बटवर्जी हूँ नीम साहबों का सुमासता। इससे अधिक बताये की आवश्यकता नहीं है। ग्युनाच भी ठीक उसी तरह हैं। इन्होंने पान ही एक साल में ३० बसकों को रिजूम किया। धपराब यह था कि एक न बिट्टी डिस्पेंच करन महीन दिन हर कर ही घोर एक के पान १२ दिन पुगता एक बिट्टी निकसी। इसके मारे बिट्टी एकादष्टेष्ट जमरस मिस्टर ब्रैन्ट गोर श्रीनिवास धप्यर, प्रसिस्टेंट एका उगन्ट जमरस गुम्बरज और मैक्सेट एक ही महीन के धप्यर मरिक्लन सार्विफिकेट देकर जाय सड़े हुए। हम लोगों में से हर एक का काम लगभग हुमा कर दिया गया है और हम पी० डबल्यु० डी० बामों को अपने धार्पण में ले जाया गया है। हम सापों के धार्पण में रहने के घंटे साढ़े दस न साढ़े छ हैं। बहुत कठिन श्रम करना पड़ता है। यह नियम बना है कि बरि किसी दिन किसी को बतावनी मिले तो उस छ महीने तक दस

स्वयं के हिसाब से कम तनक्काह मिलेगी। कहा कौसी मुन्वर नौकरी है। इस पर भी इन्होंने प्रान्तीय सरकार को यह लिखा है कि दफ्तर के क्लर्क हुए देकर मेडिकल सर्टिफिकेट वेस करठे हैं जिससे दफ्तर को बहुत हानि पहुँचती है। इसलिए दफ्तर से पत्र पाए बिना सिविल सर्वन किसी को मेडिकल सर्टिफिकेट न दें। इस प्रकार हम लोगों का एम० सी० देने का रास्ता भी बन्द हो गया है। कहा जाता है कि एम० सी० देने पर भी सबिस बुक पर यह लिखा रहता है कि भ्रष्टा एम० सी० देकर छुट्टी पर चला गया। बर्मा है तभी न इतना पुस्म चल रहा है।

तीन चार दिन पहले की बात बताता हूँ। एकाएक मुझे चेतावनी मिली। काम इतना अधिक है कि छोटे-मोटे काम को मैं देख नहीं पाता और जो चलती हुई वह सब धाड़ितर भीमिक बाबू और पेरियारामाजी के कारण हुई। धक्का मैंने सारा बोप अपने ऊपर ले लिया। मैंने एक-दो-तीस में लिखा है कि मेरी घोबरसाइट है साब ही मैंने त्यागपत्र भी मिल रखा। मैं समझ गया कि इस रुपये तनक्काह चटी। पर इस धपमान को सहन करके जो नौकरी करे सो करे, मैं ठो करने का नहीं। इसलिए मैंने त्याग पत्र लिखा। जो कुछ भी हो पता नहीं क्यों स्कुमार्क क्यापूर्वक हुए मार गया। दुर्भाग्य कहो या सीमाप्य कहो मैंने फिर त्यागपत्र नहीं दिया। पर अब शरीर भी काम नहीं देता।

लिखना-बिलना भी धसम्भल हो गया है। इतने दिनों का नौकर हूँ। ऐसी भयंकर बुद्ध्या में कभी नहीं पड़ा। उस दिन धाबेस मे धाकर संकोच छोड़कर मैंने मित्रजी को लिखा कि कलकत्ता में कोई नौकरी दिमा सो तो मैं त्यागपत्र देकर चला जाऊँ। अभी उनके उत्तर का समय नहीं आया पर यह भी समझ में आ गया है कि यह साहब (कुत्ता) यदि नहीं गया और इसके पन्दी जाने की कोई आशा भी नहीं है तो मुझे तो यहाँ से जाना ही पड़ेगा। साला दूसरे दफ्तरों के लिए धन्नीकेषण भी धरबर्क नहीं करता। मैंने बहुत-बहुत पायी आदमी देखे पर ऐसा तो कहीं तुला भी नहीं गया।

इन्हीं बातों से दुखी होकर इन्होंने जसी साल एक भयं पत्र में लिखा—

कहीं चाहीस-बचास रुपये की एक नौकरी दिला दो तो बम दें। मुझे सरकारी नौकरी का बरा भी मोह नहीं है। इस घाने दफ्तर से तो सड़क पर कुसी का काम करना भी अच्छा है। इच्छा होती है कि नौकरी से रोटी बने और साहित्य-सेवा से कुछ पैसे मिलें तो पुस्तकें खरीदें। मेरी बहुत-सी पुस्तकें जल जाने के बाद मही भाकासा प्रबल हो गई है।”

१७-७-१३ ई० को रंगूम से एक दूसरे पत्र में उन्होंने लिखा— ‘तुम मेरी नौकरी की खेप्टा कर रहे हो यह जानकर मुझे खुशी हुई। बात यह है कि साहित्य-बर्बा से पैट नहीं भरता। इसके अलावा मान लो कि एक महीना कुछ नहीं मिल पाया तो मुसीबत बनेगी। इसलिए इतने संसय मुक्त मार्ग में पर चलने की इच्छा नहीं होती। जो कुछ भी हो। दुर्घांपूजा के बाद दो एक महीने की छुट्टी लेकर तुम लोगों से मेट कर घाटेंगा। उसी समय मित्रजी से भी मिलूंगा। पर वहाँ नौकरी मेरे बस की नहीं है। सुनता हूँ कि हूँ तोड़ परियम करमा पड़ता है और बेतन भी कम है। कौन इतने कम बेतन के लिए हूँ तोड़ परियम करे और साहित्य-बर्बा भी बन्द हो जाए। यह ती मैं नहीं कर सकता।

६-८ १३ का उन्होंने लिखा— ‘तिस पर इस महीने दफ्तर का काम इतना अधिक पड़ गया है कि रात को साठ बजे से पहले घर नहीं लौट पाता इसके बाद सिपना-पढ़ना असता है जिससे दिमाग के धन्वर से कुछ निकालना असभव हो जाता है पर मेरा भाषा बहुत सरल है इसलिए थोटा लाने पर भी ठोकन-झाकने पर कुछ निकल ही जाता है। फिर घाबरास मुसीबत यह है कि यहाँ लोग बीमार हैं इसलिए बाजार भी बुरा जाता पड़ता है। न जाने पर वे कहते हैं कि घाने नहीं दिया जायगा। लोग तो दिन रात जपतप पूजा में मस्त हैं कुछ पढ़ना-लिखना जाता है पर काम नहीं जाता। एक दिन मैंने कहा कि मैं मेटे-मेटे बीसता हूँ और तुम लिखते जाओ मान भी लिया या पर कुछ काम नहीं बना। जैसे ‘बद’ मिलने के लिए पूछते हैं कि अनुस्वार की बिन्दी किस जगह

माएगी' सक्तीर के ऊपर या नीचे ? मतीना यह है कि सब मुझे ही मिलना पड़ता है। रात में जरा पिनक भी क्या बड़ जाती है इसलिए सिल नहीं पाता। इसी कारण इतना कम लिख पाता हूँ।

१५ ५ ११ को एक पत्र में उन्होंने एक मजेदार घ्रापबीठी का वर्णन किया है। उन्होंने लिखा—इस बीच मे मैं एक भारी विपत्ति में पड़ गया। एक रात तीन-चार घाम स हिमती थी बस-बारह दिन से उसमें बस उठ रहा था। थोड़ी-थोड़ी हिमती थी। इसलिए हिमाने पर कुछ घ्रापम मिलता था। उन्होंने सनाहू वी कि बोरे से हिमापो मीतर बाही का झून हो तो निकल आया। तब उस तरह उसे एक बटे तक झण्टी तरह हिमता रखा। रात के बारह बज चुके थे। पर जब सबेरे उठता हूँ तो बेकता हूँ कि मुँह नहीं जोसा जाता और जो पीस उठ रही है उसका क्या कहना। वह दिन और रात जैसे गुबरी यह तो समयम ही जानते हैं। भगने दिन डेविस्ट के यहाँ गया तो उसने कहा—बाँत उखाड़ा पड़ेगा।

वह भी साब मे थे बोले—धर बाप दे एक बाँत उखाड़ा कि सब बाँत दो दिन में झड़झड़कर गिर पड़ेगे। साथ ही उन्होंने वैज्ञानिक व्याख्या करके यह भी समझ दिया कि बाँत से बाँत सने हुए है। इसलिए यदि बमोके उखाड़ा गया तो बस ईश्वर ही मामिक है। काफी उमड़-बुन के बाद मैं बसा घामा। फिर बुझार चढ़ा। समझ ही सये होंगे कि क्या मामला हुआ फिर सहन नहीं हुआ और धमसे दिन बाँत उखाड़ा लिया। पर इन्सान साब महोश्व की भी बसिहारी है। पहले उसने हिमसे हुए बाँत की बयल के एक पक्षे बाँत को पकड़कर करीब-करीब उसे घामा उखाड़ डाला मैं जितना ही कहता रहा कि घरे साहब रुका यह नहीं है उतना ही वह यह कहता रहा कि बीब रखो घनी काम होता है। तब मैंने हाप से संबधी हटा कर अपने बाँत की क्या की। इसके बाद हिमता हुआ बाँत उखाड़ा गया। बाँत तो उखाड़ा पर घून नहीं सकता था। डेविस्ट ने कहा—'भई घ्रापक

१. बेकता में अनुस्वार से एक किरी और उसके मन्वे एक रेवी छोटी उभर होती है इसी का लिख है

बाँठ बहुत खराब है।

“अब इसकी बात सुनिए। हास तुम्हें बाँठ सप्ताहना ही नहीं घाता था वन गिरा तो बाँठ को कोसता है। जो कुछ भी हो, इसी प्रकार एक घंटे तक झुन गिरने के बाद मैं घर असा आया और फिर बुझार चढ़ा। आब भी उठ नहीं पाया। आठ-दस दिन से पढ़ना-लिखना बन्दर सब बन्द है। नहीं तो सुन सोचों के लिए रचना अब बेता।

इन्ही दिनां से नौकरी छोड़कर कसकले में किसी साहित्यिक नौकरी की बात ता सोच ही रहे थे पर सास ही रचनाओं के कापीराइट बेचने की बात भी सोचते थे पर इस सम्बन्ध में उनके विचार अभी इससे आगे नहीं बढ़े थे कि रचनाओं से राटी बनगी। उन्होंने उक्त पत्र में यह लिखा था कि कापीराइट बेचने पर बरि हमें मिलें तो हबर्ट स्पेंसर की पुस्तकें खरीदें।

वो सितम्बर के एक पत्र से मासूम होता है कि वे पढ़ने लिखने में कोई नियम नहीं रख पाते थे। सिस रहे हैं—‘बुझार बना ही सा रहता है। बान्नी दवा बन रही है। पढ़ना एकदम बन्द कर रसा है क्योंकि इस विषय में मैं कोई संयन नहीं रख पाता। नसे की तरह सिर पर सवार हो जाता है। एक बार सुक कर दू ता रात के तीन बार बन जाते हैं।”

इसी पत्र में लिखा है कि ‘नारीर मूस्य’ और ‘अत्रनाय’ समाप्त हो गया है। ‘नारी का मूस्य’ के अतिरिक्त वे और इस पुस्तकें ‘मूस्य ग्रन्थ मामा’ में लिखना चाहते थे जिनमें ‘विद्या का मूस्य’ और ‘नया का मूस्य’ भी होता।

वे बराबर कसर्गी छोड़न की बात सोचते रहे। ७-१२ ११ को उन्होंने अपने प्रभासक को एक पत्र लिखा—‘मैं आपस एक और बात पूछना चाहता हूँ, यदि अच्छी तरह सोचकर इस प्रश्न का उत्तर दें तो बड़ी कृपा हा। अब की बार जब पत्र मिलें ता इस बात का उत्तर अवश्य दें। मेरी पुस्तक अखिर क्या बिजगी है इसका आन तक मुझे पता नहीं है। पण्डा यह बडाहा कि मेरी छ पुस्तकें (सपनास) जिनका प्रीसत मूस्य सबा

रखे हैं यदि बाजार में हों तो याकी सब खर्च गिकास कर प्रकाशक यदि मुझे माहवार बीस रुपया दे तो क्या उसके लिए दुस्साहस की बात होगी ? क्या इससे भविष्य में उसे हानि रहेगी ?

१९१६ तक इस सम्बन्ध में सरल बाबू की परिस्थिति बदल चुकी थी । इन दिनों उन्हें प्रकाशक सुरदास बटर्जी ने १ रुपया महीना देने का वादा किया और यह कहा कि धरत्चन्द्र बन्दी से बर्मा छोड़ दें । इनमें से ५) भारतवर्ष पत्रिका के सेलक की हैसियत से और ३०) स्पष्ट पुस्तकों पर अग्रिम रायस्ती के हिसाब से बेना स्वीकार किया था । कुम्भ मिमाकर तीन सौ रुपये देने थे । यद्यपि धरत् बाबू अपनी सम्पत्ति सूर्य के रूप में साहित्य-यगन में दमके नहीं थे फिर भी वे काफ़ी प्रसिद्ध हो चले थे इतने पर भी वे रंगून छोड़ने के लिए ३०० स्पष्ट पाकर किस प्रकार इतना थे यह उनके एक पत्र से ज्ञात होता है । वे लिखते हैं— 'आपने मुझे जो दान दिया है वह मचेष्ट है यदि एक साल के धन्दे न मग जाऊँ तो उसे चुका कर ही रहूँगा ही जो इतनाता का कर्ज है उससे मैं कभी उच्छ्वस नहीं हो सकता । जो कुछ जमा था वह जो महीने की बीमारी में छल जा चुका बन्कि कुछ कज भी बड़ चुका है । अपनी चकरत और मज के कारण मैं आपकी दया पर कुम्भ कर रहा हूँ ऐसा मामूम पड़ रहा है । इसलिए यदि आप समझें कि इतना बेना उचित नहीं है तो बिठना देते बने भेज दें मैं उसी को इतनाता के साथ प्रह्व करूँगा ।'

सफल साहित्यकार

१११ तक साहित्य-जगत् में धरद्वन्द्व की स्थिति बहुत मजबूत हो चुकी थी। उन्होंने ११ = १६ को हरिदास चट्टोपाध्याय को सिखा— 'उस रोज रात को मेरी द्रग्धमासा प्रकाशित करने की जो कल्पना सामने आई थी उस मैंने छोड़ दिया क्योंकि मैंने सोचकर देखा ऐसा करना नीचता रहेगी। जिसके लिए वसुमती के मामिक सतीस बाबू एक साम से मेरे पीछे बीड़ रहे हैं वह मम ही न हो पर उन्हें न देकर दूसरे को द्रग्धमासा का अधिकार देना कुण्ठित नीचता होगी और जिसे मैं नीचता समझूंगा उसे नहीं करूँगा। सतीस बाबू धान खेरे भी धाए थे मैं रात्री नहीं हुआ। पर वे धपने पिठा की मृत्यु के बाद इस तरह फँस गए हैं कि सुनने पर बड़ा दुःख होता है। धापके आसरे में मेरा एक तरह से बस जाता है धान यही तक साच सकता है।

'सतीस बाबू का कहना है कि तीस साल में २५ १० हजार रुपये वे सकत हैं धायद असम्मम हो या सम्मम हो यदि ऐसा हो तो मरा पछाँह जाने का कोई उपाय निकल। जयर जाने के लिए मम बचस हो रहा है। धामामी बहुस्वतिवार या पुत्रवार को कुछ न कुछ अन्तिम फँससा कर शायुंगा। सयातार लिगने पर भी राटी के लिए मुहताज रहना बखटा नहीं है और यह भी समझता हूँ कि य सोग जो रुपये बँगे बहु बतमान प्रबस्था म जिम्बगी भर थोड़े ही मिलेया। धायद सस्ता सस्करण निकालने से धापको कुछ हानि पहुँचे या न पहुँचे क्योंकि सस्ता संस्करण के ही खरीदते हैं जो कभी पुस्तक नहीं गरीदते।

१४ अंन १३४० को उन्होंने धपने प्रकाशक को मिरा—मेरा कसकते का मरान सगमग बन चुका इस समय धाप मुझे पाँच हजार रुपये दें तो

बिना। दूर हो। जो तीन पुस्तकें मैं समाप्त करने की भाषा कर रहा हूँ उनसे एक साल में ही यह कर्ब चुकता हो जाएगा। मकान का ठकमीना १५ हजार का था। जिन लोगों से बातचीत की उनसे यह तय था कि पांच रुपये इस साल ऐसे और बाकी भाषा भ्रमने साल बँसे। पर बटना बक से कर्ब बढ़ गया और ३ हजार रुपये ज्यादा लय बये नहीं तो रुपये की बकरत न होती। कर्ब बिना लिए भी भुगतान कर देता। यहाँ गाँव के मकान पर भी १६ १७ हजार कर्ब कर चुका। कमकत के मकान पर भी ३ हजार कर्ब हो चुके।”

बाबू शिवपुर में वे एक छोटा-सा मकान भाड़े पर लेकर रहने लगे। छोटे भाई प्रभासचन्द्र को लेकर उन्होंने अपने पास रखवा। इस बीच उनके दूसरे भाई प्रभासचन्द्र ने संन्यास कर भक्तसम्बल कर स्वामी वेदान्त का नाम ग्रहण किया था और सब बुन्धावन के रामकृष्ण धायम में सेवाकार के इनचार्य थे। सब कमी से कमकता पाते तो छरत्चन्द्र के यहाँ रहते। उनकी बड़ी बहिन अनिता देवी भी बीच-बीच में अपने पति के साथ बड़ी आकर रहती थी।

इसके बाद उनके जीवन में कोई बड़ा परिवर्तन नहीं हुआ वे बरबर पुस्तक पर पुस्तक प्रकाशित करते रहे। प्रायिक रूप से वे सफल रहे। हेमेश्वरकुमार ने लिखा है कि वे ही पहल बंगाली साहित्यिक हैं जिन्होंने केवल इतना कं बस पर कमकतों में बड़ा मकान तथा निजी मोटर कर लिया। छरत्चन्द्र की प्रतिमा जम्बकोटि की भी साथ ही उसमें प्रजनन शक्ति भी नबब की थी। वे एक ही ठाँव कई पत्रिकाओं में अपना साहित्यिक उपन्यास बनाते थे।

उपन्यास के क्षेत्र में उनके सर्वप्रथम प्रयास 'बाता' या 'काकबाता' का कोई पता ही नहीं। सब बात तो यह है कि छरत् बाबू ने ही उसे नष्ट कर डाला था। ईस्टिन के अनुकरण में सिद्धे हुए 'अधिमाल' नामक उपन्यास के सम्बन्ध में यह समझ जाता है कि वह धायव ही किसी के पास हों। पर कितने बात है कौन जाने। Mighty atom का अनुसरण कर

उन्होंने 'पापाक' लिखा था वह उनके मामा सुरेन्द्रनाथ गङ्गोपाध्याय ने जो दासा । इन महाकाव्य ने स्वयं साहित्यिक होते हुए ऐसी सफलता ही नहीं अपराध कैसे किया यह समझ में नहीं आता । इनके अतिरिक्त उन्होंने 'बामान' (बाण) नाम लेकर तीन खंडों में अपनी रचनाओं का एक संग्रह तैयार किया था इसके प्रथम खंड में 'बोम्ब' 'काशीनाथ' 'धनुषमार प्रेम' द्वितीय खंड में 'कोरम धाम' 'बड़दीदी' 'बम्बनाथ' तथा तृतीय खंड में 'हरिहरण' 'देवदास' और 'वात्स्यस्मृति' थी । इनमें से सभी बाद को प्रकाशित हुए । कुछ दिन के उपरान्त उन्होंने 'धुमदा' नाम से एक उपन्यास लिखा पर इस उपन्यास में जिन लोगों का जिक्र था वे जीवित थे इस लिये सरत् बाबू ने अपनी मृत्यु तक इसे प्रकाशित नहीं होने दिया । उनकी मृत्यु के बाद ही 'धुमदा' छपकर प्रकाशित हो सका । 'बहुवैल्य' नाम से जो उपन्यास उन्होंने लिखा था वह महादेव साहू के ही यहाँ रज्जु गया । इनके अतिरिक्त कुछ लेखक उनकी इस पुनः की रचनाओं में (जो जो आईं) 'बामा' 'पिपु' 'छामार प्रेम' 'बामुन ठाकुर' आदि पुस्तकों का नाम सेते हैं ।

ऊपर दिये गये विवरण से स्पष्ट है कि प्रारम्भिक साहित्यिक जीवन में उन्होंने कुछ धनुषबाद या छायानुवाद किये थे पर इनमें से एक भी पाठकों के हाथ में न पहुँच सका । बाद को यदि कोई धनुषबाद के विषय में उनसे कहता तो वे कह देते थे—“धनुषबाद करना और व्यर्थ परिश्रम करना एक ही बात है यह सब मुझे अज्ञान नहीं समता ।”

'बड़ी दीदी' के प्रकाशन के बाद सरत् बाबू कीसे छः वर्ष तक चुप रहे, तथा कैसे फिर वे साहित्य में आये और नया-नया लेकर आये यह पहले ही बतसाया जा चुका है । बाद में एक के बाद एक 'पंडित मसाई', 'बैकुंठर बिस' 'मेखदीदी' 'बर्षभूष' 'पत्नी-समाज' 'श्रीकान्त', 'धरसाधीया', 'निकृति', 'माममार फन' 'गृहदाह' 'देना पापाना' 'भवविधान' 'हरिहरमी' 'एका-दशी बेरागी' 'बिमासी' 'धमागीर स्वर्ग' 'धनुषभा' 'सती घो बरेल' 'शेष प्रश्न' प्रकाशित हुए । इनमें से अधिकांश 'भारतवर्ष' में निकले । 'पत्नीसमाज' को पहले मरन् बाबू ने जैसे लिखा था पुस्तककार अपने के पहले उन्होंने

उसका घन्ट एकदम बदलकर उसे दूसरा रूप दे दिया था। कहा जाता है परलु बाबू ने पहले 'श्रीकान्त' और 'चरित्रहीन' को एक ही पुस्तक के अन्तर्गत किया था पर बाद को दो पृथक पुस्तकें बनायीं। इन दो पुस्तकों को यदि मिलाकर पढ़ा जाय तो इसमें कोई संदेह नहीं कि दोनों रचनाओं के कुछ पात्र हेरफेर के साथ एक ही व्यक्ति लगते हैं। श्रीकान्त तथा दिवाकर की बर्मा-यात्रा की घटनाएँ बहुत कुछ एक हैं। 'श्रीकान्त' का मन्त्र मिस्त्री और उसकी स्त्री टपर के साथ 'चरित्रहीन' के मकान मामिक तथा मकान मामिकिन का बहुत ही सादृश्य है। श्रीकान्त की राजलक्ष्मी का श्रीकान्त के प्रति उसी प्रकार का प्रेम है तथा उस प्रेम का इतिहास उसी तरह है जैसे उपेन्द्र के प्रति किरणमयी के प्रेम का है। प्रथम उपसंहार म प्रवेश है। हम इस विषय में बाबू को और धामोचना करने। यस्तु।

बेसबन्धु चित्तरञ्जण वास के सम्पादन में 'नारायण पत्र निकलता था। इसमें परलु बाबू की 'स्वामी' नामक कहानी प्रकाशित हुई। इस कहानी पर क्या पुरस्कार दिया जाय यह स्वयं न निर्णय कर बेसबन्धु ने सरलचन्द्र को एक दस्तखत किया हुआ भेज दे दिया और कहा जो धन धाय उचित समझे बीठा लें। परलुचन्द्र ने () का धन बीठा कर एक मुमान भेजा। इस समय सरलु बाबू बंगला साहित्य में दूसरे महारथी व्यक्ति तथा उपन्यास में प्रथम माने जा चुके थे अतएव यह () का धन उनके लिए संयम ही था।

'बंगबाबी' पत्रिका में उनका 'प्येर बाबी' नामक उपन्यास क्रमशः प्रकाशित हुमा था। इसके अतिरिक्त मधुस 'सती' धारि कहानिया भी प्रकाशित हुई थी। 'प्येर बाबी' उपन्यास के प्रकाशन का इतिहास मनोरञ्जक है। बंगबाबी तरण बंगाल के नुबपत्र के रूप में निकली थी। इसके संपादक श्री रमाप्रसाद मुकुर्जी स्वभावतः चाहते थे कि तरुणों के प्रिय उपन्यासकार सरलु बाबू का कोई उपन्यास उसम बारा-बाहिक रूप से निकले। सरलु बाबू के यहाँ बीड़ते-बीड़ते उनकी मोटर की टापर बिस नहीं पर अपने जूरेस्य से वे उतने ही दूर थे। ऐसे समय

उन्होंने एक दिन देखा कि चरत् बाबू के सिखने की मेज पर 'पयेर बाजी' के कुछ प्रश्नार्थों की पाण्डुलिपि रखी है। वे इस पर खुशी से उछल पड़े पर चरत् बाबू ने कहा—इसने खुदा न हो जायो इसको प्रकाशित करने में तुम्हारे लिए खतरा है सोच लो—इस पर वे उरने की बजाय घोर भी खुश हुए कि 'बंगवाणी' के लिए ऐसी ही चीज तो चाहिए। वो सास तब 'बंगवाणी' में यह सुबूहत् उपन्यास छपता रहा। अंत में यह जब उम्पूष हुआ तो चरत् बाबू ने बाबू के अनुसार इसे सुधीर सरकार को दिया पर वे इन्। सुधीर बाबू ने चरत् बाबू को (१०००) रुपये पेटार्थी इन बाबू पर लिया था कि ज्यों ही वह पुस्तक 'बंगवाणी' में छपाई हो जाय त्यों ही वह अपने के लिए उनकी कम्पनी को सौंपी जाय। इनीलिये चरत् बाबू ने पुस्तक उनको दी। सुधीर बाबू की मति सौंप छूट्कर की हुई। अन्त में उन्होंने चरत् बाबू से कहा कि कागज की वृष्टि से पुस्तक का जन्म-जो प्रसन्न प्राप्तियनक ठहर सकता है उधे निकालकर व इसका छापना चाहत है। इस पर चरत् बाबू ने सब फ़ाइल उनसे छीन ली और कहा कि (१०००) रुपयों का हिसाब कर दिया जायगा। चरत् बाबू ने अपनी पुस्तक का एड नी अर्धविराम चिह्न कम नहीं करना चाहा। उनके सभी प्रकाशकों ने इस पुस्तक को प्रकाशित करने से इंकार किया। अंत में सर घाट्टोप के दो पुत्र 'बंगवाणी' संपादक रमाप्रसाद मुखापाध्याय तथा उमाप्रसाद ने अपने खर्च पर तथा कतरा सहकर इसको प्रकाशित करना स्वीकार किया।

यह मुद्रिकण यह हुई कि कोई प्रसन्न इस पुस्तक को छापने पर राज़ न हुआ। सब काटन प्रेम ने इनका छापा। पहल संस्करण में ३००० प्रतिर्षी छपीं। काम तीन रुपय रस गये पर एक महीने में ही संस्करण सतम हो गया। दूसरे संस्करण में ५००० छपीं पर व भी तीन महीने में सतम हो गई। इनके बाद पुस्तक ज्यत् हो गई। सरकार मुकद्दमा भी जन्ताज जा रही थी पर कुछ विशेष प्रभावकारी तार्थों के बीच में पढ़ने के कारण मुकद्दमा नहीं जन्ताया गया। चरत् बाबू को इस ज्यत्ती

पर इतना जोर धामा कि वे इस प्रश्न को लेकर एक प्रावधान बड़ा करना चाहते थे इसलिये वे रबीन्द्रनाथ के पास गये पर रबीन्द्रनाथ ने उनको ऐसा करने से मना किया। रबीन्द्रनाथ ने स्वयं मह उपन्यास पत्रा और कुछ प्रिय बातें लिखी। उन्होंने लिखा—

"मैंने तुम्हारी पुस्तक पढ़ के बाबेदार पड़ी। पुस्तक उत्तमक है यानी ब्रिटिश शासन के बिन्दु पाठक के मन को उत्तेजित करती है। मेलाक के कर्तव्य की दृष्टि से राज्य यह होपजनक न हो क्योंकि यदि मेलाक अंग्रेजी शासन को प्रतिष्ठित समझता है तो वह चुप नहीं बैठसकता पर चुप न रहने की जो विपत्ति है उसे भी स्वीकार करना चाहिये। यदि हम अंग्रेजी शासन की निन्दा इसलिए करें कि अंग्रेज सरकार हम क्षमा करेंगे तो इसमें कोई पीछे की बात नहीं है। मैं बहुत-से बेस जूम धामा। मेरी जो प्रियता है उसमें मैंने यह देखा कि एकमात्र अंग्रेज सरकार के अलावा स्वदेशी या विदेशी प्रजा के आक्षेप या व्यवहारपन विरोध को और कोई सरकार इतने भय के साथ सहन नहीं करती। यदि हम अपनी ताकत पर नहीं बल्कि दूसरे की सहिष्णुता की बसोतत विदेशी राज्य के सम्बन्ध में यथेष्ट व्यवहार करने का साहस दिखाते हैं तो वह पीछे की बिन्दुना मात्र है उसमें अंग्रेजी शासन के प्रति ही अज्ञा नमस्कर्ती है न कि अपने प्रति। राजदक्ति में पपुबन है यदि कर्तव्य के बिना पर उसके बिन्दु बड़ा ही होना पड़े तो दूसरे पक्ष में आर्थिक जोर का होना यानी आजात सहने का जोर हुना चाहिये, पर हम अंग्रेजी शासन से ही उस आर्थिक जोर की मांग करते हैं अपने से नहीं। इससे प्रभावित हाना है कि हम मुंह से चाहे कुछ भी कहें पर अपने अंतर्बान में हम अंग्रेजों की पूजा करते हैं और इस पूजा का अनुष्ठान हम यों करते हैं कि अंग्रेजों का गानियां बकर हम अंतर्बान में अज्ञा नहीं करते। व्यक्तिमान की दृष्टि में देखा जाए तो तुम्हें कुछ न कहकर सिर्फ तुम्हारी पुस्तक को बड़ा बना लयभन क्षमा करना है। कोई भी प्राच्य या पाश्चात्य विदेशी शासन ऐसा न करता। हम भारतीयों के हृदयों में राजदक्ति होती तो

हम क्या करते यह हमारे बर्माबारे और भारतीय राजबाइों के तरह तरह के व्यवहारों से अनुमेय है। पर इसमिए सेवनी बन्द पाडे ही करनी है। मैं यह नहीं कहता मैं कह रहा हूँ कि सजा स्वीकार करके ही नकनी जसानी पड़ेगी। जिस किसी देश में राजघक्ति के साथ विरोध हुआ है वही ऐसा ही हुआ है, राजघक्ति का विरोध करत हुए घायम से नहीं रहा वा सकता इस बात को निमन्दिग्य रूप से जातकर ही ऐसा करना है।

यदि तुम सन्धार में राजविरोधी बात मिसते तो उसका प्रभाव बहुत बड़ा घीन धनिक होता पर तुम्हारे जैसे लेखक ने कबाळतेन में जो बात मिस की उसका प्रभाव निरन्तर चलता ही रहेगा। देव और काम म उनकी ब्याप्ति का विगम नहीं है। अपरिपक्व उम्र के लड़के और लड़कियोंसे लेकर बूढ़े तक उसके प्रभाव में आ जाएंगे। ऐसी घबस्था में यदि घपकी घासम तुम्हारी इस पुस्तक का प्रचार बन्द म कर देता तो इससे यही मामूम होता कि साहित्य में तुम्हारी घक्ति या देव की प्रतिष्ठा क सम्बन्ध म या तो उसे कुछ मामूम नहीं है या बहु घबसा इरानि चाहता है। घक्ति को बाहत करने से प्रतिहत होने क मिए तैयार रहना पड़ेगा। इसी कारण उस घाघाठ का मूस्य है। घाघाठ के गुरतब को लेकर बिसाप करने पर उस घाघाठ के मूस्य को एकदम नष्ट कर देना होगा।

तुम लोगों का

२७ मार्च १९३३

रबीन्द्रनाथ ठाकुर

इस पत्र के उत्तर में सरत्बन्ध न रबीन्द्रनाथ को जो पत्र मिसा बहु टम प्रकार का— घापका पत्र मिसा। घण्टो बात है ऐना ही हो। यह पुस्तक मरी गिणी हुई है इसमिए दुग हो ता मुझे है पर बहु काम बात नहीं है। घापने जो कर्तव्य और उचित समभा है उसके बिरउ न ना मरा कोई घमिमल है और न कोई घबियोय। पर घापकी बिट्टी में जो हमरी बातें आ गई हैं उन सम्बन्ध में भरे मन में बा-एक प्ररन हूँ और कुछ बरनव्य भी है। यदि तुर्की बतुर्की सदे तो बहु भी घापकी ही राघाएन के कारण सजमिसे।

स्वयं जीवन में प्रत्यक्ष किया था। उन्होंने जो कुछ देखा था सुना था अनुभव किया था उसी को कुछ हेर-फेर के साथ वे अपने उपन्यासों में चित्रित करते थे। उनके जीवन से अमित्र पाठकों को कई बार उनके उपन्यासों को पढ़ते समय यह संदेह हुए बिना न रहेगा कि उन्होंने उपन्यास के नायक के रूप में अपने ही जीवन के किसी भाग को चित्रित किया है। स्वयं उनके जीवन का अधिकांश भाग अबारामर्षी में गया था वे स्वयं एक glorified vagabond यानी यद्यप्राप्त अबारामर्षी में इसी प्रकार उनके उपन्यासों के नायक भी यद्यप्राप्त अबारामर्षी में थे। 'अरिभूत' का सटीक अबारामर्षी अरबी बेरयागामी था उसके रूप में खर्च करने का बस्तिक मुटाने का हिसाब तो सरत्चन्द्र न अक्षर किया है पर उसने कभी एक पैसा भी पैसा नहीं किया तथा उसके जीवन में कोई उद्देश्य भी था ऐसा तो नहीं मानूँ होता। वह जैसे धाँधी में उड़ रहा था। 'श्रीकान्त' का नायक श्रीकान्त तो अबारामर्षी है ही एक भ्राम्यमान तथा प्यारा अबारामर्षी। 'पत्नी-समाज' का नायक रमेश डाक्टर या बकील बुदा जान क्या था पर उसने कभी डाक्टरी या बकालत की ही या करनी नहीं हो ऐसा अरत् बानू नहीं भिखते। 'देवदास' का देवदास भी एक अबारामर्षी ही है पैदाइशी नहीं बना हुआ। 'बड़ी दीदी' का नायक सुरेश जो तो बड़ा अन्धा छान था पर वह अपने अन्धेपन से ऊँकर अपने पैरों पर सबा होना चाहता है इसी उद्देश्य से वह भर छोड़कर भाग निकलता है यहीं से जप मास का सूत्रपात होता है। 'बत्ता' का मरेन्द्र बिलायत पास डाक्टर है, पर अबारामर्षी के सब पुत्र उसमें भीख हैं। 'बुढ़ाहा' के सुरेश महिम का भी बड़ी ज्ञान है। 'पत्नी दासी' का डाक्टर एक जातिधारी है पर है वह भी एक बेधमकत त्यागी अबारामर्षी। उसने अपनी बुन में सारी दुनिया की साक छान डाली थी। अबारामर्षी के प्रति वह पक्षपात अरत्-साहित्य की एक विशेषता है।

सरत्चन्द्र के पुरुष पात्रों से कहीं बढ़कर उनके उपन्यासों की नायिकाएँ उद्देश्य पर अभाव डालने वाली हैं। बसिठ अल्पमानित भारतीय नारी के

साह्य सरत्चन्द्र ने पग-पग पर जिस समझदारी से मरी सहानुभूति का परिचय दिया है वह भारतीय साहित्य की धमर बस्तु है। इसीमिये बंगाल की नारियों ने उनका साह्य धर्मिन्दन किया। धर्म यथानुगतिकता तथा वेने क संयुक्त मोर्चे के धर्मिमान क धाय मुर्से मे पिसती हुई भारतीय नारियों ने धर उनकी रचनाओं म जैसे अपनी स्वतन्त्रता का सौटी हुई पाया। युवयुगांतर से उनके वेर्गे मे पड़ी मारी बड़ियाँ मानो मलमलाकर टूट गइ। उर्होके भी जाना कि जीवन मे उनका भी कुछ भाग है जो सर्वदा गीण ही हो ऐसा नहीं। सरत्चन्द्र की पुस्तकों मे बारनारियों का चरित्र तक सहानुभूतिपूवक चित्रित है। उनको देखकर एसा लगता है कि वे भी मनुष्य यात्रि कौ मबस्ता है। उनमे भी उसी प्रकार बड़कता हुआ दिन है जैसा धीर किसी नारी मे धीर बह दिन किसी स निहृष्ट नहीं। 'भीकान्त' की राजमदमी कोई नियमित बेरदा नहीं है पर एक पबस्त्रबिता नारी है जिनन माने का ही अपनी जीविका बनाया है। उसका चरित्र इतना उगबक धीर मुन्दर है कि उम पर घृणा तो उत्पन्न होती ही नहीं बल्कि उने प्यार करने की भी पाहता है। उसन भीकान्त की विम-विम प्रकार मे मबा की उमका मग्न से बचाया उसमे धधिक मसा कुमबधू बया कर मकठी है। जब चनिप्यता धधिक बड़ने इनकर भीकान्त धीर राजमदमी बुदा होन है उम समय भीकान्त बहता है— 'बड़ा प्रेम नेकल पाम ही नहीं गीणता बस्ति यह दूर भी न जा फेंकता है' यह कितना बड़ा मत्व है तथा दोर्गे क प्रेम की गम्भीरता को हमारी धर्माँ क मायने ध्यष्ट करक करीब-करीब हमें रसा दता है। राजमदमी का चरित्र भारतीय साहित्य म एक धमर बस्तु है। यह चरित्र स्पष्ट कर बता है कि नारी जब प्रेम करनी है तो वह क्या-नया कर मकठी है।

'देवदास' की चरित्रमूर्ती तो एक मामूला बाजाम् बेध्या है पर जब देवदास क प्रेम मे पर जाती है ता वह क्या मे क्या हा जाती है। वह क्याकृति ता छाड़ ही देनी है माय ही वह जा करती है उसका एक ही नाम हमारी ज्ञाया मे है वह है 'तपस्या'। कई बार देवदास की बड़ने

हृदय में इस बुद्धिवा में पड़ गया हूँ कि यदि प्रेम ही से किसी पुरुष पर स्त्री का अधिकार होता है तो देवदास किसका है ? पार्वती का या चन्द्रमुखी का ? देवदास स्वयं इस बुद्धिवा में योत्ता का रहा है। वह चन्द्रमुखी से कहता है—“तुम दोनों में कितना असमान्य है फिर सामान्य भी है। एक कितनी अभिमानी तथा उद्वेग है दूसरी कितनी शान्त तथा संयत है। वह कुछ भी नहीं सह सकती और तुम कितनी सहनशील हो। उसका कितना पक्ष है नाम है और तुम्हारा कितना कलक है ? सभी उसको कितना प्यार करते हैं, और तुम्हें कोई प्यार नहीं करता ? पर मैं तुम्हें प्यार करता हूँ, प्रणम्य करता हूँ”—कहकर एक महीने छीप कर फिर बोला—“पाप-पुण्य के विचारक तुम्हारा क्या विचार करेंगे नहीं मानुष पर मृत्यु के बाद यदि मिलन हो तो मैं तुमसे कभी असन नहीं रह सकता।”

पाठक जब ध्यान से देखें तो मानुष होगा कि ‘अरिबहीन’ की सावित्री का करीब-करीब बही अरिब है जो देवदास की चन्द्रमुखी का। मेद केवल इतना है कि सावित्री वैसा नहीं और चन्द्रमुखी वैसा ही। सतीय तथा देवदास पर जब विपत्ति पड़ती है या वे बीमार पड़ते हैं तो सावित्री तथा चन्द्रमुखी घाठी हैं और बेबी की तरह उनकी सेवा करती हैं। दोनों का प्रेम अंत में मिश्रित होता है। सावित्री सतीय को अंतकर भी ‘श्रीकान्त’ प्रथम पर्व की राजलक्ष्मी की तरह ‘बड़े प्रेम’ की मर्दाना के कारण दूर दूर जाती है। यदि श्रीकान्त प्रथम पर्व में ही समाप्त होता बँसा कि उसके होने में कोई बाधा नहीं थी तो हम कह सकते थे कि ‘श्रीकान्त’ की राजलक्ष्मी और ‘अरिबहीन’ की सावित्री हेरफेर के साथ एक ही पानी हैं, पर तृतीय पर्व में जाकर श्रीकान्त और राजलक्ष्मी का मिलन करवा देने से सावित्री से राजलक्ष्मी में कुछ विभिन्नता आई। स्मरण रहे कि यह केवल घटना के काल से विभिन्नता है नहीं तो दोनों का अरिब एक ही है। यह अनुमान है कि छात्रचन्द्र पहले ‘अरिबहीन’ और ‘श्रीकान्त’ को एक ही उपन्यास जानना चाहते थे यानी पहले दोनों की कल्पना एक ही बार को डिजा-

मक हा गई सत्य ही मानूम होता है।

'बेबखान' की चन्द्रमुखी इन दोनों के सम्मुख जरा पीकी इसलिये बठी है कि वह पहले बेख्या थी फिर भी उसका चरित्र साबित्री या राजलक्ष्मी से बहुत भिन्न नहीं है।

धम्मपक धीरेन्द्रकृष्ण मुकर्जी ने 'बमुमती' के एक सख में लिखा था— हमारे देश के एक प्रसिद्ध उपन्यासकार के हाथों से इन समाज बहिष्कृत नारियों के चित्र बहुत ही सुन्दर उतर हैं कहा जाता है वह इनकी वैयक्तिक समझता का परिचायक है।" धम्मपक मुकर्जी ने इस उपन्यासकार का नाम नहीं दिया किन्तु बँगला साहित्य से जरा भी परिचित प्रत्येक व्यक्ति समझ जायगा कि उसका यह कटाक्ष भारतचन्द्र पर था।

समाजबहिष्कृत नारी से धम्मपक का मतमक कबल चन्द्रमुखी जैसी वास्तविक बेख्या से या राजलक्ष्मी जैसी लोचसमाज में बेख्या रूप में प्रचारित बेख्या से हो नहीं सकि उनका मतमक किरणमयी धमया टगर नहीं तक कि धमया धीरी से जो है। 'चरित्रहीन' की किरणमयी का चरित्र पाऊई एव प्रबुद्ध चरित्र है। एक विद्वान् पति से उसका विवाह हुआ था पर वह उमठी गिप्या ही रही कभी पानी या प्रिया नहीं हुई। वह निराकर नामक युवक के साथ प्रबुद्ध परिस्थिति में भागती है। बिन्नापून (Geistreich) बातचीत में वह चरित्र-साहित्य में धमुपम है, रामर 'भोप प्ररन' को कमान ही उससे कुछ बीस उतरे। किरणमयी के साथ प्यार करने का तो जी नहीं चाहता पर यह एक ऐसा स्त्रीचरित्र है जिसे कभी कोई भूल नहीं सक्ता।

'धीवान्त' की धमया किरणमयी से मिलती-जुलती है। वह बर्षी स्त्री के साथ रहने वाले पतिदेर के घर से पीटी जाकर सौटती है धीर रोहिणी बाबू के साथ पति-स्त्री की तरह रहती है। धीवान्त धरस्मात् उसे मिलता है तो वह चौक पड़ती है, पर सामने धाकर बहती है—“जम्म

जन्मांतर के धर्म संस्कार के बंधके से पहले मैं जरा विनमिता पर्यं भी
 समूह न पाई थी इसीलिए भाग गई थी श्रीकान्त बाबू नहीं तो इसे
 पाप मेरी वास्तविक सज्जा न समझें इत्यादि। धर्मवा की बातचीत मुन
 कर किरणमयी की ही बातचीत याद आती है। विद्रोहिनी मारी का बही
 तेजस्वी रूप उसमें भी दिखाई पड़ता है। पर धर्मवा के प्रति किरणमयी
 से अधिक भया इसलिये होती है कि धर्मवा ने एक तो पति को हूँ बज
 का मौका दिया दूसरे वह रोहिणी बाबू के (जो उसे प्यार करता था)
 साथ सचमुच पत्नी की तरह रहना चाहुती थी किरणमयी तो बुद्धि तथा
 रूप से प्रसिद्ध कर दिखाकर से खेल कर रह जाना चाहुती थी। किरण
 मयी के सम्बन्ध में एक और बात है कि वह मन-ही-मन प्रेम तो करती
 रही उपेक्ष बाबू से पर सबमें ठेस लगने के कारण दुष्टताबस (Perceptibility)
 दिखाकर का फुसलाकर रंगून भाग गई। धरत्चन्द्र ने 'चरित्रहीन' में किरण
 मयी के लिए पापिपत्ता धावि शब्द का व्यवहार किया है पर इसका कोई
 कारण नहीं मिलता कि 'चरित्रहीन' की पापमयि को एक तिहाई देखकर
 विद्रोह बाबू ने क्यों लौटा दिया था तथा किरणमयी ने कौन-सा पाप
 किया था? फिर किरणमयी पापिपत्ता थी तो धर्मवा क्या बूब की भुसी
 हुई थी। फिर धर्मवा के लिए उन्हीने पापिपत्ता धावि शब्द क्या नहीं इस्ते
 मात किया? 'श्रीकान्त' के प्रकाशन तक धरत्चन्द्र निबर हो चुके थे यही
 इसकी व्याख्या है। हम बाबू को किरणमयी और धर्मवा की सामाजिक
 स्थिति के सम्बन्ध में धातोरचना करें।
 बीरेन्द्र बाबू 'श्रीकान्त' की धर्मवा बीबी को साथ समाजबहिर्भूता
 नारियों की श्रेणी में रखें। धर्मवा बीबी समाज के बाहर थी या भीतर,
 यह बाह्य भी ता हमसे समाज का छोटापन जाहिर होता है या धर्मवा
 बीबी का पाठक धर्मवा बीबी के मुँह से उनका विवरण सुनकर इसका
 निगम करें। वे श्रीकान्त के लिए भिन्न पर्यं थी—
 'श्रीकान्त' दुम्हारी इस बुकिनी बीबी का नाम धर्मवा है। पति का
 नाम मैं क्यों दुष्ट रख गई, यह हम विवरणने धर्म में पड़ने पर दुम्हे पुत्र ही

जात हा जायगा । मरे पिता भी व्यक्ति हैं उनका कोई लडका नहीं था । हम ही बहिनें थीं । इसलिए पिता न चाहा था कि किसी तरीके पर के सड़क को सामान बनाकर घर साये और उन सिला-पढ़ाकर आदमी बनाये । तदनुसार उन्होंने मरे पति को सिलाया-पढ़ाया तो सही पर आदमी न बना पाये । मरी बड़ी बहिन बिचका हाकर घर ही पर थीं इन्हीं की हत्या कर पति फरार हो गये । यह बुद्धत्व उन्होंने क्यों किया था अभी तुम बच्चे हो न समझोगे पर एक दिन समझोगे । जा कुछ भी हो कहो ता थोकांठ यह दुःख कितना बड़ा है ! यह कबका कितनी मम बपी है ? फिर भी तुम्हारी बीबी ने सब सहा था पर पति हाकर जिस अपमान की भाग बे अपनी स्त्री के हृदय में जाता गये उसकी आत्मा आज भी दांत नहीं हुई । जाने दो । इस बटना के बाद सात बरस बीते तब फिर उनके बरान हुए । जैसा पोसाक में तुमन उन्हें दखा था उसी पीसाक में ब हमारे मकान के सामने साँप का बल दिसता रहे य । उनको और कोई पहचान न पाया केबन मैंने पहचाना । मेरी आँखों को ब धोखा न दे सक । मुनती हूँ उन्होंने यह परम सुमाहस का काम मरे ही लिए किया था पर यह झूठी बात थी । फिर भी एक दिन गहरो रात में मैंने मकान का पिछसा किबाड खोलकर पति के लिए घर छोड़ दिया । पर मरने मुना तब जाना कि अन्नदा कुलत्यागिनी हा मई । इस कर्णक का बोझ मुझे आमरण होना पड़ेगा क्योंकि जब तक पति जीवित थे मैं आत्मप्रकाश न कर सकी पिताजी को जानती थी वे किसी नौ प्रचार अपनी कन्या के हत्यारे को रामा नहीं करते । और आज बह मय नहीं अब जाकर उनसे सब कह सचो हूँ पर आज वीन इस कहानी पर विद्वाम करया । इस पिने किंगूह में मरा कोई स्थान नहीं है इसक अतिरिक्त मैं मुमसमानिन हूँ (क्योंकि ब मुमसमान हो गये थे) ।”

बहना न होमा कि ऐसी अवस्था में अन्नदा बीबी समाजबहिनु ता मने ही हों पर सतीत्व के प्राचीन मानदण्ट से भी अन्नदा बीबी से बचकर सती गायद पौराणिक साहित्य में भी कीइ न मिले । अन्नदा बीबी ने सती बनने

अप्यांतर के अन्व संस्कार के अन्के से पहले मैं जग तिसमिता गई थी, सम्भल न पाई थी इसीलिए भाग गई थी श्रीकान्त बाबू, नहीं तो इसे पाप मेरी वास्तविक लज्जा न समझे" इत्यादि। अमया की बातचीत सुनकर किरणमयी की ही बातचीत याद आती है। विद्रोहिनी नारी का वही लज्जस्वी रूप उसमें भी दिखाई पड़ता है, पर अमया के प्रति किरणमयी से अतिक्रम अन्व इसलिये होती है कि अमया ने एक तो पति को हूब हूब का मौका दिया हुआ वह रोहिणी बाबू के (जा उसे प्यार करता था) साथ लक्ष्मण पत्नी की तरह रहना चाहती थी किरणमयी तो बुद्धि तथा रूप से अधिसूत कर विवाह से डेम कर रह आना चाहती थी। किरणमयी के सम्बन्ध में एक और बात है कि वह मन-ही-मन प्रेम तो करती रही अनेक बाबू से पर अन्के में डेम लज्जे के कारण दुष्टतावस (Perversity) विवाह को फुसठाकर रंपून भाग गई। सर्वज्ञान के अरिचरित्र में किरणमयी के लिए पापिष्ठा आदि शब्द का व्यवहार किया है पर इसका कोई कारण नहीं मिलता कि 'अरिचरित्र' की पाण्डुलिपि को एक ठिंहाई देलकर द्विजेश बाबू न क्यों मौन दिया था तथा किरणमयी ने मौन-सा पाप किया था? फिर किरणमयी पापिष्ठा थी तो अमया क्या हूब की धुली हुई थी! फिर अमया के लिए अन्को पापिष्ठा आदि शब्द क्यों नहीं इस्ते-माल किया? श्रीकान्त के प्रकाशन तक सर्वज्ञान तिर हो चुके थे वही इसकी व्याख्या है। हम बाह को किरणमयी और अमया की सामाजिक शान्ति के सम्बन्ध में धातोचना करेंगे।

बीरेन्द्र बाबू 'श्रीकान्त' की अमया बीबी को अमय समाजबहिर्भूता नारियों की श्रेणी में रखें। अमया बीबी समाज से बाहर थी या भीतर यदि बाहर थी तो इससे समाज का छोटापन बाहिर होता है या अमया बीबी का बाठक अमया बीबी के मुँह से अमया विवरण सुनकर इसका निर्णय करें। मैं श्रीकान्त के लिए सिल गई थी—

'श्रीकान्त तुम्हारी इस बुद्धिनी बीबी का नाम अमया है। पति का नाम मैं क्यों चुन रहा हूँ, यह इस विवरण के अन्त में पढ़ने पर तुम्हें सुब ही

जात हा जायया । मेरे पिता भी व्यक्ति हैं उनका कोई लड़का नहीं था । हम दो बहिनें थीं । इसलिए पिता न चाहा था कि किसी घरीब घर के लड़के को शान्द बनाकर घर भागें और उस भिला-पड़ाकर धादमी बनायें । तबमुझार उन्होंने मेरे पति को सिलाया-पड़ाया तो सही पर धादमी न बना पाय । मेरी बड़ी बहिन विधवा होकर घर ही पर थीं इन्हीं की हत्या कर पति फराा हो गये । यह बुद्धय उन्होंने क्यों किया था अपनी तुम बच्चे हो न समझोगे पर एक दिन समझोगे । का कुछ भी हो, कहो तो श्रीकान्त यह दुख कितना बड़ा है ! यह लड़का कितनी मर्म बेबी है ? फिर भी सुम्हारी बीबी ने सब सहा था पर पति होकर जिस अपमान की भाव बे अपनी स्त्री के हृदय में बना गये उसकी शान्द धात्र भी धात नहीं हुई । जाने दो । इस बटमा के बाद सात बरस बीठे तब फिर उनके दर्शन हुए । जैसी पोशाक में तुमने उन्हें देखा था उसी पोशाक में वे हमारे मकान के सामने सोप का खेल दिखता रहे थे । उनकी धीर कोई पहचान न पाया केबन मैंने पहचाना ! मेरी धांतों को वे मोखा न दे सक । सुनती हूँ उन्होंने यह परम दुसाहस का काम मेरे ही लिए किया था पर यह झूठी बात थी । फिर भी एक दिन यही रात में मैंने मकान का पिछमा किबाड़ कोलकर पति के लिए घर छोड़ दिया । पर गबने सुना तथा जाना कि धधरा कुमत्यागिनी हो गई । इस कर्मज का बोझ मुझे धामरल बोना पड़ेगा क्योंकि जब तक पति जीवित थे मैं धातप्रकाश न कर सकी पिताजी को जानती थी वे किसी भी प्रकार अपनी कम्पा के हत्यारे को शान्द नहीं करत । और धात्र वह भय नहीं धत्र जाकर उनसे सब कह सकती हूँ पर धात्र कौन इस कहानी पर बिरवास करेगा । इस निव सिद्धि में मेरा कोई स्थान नहीं है इमक धतिरिक्त मैं मुमसमानिन हूँ (क्योंकि वे मुसमान हो गये थे) ।”

बहना न होगा कि ऐसी अवस्था में धधरा बीबी समाजबहिर्भूता भने ही हों पर तत्काल के प्राचीन मानदण्ट से भी धधरा बीबी से बढ़कर सती धात्र पीछानिक साहित्य में भी कोद न मिले । धधरा बीबी ने सती बनने

के लिए समाज त्याग दिया कुल त्याग दिया यहाँ तक कि ससती होने का कर्मक भी अपने ऊपर ले लिया। उहा यह कि ऐसा करके उन्होंने धरुता किना मा कुप यह महाँ विचार्य नहीं है पर सती की उम प्राचीन धारणा को उन्होंने पूर निवाहा जिसमें सब धरुस्थापो में पति ही सती का धर्म है। शरद्व-साहित्य में धरुबा बीबी का चरित्र भी ऐसा है जो धुना नहीं जा सकता। मेरी तो यह धारणा है कि सतीत्व की मर्यादा म धरुबा बीबी के सामने सुरबासा का चरित्र भी पीका पड़ जाता है।

'चरित्रहीन' उपन्यास में सुरबासा का चरित्र धाता है। यह उपेन्द्र की स्त्री है पति को अपना बेवठा समझती है पतिप्राणा है। शरद्व बाबू का 'चरित्रहीन' उपन्यास के लिए मासियाँ क्यों बी गई है यह मेरी समझ में नहीं धाता क्योंकि इस उपन्यास में शरद्व बाबू ने सुरबासा को जो किरणमयी के मुकाबले में सुरबासा से कहीं बड़कर विदुषी तथा चारित्र्य-जागिनी है, अधिका पवित्र तथा महिमामयी करके चित्रित किया है। सुनमात्मक रूप से सुरबासा को अधिका महिमामयी करके दिखाने का प्रयत्न 'चरित्रहीन' में स्पष्ट तथा मान्य (conscious) है एकाध बड़े इनमें टक्कर हुई है तब किरणमयी हार ही गई है। इसमें सम्यह नहीं कि सुरबासा धीरों की धपेछा पृष्ठभूमि में रछी है, पर शरद्व बाबू से जहाँ तक हो सका यह उज्ज्वल ही होकर सामने धार है। शरद्व बाबू न उसकी चिन्मियता को किरणमयी की धरुमुत निवाधीलता से तथा उसके मीम को किरणमयी की चामिता से कहीं बड़कर दिखसाया है। सुरबासा बहुत ही बनी सम्भ्रांत धराने की बड़की है। उसका पति भी मरुलोक सेणी का ही नहीं र्व्यक्तिक रूप से स्वभाव से भी उब धर्म के सब धुनों का अधिकायी है जो एक मरु पुरुष के लिए धनिकार्य समझ धाते हैं इसलिये किधी भी तरह से यह नहीं कहा जा सकता कि यह समाजबहिर्मुता है। धरुपय ही यह समाज के धरुदर है पर यह सब होते हुए भी यह धर्मिय नहीं कहा जा सकता कि यह धरुबा बीबी से बड़कर सती है। समाजान्तर्बंता सुरबासा के सतीत्व की मुकता पवि पृष्ठधीप से की जा सकती है तो धरुबा बीबी की धुनना

श्रुतवारा से की जा सकती है जो मटके हुए को रास्ता दिखाता है।

गृहबाह' की मजमा एक प्रसंग ही टाईप की है। सुरेश और महिम को प्रेमियों के बीच वह उषेइबुन में पड़ जाती है यहाँ तक कि महिम के साथ विवाह करने पर भी वह अपने को समझ नहीं पाती। जब सुरेश को बेसती है तो उसकी प्रोर दलती है। घंठ में सुरेश उसको लेकर माग निकलता है पहले वह छटपटाती है पर सुरेश की मयकर बीमारी से पसीज कर उसके साथ पत्नी के रूप में ता नहीं हाँ मित्र के रूप में रहती है, इत्यादि। इस चरित्र की विशिष्टता इसी में है कि वह इधर से उधर बनमती है। इसी को भकर इस उपन्यास के रस में परिपक्वता घाती है। यही इस उपन्यास का मुक्त है।

'पत्नी-समाज' की रमा एक बाम-बिबवा मुबती स्त्री है जा घन्ठ तक उषेइबुन की सिकार बनी रहती है। वह स्वभाव से प्रेमशीला तथा सत्य-मप पर रहने की चेष्टा करन बासी है पर समाज के दबाव में पड़कर सत्य स यहाँ तक िय जाती है कि झूठी गवाही दकर उसी रमेश को जस मित्रवाती है जिसको शायद वह दुनिया में सद से अधिक चाहती है। धर्म्य विषया होन के कारण वह अपने प्रेम को अपने निकट भी धस्वीकार करती है। रमा कदाचित् उतनी कमजोर नहीं है पर शायद प्राम्य समाज के मयकर दबाव का स्पष्ट करना ही धरत् बाबू का धमिप्राय था।

'बत्ता' की बिजया उतनी कमजोर नहीं है फिर भी वह इतनी कम जोर है कि यदि दयास बीच में न पड़ता तो वह अपने प्यारे नगेन्द्र से विवाह न कर पूर्व रासबिहारी के पुत्र से ही विवाह कर बैठती।

'बड़ी दीदी' की माधवी धरत्चन्द्र की एक बहुत ही कबित्वपूर्ण सृष्टि है। मामूम होता है कि मुबक कमाकार धरत्चन्द्र ने अपने हृदय का सारा मपु इसमें उड़स दिया है। माधवी में कियारी की श्रीङ्गापील कस्मना यौवन की मपुमय प्यास हिन्दू विधवा की श्रीङ्गा तथा सेवा करके अपने को परिपूर्ण करन की इच्छा मूर्त हो उठी है। उसका हृदय मपुसे इतना मबोज है कि निश्चित बपार से भी वह छलक उठता है। सुरेश से गैर

जिम्येबार तथा अपने वीर पर चढ़े न हो सकने वाले सुन्दर युवक को प्राप्त पाकर वह जोर से छसक उठता है। यह कहना यत्न होगा कि सुरेन्द्र के प्रति उसका आकर्षण केवल सुन्दर आरम के प्रति सुभी हीबा का ही स्वाभाविक आकर्षण है। उच बात तो यह है माधवी का हृदय केवल पत्नी होने से ही नहीं माता होने से भी बंधित है। सुरेन्द्र के एक बड़ा लड़का (big boy) मात्र होने के कारण उसकी देख रेख कर माधवी के हृदय के आत्मस्थ की बुभुक्षा भी पश्वृप्त होती है। इसलिए सुरेन्द्र के प्रति माधवी का आकर्षण एक अटल वस्तु है। इसी अटलता को ठीक-ठीक धरा करने में ही शरत्चन्द्र की कला की साधकता है।

'बड़ी बीबी' में शान्ति समक्य में रहकर उपन्यास के रस को परिपक्व करती है यानि यही उसका एकमात्र करणीय (role) है। वह स्वयं कम स्पष्ट होती है बुधों को स्पष्ट करती है तथा बहाने-बहाने सँस है उसे भरती है। शरत् चन्द्र के उपन्यासों में ऐसी पात्रियाँ कई हैं। 'चरित्रहीन' की सरोजिनी ऐसी ही है। सरोजिनी ने भिन्न दिन से सतीस को बेला जही दिन से वह उठ पर अपना दिन वार चुकी। इसका कोई प्रमाण नहीं है कि सतीस के प्रति उसका प्रेम सतीस के प्रति सावित्री के प्रेम से किसी प्रकार निकृष्ट है, फिर भी वह परषाद्भूमि में ही रहती है। अन्त में उसी से सतीस का विवाह होता है। सरोजिनी मानो इसी लिए पैदा हुई थी तथा उसका प्रेम भी जैसे इसीलिए था कि वह एक नाटकीय मुहूर्त में धाये तथा सावित्री और सतीस को एक दूसरे से अलग होने में मद्दद करे। सरोजिनी ने इस प्रकार परषाद्भूमि में रहकर सतीस और सावित्री के चरित्र को स्पष्ट किया।

'बैबबास' की चन्द्रमुखी भी इसी धेनी की पानी है। वह पार्वती और बेबबास के बीच में खड़ी होने के लिए नहीं धाती बल्कि बैबबास तथा पार्वती का स्पष्ट करने के लिये ही सामने धाती है। जब पार्वती अपने बुद्ध प्रति के पंजे धिर पर हाथ रखकर कहती है—'मैंने लड़की को बुलाया है' लड़की से मतलब उसकी मरी हुई सौठ की लड़की से है तो हम जानते हैं

कि उसके इस कथन में कोई धार नहीं है समस्त हृदय से वह देवदास को ही चाहती है। उसी प्रकार जब देवदास चन्द्रमुखी या अन्य किसी बेश्या के झोठ में झोठ लगाकर पड़ा रहता है तो हम जानते हैं कि इस भ्रान्तिजन्य में कोई प्रेम नहीं यह तो हलाहल है। अशुभ चन्द्रमुखी के प्रेम से उसके प्रति देवदास का प्रेम भी बाद की जगा का जिसका वर्णन पहल का हुआ है। "उसके मन में दोनों अमल-अपल विराजमान हैं" पर क्या चन्द्रमुखी के प्रति उसका प्रेम सचमुच जगा का ? इसमें सन्देह है क्योंकि वह मरने के लिए पावती के दर पर ही गया। इस प्रकार चन्द्रमुखी केवम देवदास को उपाड़ने—स्पष्ट करने के लिए घाती है।

अब हम चरत्चन्द्र की पात्रियों का कुछ बोझ बहुत परिचय पत्र कर चुक। इसमें संदेह नहीं कि उनके उपन्यास नारी-चरित्र-प्रधान हैं। उनके नारी-चरित्र उनके पुरप चरित्रों से कहीं ज्यादा खोरदार हैं। सावित्री किरणवती अथवा अथवा माधवी सुरबासा राजलक्ष्मी चन्द्रमुखी इत्यादि एक से एक अद्भुत चरित्र हैं जो पाठक के हृदय-पत्र पर अपने को अंकित कर देते हैं।

इन्हीं कारणों से अंजाल की नारियों ने चरत्चन्द्र में ऐसी विभूति देनी विमत उनको पालतू पशु की अवस्था से उठाकर मनुष्यता की मर्यादा की। चरत्चन्द्र की इन्हीं अमतिवि के उपसङ्घ में बंगाल के सब नारी-संघों की ओर से जो अभिनन्दन दिया गया उसमें कहा गया—

‘पराधीन देश के अश्रुजित समाज की असहाया अत-पुरधारिणियों के हृदय की सूक्ष्म धाम्द-वेदना को तुमने भाषा में मूढ कर दिया है। अपनी विविध सहायुभूति हासकर तुमने उनका कुवतिपूर्ण जीवन के मुक्त दुर्गों की सब अनुभूतियों को साहित्य में सत्य करके प्रत्यक्ष कर दिया है। तुम्हारी अनादिष्ट दृष्टि, सूक्ष्म पर्यवेक्षण-मामर्ष्य सुगन्धीर उपलब्धि शक्ति तथा विचित्र मानव-चरित्र की अतलस्पर्शी अमिश्रता ने निराल नारी-विषय की निगूढ प्रकृति का पुष्कलम सुराण पा लिया है। ह नारी चरित्र के परम रहस्यज्ञाता इस सोप तुम्हारी बन्धना करती है।’

सब तरह का आत्मपमान तथा सब तरह की हीनता की हानत में भी मारी की प्राकृतिक विशेषतायें सब देशों के सभी समाजों में मौजूद हैं। तुमने उसके प्राकृतिक रूप की प्रत्यक्ष किमा है उसकी सत्यप्रकृति का अध्ययन किया है। हे सभारियों के संतर्पामी हम तुम्हारी बन्धना करती हैं।

आज के इस विशेष दिन में हम यही जताते आई हैं कि हम तुम्हारी प्रतिमा को बरम करती हैं। हम तोय तुम पर धरता करती हैं हम तुमको प्यार करती हैं। हम जान तुमको धपना ही करक समझती है। हे नारियों के परम अजेय मित्र तुम हम लोगों के परम प्रिय हो तुम हम लोगों के परम आत्मीय हो—हम तुम्हारी बन्धना करती हैं।”

बेस की नारियों ने सरत्चन्द्र को जिन शब्दों में अभिनन्दित किया वही प्रशंसा बन्धना कि किसी बेस के किसी साहित्यिक को प्राप्त नहीं हुई।

सरत्चन्द्र किस बङ्ग से अपने उपन्यासों को लिखते थे इसका कुछ विवरण देकर यह अध्याय समाप्त किया जायगा। सरत्चन्द्र को उपन्यास लिखने में प्साट या कमानक की कमी कमी महसूस नहीं हुई। अपने समाजपर्य जीवन में वे सँकड़ों तरह के लोगों के सस्पर्श में धामे वहाँ तक कि स्वयं उन्हीं लोगों की तरह बनकर रहे फिर उन्हें प्साट की कमी क्यों होती? वे गाँव में रहे, शहर में रहे, देश में रहे, विदेश में रहे, परासित रहे, साधू रहे, शराबी-क्याबी रहे, कुछ दिन तक कायेस में भी रहे, नातिकारियों के हमबर्द रहे, वे क्या नहीं रहे, परवेसा कि उन्हीं लिखा है सब तरह की सोसायटी में रहते हुए भी वे हमेशा अनुभव करते रहे कि वे जनमें नहीं हैं। कलाकार को यह एकाकिता बहुत से कलाकारों की विधि पठा है और सरत्चन्द्र की रचनाओं में हम यद्यपि बलिठों की विक्षेपकर बलिता नारियों की आवाज सुन सकते हैं, फिर भी इन घारे कम्बर्तों को कोई विद्या न वे सकने के कारण तथा उसी कम्बर्त से कटीब-कटीब मनो-रंजन का एकमात्र उद्देश्य सिट करने के प्रयत्न के कारण उनकी कला पूर्व के सब लेखकों की कला की अपेक्षा जगतता के अधिक तपवीक की बीब

होन पर भी अभिकांशत कक्षा समस्या पेश करके ही रह गई है।

घरतूखन्ने ने मध्यवित्त अर्थात् नौ नारियों के मुक्त-बुद्ध को बरकर रख प्यवत्त किया है। 'भरसाणीया' उपन्यास में उन्होंने मध्यवित्त अर्थात् की सड़कियों के विवाह को लेकर उनके अभिभावकों को तथा उनके बुरी तरह परेशान होने की दशा को बड़ी खूबी से दर्शाया है। हर एक मध्यवित्त बहू के घर में बड़ी सड़की एक समस्या के रूप में होती है इसमें कोई संदेह नहीं। घरतूखन्ने ने मध्यवित्त अर्थात् की सड़की कृपिणी इस घाफल की प्साति तथा दुःख की बिराटता को एक झण्ट कसाकार की तरह दिखलाया है फिर भी उन्होंने मध्यवित्त अर्थात् की सबसे मुख्य समस्या पर रासनी नहीं डाली है यह हम वाद को दिखलायेंगे।

घरतू बाबू को कमी प्साट की कमी नहीं पड़ी यह बात सच होत हुए भी हमें यह ठागजुब है कि जिस गरीबी के कारण घरतू बाबू एफ० ए० के इत्त हान में नहीं बैठ सक जिस गरीबी के कारण उन्हें अपने भाई तथा बहिनों को रिश्तेदारों में एक तरह से बाँट देना पड़ा तथा जिस गरीबी में बरबर गोठा खाते हुए वे इधर से उधर बनक जाते फिर उसकी तथा मध्यवित्त अर्थात् की सबसे बड़ी समस्या बेकारी का उनके उपन्यासों में कहीं पठा नहीं। 'बड़ी दीदी' का सुरेन्द्र पर स भागकर बनकता गया था कुछ दिन वह बेकार अवस्थ में रहा पर भागूम होता है उसका पास काफी रुपये थे उसका कमी भूय तथा प्साक को अपने बेहरे की घोर धृगत नहीं देता। बाद को तो उस बड़ी दीदी का यही घामय ही मिल गया। जब बहू स निकाम दिया गया तो घरतू बाबू ने उसको मोटर से दबवा दिया वह अल्पताम जाता गया जहाँ से उसका बाप उन में गया। इसतिथे बेकारी का वही सबाम ही नहीं घाता।

नौ 'पस्ती-समाज' में गरीबी के कुछ बिन्न अवस्थ हैं पर बहू गरीबी का अभिचार्य गतीक के रूप में घामवासियों के दुगुणों को ईम एन-दूसरे में ईर्ष्या बेईमानी भूरी दबाही तथा कुंठस्कार पर और न देकर घरतू बाबू ने इनका मुख्यतः घमिधा का मत्थे मड़ा है जो सत्य हाते हुए भी अन्तिम सत्य नहीं है।

आर्थिक पहलू का चित्रण और पल्ली-समाज

छारत्पत्र के उपन्यासों तथा कहानियों में समाजमयिक समाज का आर्थिक पहलू भी यथ-तथ स्पष्ट है फिर भी यह उनकी दिष्टिष्टता नहीं है। सुबोध चन्द्र सेनगुप्त ने इसकी एक तरह से सफाई देते हुए कहा है कि "उनकी रचनाओं की एक प्रधान विशेषता यह है कि सामाजिक संज्ञा के पीढ़न के कारण व्यक्ति का व्यक्तित्व क्षुब्ध नहीं हुआ। यह भी स्मरण रखना पड़ेगा कि उन्होंने प्रधान रूप में समाजघात पर अपनी नीति संबंधी धारणा से चोट पहुँचाई है न कि धर्मनीति के द्वारा। फिर भी हमारा बेग एक गरीब बेघ है और ऐसा नहीं कि हमारी बीमारी का हाहाकार उनकी रचना में अभिव्यक्त नहीं हुआ। 'बिरजबहू' 'धरमकीया' 'महेद्य' 'शिव प्रसन्न' 'हरिसक्मी' 'प्रभाषी का स्वप्न' इत्यादि रचनाओं में गरीबी का चित्रण है पर इस घोर भारत-प्रतिभा की विशेषता बहुत स्पष्ट नहीं हुई। 'शिव प्रसन्न' की कमल और हरिसक्मी की ममत्ती बहु अपनी गरीबी से म्मान नहीं हो पायी बल्कि उनकी गरीबी विषययुक्त हुई है। जो कुछ भी हो छारत्पत्र चाहते तो निपुणता के साथ गरीबी का सुन्दर चित्रण कर सकते थे इसका प्रमाण उक्तिस्त कहानियों और उपन्यासों में मिल सकता है पर उनके प्रधान उपन्यासों में गरीबी का प्रभाव नहीं है ऐसा कहना ही उपयुक्त होगा।

इस प्रसंग में बर्माईषा ने कहा है— 'देवतपिवर के चरित्र मुख्यतः गिठस्ने बर्ग के सदस्य हैं। यही संतत्य थी हरिस के माटकों तथा मेरे माटकों के सम्बन्ध में भी प्रयुक्त है। औद्योगिक शक्ति उद्योग साहसिकता की

स्वतन्त्रता उम वैयक्तिक मान्यता तथा वीथिक संस्कृति के साथ तप नहीं सकती जिसकी मांग उच्चतर तथा मूढमतर मानक से की जाती है।”

फिर भी सरलेश्वर के कई ग्रन्थ उपचारों में भी गरीबी एक घटक के रूप में घाती है। श्री मनगुप्त ने यह बतलाया है कि ‘पत्नी-समाज’ में गरीबी भी है साथ ही धार्मिक प्रतिवृत्ति भी है पर रमा और रमेश के हृदय के धारान-प्रदान के व्यापार से उसका कोई विशेष संबंध नहीं है और यदि वह घटक भी है तो गौण घटक। ही सरलेश्वर के एक प्रमाण उपन्यास ‘किरपमयी’ में हम यह दखते हैं कि किरपमयी घनप डाक्टर के प्रति आकृष्ट होती है इसमें धार्मिक तत्व भी हैं। पर यह बताना गया है कि यह भी गौण था। श्री मनगुप्त बताते हैं—“किरपमयी में उत्कट प्रेम सिन्धु भी और साथ ही डाक्टर पर उसकी एकान्त निर्भरता भी थी। पर यह अधीनता किस प्रकार से मानव-जीवन को प्रतिवृत्त करती है सरलेश्वर ने उस विषय पर कोई भी धारणा नहीं की।” पर क्या यह बात सही है? बाद को धारक उपेन्द्र ने किरपमयी के पति हारान बाबू की चिकित्सा का सारा भार सम्हाल लिया और ग्रन्थ डाक्टर पृष्ठभूमि में चला गया। यह सही है पर इस क्षण में उपेन्द्र के प्रति जो भावना पैदा होती है वह सम्पूर्ण रूप से धार्मिक प्रभाव से मुक्त भी यह कैसे कहा जा सकता है?

जो कुछ भी हो श्री मनगुप्त ने सरल-साहित्य में धार्मिक पहलू के चिन्तन के प्रभाव की जिस प्रकार से परीक्षा की है वह विमर्श ही हस्की हो ऐसी बात नहीं है क्योंकि बहुत-से लोग इसी रूप में सोचते हैं। इसके अलावा सबसे बड़ी बात है जिस लेखक ने जिस तरह दृष्टि डाली वह उस ही चिन्तन कर सकता था। यहाँ तक ठा ठीक है पर जब हमसे धार्ये बहक यह कहने की अपेक्षा की जाती है कि जिस लोगों ने धार्मिक उद्देश को प्रभावता दी है वे ऊँचे दर्जे के धारक नहीं हो सकते बल्कि वह एक असाध्य बात हो जाती है। दुःख है कि श्री मनगुप्त ने यही किया है और उन्होंने धार्ये धारक कहा है—

‘यदि समाज के अतिशय प्रश्न उनके लिए मुख्य हों आते और वे पुनिस कोइ के विचार, सुदत्तोर के अत्याचार और मजदूरों की हड़ताल में ही रस आते तो तरह-तरह की अपह्नीय अस्थि के सपनों में पड़कर मर-मारी के हृदय का माधुर्य गुप्त हो जाता । उनके साहित्य में वर्तमान युग की विशेष छाप नहीं है । उन्होंने समाज को महत्त्व युग-युगान्तर से बनी भाई हुई नीति की दृष्टि से देखा ।

यह कथन बिलकुल ही ग्रहणीय नहीं है और इस प्रकार वा लोच शरत् चन्द्र की परखी करते हैं वे उन्हें और नीचे ही उतारते हैं । गोकर्ण आदि वर्तनों ऐसे मेककों के नाम लिए जाते हैं जिन्होंने गरीबी वग-संबंध आदि का चित्रण किया फिर भी उनका कलापक्ष कमबोर नहीं हो पाया । हृदय का यह कथित माधुर्य क्या बसा है ? क्या ‘महेष’ कहानी में हृदय का माधुर्य शरत् की अन्य रचनाओं से किसी प्रकार कम है ? इस प्रकार स किसी लेखक या कलाकार की प्रशंसा करना प्रशंसक के मानसिक स्तर की निम्नता ही सूचित करछा है । इस संबंध में इतना ही कहना मजेष्ट था कि यदि शरत्चन्द्र चाहते और उस तरह उनकी रचि हाती तो वे उस क्षेत्र में भी अच्छी-से अच्छी रचना प्रस्तुत कर सकते थे ।

शरत्चन्द्र के उपन्यासों में ‘पत्नी-समाज’ एक विशेष स्थान रखता है इसलिये हम उसकी बरा बिलुप्त आलोचना करेंगे । इस उपन्यास के नाम से ही जाहिर है कि शरत् बाबू ने इसमें गाँवों की हालत दिखलाई है । यों तो शरत्चन्द्र के कई उपन्यासों का सम्बन्ध ग्रामा स है जैसे ‘शरत्शीमा’ ‘बामुनर मेये’ ‘देवदास’ इत्यादि पर पत्नी-समाज में ग्रामों की निरावट की घोर अधिक व्यापक रूप से दृष्टि आकथित की गई है ।

रमेश ने अपनी सारी शिक्षा राह में समाप्त की । वह पिता की मृत्यु पर उनका आश करने ग्राम में आता है । बाबू उसके बाप के साथ किसी का कुछ भी सम्बन्ध रहा हो पर वह निरक्षर करता है कि घर-घर जाकर मजदूरी के साथ सबको बुलाकर बड़ी धूमधाम के साथ पाठ का कार्य सम्पन्न करेगा पर वैसी योजना जो उसका चचेरा भाई लमटा है इसी में

उनका बुरा उद्देश्य देखता है। वह माँ के समाज का विरोध है। उस उद्देश्य की इस उदारता में बाधमायी दिशाएँ पड़ती हैं। बिधवा नवयुवती रमा तथा उसकी मौसी बेबी बाबास के निकट प्रतिज्ञा करती हैं कि यदि रमण उन्हें निमग्नित करने उनके घर आया तो उसका अपमान करके उसे निजाम दिया जायगा। मौसी यों तो दिन भर पूजा-पाठ करती हैं किन्तु परानिन्दा की मनक कान में घात ही या उसकी गुआदा मामूम पती है तो सब काम छोड़कर उसमें जुग आती है। ममा ऐसे मौके पर क्यों चुकती वह भी हम सलाह में शामिल होती है। बेबी यह बात करके बसने लगता है, इतने में स्वयं रमण निमग्नित वन आता है। बेबी उसे देखकर ही पँछ ब्रिखा देता है रमा जो एक कमबोर सड़की है और मन-ही-मन समझती है कि रमण ठीक है हिचकिचाकर बुरास प्रदन करती है पर मौसी चुकती नहीं। वह कह बटती है—'तुम ही फामा क सड़के हो न? तुम एक सुहन्ब न पर बिना कहे-मुने कैसे पुस घाय? इत्यादि। पाठक को मामूम होना चाहिये रमण स मड़कपन से परिचित था घाय ही पहले कभी रमा से उसकी घादी की बात भी बनी दो।

रमण न कुछ प्रतिवाद भी किया पर मौसी न रमण से कह दिया कि रमा उसके घर में वर पुनवाने भी नहीं जायगी इत्यादि। रमण क्या करता क्या आता है। कुछ मोग खँरकवाही करन आत है रमण सोचता है नया कम से नम कुछ ब्यक्ति तो आत में घाय बँये पर अर्न्नी हो उसका भान्तिमय होगा है क्योंकि वह अपन इही खँरकवाहों का बेबी घोपाल क घर में लिपकर बेबी न सलाह करन तथा अपनी सुराई करले गुन सता है। बेबी की माँ बड़ी बुद्धिमती है वह रमण को पुण रूप से यहाँ तक कि एक बार जब कि भाद्र-मंदप में शक्ति बाह्यनी की मड़की क पुसने वर मोग कुछ घायनि करन हैं और पत्ति में उठ गई होत है ता वह सामन आती है और कहती है—'गाँवनी महालय को मना करा कि बे बिसी को इर न दिगमावें और हासदार महालय से बहो कि हमन मब का घान्त्पूर्बक बुनाया है बुकमारी को भी यदि हम पर बिनी को घायति

हो तो वह उठकर वहीं घीर बना जाय ।

इस प्रकार रमेश को उस साम्य समाज का व्यावहारिक तजर्ना होता जाता है जिसे पवित्र हिन्दू समाज कहा जाता है, जो मोम म्यौठा साने घाटे हैं वे पर के सब बच्चों को माते हैं, बैहिसाब लाते हैं फिर जाँच कर भी ले जाते हैं ।

एक ठामाब में रमेश का हिस्सा है, पर वह उदारतावश उसकी मछलियों में कोई हिस्सा नहीं बटाता इस पर गाँव के लोव उसे बेचकूठ या कायर समझत है । रमेश रमा को जिस रूप में आगता था उसमें उसे विश्वास है कि रमा कभी किसी दूसरे के हिस्से की चीज में हाथ न मयावेगी । जब इस ठामाब में उसको बिना इत्सा दिये ही मछली पकड़ी जाती है उस समय वह अपने नाँकर भ्रजुषा को भजता है—“आमी को चाहे कुछ भी नहे मैं निरचय आगता हूँ मोजी (रमा) कभी मूठी बात नहीं नहेपी । वह कभी भी दूसरे की चीज नहीं छूएमी ।” रमा के मन की बात कुछ भी हो वह एकजित मोनो के रबाब में धाकर बिलकूल इसके विपरीत धावरब करती है ।

रमेश सब से धनिक इसी बात से ज्ञान-सुमार के सम्बन्ध में निराध हो गया । वह पाँव छोड़ कर चले जाने को उद्यत हो जाता है । वह बात वह अपनी चाची से कहता है । चाची कहती है कि इतने से निराध होमा नमत हीमा । वह बहुत निराध होते हुए भी एक बार और कोसिस कर देखने के लिए रह जाता है । वह चाहता है पाँव के रास्ते सुभारे आयें बिघेपकर स्टेसन जाने का रास्ता बहुत पराब है वह उसे सुभारना चाहता है । इसके लिए २ •) रुपये की जरूरत है वह चन्दे का रजिस्टर बनाकर घर घर जाता है पर कई दिन तक बीडै रहने पर भी आठ-दस पँस तक नहीं मिले । उसने अपने कानो से एक जगह सोयों को घापस में बातचीत करते हुए सुना—सुम लोव कोई एक पँसा भी न देना बैसते नहीं हो इसमें उसी की पर्ज सब से ब्यारा है । बात यह है उसे धरेजी भूवा पहिने हुए परंमर करके जतना है न । कोई कुछ न बोये वह धाप ही अपने सब

से सब मरम्मत करवा देगा। फिर इतने बिल तक बचका जब नहीं बे लो क्या हम भोग स्टेपन नहीं आते थे। दूसरे ने कहा—घरे भाई जरा ठहरो तो अट्रोपाभ्याय महाधाम ने कहा है कि इसके सिर पर हाथ फेर कर पीठमा भी का पाट भी बमबा मिया जायगा जरा बाबू-बाबू कहते रहो सब काम बन जायगा।

इस बात से रमेश का जी पक जाता है, और वह फिर गाँव छोड़-छाड़ कर चल जाने को तयार हो जाता है पर चाची फिर बीच में पड़ती है। वह कहती है—ये कितने दुखी तथा दुर्बल हैं रमेश यदि तुम इसे जान जाओ तो इन पर श्रेय करते तुम्हें सज्जा होगी। ईश्वर ने यदि क्या करके तुम्हें भजा ही है ता तुम इनमें रहो न बढा।

—पर चाची ये तो हमें चाहते नहीं।

—इसी से तो तुम्हें समझना चाहिये कि ये इतने प्रहमक सर्वथा तुम्हारे श्रेय और समिमान के उपयोग हैं।

रमेश ने मर जाकर ठंडे दिमाग से जब इन बातों पर विचार किया तो वह समझ गया कि सबकुछ बहु श्रेय किन पर करे। वह खुले सया।

रमेश जब चाची के यहाँ लौटता है तो उसके पास एक राता हुआ मड़का धाता है। वृत्तने पर जात होता है कि लड़के का बाप मरा पड़ा है, पर किसी कारण से बिरादरी वालों ने उसके पिता का हुक्का-पानी बंद कर दिया था इसलिये मरने पर उसकी लाश पड़ी है, कोई उसे उठाने को संभार नहीं होता। सब लाश उठाने के लिए इस बात की प्रकृत है कि मरा हुआ धायमी प्रायश्चित्त करे। समाज का यही ग्याय है। जिस बात को जसने जीते जी करने से इनकार किया सब समाज उसी बात को मरने के बाद करने के लिए उसे मजबूर कर रहा है नहीं तो उसकी भाग की भील-कौड़े घसीटकर श्रेय पायेंगे केवल यही नहीं समाज की पुलिस उसका घाट धादि होन नहीं देगी इस प्रकार जसने अपने जीवन में श्रेय चाहे कैसे भी किये हों परमोक का पासपोर्ट उसे न मिलेगा। रोते हुए लड़के को बाप के परमोक की पामर इतनी चिन्त नहीं है पर बाप का

बोझ-सा जो इहलोक बाकी रह गया है उसी की किक है और कुल है पितृवियोग का। वह समाज के बुरम्भरों के पास जाता है, तो एक जगह उसे बार वैसे बूझरी जगह उसे खबत्री मिलती है पर प्रायश्चित्त करने के लिए कम से कम नी खबतियाँ चाहिएँ। आश्चर्य यह है कि मरने वालों की गाड़ी बेल कर समाज के लिए डाक्टरों की निहा की जाती है पर इन मुस्तकार पुरोहितों के लिए यह कोई बुरी बात नहीं कि वे मृत्यु का अथवा उद्य कर सम्भारियों से बसिणा आदि एँटें। यह इसलिए कि पुरोहित या ब्राह्मण तो ऐसा करके स्वयं का द्वार योम देने हैं। मस्तु।

रमेश इस प्रायश्चित्त की व्यवस्था कर देता है उस मडके को फिर कही जाना नहीं पड़ता।

रमेश तारकेस्वर जाता है तो वहाँ मन्थिर म रमा से भेंट होती है पर वह रमा को पहचानता नहीं है। रमा रमेश को स्वयं बुला कर परिचय देती है और से जाती है वहाँ उसको बड़े धापर के साथ सिनाती है फिर बड़ी बिछा कर सोने के लिए कहकर दूसरे कमरे में खली जाती है। रमेश को इतने धापर से कमी किसी ने बिनाया है यह उसे स्मरण नहीं होता उसको भोजन की परिवृष्टि के सुक का पहनी ही बार जैसे अनुभव होता है। रमा का यह निर्ममण लेकिन तारकेस्वर में ही है। गाँव में भीटकर समाज के बबाब तथा बल-बन्दी में पड़कर वह जैसी हो जाती है यह बार में घामेया।

दो दिन तक अविधान्त रूप से बर्पा होने के कारण 'मौ बीब का मैदान' पानी से डूब जाता है। गाँव के प्रत्येक इहस्व की इस मैदान में कुछ न कुछ खमीन है मौ बीबे का मैदान नाम होने पर भी यह मौ बीबे से कहीं अर है तथा सारे गाँव की खेती एक तरह से इसी पर निर्भर है। इस मैदान का पानी निकाला जा सकता है पर इसकी निकासी की तरफ जमींदारों का एक ताल है। मौ बीबे का मैदान और इस ताल के बीच में एक बाँध है यदि इस बाँध को खोस दिया जाय तो ताल की सब मडली निकल जायगी जिससे जमींदारों को कोई बो-तीन सौ रुपये का मुकाना

होता है। पहले तो किसान बर्मीदार बेणी बाबू के यहाँ जाते हैं पर बे कुछ भी करने से इनकार करता है तब ब रमेश के पास आते हैं। रमेश भीधा बेणी क पास जाता है पर बेणी रमेश से कहता है—इस दो सी ग्पमों का नुकसान कौन बर्दाश्त करेगा ? तुम लोगे ?

सब बात तो यह है कि जितना नुकसान बेणी का होना उतना ही रमेश का होगा क्योंकि इस ठान में बेणी रमा और रमेश का बराबर हिस्सा है। रमेश इस नुकसान के लिए तैयार है पर इस बात के लिए तैयार नहीं कि अपनी जेब से दूसरे हिस्सेदारों का नुकसान भी पूरा करे। वह कहता है—जरा सोच तो दीजिय हम लोगों के तीन घरों क दो-तीन मी ग्पये का नुकसान तो जरूर होना पर यदि हम इसको बचाने जाते हैं तो मरीचों का कम म कम छ-सात हजार ग्पये का नुकसान होता है। हम पर बेणी कहता है—नुकसान मात्र नहीं सत्तर हजार हा तो भी हम परबाह नहीं करते।

तब रमेश यह उम्मीद लेकर रमा के यहाँ जाता है कि वह सबदम ही गरीबों की पुजार को मूत्र लेगी पर वहाँ चोर गिराया का सामना होता है। इस प्रकार घाटा भंग होने पर वह इतना क्रुद्ध हो जाता है कि रमा को नीच कमीनी धादि कह बैठा है साथ ही कहता है—मैं जबर बस्ती बाँब काट हुँवा जिसकी मजान हो पस कर रोऊ म। रमा कहती है—घातन घेर ही पर में मेरा अपमान किया मैंने कुछ न कहा पर जबरबस्ती बाँब काट देने की चेष्टा घाप न करें क्योंकि इनकी अपमानित होने पर भी घापने सड़न को भी नहीं चाहता है। रमेश कहता है—सड़ने को मरा भी जी नहीं चाहता पर साथ ही तुमस सड़माब रगने का भी कोई मुख्य हमें नहीं माभूम देता और वह जसा जाता है।

रमा सबबर नाम क अपने एक प्रमिय लठठ को बाँब पर पहरा बेने के लिए भिजती है। वह घपने की जवान सड़कों के साथ पहरे पर जाता है। रमेश घपने लौटने को लेकर बाँब काटने जाता है पर वहाँ पहरा देगला है। रमेश का लौकर एक ही माठी में पिट्टी पर मोट जाता है तब

रमेश स्वयं माटी भकर घाये बढ़ता है और सब को भगा देता है। बाँध कट जाता है। धक्कर बाहर बेबी स सब हास कहता है या बेनी कहता है—बसो तुम लोगों की चोट दिवाकर पाने में रपट भिखारियों पर धक्कर इत बात पर गजी नहीं होता है वह कहता है—बाँध बाँध के लोग मुझे सर्पार कहते हैं मैं किस मूँह से रपट भिखारों कि मैं पिट गया। बेबी क कहने पर रमा ने भी धक्कर से बेबी बाबू की बात मानने को कहा पर वह ऐसा करने से साफ इमकार करके चला गया। बेबी कीब में मासियाँ देता रहा रमा चुप रही। रमा मद्यपि हारी हुई थी फिर भी जो कुछ हुआ उससे उसे उसके हृदय पर से एक तारी पत्थर उतर गया पर वह इसका कोई कारण नहीं समझ पाती।

एक दिन कुछ मुसलमान कितानों ने आकर रमेश से छिनाबत की कि गाँव की पाठशाला में उनके लड़कों को मर्ती नहीं किया जाता। रमेश ने ही इस स्कूल के लिए नया भकाम बनाकर तथा धन्य हूर प्रकार से सहायता करके उसे एक नया रूप तथा जीवन दिया था इसलिये इस बात का सुनकर उसे बड़ा श्रेय आया और वह जीरम अपने सामने मुसलमान के लड़कों को मर्ती कराने के लिए तैयार हो गया पर मुसलमानों ने कहा कि इसमें ऋणड़ा बड़ेगा न कि बटेगा इसलिये बाबू की बड़ी मेहरबानी होगी यदि हमारा ही एक छोटा स्कूल खोलना है। रमेश भी मर्त-मर्त बक गया था इसलिये उसने मही करना स्वीकार कर लिया।

एक दिन रमा बिना कुछ इतना दिये अपने छोटे भाई को साब में लेकर रमेश के यहाँ था पहुँची। रमेश अपने को न रोक सका। उसने बताया कि मैं लड़कपन से ही तुम्हें प्यार करता हूँ मैंने सुना था कि तुम्हीं से मेरी धारी होगी किन्तु अब बचपन में ही सुना कि यह धारी टूट गई, तो मैं अपने प्रासुओं को न रोक सका था।

इसी प्रकार वह न मामूम गया-गया वह रहा था इतने में एक व्यक्ति ने आकर लखर दी कि पुलिस ने उसके लीकर को एक बन्दो के सिमसिले

र कर लिया। रमेश ने रमा को पिछले दरवाजे से निकल जाने

क सिर्फ कहा क्योंकि उसाशी का डर था। पर रमा घड़ गई बोसी—
घापको तो कुछ खतरा नहीं है ? मैं नहीं चाँदौंगी। फिर रमेश ने
समझाया था वह जमी पई।

रमेश का नौकर दो महीने से गिरफ्तार है। भैरव धाधाय ने जाकर
गवाही दी कि बारबाठ के दिन रमेश का नौकर मेरे साथ मेरी सबकी का
बर हुँकन मया था। नौकर फूट गया। यह सारी कारसाबी बची की ही
थी इसलिये उसको बड़ा दुःख हुआ।

भैरव एक दिन भाई मारकर रोठा हुआ रमेश के पास धाया। भौरव
बैचाने पर उसने बताया कि बेची की स्त्री के पापा ने मेरे नाम से ग्यारह
सौ छब्बीस रुपये मात धान की डिप्री प्राप्त की है और इसके फलस्वरूप
दो ही एक दिन में मेरी सब जमीन-जायदाद कुम्भ कर सी जायगी। यह
डिप्री एकतरफर नहीं थी बाकायदा सम्मन जारी हुआ था किसी न मेरे
दस्तरपत्र कर जसे न सिया था और निश्चित दिन पर उसी जायसाज ने
प्रदासत में सब कुछ कबूल कर सिया था। धसन में यह खज मुहूर्त तथा
मुदासह सब झूठे थे। पर जब सब हो चुका है तो मैं गरीब क्या कर
सकता हूँ ?

रमेश ने बहुत सिप दिया और कहा रमीब से सेना यमासमय इस
फैसले के बिच्छे कानूनी कार्रवाई की जायगी।

इधर गाँव में मसेरिया का प्रकोप होने क कारण रमेश उसी की
राकमाम में ब्यस्त था। रमेश का एकाएक जो शहनाई की धाबाज मुनाई
की तो उसको नौकर से मानूम हुआ कि भैरव के नाती का धनप्राप्तन हो
रहा है। यह भी मानूम हुआ कि भैरव ने बखोबस्त धच्छा किया है याँव
के सभी गध्वमान्य व्यक्ति कुसाये मये केवल बही नहीं मुसाया गया। इस
पर रमेश को बड़ा धाच्छर्य हुआ। वह सीधा भैरव के यहाँ गया। वहाँ
भैरव न था। वह किसी काम में भीतर से बाहर धाया तो सामने रमेश
को देखने ही एकदम चौंके पड़ा जैसे भूठ देख सिया हो। एक बाक उमे
देगकर ही वह भीतर जग्या गया। एक बुबुर्ग न जो भीतर से रमेश ने

महानुमति रखते थे रमेश को बता दिया—बात यह है कि आपको समाज-निकामा दिना मया है इसलिये भैरव ने यदि आपको न बुलाया तो इसमें उसका दोष नहीं थाज नहीं तो कम उसे बटी-बेटे की नहीं तो माठी-पोते की घादी करनी है इत्यादि। रमेश ने 'अहर बहर' तो कहा पर उसके हृदय में लोगों के इस मोड़े कायरपन तथा कुठलता पर रोष हुआ। वह बसा धाया।

आगे इससे भी भयंकर बात ज्ञात हुई। वह यह कि भैरव धार्याम पर जो मासिषा हुई थी उसमें भैरव जान-बुझकर स्वयं हाजिर नहीं हुआ था। जो लपटा उसे रमेश की उदारता से मिला था उससे उसने बेनी भावि समाज के स्तम्भों की मित्रता खरीबी थी। अन्नप्राशन में न बुलाने से वह प्रपमान नहीं बड़कर था। रमेश अचानक से खीचा भैरव के घर पहुँचा और उसका हाथ पकड़कर कहा—क्यों तुमने ऐसा किया? क्यों?

भैरव ने कुछ उत्तर देने की कोसिस नहीं की बल्कि उससे जितना बिस्माते बना बिस्माने बना। एक मिनट में भीड़ इकट्ठी हो गई। रमेश ने फिर भी हाथ न छोड़ा। रमा नीड़ खीरठी हुई आई, बोली—इसे छोड़ दो!

—क्यों?

—इतने लोगों में तुम्हें ऐसा करते लज्जा नहीं मानूम होती पर मैं तो लज्जा से मरी जा रही हूँ।—रमेश ने हाथ छोड़ दिया यह जैसे जादू हो गया।

जब रमेश जाता गया तो लोग सभाह करने लगे कि इस प्रकार मकान पर बड़कर रमेश ने जो मारपीट की उसका तो कुछ होना चाहिये। रमा भी थी उसने कहा—ऐसी कौन-सी बात हो गई कि इसे लेकर एक तुच्छान करपा किया जाय।—बेबी ने धार्याम प्रकट किया। भैरव की लड़की लक्ष्मी ने कहा—तुम तो दीदी उन्हीं की होकर कहोगी तुम्हारे बाप की किसी ने घर पर बड़कर छोड़े ही माय। मुझे तुम बनी हो इसलिये कोई लज्जा नहीं लगी तो क्या कोई कुछ जानवा नहीं।—रमा खनक गई बेबी

की ओर झुमकर बोली—क्यों मैया यह क्या ? तुमसे कोई भी दुष्टता नहीं बची, तुम्हीं मुझको यह सब कहसबा रहे हो, मैं समझती हूँ। बेनी ने कहा—सोचो ने तुमको सबरे यदि रमस क घर से निकसते देसा हो तो इसमें हम क्या कह सकते हैं ? इतने में मैरब की स्त्री ने लड़की को डाँटकर कहा—सहमी स्त्री हाँकर स्त्री के नाम से इस प्रकार माँझना न लयाओ बर्म इसका नहीं लहेगा—फिर झुमकर यह रमा से बोली तुम भी धनपक बाठ बढ़ा रही हो कौम यहाँ ऐसा है वा तुम्हें नहीं जानता ? यह भटमा यहीं समाप्त हुई ।

घर पर बढ़कर मैरब को छुप मारने की चेष्टा करमे के अपराध से रमस को सजा हो गई । वह धन पल में था । मजिस्ट्रेट को उसे सजा देने में कोई हिचकिचाहट नहीं हुई क्योंकि उसके नाम से बहुत दिनों से हर तरीके की रपट दर्ज होती रही थी । रमा ने भी पचाही बी बी रमेस मैरब के घर में घुसकर उसे मारने चाहा था पर उसने मैरब को छुरी मारी थी वा नहीं यह कह नहीं जानती, धीर उसक हाथ में छुरी थी वा नहीं यह उसे स्मरण नहीं ।

रमा बचाही दैत समझ यह नहीं जानती थी कि रमेस को सजा मर की सजा होनी धार्मिक से धार्मिक थी वो सौ जुर्माना होया यह यही समझती थी । इसीलिए सब कुछ जानते हुए भी वह सच नहीं बोली थी समाज सत्य कर चाहता था , यदि वह सत्य बीमती तो उसे यही पुरस्कार मिलता कि सोना उसे कुलटा कहते । इस त्याग की बजाय उसने रमेस को सौ सौ जुर्माना करवाना ही प्रच्छा समझ्य । रमेस तो जेल में बककी बसाने गया शहर रमा के घर में पुजा हुई, किसान प्रसाद लमे घाते से घर धन की बाग समाज के स्तम्भों के प्रतिरिक्त कोई न धाया । वे बहुत ऋद्ध थे । मुक्तमान तो बेनी को सतम ही करना चाहते थे ।

एक दिन कुछ घमास सोमों ने बेनी को मार गिराया । बेनी मरा तो नहीं पर अस्पताल जायक हो गया । जब वह थोड़ा हुआ तो उसने घोषा धन मामला बढ़बढ़ है इस प्रकार न चलेगा इसलिये अब रमेस छुटा तो

घाटक पर सबसे पहला व्यक्ति उसे बैठी मिला। लगा सहायुभूति बिलाने साब हो रहा के बिकर रमेश के मत में बिप भरने—उसी ने तुमको सजा कराई उसी ने घककर का मेकरर तुम्हें पिटवाना चाहा था।

लौटकर रमेश को बीरे-बीरे ज्ञात हुआ कि उसकी अनुपस्थिति में पाँच की कबिल बीच जाठियों तथा किसानों में कितना परिवर्तन हुआ था। वे सब पाँच को मानकर बसालत जाने से भी विमुख हो रहे थे। रमेश को यह भी पता लगा कि मबाही देने पर ही रमा को समाज से अलग कर दिया गया है, इसलिए उसके एकमात्र भाई मठीन के उपनयन में कोई नहीं गया था। रमा कठिन बीमारी में थी। एक दिन रमा के यहाँ से रमेश का बुलावा आया। रमा ने अपने घरवालों की अमा माँपी और बताया कि यह मठीन का भार रमेश पर छोड़ देना चाहती है। साब ही कुछ बमीवारी भी उसे देना चाहती है। उसने रमेश का पैर छूकर अमा माँगी और अगले दिन बैठी को माँ के साथ कासी बसी गई।

यही 'पत्नी-समाज' उपन्यास है।

पत्नी-समाज

२२-२ ११११ को सरत्त्वत्र ने रंपुत्र से एक पत्र म लिखा—“पत्नी-समाज, जो मैंने दूसरे ढंग से अठम कर दिया। उस दिन जिस तरह से उसे मैं समाप्त करके भेज रहा था वह अगला न मनने के कारण उपसंहार दूसरे ढंग से प्रस्तुत किया गया। अक्षय मैं यह बता दूँ कि सरत्त्व से मैं जो अर्थ समझता हूँ वह कहानी उसके पास भी नहीं फटकती। इसमें बहुत ही किरकिरापन लिए हुए अर्थों से साना-बाना बताया गया है। जमी फिर भी दो-एक इंटरेस्टिंग कहानियाँ भी होनी चाहियें। निबन्ध तो बहुतरे पड़ते हैं।

इस बीच 'पत्नी-समाज' उपन्यास जिस पर सरत्त्व का नाम लिखा—“'पत्नी-समाज' के सम्बन्ध में मुझे कोई सिकायत नहीं है। गलतियाँ भी नहीं हैं। साब ही बाहरी बीपटाप भी सबकी पसन्द के अनुसार हुआ है।

इसमें आपको जो कुछ भी हो साम या हानि पहुँचे यह घाप जानें। मेरी तो इतनी ही इच्छा है कि सोम पाँच की बातों में बिलचम्पी नें। इस पुस्तक में एक मूस बात यानी विवाह की बात पर कुछ नहीं कहा गया। इच्छा है कि इस प्रसंग को मैं किसी दूसरी पुस्तक में उठाऊँ। यहाँ 'पस्ती समाज' की भागों ने कोई बुराई नहीं की है यही मेरा साम है पर कल कत्ते में लोगों ने इस पुस्तक का किस रूप में लिया यह मैं नहीं जानता। क्या कोई इसकी बुराई करता है? घबटय भूटियों की बात मैं नहीं कहता वे तो बहुतारी हैं बस कुछ मिलाकर क्या कहा यह मैं जानना चाहता हूँ।"

धरतुबन्ध ने इस उपन्यास में पाँच की सब समस्याओं को मूर्त करके पाठक के सम्मुख रक्त दिया है। हमने इसका जो सक्षिप्त रूप पाठकों के सम्मुख उपस्थित किया है उसमें साहूकारों के ऋण से किसान जैसे मुक्त नहीं हो पात बल्कि दिन-ब-दिन और ऋण में बँधते जाते हैं यह नहीं सा पाया पर मूल पुस्तक में यह भी है। 'पस्ती-समाज' उपन्यास 'परिबर्हीन' 'भीकान्त' आदि उपन्यासों के सामने फीका पड़ गया है उसकी घोर लोगों की दृष्टि घबिक नहीं गई पर मैं समझता हूँ इस उपन्यास में उससे कहीं ज्यादा है जितना लोग समझते हैं। गाँव की मध्यवित्त तथा उच्च श्रेणी की दयनीय हानत का चित्रण इसमें है। कहीं-कहीं इसमें किसानों आदि क जो चित्र धाय है वे गौण रूप में ही धाये हैं। धरतुबन्ध ने इस पुस्तक का नाम 'पस्ती-समाज' रक्खा है सन्देह नहीं है कि इसमें जिन लोगों का चित्र लीजा गया है वे ही ग्राम्य-समाज के स्तम्भ हैं फिर भी वे ही सब कुछ नहीं। इस पुस्तक का नाम पस्ती-मध्यवित्त समाज होता तो घबिक उपयुक्त होता पर एक तो यह नाम किमो उपन्यास क लिए धायर सम्पूर्ण रूप से समीचीन न होता और दूसर धरतुबादू के विषय में अणियों का विभाजन स्पष्ट नहीं था उम्हाने तो यही समझ कर सिगा कि वे पूरे पस्ती-समाज का चित्रण कर रहे हैं। 'पस्ती समाज' पचास साल पहल के बचान के घोरत पाँचों का चित्रण है किन्तु मैं समझता हूँ कि इतमें मोटे तौर पर उस समय प्रचलित भारतीय

मध्यवित्त ग्राम्य-समाज की कपरेखा था गई है। हम इस पुस्तक की प्रथिक समासोचना धाये करेगे यहाँ इतना धीर कहेंगे कि रमा और रमेश में हमें पार्वती और देवदास का सादृश्य मिला है यह सादृश्य रमा के विषया तथा पार्वती के पर-स्त्री होने पर भी स्पष्ट है।

'पत्नी-समाज' से ही स्पष्ट है कि सरत् बाबू ग्राम्य मध्यवित्त श्रेणी के समाज से अपूर्वी परिचित थे क्यों न होत वे स्वयं उन्ही में से एक थे। उनकी निरीक्षणशील धारणा तथा अनुभूतिशील हृदय ने गहराई तक पँठकर उस समाज की असक्षियता का पता पा लिया था। उसमें जो बोझा सुन्नता वीम तथा परधीकाठरता थी उसका नाडी-नक्षत्र सबमें सरत् बाबू परिचित थे। इसलिये इस परिचित समाज के विषय में लिखत उनको कभी प्साट की कमी नहीं जाती थी।

"बिस्ती उपन्यास को लिखते समय वे पहले से प्साट नहीं ठीक करत थे पहले वे अपने निप एक बायरा बना लते थे फिर उसके उपयोकी चरित्रों (characters) को मन ही मन सोच भत थे फिर यह ठीक करने में कि वे क्या-क्या काम करेंगे। बंकिमचन्द्र की रचना-प्रवृत्ति जिस कुल दूसरी थी बंकिम-सहोदर पूर्वचन्द्र से मानूम हुआ है कि वे पहले यह ठीक कर लते थे कि कटना कब किसके साथ होगी। सरत्चन्द्र में एक और बिसिष्टता थी वह यह कि ज्यों ही नये उपन्यास की कल्पना मन ही मन निश्चित हो जाती थी वी ही वे लिखना शुरू करते पर वे हमेसा सिमसिमवार तरीके से लिखते थे वह बात नहीं धनसर के बाब के या बीच के धम्पारों को पहले लिख लेते थे। उनका 'चरित्रहीन' का एक से प्रथिक विख्यात ग्रंथ इसी प्रकार लिखे गये। सरत्चन्द्र की रचनाधर्मों को पढ़ने से यह मानूम बैठा है कि भाषा जैसे स्वयं ही सरकटी चली जा रही है, किन्तु यह बात नहीं। वे न तो जल्दी लिख ही पाते थे न सख्य भाषानी से जगकी कसम की मोक पर घाते थे। लिखने का बाद वे बहुत काटते थे। सब सोच-समझ कर वे बाक्यों की रचना करते थे।"^१

^१ देखिये श्री हर्षचन्द्रकृत उप विविध साहित्यिक सरत्चन्द्र पृ ७१

सतीशचन्द्र दास नामक एक महाशय न शरत् प्रतिभा में यह लिखा है कि 'चरित्रहीन' लिखते समय शरत् बाबू ने शराब का बहुत इस्तेमाल किया था पर बीसा कि मैंने पहले लिखा है 'चरित्रहीन' उपन्यास में एकाध जगह पर सेक्स-अपीस या यौन आवेदन अधिक होने पर भी पुस्तक का उपसंहार हितोपदेश की ही तरह है। किरणमयी पर ही समाज के ठकेदारों को विषय आपत्ति है उनके तर्क किन्तु भी पते हों शरत् बाबू ने यह दिखसामा है कि उसका अन्त पयनी बनकर हुआ। बाद का 'चरित्रहीन' की विस्तृत आलोचना करते समय हम इसकी भी आलोचना करेंगे। सतीश बाबू का बलव्य कहाँ तक ऐतिहासिक है यह नहीं जानें। बहुत सम्भव है यह उनकी कपोस-अल्पना हो मरा बलव्य केवल इतना है कि शरत् बाबू ने लिए उन दिनों शराब पीना घायब मामूली बात थी 'चरित्रहीन' लिखने के लिए ही उन्हें बिछपकर शराब पीनी पड़ी यह हम नहीं मानत क्योंकि यदि हम बीसा मानें तो हमें यह मानना पड़ेगा कि शराब पीकर वे नीतिवादी (moralist) हो जाते थे जो म्बिधि घायब उक्त समालोचक को और भी नापसन्द हा। शरत् बाबू ने कभी यह दावा नहीं किया कि वह घादशचरित्र ब्यक्ति थ पर जब तो कुछ सनसनीबासी लोगों ने उन्हें पतित और दुश्चरित्र प्रमाचित करने का बीड़ा-सा उठा रखा है। हमें इससे कोई मतमब नहीं हमारा कहना केवल इतना है कि 'चरित्रहीन' या 'पस्नी-समाज' उपन्यास अनाचार यही तक कि ब्यावहारिक बिद्रोह की शिखा भी नहीं पत। इनमें भी 'पस्नी-समाज' बिद्रोह इस कारण है कि उसमें प्राथमिक पहलू की कुछ मामूली भयब आ जाती है।

महाप्रस्थान

कमकता सीट घाने के बाद से चार्ल् बाबू की बीवनी एक अखिल देम-प्रघामित साहित्यकार की बीवनी रही । कमकता बिस्वविद्यालय ने उनको 'जगतारिणी' समगा दिया डाका बिस्वविद्यालय न उन्हें डी० लिट्० की उपाधि दी । उनकी पुस्तकों के दस-दस हजार के संस्करण निकल सम्पादकगण लेख के लिए उनके दरवाजे पर माथा रगड़त ही दिखाई देत थे । मासिक पत्रिकाओं की चार्ल्-संस्था निकली चार्ल्चन्द्र के सम्मान के लिए स्थायी रूप से चार्ल्-समितियाँ बनी । भारतीय भाषाओं न तथा अंग्रेजी में उनकी पुस्तकों का बङ्गले के माथ अनुबाव हुआ । कुछ लोगों ने यहाँ तक लिखा है कि उनको नोबल पुरस्कार मिलते मिलत रह गया । उनकी रचनाओं ने बंगाली सम्प्रबित समाज को बिस तरह हिला दिया था तथा उनकी रचनाओं की उत्तमता और परिमाण को देखते हुए यह कोई असम्भव बात नहीं थी । वस्तुस्थिति यह है कि उनसे कम सफल कई योरोपीय उपन्यासकारों को यह पुरस्कार मिला ।

एक तरह चार्ल् बाबू पर जैसे प्रशंसा की झड़ी लम गई, दूसरी तरह जैसे ही उनको हर तरह की मामियाँ मिलीं । किसी ने उनको घनीति का तथा स्वमिचार का प्रचारक कहा तो किसी ने उनको वैस्याओं का बितावल कहा । इसमें सम्येह नहीं कि चार्ल् बाबू अपने जीवन के पहल भाग न उच्छ्वसन रहे पर उनकी पुस्तकों में किसी भी जगह उच्छ्वसनता का प्रचार या उनकी बकानत नहीं की गई । उनका मोटो शायद यही रहा कि 'पाप को पुचा करो पापी को नहीं । यदि *Les misérables* के संकक बिक्टर ह्यूगो की या गेटे की पाप का प्रचारक नहीं कहा जा सकता तो चार्ल् बाबू की भी पाप का प्रचारक नहीं कहा जा सकता ।

यदि यह कहा जाय कि वे स्वयं जीवन के पहले हिस्से में उच्छ्वसित थे इसलिए उनकी पुस्तकों में दुर्नीति का प्रचार होना ही चाहिए, तो बिना कुछ गमत है। मंटे रोमी कसो इनमें से किसी ने भी दुर्नीतिपूर्ण समाज विरोधी साहित्य की सृष्टि नहीं की पर इनमें से सभी नीतिवादियों की सृष्टि में प्रसन्न रहेंगे। जो कुछ भी हो हम चरत्चन्द्र की पुस्तकों की विस्तृत आलोचना करते समय इस बात की जांच करेंगे कि उन्होंने नहीं तक अपने साहित्य में दुर्नीति का प्रचार किया है।

चरत्चन्द्र कलमधूर तो थे पर किसी समा में दो सप्ताह बोलने में भी उनकी आग निकलती थी। फिर भी उनको संकड़ों समाजों में जाना पड़ा था तो वे भाषण लिखकर ले जाते थे या बोलते थे तो तीन-चार मिनट के लिए। यरते वम तक उनका यही हास रहा। रबीन्द्रनाथ की तरह वे साहित्य में सम्बन्धी होकर नहीं घाये थे उनमें उपन्यास-कहानी रचना की ही प्रतिभा थी।

असहयोग के आने से चरत्चन्द्र बहुत दिनों तक कांग्रेस में रहे यहाँ तक कि वे अपने दिने की कांग्रेस समिती के सभापति रहे।

१९२१ के २७ जून के एक पत्र में उन्होंने लिखा था—“यदि कांग्रेस का काम साधक हुआ तो फिर सायद समय मिले पर अभी एक मुहूर्त का भी समय नहीं है। आजकल मुझे दो सप्ताह पहले के महात्मा गांधी के सत्याग्रह के दिन निरन्तर याद आते हैं। मैं एक स्वयंसेवक था। मेरी धमस-बगस क छ-सात भावमी जब ‘मर गये’ कहकर योली साकर गिर पड़े तब मैं भागा नहीं था पर मुझे योली भी नहीं लगी थी। बहुत बार यह साक्षात् करूँ कि उस दिन किस प्रकार से मैं मछीनगन की योली से बच गया पर आज ऐसा मामूँल हाता है कि इसका भी प्रयोजन था।

१९३७ में ही लिखित एक पत्र में वे लिखते हैं—“कल हावड़ा बिना कांग्रेस का चुनाव हो गया। सबकी बार विरोधी इस का शोरगुल गामी गामी और साठी देसकर मैंने सोचा था बिना रक्षपात के मामूँल का अन्त नहीं हाया। मैं कांग्रेस समिती का सभापति था इसलिए मुझे भी

संघारिणी तैयारी करनी पड़ी थी। मैं घमा म हुनामे से बरता था इसलिए कटिहार तार यहाँ तक कि उसमें बिजली बीका देने की तैयारी कर रखी थी। इस तरह तैयारी होने के कारण ही बंधा नहीं हुआ धीर बिना बिजली के बलक कामम रहा। १० साल से प्रिंसीपेन्ट हूँ इसलिए स्थिर स्वार्य बन गया हूँ। भासानी से छोड़ नहीं सकता। क्या यह छोड़ा जा सकता है? हमारी मुक्ति यह है कि चाहे हमने कुछ बुराई हो तुम कहनेवाले कौन हो? देख की मुक्ति घाती है तो हमारे ही खरिये से घाय। तुम लोगों के बस की बात नहीं है तुम लोग इसम न पड़ो पर मे राखी नहीं हुए, इसीलिए हम लोग मायज हुए नहीं तो हम लोगों का यानी सुमाप दम के लोगों का मित्राज बहुत ठण्डा है बहुत कुछ आपकी तरह है।”

११ ११ २२ को उन्हीनि सिला का कायेस में बड़ी गड़बड़ी हो रही है परसों सुमाप न मुझे पकड़ा कि थोड़े दिन बनकरसे मे रहकर गड़बड़ बातम कई उन लोगों का ऐसा विश्वास है कि यदि मैं गड़बड़ी न मिटा पाऊँ तो यह गड़बड़ी मिटने की नहीं है।

स्मरण रहे कि यह उल्लेख उस गड़बड़ी के सम्बन्ध में है जो बंगाल कायेस में हो घुट हो जाने का कारण हुई थी। एक के नेता से यतीन्द्र मोहन सनपुन्त धीर बूधरे के नेता से सुमापचन्द्र बोस।

१२११ मैं लिखित एक पत्र में उन्हीनि यह लिखा था— ‘सुमाप घुट ने बैरोदार के सिप मुझे जबरदस्ती कुमिन्सा रवाना कर दिया था। रास्ते में कुछ लोगों ने ‘रोम रोम’ का मारा दिया धीर रोम के किन्ने क पंगले की छास से कोयले की छरीं पोंकर हमसे प्रेम निवेदन किया फिर बूधरे दम ने बस-बारह घोड़ों की यात्री पर बड़ाकर डेढ़ मौस लम्बा कुमूस निकाला धीर यह साबित कर दिया कि कोयले की छरीं कुछ नहीं मया मात्र थी। बसों फिर अपने रुपनारायण नव के किनारे लौट धाया हूँ The liberated man has no personal hopes. इस सत्य की उपलब्धि करने में सब मुझे बेर नहीं है। जय हो कोयले की छरीं की धीर जय हो १२ घोड़ों की यात्री की।”

छिर भी 'पबेर दाबी' उपन्यास के बसावा उनके किसी भी उपन्यास में राजनीति की गन्ध नहीं मिलती यह चरत्-साहित्य की एक विशेष श्रुति है। साथ ही यह भी याद रखने योग्य है कि यदि चरत् बाबू राजनीति का लेकर उपन्यास लिखत तो सामयिक जनकी सभी पुस्तकें जल हो जातीं और जनकी उन्नत जेल में ही बीतती। अस्तु।

चरत्चन्द्र कभी बहुत तन्मूढस्त नहीं थे उन्मत्त जीवन तथा मरीबी ने उनके स्वास्थ्य को पहले से ही पगु बना रखा था। उनको बवासीर का रोग पुराना था पर मृत्यु से कुछ साल पूर्व इतको भी प्रापरेसन करके प्राणम कर दिया गया।

१९३६ की भीषण सर्मी में वे पाँच स पंचल जाकर देउमटी स्टेशन में मारी पर सवार हुए इससे उन्हें मृत्यु हुई। तब से जो छिर का दर्द शुरू हुआ वह बाढ़ ही नहीं होने को भाता था। उसकी चिकित्सा कराई गई, ता बाहटरो में कहा यह श्चुरात्मिक दर्द है तदनुसार उन्हें प्रासदा बायोमेट रसिमयी दी गई पर कोई फायदा न हुआ। पढ़ने लिखने से यह दर्द और बढ़ता था। छिर सोचा गया सामयिक जमाने में पावर की मजती के कारण ऐसा है इसलिये कई बार उन्होंने जमाना भी बदला पर उससे भी कुछ फायदा न हुआ। उन्मा सब पबर भी कुछ-कुछ रहने लगा। ज्वर ने भी जैसे जिद पकड़ ली किसी तरह छूटता नहीं था ता सोचा गया यह मलेरिया है छिर गया था जितने प्रकार से कुर्नल शरीर में ठूसा जा सकता है ठूसा गया।

चरत् बाबू बराबर बीमार रहते थे। मही तक कि सर्मी के दिना में भी उनका स्वास्थ्य कोई प्रान्त नहीं था पर मृत्यु के दो साल पहले से वे कुछ घोर धार्मिक बीमार रहने लगे। २८ माघ १९४२ वाली मृत्यु के समय दो साल पहले उन्होंने चरत्चन्द्र बन्धावाध्याय को लिखा—“इस बीच मैं नाब गया था। नाब का मिट्टी का घर घोर कपलारायण न इन दोनों का मोह ताड़कर मैं धार्मिक दिन कहीं रह नहीं पाता। छिर यह भी मरत है कि इनकी माया का फन्दा काटकर जाने के धार्मिक दिन बाकी

नहीं है। कई पुराने मित्र आदि आगे ही चले गए हैं। उनको मैं निस्व स्मरण करता हूँ। धमी-धमी धम्यापक विपिन दुष्ट की आठ सभा में जाने का निमन्त्रण-पत्र मिला। राबपुर में कितने दिन शाम को हम एक साथ आद्विवाद करते रहे। पुराने जमाने के मित्रों में एक तुम ही हो। धाधा करता हूँ कि कम-से-कम तुम्हारे पहले जा सकू। इस संसार में अब एक दिन को भी चित्त नहीं लगता। अब हमें सा पीछे की बात सोचता हूँ रामने की तरह एक बार भी पीछे नहीं जाती। पर जाने दो इन बातों को तुम्हारा चित्त दुखी करने से कोई फायदा नहीं।

इलाज से ज्वर न घटा तो डाक्टरों ने बताया कि यह रोग 'बी कासाई' है। इसकी चिकित्सा हुई तो ज्वर बन्द हो गया। घर में बापू धम्ये हो गये और हवा बदलने के लिए देवघर गये। वहाँ से वे विस्कुम स्वस्थ होकर लौटे।

आजकल में फिर बीमार पड़े। अब की पेट ने तकलीफ दी जो खाने नहीं हजम नहीं होता या ऐसी हानत हो गई। डाक्टरों ने कहा—इसमें प्लिया (अजीर्ण) रोग है। चिकित्सा होने लगी पर मजबूत नहीं गया ज्यों-ज्यों खाया ही। वे खाँस चले गये धामर वहाँ धम्ये हों पर नहीं हानत रही यह बयकर फिर कलकत्ता लौट आये। डाक्टर विद्यानन्द राय ने परीक्षा लेकर कहा कि टायफेडिक (Typhoid) है एमारे क्रिया जाय तो ठीक पता लग्य। तदनुसार एमारे क्रिया गया तो पता लगा कि यकृत में कसर हुआ है और यह बढ़ते-बढ़ते पाकस्वसी तक पहुँच गया। डाक्टरों ने कहा धापरेषन होगा चाहिये।

वे धापरेषन कराने पर तैयार न हुए। पर जब कष्ट बढ़न लगा तो फिर कई बड़े डाक्टरों का परामर्श लिया गया। उन्होंने भी धापरेषन की सलाह दी। इसमें विचकत यह थी कि वे बहुत दुर्बल थे और धापरेषन बहुत कठिन था। यह तय हुआ कि किसी धम्ये नसिन होम में रहें और जब उनका स्वास्थ्य कुछ सुधरे तो वहाँ धापरेषन किया जाय। तदनुसार वे डाक्टर मीके के नसिन होम में बाधिन हुए, पर वहाँ धम्ये तथा तम्बाकू

की मुमानियत थी यह देखकर वे अपना एक मित्र डाक्टर चटर्जी के मंसिम होम में चले गये। घरसभ में डाक्टरों को उनके जीवन की कोई प्राधा नहीं थी।

मृत्यु के कुछ महीने पहले उन्होंने एक पत्र में लिखा था— इधर मरा कुमार अच्छा होने में नहीं आता। बिधानचन्द्र राय प्रादि डाक्टर रोग नहीं समझ पा रहे हैं।

बिमिन्न छाप की चौपीया हुई जमा

बिमिन्न नाप क बिम्बों का लप गया डेर

ब्यापि से प्राधिया अधिक बढ़ गई और अस्थि बजर हा गया

तब डाक्टरों ने कहा मरीज की हवा था बबल।

इसलिए बो-नीम दिनों में ही स्थान त्याग की इच्छा है अपनी नहीं दूसरों की। मैं मन-ही-मन कहता हूँ कि हे सम्भ्या कासीन तित्प सहचर ६६ के कुमार तुम और जरा प्रमत्न हो जाओ और तुममें जिस काम की नीव शाली है, उसे जल्दी-जल्दी सतम कर डालो मुझे छूटी मित्र।

इसके लगभग चार महीने बाद उन्होंने लिखा था— 'फिर प्रबन्ध कुमार मर चुका था। सबकी बार रक्त परीक्षा में यद्यपि कुछ नहीं मिला पर उन सोमों ने तय किया था कि मनेरिया है। चलो छोड़ो रोग की बातें।'

मृत्यु के कुछ महीने पहले उन्होंने कमकत्त से लिखा था— 'मैरा स्वभाव जरा अदभुत है। वा जीवित है उर्मा के माप सम्बन्ध रखता है, वा मर गया उसकी बिदेय चिन्ता नहीं करता। मृत्यु मेरे निकट स्वाभाविक निम्नतर घटित होन वाला व्यापार है यही संसार का नियम है। इमे मैंन मन और प्राण से मान लिया है। 'जान दो इम बातों को मरी उद्विग्न गीब से घाने के बाद से बहुत काफी खराब हा गई है। हम सब बुनायूबा की मरामी के दिन गाँव जाएँगे। दूसरी शब्दों में सी ही हैं। अच्छी बुरी दोनों तरह की बातें हैं।'

धीरे-धीरे ऐसी हामत हुई कि मुँह में जो कुछ बात वह हसब नहीं

होता। रैकटम फीडिंग यानी मलहार के अरिये तल से पुष्टि पहुँचाने पर शरत्
बाबू ने आपत्ति की तब डाक्टरों ने उनके पेट में एक आपरेसन किया।
इसलिये नहीं कि कसर को निकाल दें बल्कि इसलिये कि रबर के नस से
सीधा उनके पेट में खाना पहुँचाया जाय। फिर भी उनको फायदा न पहुँचा
तो डाक्टरों ने कहा दूसरे का रक्त उनके शरीर में पहुँचाया जाय। उनके
छोटे भाई ब्रकासचन्द्र रक्त देने को तैयार हो गये। दो दिनों तक यह प्रक्रिया
की गई, कुछ हानत मुश्किली मानस्य पड़ी पर यह 'बुझे के पहले ममक
उठना' माफ़ था। उन्होंने १६ जनवरी १९१० को १० बजे प्रसूत
सौंघ ली। ११ बजे उनको बरसाया गया। शाम को एक बिराट भीड़ के
साथ उनके एक को केवडैटस्ले में ले जाया गया और ५४ के समय
सतही बिस्तर में प्रविष्ट करवा दिया गया।

इस प्रकार ६१ साल से कुछ अधिक जिन के बाब ने मर गये। मरने
के पहले उन्होंने कई बार कहा था 'भामाके बाघो' भामाके बाघो
यानी 'मुझे हो' 'मुझे हो'। इस वाक्यबंध के बहुत से अर्थ किये गए हैं जैसे
बहु इस महान् धिन्वी के सारे बर्धनधारण का निचोड़ हो भविष्य में भी
शायद उनकी पुस्तकें वहाँ-वहाँ पड़ी जायें इसके बहुत बड़ अर्थ निकाले
जायें पर शायद उन्होंने एक साधारण मुमुषु की तरह केवल पानी की
एक बूंद माँपी हो और इस प्रकार यह दर्शाया हो कि तब मानव एक ही
मनुष्य चाहे उसमें जितना ही भेद पैदा करे।

उनके मरने पर सारे बंगाल में हाहाकार मच गया जिन्होंने जीवन
काल में उनकी निम्ना की थी उन्होंने भी सतमुक्त होकर उनकी प्रतिमा
का धर्मनमन किया। रवीन्द्रनाथ ने लिखा—

आहार धर्मर स्थान द्वैतर धातवे,
कति तार कति नय नृत्युर शासने।
द्वेतर पादिर केके निनी चारे हरि,
द्वेतर हृदय तारे राक्षियाधे वरि।

प्रेम के दासन में जिनका भ्रमर स्थान है, मृत्यु के दासन में उन्हें पाना कोई खोना नहीं है ; वेच की मिट्टी से जो हर तिमे यए देश के हृयम ने उनका बरण करके रख छोड़ा है ।

सब बात तो यह है कि सारन् बाव जैसे मेजक मरते नहीं अपन मेखों तथा रचनाओं के रूप में वे मृत्युहीन होकर रहते हैं । यह एक इष्टभ्य बात है कि कैसर ऐसे भयंकर असाध्य घोर कष्टकर रोग से पीड़ित होने पर भी उनक पत्रों में स्वभावसिद्ध हास्य घोर अर्थ्य में ग्बुतता नहीं आई । उन्होंने मृत्यु को भी घायब इन्ही दोनों कवचों के साथ ग्रहण किया ।

शरत्-साहित्य पर एक विहगम दृष्टि

किसी भी लेखक का सबसे बड़ा परिष्कृत उसकी रचना है इसी की बहीसत वह धानेवाली छत्तानों या पीढ़ियों की धरातल में अपने को सबसे बड़ा नुमीन साबित कर सकता है। कालिदास सेकसपियर ही मही बहुत-से ऐसे महान् लेखक तथा कवि हुए हैं जिनके सम्बन्ध में दुनिया या तो कुछ भी नहीं जानती या बहुत कम जानती है पर जब तक उनकी रचनाएँ भीर कृतियाँ मौजूद हैं जब तक उनका नाम भी मौजूद है। यदि एक लेखक बहुत उच्च कुल में उत्पन्न हुआ हो यानी ऐसे कुल में जिसे लीज उच्च कहते हैं वह चाह सिक्खर की तरह किसी मुटेरे के कुल का ही रहा हो भीर उसका चरित्र भी अपने काल तथा समाज के मान रण्ड से बिलकुल दूर का बुझा हो पर उसकी रचनायें निकूट हों तो उस लेखक को दो बीड़ी का ही समझ जायगा। इसके विपरीत लेखक या कवि यदि पृथित से पृथित पापी हो पर उसकी रचना में वे गुण हों जो उसको भिन्न बनाते हैं तो उसको श्रेष्ठा लेखक ही कहेंगे। हम कवि फ्रांसोवा विलों (François Villon) को सँ जिसको कुछ म्यारहवें के अड़ अड़कर मृत्युदण्ड बैल से इनकार किया कि "मैं फ्रांसोवा विलों को मृत्युदण्ड नहीं दे सकता फ्रांस में उसकी तरह के बदमाश सँकड़ों होंगे पर उसके जैसा कवि एक भी नहीं" या पाल वारलेन (Paul Verlaine) को ही क्यों न सँ जिसने मामूली धपराज में सजा पाकर बैल में मुन्बर से मुन्बर धार्मिक कवितायें लिखीं तो हम देखेंगे कि इनका मान इनकी रचनायों के कारण ही हुआ। हमारे भारतवर्ष के धार्मिक कवि भी बस्तु से पर कील कह सकता है कि वे उत्कूट कवि नहीं थे। इसलिये होना तो यह

चाहिये कि कवि तथा उपन्यासकारों की जीवनी में मुख्यतः उनकी कला तथा रचनाओं को समासोचना की जाय तथा परिचय दिया जाय पर ऐसा न करके प्रकृत जीवन की समसमीपूर्ण घटनाओं का ही बचन होता है। मैं इसको जीवनी सिद्धि का मत ही समझता हूँ। पान्शुर एडिचन केसबिन मार्केनि आदि की जीवनी सिद्धि समय उनके भाषि प्रकारो का बिक्रम करना केवल उनकी भाषियों तथा पुत्रों का बचन करना सिद्धि हास्यास्पद होया उतना ही किसी लेखक का परिचय देते समय उसके प्रेमों तथा पतन का परिचय देना मतलब तथा हास्यास्पद होया।

हम भारत को सब रचनाओं का परिचय देने की चेष्टा नहीं करेंगे बस उनकी कुछ मुख्य रचनाओं का परिचय यहाँ करायेगे और सो भी संक्षेप में। परिचय देते में हम एक विद्यप प्रक्रिया का अनुसरण करेंगे। पहले पाठक के सामने रचना की कथा का सार रख देंगे फिर उस पर मासो-चना करेंगे। ऐसा करने के पूर्व हम पाठक को एक बार इस बात को मन्गी तरह याद दिलाता चाहते हैं कि केवल कथानक के सार से रचना पर अन्तिम मन्तव्य स्थिर करना एक झपूरी चेष्टा होगी तथा ऐसा करना लेखक के साथ अन्याय होया क्योंकि एक बड़े उपन्यासकार की कला सिर्फ इतन में नहीं है कि वह एक विद्यप कहानी का तानाबाना बसि बनाता है बल्कि वह किस प्रकार चरित्रों को विकसित करता है और घटनाओं तथा स्थितियों की एक-दूसरे पर होनेवासी प्रतिक्रिया को वह किस प्रकार विवसताता है इसी में उसकी कला का सूक्ष्म परिचय है। कहना न होया कि कहानी या उपन्यास का जो सार हम देय करते जा रहे हैं उनमें इन बातों को यथार्थ रूप से प्रतिफलित करना असम्भव है। आर्से तथा मैरी सैब ने रोमनमिथर के नाटकों का जो संक्षिप्त सार लिखा है उससे कोई रोमनमिथर के नाटक की कहानियों के बारे में कुछ मोटी धारणा मने ही बना ले पर उनकी कविता के बारे में कोई सही धारणा प्राप्त करना कठिन ही नहीं असम्भव है।

हम पहले कहानियों से ही शुरू करेंगे।

शरत् का कहानी-साहित्य

यों तो शरत् बाबू ने अपने साहित्यिक जीवन के शीतल में बहुत-सी कहानियों की रचना की है पर उनकी प्रतिमा मुख्यतः उपन्यासकार की प्रतिमा थी। उनकी कहानियों को पढ़ने से अक्सर यह भावना बनती है कि उन्होंने उपन्यास को ही संक्षिप्त करके लिखा है तथा कहानी के छोटे बावरे में उनकी प्रतिमा कुच्छिन्न हुई है। हमारे लिए यह सम्भव नहीं कि हम उनकी सब कहानियों की आलोचना करें इसलिए केवल उनकी कहानियों के विषय में कुछ सामान्य मन्तव्य करके ध्यान बढ़ा देंगे। कहानी में एक पहलू पर ही रौसनी डाली जा सकती है पर शरत् बाबू ने अपनी कहानियों में भी हृन्म तथा जीवन की बहुमुखता दिखाने की चेष्टा की है और चूंकि छोटे बावरे में ऐसा संभवतापूर्वक नहीं किया जा सकता इससे वे इसमें कम सफल रहे। इसके एक बात धीर जात होती है कि शरत् बाबू के पास कथानकों की कमी नहीं थी नहीं तो वे इस प्रकार उपन्यास के नायक कथानकों को कहानियों में खर्च न कर देते। 'धायरे घालो' नामक कहानी में बिजली के प्रति उत्प्रेरक के प्रेम का अच्छा चित्रण है। यह कहानी मध्यमवित्त श्रेणी की है। इसमें भी बेव्या है। 'पबनिर्दम' कहानी भी मध्यमवित्त श्रेणी की प्रेम-कहानी है। इसका कथानक बावरे की हस्तता के कारण जिन नहीं पाया है। 'घालो धो छामा' 'मन्दिर' और 'अनुपम प्रेम' इन तीनों कहानियों में विविध प्रेम और समाज और हृदय का दृश्य है। 'घालो धो छामा' में अज्ञात और काम-विनया मुरमा के समाजनिविष्ट प्रेम का चित्र कीटा गया है। यदि यह कहानी न होकर उपन्यास के रूप में रचित होता तो इतना पुरा नीन्द्य दिखता

होता। बलरत्न का सुरमा के प्रति प्रेम साब ही प्रतुलकुमारी के प्रति पहले कर्तव्य और प्रेम का इन्द्र एक उपन्यास के लिए ही उपयुक्त कथानक होता। 'मन्दिर' कहानी बहुत सफल है पर यह भी मध्यवित्त श्रेणी का ही चित्र है। 'धनुषमार प्रेम' के चरित्र सुस्पष्ट हैं। 'सवि' कहानी बहुत सुन्दर है। इसका बातावरण काव्यमय है। 'बिलाठी' कहानी में बटना की कमी नहीं, पर ललक ने इस बहाने हृदयहीन सनातन समाज को पालियाँ ही बी हैं। 'मनुराधा' कहानी में 'दत्ता' का कुछ कथानक घा गया है। 'काशीनाथ', 'बोम्ब' 'द्वयचूर्ण' तथा 'सती' मध्यवित्त श्रेणी के साम्प्रदायिक जीवन को लेकर लिखे गये हैं। 'सती' कहानी को डाक्टर सेन ने 'धरतूप्रतिभा का एक खेप्ट दान' बताया है साब ही यह कहा है कि सर्व यम और सर्वकाम की खेप्ट कहानियों में इसका स्थान है पर इसमें हम मध्यवित्त श्रेणी की एक ऐसी स्त्री को पाते हैं जो सती भी है साप-साप इर बात में एक बरती है। इसी प्रकार 'बास्वस्मृति' 'हरिचरण' 'एका बही बीछपी' 'मामसार फल' और 'परेष' मध्यवित्त वर्ग के पारिवारिक और सामाजिक जीवन के चित्र हैं।

समाधीर स्वयं 'बास्वस्मृति' और 'हरिचरण' यरीबो के जीवन को लेकर लिखे गये हैं पर इन कहानियों में यह बात नहीं जो 'महेष्' में है। यह कहानी तो धरतू बाबू की रचनाओं में एक निरामा ही स्थान रखती है। कुछ बड़ी कहानियों का सीखिए।

चन्द्रनाथ

१५ १९११ को रचित थे धरतूचन्द्र ने एक पत्र में लिखा था—
 "चन्द्रनाथ में जो परिवर्तन उचित मामूम पड़ा वह मैंने कर दिया और भविष्य में इसी प्रकार के परिवर्तन करूँगा। 'चन्द्रनाथ' कहानी की दृष्टि से बहुत मीठी कहानी है पर इसमें घटिघबटा बहुत है। बचपन में विशेषकर जीवन के आरम्भ में इस तरह की रचना सामाजिक है इसी विषये ऐसा मन्त्रण हुआ है।"

१५ २ १११६ को उम्हूनि प्रकाशक को लिखा—“क्या चन्द्रनाथ छप गया ? घाठ सौ प्रतिमा अधिक छपाना बुरा क्या है ऐसा हीकरो ।

धरतू बाबू की रचनाओं में एक ‘महेष’ ही ऐसी कहानी है जिसमें मरीच की माहूला स्वल्प और खोपक स्पष्ट हुआ है । यदि इस कहानी का धीरे-धीरे ‘प्रोलेटारियट का जन्म’ होता तो सामक महू मेक्सिम गोर्की की एक कहानी हो जाती । हम संक्षेप में इस कहानी का सार बेटे हैं ।

महेष

गाँव छोटा है जमींदार भी छोटे हैं पर उनका बड़बड़ा गाँव पर बसा हुआ है । ठकूरल उनके पुरोहित हैं वे जमींदार साहब से भी अधिक रोब रखते हैं । वे लौटते हुए गफूर किसान के गिर हुए घर के सामने पुकारने लगे ‘गफूर घबरे घर में है ? गफूर की बड़ बयं की सड़की बोसी—‘घबड़ा बुलार में पड़े हैं क्या काम है ?’ ठकूरल खेप में बोल उठे—‘बुला हयमजारे को ।’ खैर हुरामबाबा भाया तो ठकूरल बोले—‘घबरे में बैस गया तेरा बैस बंभा है भब लौटती बार बैस रहा है कि घब भी बंभा है यदि जमींदार साहब ने सुन लिया कि तू मोहत्या कर रहा है तो याद रखे तेरी खैर नहीं ।’ किसान बोसा ‘हबूर बीमार है जरा पकड़कर कुछ पास ही जिला साऊँ, इसकी हिम्मत नहीं । ठकूरल परम होकर बोले—‘तो कुछ कटिया ही बाल दे घबड़ा घाभे बह भी सब बैस डाला ? कसाई ।’ गफूर की बाँबी में घाँसू घा गये—‘तो हबूर, इत साल कुटी काटया तो किस बीच की ? जमींदार तो सब कटबा ले गये । महेष को जिमाऊँ तो कँसे जिमाऊँ ।’ ठकूरल ने कहा—‘घोह ! उसका नाम महेष रखा है ? तो जमींदार का बाकी रखा होगा उम्हूनि भे लिया होगा । वाले रामराज्य में रहते हो फिर भी मासिक की लिखा करले हो । नीच हो न ।’ गफूर समझने लगा लिखा बह नहीं करता तो साह से घनाम-सा पड़ा है बही बह रहा वा । भकस्मात् बह ठकूरल के वीरों पर गिर पड़ा—‘पंक्तिनी कुछ दो-चार पसेरी कटिया

संभार ही दे दीजिए।" ठर्करल ने तबलू से पैर हटा लिया बोले—
 "सातें सु देगा क्या ?" मफूर विडम्बितता हुआ कहता रहा— 'पच्छिंत
 भी तुम इतना बोले ता तुम्हें कुछ जान नी न पड़ेगा हम न साकर रहे
 कोई बात नहीं लेकिन यह नूया जानवर है सिर्फ ताकता रहता है और
 जमकी भाँसों से टपटप भाँसू बिरते है। ठर्करल बने गये। मफूर बीस
 की ओर गया उसका क्या लज्जामा और धीरे-धीरे बोला— "तू मेरा
 बेटा है सातों तक हमें कमाकर बिसाले क बाद बूढा हो गया तुम्हें
 हम पेटभर सिसा नहीं पाते महेछ लेकिन तू तो जानता है तुम्हें मैं कितना
 प्यार करता हूँ। धमीदार ने जो बोड़ा बरामाह का उसे भी वैसे के लोभ
 से बेच दिया अब हम तुम्हें क्या बिसाकर बिसायेंगे ? उसके भाँसू बीस
 की पीठ पर बिरते बने। भाँसू पोंछकर मफूर ने इधर-उधर ताककर जस्बी
 से टूटे पर की नीची छत से बोड़ा-ना 'सर' लीचकर महेछ के सामने डाल
 दिया, और बोला— 'जस्बी ता से नहीं तो' "

इसमें धमीना ने पुकारा— "धम्मा !" मफूर बोला— "क्यों
 बेटी ?" — "भायो धाना धामो" कहकर वह कमरे से निकल घाई और
 सामने बेलकर बोली— "फिर तुमने महेछ को छत से 'सर' लेकर दिया।
 ठीक यही कर मफूर को था। उसने कहा— "बेटी पुराना सर है खुद
 बपुद फिर पड़ता है।" धमीना बोली— "मैंने तो भीतर से गुना धम्मा
 तुमने 'पर' लीया।" वह फिर भी इधर-उधर करने गया। धमीना
 बोली— "ऐसा करोगे तो यह बीबार भी फिर जायगी।" इस बात को
 मफूर से अधिक और कौन जानता था ? और धमीना ने कहा— "हाथ
 मुँह मोकर बल्लो लाने।" मफूर ने कहा— "धच्छा बरा माइ तो दे महेछ
 को पिला दे" धमीना बोली— "धम्मा धान तो माइ भाठ में ही सूख
 गया।" मुनकर मफूर सप्त हो रहा ऐसे कुछ के दिन में माइ भी नराब
 नहीं दिया जा सगता यह इस वर्ष की धमीना समझती थी। साते
 समय मफूर ने कहा— 'बुसार है।' फिर मौबकर बोला— "यह भाठ
 महेछ को न दे दो।"

सात दिन बाद धमीना खबर साईं कि महेस को काबीरजी पणुबाया गया क्योंकि उसने किसी क बाग के पीपों का जामा बा । धमीना बोली— “छड़ाने न जाओगे ?” वह संक्षिप्त रूप से बोला— ‘नहीं । — लेकिन धम्मा कहते हैं तीन दिन तक छुड़ाया नहीं गया तो कसाइयों के हाथ बेच दिया जायगा ।’ धमीना बोली । मफूर बोला— ‘बेचने दो । गलत को वह चुपचाप उठा धीरे बलिये के पास पीतल का लोटा गिरवी रखकर एक रुपया लिया धमले दिन महेस धपनी बगह पर दिखाई पड़ा ।

एक बूढ़ा मुसलमान महेस को ध्यान से देख रहा था । मफूर पास ही चुपचाप बैठा था । बूढ़े ने बड़ी बेर तन्त्र महेस को बूरने क बाद एक बस रुपये का नोट मफूर के हाथ में बेकर कहा— “धन्धा लो पूरे बस मा ।” फिर वह महेस की धोर जाकर रस्सी खोलने लमा तो मफूर एकदम सन्नकर उठा धीरे नोट तथा पेंसिली के दो रुपये भी वापस कर दिये धीरे बोला— ‘जाओ मैं नहीं बेचता ।’ कसाई बोला— ‘मियाँ उड़ा मत दबाव डालकर दो रुपये धीरे चाहते हो न ? सो न लो नमड़े का जो कुछ शान है, नहीं तो इसमें मान क्या है ?’ यह सुनकर मफूर लोबा-लोबा करके कमरे में चुप गया धीरे बहू से कसाइयों को उसने कहा कि यदि वे सीधे से नहीं मने तो जमींदार क धार मियों को बुलाकर वृत्तों से पिटाकर उन्हें निकलवा देगा । वे चले गये ।

यह खबर जमींदार के यहाँ पहुँची कि मफूर बीत नो कसाई के हाथ बेच रहा था बस जमींदार ने बुलाकर सीकड़ों भड़क बतलाई । मफूर ने मफूर माम लिया कात पकड़कर छठ-बैठ तथा कड़ी उछकी जान बची । लबने कहा— ‘जमींदार साइब के प्रताप के कारण इतना बड़ा पाप होठे-होठे बच गया ।’

किसी तरह दिन बीतते गये । मफूर ने कमी मजदूरी नहीं की थी पर अब वह बैठ में मजदूरी लो तलाश में फिरता । मजदूरी कहीं लमती वह भ्रूणनाकर सीट घाता धीरे लड़की पर ताहक बिकड़ता । एक बड़े धाकर उसन मात माया लो लड़की ने कहा कि मात नहीं बना क्योंकि

बाधन न था। इस पर उसने कहा "हृदयमात्री ! तू सब का डालती है, बुझा बाप चाहे भूखों मरे।" इत्यादि। उसने कहा— 'पानी सा।' पानी भी न था घायल धमीना को कुर्छे से पानी माने का मीका न सगा था जमीनार क कुर्छे पर वह बड़ नहीं सफ़टी थी पर मफूर ने उसे एक बन्ध जमा दिया। फिर वह स्वयं भी कम्पा को पकड़कर रोने सगा इस मातृहीन सड़की को उसने फिटने प्यार से पामा था। इतने में जमीनार के यहाँ से एक सिपाही बुलाने आया। मफूर ने कहा— 'धमी साया-पिया नहीं बाद को जाऊँगा।' इस पर सिपाही न गामी देकर कहा— "बूतों से पीटते हुए ले जसूया। मफूर ने कहा— "मस्का (रानी बिबटारिया) क राज में कोई किसी का मुसाम नहीं है लयाम देकर रहता हूँ नहीं जाऊँगा।" पर उसकी बात न जली। एक बघ्टे बाद जब वह जमीनार के यहाँ से सीटा तो उसका मुँह सूजा हुआ था। बात यह थी कि महेद्य ने छूटकर जमीनार के बाध में फूसों क पीके लाये थे तथा जो बान सूज रहा था उस पर मुँह मारा था। इसी की सजा मफूर को मिली थी। मफूर इस हासत में पर आया तो देखा कि धमीना लकी रा रही है सामने फूटा बड़ा पड़ा है धीर महेद्य मुँह सगाकर मरभूमि की तरह उसमें से निकले हुए पानी को पी रहा है। मफूर ने शोष के मारे घाब देसा न ठाब धीर सामने पड़े हल को महेद्य के सिर पर जोर से पटक दिया। महेद्य ने केबल एक बार सिर उठाने की बेप्टा की पर न उठ सका। उनका मेजा सुन गया था। उसकी घाँसों में घाँसु घाये सायब कुछ रक्तबिन्दु भी। इनके बाद उसने हाथ-वीर पीसा दिये धीर बह मर गया।

धमीना रो पड़ी— "धम्मा ! तुमने क्या किया हुआ महेद्य मर गया।" मफूर न हिमा न हुसा न कुछ बोसा। वह धपनी साट पर सेट रहा। दो बघ्टे के धन्वर बूसरे पाँव से घाकर मोची महेद्य को टॉप ले गये। उनके हाथों में वीनी छुरी देसकर मफूर ने सिहर कर घाँसे बन्द कर ली। पड़ोसियों ने कहा— "जमीनार ने प्रायश्चित की व्यवस्था के लिए तर्करल

के पास धादमी मेवा है प्रायश्चित्त के लक्ष में तुम्हें खर का एक-एक बाँस बेच डालना पड़ेगा।

मफूर ने इन बातों का उत्तर नहीं दिया चुटमो पर सिर रागकर बैठा रहा। बड़ी रात पये मफूर ने लड़की को बगाकर कहा— 'बसो धमीना हम चलें।' धमीना बोली— कहीं? मफूर बोला— 'बटकस में काम करने।' लड़की धादपर्य्यपकित होकर चुरने लगी। इसके पहले बड़े-बड़े बुद्ध पड़े लेकिन मफूर बटकस में काम करने को यह कहकर राखी न हुआ था कि वहाँ मजदूर नहीं रहता लड़कियों की इज्जत-भावक नहीं रहती। धमीना पानी पीने का पीतल का लोटा तथा पीतल की बाली साथ में ले रही थी पर वह बोला— 'इन सब को रहने दो बेटी उनसे मेरे महेश का प्रायश्चित्त किया जायगा। धँबेरी रात में वह लड़की का हाथ पकड़कर बाहर हो गया इस गाँव में उसका न कोई रिश्तेदार था न मिलनेवाला। धीपन पार कर सड़क के किनारे उस बबूल के नीचे धाकर वहाँ महेश मरा था एकाएक वह रोने लगा। नसाबलपित्त वाले धाकास की ओर मुँह उठा कर बोला— 'धन्नाह, मुझे जितनी खुशी हो सजा देना लेकिन मेरा महेश प्यास से मरा है। उसके चलने के लिए इतनी-सी धमीन भी न रखी जिसने तुम्हारी बी हुई बास तुम्हारा दिया हुआ पानी उसे न पीने दिया उसका कसूर तुम कभी माफ न करना।

×

×

×

यह कहानी 'बगबाणी' में प्रकाशित हुई थी स्पष्ट है कि इस कहानी में सरत् बाबू ने एक बूझरे ही मार्ग पर चलने की कोशिश की थी पर बुल है कि इस बारे पर वे अधिक दूर तक नहीं गये। सरत् बाबू अपनी प्रतिभा को यदि इस बारे पर ले जात तो समझें नहीं कि भारत के सरत् भाव न रहकर यहाँ न गोर्नी भी हो सकते। सरत् बाबू ने इस कहानी में मरीची के साथ जो सहानुभूति दिखाई है तथा उसका जो निदान किया है वह बहुत ही बस्तुवादी है। समाज में बरिजों का जो शोषण हो

रहा है उसका उमा बिज न 'पन्नो-ममाज' में है न 'अरक्षणीया' में यद्यपि इन दोनों पुस्तकों के बहुत-से पाठ यही हैं।

इस कहानी में गरजू बाबू ने बर्गबुद्ध का अच्छा दिग्दर्शन कराया है। यह प्रष्टव्य है कि किमान मुमममाम है और जमींदार तथा उसके पिछ-समुष्ट हिन्दू। इस प्रकार सारे बंगाल की समस्या सामन था बर्ह। पृष्ठभूमि में साम्प्रदायिकता का निदान है। कथा का प्रारम्भ इस प्रकार होता है कि तकरस पफूर पर बोप ममाते हैं कि वह बैल को कुछ काम को मही देता। कहानी का अन्त इस प्रकार होता है कि पफूर पाबेस म माकर बैल को मार डालता है और हिन्दू जमींदार की पार से बहा जाता है कि उसे इसका खर्चीला प्रायश्चित्त करना पड़ेगा। नतीजा यह है कि वह घर छोड़कर भाग जाता है और बटकल में मजदूर हो जाता है। इस प्रकार का घोषक का धर्म घोषित को मूठने का एक मज्जा मावन सिद्ध होता है। किसान जैसे संबंधारा होना है इसका इस कहानी में सुन्दर चित्रण है। डाक्टर मुबाब सेन भी यह मानते हैं कि 'सहेस' गरजूबुद्ध की अष्ट कहानी है। बिबससाहित्य में बहुत कम कहानियाँ ऐसी होंगी, जिनमें इस कहानी की तरह बिसृष्टि और ममत्व है।

बचन में बाहुल्य नहीं है बनों की प्रचुरता नहीं है फिर भी बिज सर्वांग सुन्दर है। इस कहानी की एक और विशेषता यह है कि मूक प्राणी सहेस तक मनुष्य की कहानियों का असीनूत हाकर दुष्प्रियोचर होता है। उमा कात हाता है जैसे वह सब कुछ मममम रहा है वह बुपचाप सभी धर्म्याओं तथा धत्याचारों को सहन कर रहा है, और जब वे अमहनीय हो जाने हैं तब जैसे वह अन्याय के विरुद्ध धर्मियान पर निकल पड़ा है।

हमने गरजू बाबू की कहानियों का कुछ परिचय दिया। गरजूबुद्ध बन्धुवादी भी है क्योंकि साम्प्रदायिक जीवन में ही के धरदा ताता-बाता प्रदूष करने हैं पर जैसा कि मैं कह चुका हूँ न वास्तविक का वास्तविक रूप न दिखाकर भावुकतामय रूप दिखाने हैं। सुयमित्त समासोचक

मोहितकुमार मजूमदार' के अनुसार "बेमता कथा-साहित्य में अब तक आदर्शवाद की ही विजय रही। बहिष्कृत की कल्पना में एक बड़े आदर्श (ideal) का उन्मुखता (sentiment) है, रबीन्द्रनाथ की कल्पना में वस्तु (Real) और आदर्श (ideal) के समन्वय की चेष्टा है छरत्चन्द्र की कल्पना में वस्तु (real) का एक भावुकतापूर्ण रूप है। बहिष्कृत की कल्पना में वस्तु कोई बाधा न हो सकी वह कल्पना सम्पूर्ण रूप से निरक्षुब्ध और निरापेक्ष थी। रबीन्द्रनाथ की कल्पना में वस्तु का स्फांतर ही गया है जैसे वस्तु की वास्तविकता ही लुप्त हो गई हो। छरत्चन्द्र की कल्पना में वस्तु (real) की समस्या खटित हो गई है वस्तु के लिए एक प्रबल आशेष की सृष्टि हुई है। इस विचारा में ही हमारे साहित्य का आदर्शवाद (idealism) घायल खतम हो गया। अब इसके बाद जिस साहित्य की सृष्टि होगी उसमें सारी पीढ़ों से वस्तुओं और घटनाओं को समझना ही उसकी एकमात्र प्रेरणा होगी।"

शरत् के उपन्यास

कहानियों का परिचय कराने के बाद अब हम उनके उपन्यासों का संक्षिप्त परिचय पूर्व बर्णित ढंग से ही प्रस्तुत करते हैं। हम इस परिचय को चरित्रहीन से प्रारम्भ करेंगे क्योंकि इसी उपन्यास के कारण उन्हें पहल-पहल बहुत अधिक प्रसिद्धि प्राप्त हुई और वासिवा भी मिली। जो तो हम इसके पहल पत्नी-समाज का परिचय दे चुके हैं। और पत्नी समाज की रचना भी पहले हुई थी पर चरित्रहीन की रचना के साथ ही वे राष्ट्रीय महत्त्व के लेखकों में गिने जाने लगे।

चरित्रहीन

परिचय के एक बड़े शहर में परमहंस रामकृष्ण के जैसे किसी सत्कार्य के लिए बच्चा माँगने आये हैं उनकी समा में उपेन्द्र ने बिना यह जाने कि वह कबित सत्कार्य है क्या, सभापतित्व करना स्वीकार कर लिया। इस सभा के उद्योत्सार्थों ने सतीश को भी इस सभा में उपस्थित होने के लिए कहा पर उनसे साफ इनकार कर दिया, क्योंकि उस दिन उनका ड्रेस रिहर्सल होने वाला है। इस पर उद्योत्सार्थों ने उसकी हँसी उड़ाई तो उन्होंने कहा—“घाप कुछ न जानकर भी एक अनुष्ठान को सुन्दर तथा सही मान रहे हैं, पर रिहर्सल में किटना भ्रष्टा और किटना बुद्ध है इसे मैं जानता हूँ इसलिये उसे छोड़कर एक अनिश्चित सत्कार्य में नहीं रुक सकता।” दरयादि। इसी रूप में सतीश पहले सापने वाला है।

तीन महीने बाद कलकत्ता के एक मेस में सतीश को हम फिर देखते हैं वह वहीं रहता है और होम्पोर्षी पढ़ता है यात्री समझता है कि पढ़ता है। उस मेस की नौकरानी ठाकिनी बड़ी सच्ची व्यवस्था करने वाली है

मेस के सब लोग उससे खुश हैं। साथ ही वह मुन्दरी भी है। पर मेस की गौकराणियों की तरह नहीं है। स्पष्ट है कि वह सतीश की विशेष देखभाल करती है। मरुपि दूसरों की देखभाल करने में भी वह कुटिल नहीं करती। वह सतीश की ही सर्वोत्तम की विस्वास-पात्री है। सब लोग मरुपि म उमे अपने-अपने कमरे की चामी के आते हैं। सतीश तो कैंसबापन की चामी भी उसी के पास रखता है। सतीश घरघर होम्योपनी के स्कूल में नहीं जाना चाहता पर साबिनी उसे एक बच्चे की तरह समझ-बुझकर स्कूल भेजती है। सतीश का जीवन इस प्रकार स्वच्छ सरस तरीके से चलता है। एक दिन साबिनी कहती है— 'मैं विपिन बाबू के यहाँ गौकरी करन आ रही हूँ। इस पर सतीश बहुत नाराज हो जाता है। यहाँ तक कि बाकर उसे पीटने के लिए तैयार हो जाता है। विपिन एक दुर्बलिय पर धनी युवक है। अब साबिनी बतानी है कि वह कहीं नहीं जायगी मरुपि ही यहाँ अधिक तनखाह मिलने चामी हो। तब सतीश शान्त होता है। इनमें छोटे-छोटे झगड़े बहुत होते हैं, पर शान्त हो जाते हैं। फिर भी ऐसी हासत में बीसी घनिष्ठता होने की उम्मीद की जाती है, उनमें बराबर एक "यहाँ तक इसके आये नहीं" का व्यवधान बना रहता है। सतीश का कभी-कभी ऐसा मान्य होता है कि गलत आ रहा है पर साबिनी बहुत पास धाती मान्य होत हुए भी हट जाती है।

एक दिन सतीश पूछ बैठता है— 'साबिनी तुम्हारी बातचीत तो अशिष्टता स्त्री की तरह नहीं है। तुम तो बहुत पकी-लिखी मालम होती हो।' साबिनी सिलबिलाकर ईस पड़ती है वह पूछती है— 'बहुत चितनी?' इतने में हस्ता करते हुए अपने बसबल सहित उसके पास विपिन के घान की घाहट मुनाई पड़ती है। सतीश कुछ न सोचकर दरनों के तल का दिया बुझा बैठा है। साबिनी कहती है— 'यह घापने क्या किया?' पर इतने में बोसत मोग आ जाते हैं। जगम से एक ने विदासलाई जमाकर देखा तो पहले ही साबिनी दिग्घायी पड़ी। साबिनी का तो ऐसा हास हुआ कि काटी तो बहुत नहीं। वह खीरन निकल गई। पर वे लोग

घराब पिये हुए वे बड़े धार से ठूँका मारकर हँसने लगे फिर वे सतीस को पकड़ से लिये। सतीस वहीं से घराब पीकर सौटा लो मेस के पास मढ़लड़ा कर मिर पड़ा। सावित्री का इसकी घासका भी वह जय रही थी। वह सतीस को वहीं से उठा लाई। उसके जहाँ-वहाँ छिप्त गया था उसको भी दिया फिर बोली— 'घाब कहीं मिर पड़े ? सतीस ने कहा 'कहीं नहीं बिर।' सावित्री रोटी हुई बोली— 'अब अमर किसी दिन घापने सपन पी लो मैं घापके पैरों में सिर टकराकर जान दे दूँगी।' सतीस ने कहा— 'नहीं कभी नहीं पीऊँगा। सावित्री ने कहा— 'मेरा हाव धूरर प्रतिज्ञा कौबिने।' सतीस ने ऐसा ही किया। सावित्री ने हाव लीनकर कहा— 'याद रहे घापने प्रतिज्ञा की।' सतीस ने कहा— 'यदि याद न रहे लो याद करा देना।' सावित्री अपने ठीह पर सोन बसी गई पर घुम्तारे को सामने टिमटिमाता हुआ देखकर उसने कहा— 'देवता तुम इस बात के साक्षी हो।'

अब हम उपवास को देखते हैं। विवाकर उसका दूर का भाई है उसी के बहाँ रहता है इस समय बी० ए० का छात्र है। सुरबासा उपेन्द्र की स्त्री है बड़ी प्रेमशीला। सुरबासा के पिता पनी हैं उन्होंने एक पत्र लिखा कि सुरबासा को बहिन शर्मा के लिए उपेन्द्र कोई बर ठीक करे। उपेन्द्र कहता है— 'तुम्हारे पिता पनी हैं उनको कन्या के लिए बर की कमी न होवी।' सुरबासा कहती है— 'यह कोई बात नहीं क्या तुमने मेरे पिता के रुपये देखकर मुझसे शादी की ?' उपेन्द्र ने कहा— 'यदि मैं इन पर ना कहूँ लो मेरी इज्जत लो रह जायगी पर यह सत्य नहीं होगा।' इन पर सुरबासा कहती है— 'सत्य यह नहीं सत्य यह है कि जहाँ नहीं भी मैं पैदा होती तुम्हें वहाँ मुझने ब्याह करने जाना पड़ता।' उपेन्द्र ने कहा— 'यान लो तुम किसी कायस्थ के बर में पैदा होती लो ?' सुरबासा ने लर्क करने के लिए नहीं बल्कि धुव विरवास के साथ कहा 'बाहूँ रे यह कहीं हो सकता है बाहूँ की मढ़की होकर कायस्थ के बर में पैदा होती ?' यही सुरबासा है पति में उसका सटस विरवास है। पिया-

बीबी में यह तब हुआ कि सभी के विवाह के लिए वे विवाकर को चुनत हैं ऐसा निश्चय दिया जाय ।

सतीश साहब के गधे से छुटकारा पाकर वस बजे उठता है तो पानी मांगता है इस पर सावित्री कहती है—“घाप बिना मायत्री जप क्रिये धीरे कमी पानी पीते हैं कि घाव ही पीजियेगा । प्रतिबाद करना बंधार है यह समझकर सतीश रोज की तरह पूजा करता है । सतीश को बीरे-बीरे एक दिन मामूम होता है कि सावित्री राज नियमित रूप से सन्ध्या-आयत्री करती है एकादशी के दिन पानी भी नहीं पीती मछली भी नहीं खाती दिन में केवल एक बार खाती है जैसे बंगाली विधवायें करती हैं ।

सतीश कमरते की सड़कों पर फिर रहा था तभी मोक्षरा माम की एक पुरानी बुढ़िया मौकरानी से भेंट हो गई । मोक्षरा कई दिन से एक चिट्ठी पढाने की फिक में डूब रही थी यह चिट्ठी कुछ इसी किस्म की थी कि उसे वह जिससे-तिससे पढाना नहीं चाहती थी । चिट्ठी उसके घर में भी इसलिये वह सतीश को साव लेकर घर गई, सतीश न मामूम क्या मोक्षर राजी हो गया । मोक्षरा का कमरा ऐसा नहीं था जिसमें वह सतीश के ऐसे बनी घावमी को बैठाने की हिम्मत करती इसलिये उसने अपनी एक पड़ोसिन मौकरानी का कमरा खोलकर बैठवाया । चिट्ठी पढ़ी गई । कमरा बहुत पवित्र तथा साफ था । सतीश ने एक पुस्तक भी देखी जिस पर भुवनचक्र मुक्तोपाध्याय का नाम था । इतने में सावित्री आई यह उसी का कमरा था । मोक्षरा ने सतीश के ध्यान का कारण बताया । सावित्री ने यह नहीं बताया कि वह सतीश को जानती है उसने मोक्षरा की बातें सुन सीं फिर पूछा— ‘यह तो हुआ मौनी पर बाबूजी ने घापके वहाँ चरणरज डालने के बजाय मेरे वहाँ क्यों डाली ?’ मौनी कुछकर बानी— ‘यह तो तैरा सौम्याय है ये कैसे पाप के लोप है तू क्या जाने ।’ सावित्री ने कहा— ‘तो पच्छी बात है’ फिर लगीस की धीरे मूह फैरकर बीबी ‘पंडितजी घापको कुछ अवसपान तो कराना चाहिए, घाप यदि घावे ही

हैं तो कुछ बसपाव करने नहीं तो बड़ा पाव होगा। आपको भूल तो भवभय मगी होती।" इस तरह परिहास में धुक् होकर बातचीठ साबित्री की धार से पहले भावुकतापूर्ण उच्छ्वास में बरसी फिर घमियता में खतम हुई। सतीश ला-वीकर सीट गया पर साबित्री करीब आकर भी करीब नहीं आई। सतीश यह समझ नहीं पाता था कि साबित्री क्यों इस प्रकार पास बुसाती है और पाम घाने पर निष्टुर घापात बैकर दूर हटा देती है। उसको तो इन बातों से यह सम्वेह उत्पन्न हो गया कि कहीं साबित्री पागल तो नहीं है।

सतीश ने हम मुक्याछिपी से परेघाम होकर उसी निम मेस छोड़ देने का निश्चय किया जब उसका सामान बँककर तैयार हुआ और वह हिंसाब चुकाने गया तो कहीं पता मया कि साबित्री आज आई ही नहीं। मेस के सब लोग सतीश के हम प्रकार चने जाने और साबित्री के न घाने का एक ही प्रथं मया रहे वे और एमा ही उम्होमे सतीश से साफ-साफ कह दिया। सतीश जता गया क्या करता सफ़ाई देना ध्यर्ष था पर उसने बड़े गीकर बिहारी को साबित्री की तमास से जेबा।

जिस दिन बिहारी पहुँचा उस दिन साबित्री के मकान में कुछ घजीब हाजत थी। साबित्री ने सीटकर देखा कि मकान मर में कच्चे प्याज के छिलके पड़े हैं मोलदा मीनी के मुँह से धाराब की बू का रही है और जतके कपड़े भी घजीब तरीके से बिपयस्त हैं। उनमे मोलदा ने पूछा यह क्या तो वह सरजकर बोसी—“बाबू मे मकद बीस दिने लब मीने बोतल को पूया है वह तुम्हारे कमरे में बीठे हैं।” साबित्री का दिस एक से हुआ वह कौन ? मनीया ? वह इरने-इरते घपने कमरे में गई तो कहीं बिपिन बाबू उसके बिस्तरे पर माड़ी नींद में पड़े हुए थे। वह धारचर्य मब तथा घामा मंग मे बिपिन को देत रही थी। ठीक इसी समय मतीश का जेबा हुआ बिहारी घामा उसने देया बिपिन उसके बिछोने पर सेटा है और साबित्री घपसक मयनों से उसे देस रही है। उमने न कुछ पूछा न टहरा जाकर सतीश से कह दिया कि साबित्री का कोई पता नहीं। उमने पूछा—

'मीसी से पूछा वह कहाँ गई? बिहारी ने कहा— 'मीसी नहीं जानती वह कहाँ जाती ही नहीं। सतीश उसी दिन नसकता छोड़कर चला गया।

सतीश कमकठे से चला तो घाया पर उपेन्द्र अपने एक मित्र के कमकठे में बहुत सख्त बीमार होने से कारण जब कमकठा जाने को तैयार हुए, तो सतीश को भी साथ ले लिया। हावड़ा स्टेशन पर उपेन्द्र के एक मित्र बैरिस्टर ज्योतिष राय आकर उन लोगों को घपने पर लिखा गये। सम्प्राप्त समय सतीश और उपेन्द्र धँबेरी गलियों को पारकर एक सीने हुए मकान के अन्दर चुके। वहाँ एक धरमस्त सुम्बरी स्त्री उनको रास्ता दिखा कर रोगी हाराज बाबू के पास ले गयी। इस स्त्री के धनुमनीय रूप तथा हैसमुख बेहरे के साथ मुखसम्प्रा पर शायित उसके पति का जैसे कोई धर्मधर्म नहीं था। यही स्त्री किरणमयी थी। हाराज न उपेन्द्र से कहा— मेरा दो हजारा रुपये का बीमा है और यह टूटा मकान है ऐसी मिला पड़ी कर भी कि सब तुमको मिले। मर मरने के बाद तुम रहे और मेरी बुढ़िया मी। याद दिलाए जाने पर उन्होंने कहा— "हाँ मेरी स्त्री उसका कोई नहीं है उसको भी बेचना।"

मकान से निकलते समय किरणमयी ने इसका पता वा लिया। उसने उपेन्द्र से पूछा कि क्या यह उपेन्द्र के लिए उचित होगा कि पति की सारी आयदाद की मासिक स्त्री न होकर वे ही हों। उपेन्द्र निरस्त हो गये पर सतीश ने कहा— 'बहूजी यदि आपने ही स्त्री के अधिकार देना न दिये होते तो आज यह दिन ही काहे को आता?' किरणमयी का चेहरा फट पड़ गया उसने पूछा— 'तुम्हारे मेरे विषय में क्या कहा है जरा सुनो। पर हाराज ने किरणमयी के विषय में कुछ नहीं कहा था यह केवल सतीश का धँबेरे में एक डंका था।

ज्योतिष राय की बहिन कुमारी सपेजिनी सतीश के गाने उसकी धार्मिक ताकत तथा साहस आदि से बहुत प्रभावित हुई। इसपर सतीश तथा उपेन्द्र के जाने के बाद डाक्टर साहब प्राये मौकरानी ने किरणमयी

से कहा, पर आज वह बोली—“उसको जाने के लिए क्यों नहीं कहती उसकी दवा वहाँ कोई पीता तो है नहीं। मौकरामी समझ न पाई कि मामला क्या है कौन-सी बात इस बीच में हो गई जो डाक्टर का ध्यान ही प्रभावस्मक हो गया। डाक्टर ने मौकरामी की बात सुन ली पर वह स्वयं ही किरण के पास धा प्रमका। किरणमयी बोली—“बाधो न!” वह बोला—“जाता था मैं जागता हूँ। भूल में डाक्टर क्या पर किरण न पुकारकर कहा—“सुन बाधो बही घालिरी जाना है। किरणमयी इसका कारण बताने जा रही थी इतने में उपेन्द्र और सतीश घाये। बात वहीं रह गई। उपेन्द्र और सतीश न देखा डाक्टर चोर की तरह निकल गया।

कमरुता धाकर सतीश को अपने बड़े मौकर बिहारी के जरिये माबिबी का हास-बाल मामूम करने की धुन सभार हुई तब बिहारी न बोझ बढाकर बताया कि वह बिपिन के साथ बसी गई। यह बात सुनकर सतीश को इतना बुरा मामूम हुआ कि वह बूमने निकल गया। ज्योतिष बाबू के पर में सब लोग सतीश का ही इन्तबार कर रहे थे कि वह पाकर गये किन्तु अब वह नहीं घाया तो सरोबिनी से विबाह के इच्छुक मय रीस्टर घाशोक ने सरोबिनी का ही गाने के लिए कहा। सरोबिनी ने घाशोक को निरास किया।

किरणमयी के साथ उपेन्द्र की जो कुछ पमिष्ठता हुई उसमे किरण के मन से मह भय दूर हो गया कि उपेन्द्र पति की सम्पत्ति मे उसे वचित करने के लिए घात-जाते हैं बल्कि कुछ घटा ही बड़ी। एक दिन डाक्टर फिर धा बयका किरण से बोला—“तुम मौयी की जकरत चाहे सतम हा गई हा मेरी जकरत घमी सतम नहीं हुई। इसी बात को बहने के लिए मैं घाया हूँ।” किरण बोली—“घाप क्या चाहते हैं? अपने?” डाक्टर बोला “यह घाप क्यों कहती है किरण? इतने दिन मैंने क्या माँया का गप? फिर वह बोला—“घपया नहीं चाहता यह नहीं वह सकता यह तुम्हारा वह प्रभाव नहीं रहा तो मामा अपने ही दे दा मैं दोनों तरफ

से ठगा जाना पसन्द न करूँगा।" किरण उठकर खली गई, और नाकर सब पहले डाक्टर को दे दिये— 'यह सीखिये।' डाक्टर ने लेने से इनकार किया कुछ कहना चाहा लेकिन किरण ने एक न मुनी। उसे सब गहना सेना पड़ा। अंत हुए भी डाक्टर ने कहा— "मह सब मने नहीं दिया बा।" पर बात सठम होने के पहले ही किरणमयी ने किबाब बन्द कर उसे जाने को मजबूर कर दिया।

उपेन्द्र बीच में ही दो दिन के लिए पर चल गये इसके बाद जब वे आने लगे तो पत्नी गुरबाला उनके साथ खली। दिबाकर भी खला क्योंकि वह बी० ए० में फेल हो गया था उपेन्द्र न कहा वह कलकत्ते में रहकर पढ़े। सतीश को तार दिया गया था वह स्टेशन में जाकर सबको अपने मकान में लिवा लाया पर साबित्री को सतीश के कमरे में बैठी बैसकर उपेन्द्र उसके पाँव लौटे और गुरबाला तथा दिबाकर के साथ प्योतिप राय के महाँ ठूरे। साबित्री के महाँ होने का पता सतीश को न था अभी थोड़ी देर पहले उससे बिहारी की भेंट हुई थी। उसने बिहारी को बताया कि बिपिनबाली बात झूठी है। बिहारी ने बताया था कि सतीश उसके बारे में क्या-क्या जानता है फिर भी उसने सतीश के सामने प्रकट न होना ही अच्छा समझा। वह बिहारी से कुछ रुपये लेकर काशी जा रही थी। जिस समय उपेन्द्र आये उस समय वह यही सोचकर सतीश के कमरे में बैठी थी कि सतीश कहीं रात गये भायेगा तब तक वह खली जायगी।

उपेन्द्र तो चल गये पर सतीश वहीं खड़ा रहा। उसने कहा "तुम ? इस मकान में ?" साबित्री समझ गई इसारा बिपिन की ओर है फिर भी सच नहीं बोली क्योंकि उसने बिहारी से बादा किया था कि सतीश को वह बसली बात नहीं बतायेगी ताकि बिहारी पर बाबू नाराज न हों। सतीश ने उसके चरित्र पर साँझन लबाय कहा— 'बस तुम लोग रुपये ही पहचानती हो।' इत्यादि वह खली गई। सतीश फिर नाराज पीने लगा।

उपेन्द्र बर-सा अपराध की गंध पाते ही सतीश के साथ पुरानी मित्रता का क्याम न कर एकदम उसका घर छोड़ कर चले गये इस पर सतीश को बड़ा क्रोध आया। उपेन्द्र के यहाँ तो जाना व्यय था वे प्रबन्ध ही उसे बुलकारिये, इसका उसे पूर्ण विश्वास था। हाराज बाबू के घर में घमने दिन घुसते हुए उसने सोचा कहीं उपेन्द्र ने यहाँ का दरवाजा भी उसके लिए बन्द न कर दिया हो? इतने में लौकरानी ने उसे बुलाया तो जान में जान आई, पर किरणमयी के सामने रसोईघर में उपस्थित होते ही किरण ने जब घनायास ही उससे पूछा— 'क्यों देवरजी कस राठ को नींद नहीं आई क्या बेहरा मुर्झाया हुआ है। सतीश ने भाव देखा न ताब उसने समझा उपेन्द्र ने ममक-मिर्च के साथ कस की बात बतलाई है वह फुटकार कर बोल उठा— 'बी हाँ कस राठभर उसके साथ गुलछरें उड़ा रहा था यही तो उस हरामजादे ने कहा है' " इत्यादि। किरण धारण्य में पड़ गई, उससे तो किसी ने कुछ भी न कहा था पर सतीश की मासियाँ बंद नहीं हुईं। उपेन्द्र घोर चुनकर भा गया सतीश जला गया। किरणमयी ने बाद को उपेन्द्र के परिवे से ही सतीश को बुलाना चाहा उपेन्द्र ने कहा— 'घादमी भेज देना।'

सरोजिनी गाड़ी पर सतीश के घर की घोर से जा रही थी उपेन्द्र ने सतीश को इस बात की खबर देते हुए दो पत्रियों का एक पत्र सरोजिनी के हाथ दिया। सरोजिनी को बड़ा धारण्य हुआ सतीश अभी यहीं है? सरोजिनी सतीश के घर गई तो वहाँ सतीश नहीं था। सरोजिनी ने इसी मौके से सतीश का घर देख लेना चाहा तो वहाँ साड़ी सूनती मामूम पड़ी। उसने कीतूहमवण रसोइये से पूछा— "साड़ी किसकी है?" तो उसने कहा, "यह माँजी की है।" रसोइये ब्राह्मण ने साबिबी के विषय में वहाँ तक बह जानता था बतलाया यहाँ तक कि उपेन्द्र का मुरबासा को लेकर सौट जाना था। अयोधिय बाबू के घर जाने की बात भी उसे बात हुई।

हाराज बाबू भर गये। यह तय हुआ कि किरणमयी के पास रहकर

बिबाकर कमकत्ते में पढ़ेगा। बिबाकर और किरणमयी में जो बातचीत यहाँ से शुरू होती है वह goldstralch बिबाकरजीस बातचीत का एक घादर्र है। एक दिन जबकि बिबाकर बुमने नया ना उपेन्द्र भाया। किरणमयी ताजी प्रुक्रियाँ निकाल कर देने लगी और बात करने लगी। यह बातचीत भी साहित्य में एक ही थीन है। यह कहती है 'यदि धन्धा गड्डे में गिरे तो उसे सब लोग बीड़ कर उठाते हैं, पर यदि कोई प्रेम में धन्धा होकर गड्डे में गिर पड़े तो सब उसे और डकेलकर मिट्टी बासकर तोप देते हैं' इत्यादि। चलते-चलते उसके पति हारान पर बात चलती है वह कहती है— 'मैंने उनसे कभी प्रेम न किया। न उन्होंने कभी मुझे प्यार किया न मैंने कभी उन्हें किया। सड़कपन में मरी छापी हुई। पति बिबाक् के के मुझे पढ़ाया करते थे इसमें वे सफल भी हुए। मैंने उनसे बहुत सी पुस्तकें पढ़ी पर मैं उनकी प्रेमसी ना पत्नी न हुई। पति बीमार पड़े महीनों पड़े रहे। ऐसे समय में डाक्टर भाये मेरा दिन प्रेम का सूजा ना जो भी उतने दिया वह प्रेम नहीं हलाहल ना पर मैंने उसे धाकठ पिया। असली न सही मकसी ही सही मैंने उसे धपनाया। मैं हलाहल पीठी ही जाती पर ऐसे समय प्रमूत का पता मुझे लना।' किरण ने साफ करके कहा उपेन्द्र ही यह प्रमूत है। उपेन्द्र ने सुन लिया पर वह चला गया। बिबाकर रह गया।

सतीस धब जाकर मानसिक स्वास्थ्य सुधारने के लिए एक जंबनी इबाके में लीकर लना रखोइसे के साथ रहता ना। इसी के पास बाकुषों क स्वास्थ्य सुधारने की एक जंबह थी। यहाँ सरोबिनी धाई थी वह बाड़ी पर टहलते समय एक दिन रास्ता भूल गई ना ना मानुम नया हुआ सतीस के घर के पास पुग्छों द्वारा बेर सी गई। सतीस ने धार सुनकर उसे बधाया और उसे धपने घर पर ले भाया वहाँ से सरोबिनी का भाई धाकर उसे ले गया। इसी बीच में उन दोनों की जनिष्ठता पहले में बढ़ गई।

उपर बिबाकर कमकत्ते में रहकर किरणमयी की देखरेक में बी० ए० पढ़ने लया। उसने एक कहानी लिखी 'बहुर की सुरी' किरणमयी

पढ़कर हँसी बोली— "दिवरजी तुम किसी से प्रेम करते हो?" "अरे?"
 कहकर दिवाकर आश्चर्य में पड़ गया। किरण बोली— "यदि तुम प्रेम
 नहीं करते तो प्रेम का अनुभव तुमने कैसे सिखे कहीं तुम छिपकर मुझसे
 तो प्रेम नहीं करते? किरण ने कहा— यदि प्रेम नहीं करते तो तुम्हारा
 यह सिलसा ब्यर्थ है क्योंकि यह अनुकरण ही है।" इस प्रकार किरणमयी
 अपनी घसाधारण बुद्धि के कारण दिवाकर से बेसने लगी। दिवाकर
 उसकी बुद्धि तथा रूप से तिसमिताकर धर्मीय परेगानी में रहने लगा।
 उपेन्द्र ने कसकता साया। उसने देखा जाहा कि दिवाकर कैसे
 सिख-पड रहा है तो मामूम हुआ कि कामेज सुनने पर भी वह धर्मी तक
 कामज म भर्ती नहीं हुआ। किरण की सास धबोरमयी ने उपेन्द्र से
 कहा— 'पढ़े भी क्या उसको तो बिलमर बहू से छुट्टी ही नहीं मिलती।'
 उपेन्द्र ने इसका जो धम सगाया उसे उसने छाते समय किरण से कहा—
 'तुम्हारा छुमा लाने को जो नहीं चाहता।' उपेन्द्र ने तब क्रिया दिवाकर
 की कमगा पर रात ही म दिवाकर को पुत्रमा कर किरणमयी बर्मा
 नाय गई।

बे बर्मा में रहने सये पर दिवाकर अपने से सड़ते-सड़ते इतना बक
 गया कि वह अब किरणमयी के लिए खतरनाक हो गया। किरण उससे
 प्रेम नहीं करती थी केबल उपेन्द्र का (जिसने वह मधमूच प्रेम करती
 थी) दुःख देने तथा उसने बदला लाने क लिए वह बर्मा भाग गई थी पर
 जब उसने दिवाकर का इस प्रकार खतरनाक होते देखा तो वह उसस सड़
 पडो और ब धमग-धमप रहने सये।

इसपर मरौजिनी के घरान में मनीज की धमिच्छा बढ़ी पर धर्मांक
 ने जा मरौजिनी के साथ बिवाह करमे का इच्छुक था एक दिन बर्मा
 पाकर बहू दिया कि मनीज तो साबित्री नाम की एक बानी क साथ रहता
 था। ज्योतिष ने मनीज से पूछा 'साबित्री से धापका क्या सम्बाध है?'
 तो उसने कुछ सत्योपजनक उत्तर नहीं दिया धीर उन लोगों से मिलना
 छोड़ दिया।

सतीश एक सामान्य बाबाजी के बनकर में पड़ गया और शराब में डूबकर 'साबना' में सबाजीन हो गया। नीकर बिहारी बाबू का यह हाल देखकर बहुत डरा वह बनारस जाकर साबित्री को बुसा लाया। साबित्री ने आकर बाबाजी को तुरन्त भया दिया। सतीश बीमार पड़ा साबित्री सेवा करने लगी फिर उसने उपेन्द्र को एक पत्र लिखा।

उपेन्द्र को यह पत्र पुरी में मिला जहाँ वे सुरबासा की मृत्यु के बाद स्वास्थ्य सुधारने के लिए एक होटल में थे। इस होटल में रहते समय उन्हें साबित्री के पूरे इतिहास का पता मिला। वह इतिहास यह था कि साबित्री कुभीन ब्राह्मण की सड़की है नी साल में बिबबा हुई, यही होटलवाला उसे मया लाया था पर उसको अपने प्रथ से डिगाने में असमर्थ रहकर उसने पीछा छोड़ दिया। उपेन्द्र को जब यह हाल मासूम हुआ तो वे बहुत पछताये इसलिये साबित्री का पत्र मिलते ही वे कलकत्ता के लिए रवाना हुए। वहाँ व्याधिप के घर ठहरे। सरोजिनी सतीश की बीमारी की बात सुनकर उपेन्द्र के साथ सतीश के घर बस बी। वहाँ उपेन्द्र ने साबित्री से कहा— 'बहिन हमें तुम्हारी बकरत है इन लोगों को रहन दो' कहकर उसने सरोजिनी को बिलसा दिया। साबित्री उपेन्द्र के साथ बसी गई।

सतीश बर्मा जाकर दिवाकर लया किरममयी को ले आया। उपेन्द्र मृत्युसम्या पर था। किरममयी वापस हो गई। वह उपेन्द्र के पास आकर बोसी— "सुरबासा मर गई, यह सुनकर मेरे दुःख की कोई सीमा नहीं रही। वही तो मेरी बुरसाईन थी उठी ने तो मुझसे कहा था ईश्वर है। हाम। एक यदि मैं इस बात का विश्वास करती।" अकस्मात् उसकी धारों दिवाकर की धोर गई तो उसके गिरे हुए बहरे की धोर देखकर उसने कहा— "भाई, तुम क्यों ऐसी नीची गियाह बिज्य हुए लड़े हो तुम्हें क्या यह लोग लग्ना वे रहे है ?" कहकर उपेन्द्र की धोर देखकर उसने कहा— "उसको कोई दुःख न हो देखरबी वह किसी के मुकाबले में बुरा नहीं। हमारे हाथ में तुमने उसको जिस तरह छोपा था मैं उसे उठी

प्रकार लीट रही हैं। इस सत्य की मैंने प्रार्थों से भी रखा की।”

उपेन्द्र मरते समय साबित्री से बोले—“अधिक बात मैं नहीं कह सकता, मैं एक तरफ तो तुम्हारे हाथों में सतीस घोर दिवाकर को बूसरी घोर क्रिष्णमयी घोर सरोजिनी को सौंपता हूँ।” फिर मतीम तथा दिवाकर से कहने लगे—“मैं साबित्री के भीतर बीजैना इनका उपमान न करता।”

उपेन्द्र मर गये।

यही ‘बन्धुहीन’ उपन्यास का धारा है। इस पुस्तक के लिए घरतू बाबू पर लोग बेतरह नापसन्द क्यों हुए, यह समझ में नहीं आता। घरतू बाबू ने न ता इस पुस्तक में पाप की जय ही दिललाई न पुण्य की पराजय ही। घरतू बाबू ने एक पत्र-लेखिका को उत्तर देते हुए अपने सम्बन्ध में कहा था—“समाज-संस्कार की कोई भी दुर्घमिन्धि मुझमें नहीं है। इस-लिये मेरी पुस्तकों में मनुष्य के दुष्कर्मों का विवरण है शायद समस्यार्थी भी है पर समाधान नहीं है। यह काम दूसरों का है मैं तो केवल क्लान्ति-निवर्तक हूँ। इनके प्रतिरिक्त कुछ भी नहीं।”

“समाज नामक वस्तु को मैं मानता हूँ पर ईशता करके नहीं। पुरुष तथा स्त्रियों के बहुत दिनों के पजीमून मिथ्या धनेकों ब्रूसंस्कार तथा उदारता इनमें सम्मिश्रित हैं। हमारे ज्ञान-पान तथा रहन सहन में इसका सामन-सह विषय मतकं नहीं है पर नरनारी के प्रेम के मामलें में इसकी निर्बल सृति दिगाई दे जाती है। मनुष्य को सब से अधिक इसी क्षेत्र में सामाजिक उत्पीड़न सहना पड़ता है। मनुष्य सबसे बराबर हमसे ही करता है इसकी अर्थात्ता तो उसे इन क्षेत्र में माननी ही पड़ती है। स्त्रियों का यह बुझीभूत भय अन्त में आकर बाक्रामदा विधान का रूप धारण कर लेता है। समाज इनमें किसी को दृष्टकारा नहीं देना चाहता। पुरुष के लिए उन्नती कटिवाइयाँ नहीं हैं। उसके लिए भोरा देने का रास्ता खुला हुआ है पर त्रिमक लिए किसी भी तरह दृष्टकारे का रास्ता नहीं खुला है वह है स्त्री। एबनिष्ठ प्रेम की मर्यादा को इस पुण्य का साहित्यिक भी

मानता है, इसके प्रति उसकी यत्ना तथा सम्मान की कोई सीमा नहीं है पर जिस बात को वह सह नहीं सकता वह है उसके नाम से भोजा। उसे ऐसा प्रतीत होता है कि इसी धोखे के रास्ते से ही भविष्य सन्तानों की आत्मा में घसत्य संशामित होता है और इसी के फलस्वरूप वे जायर होंगी निपटुर होकर वीरा ही होते हैं। मुक्ति या तथा प्रयोजन के लक्ष्य के मानकर कदाचित् लोग अनेक घसत्यों को सत्य कह कर बताने हैं पर केवल इसी बहाने से बाति के साहित्य को कल्पित करने जैसे पाप बहुत कम हैं। सामयिक बकरल चाहे कुछ भी हा साहित्य को इस संकुचित दायरे से मुक्ति देनी पड़ेगी।”

यह पहल ही बताया जा चुका है कि 'चरित्रहीन' पर जगह सबसे ज्यादा शक्तिवाँ अपने मुप में मिलीं। पर वे स्वयं प्रारम्भ से ही यह समझते थे कि 'चरित्रहीन' उनकी एक प्रधान रचना है। उन्होंने १९०७-१९११ को लिखा— 'इस समय चरित्रहीन की बड़ी छीछालेवर हो रही है। 'चरित्रहीन' प्रकाशित करने के समय लोगो का मुँह आसानी से बन्द करने के लिए हमें भी इस बीच में कुछ उपाय सोचना पड़ेगा। मैं विद्रुप करने पर उठर भाडें तो जैसे हर पक्षि और हर पृष्ठ पर विद्रुप कर सकता हूँ वह तुम जानते हो। मैंने इस बीच बहुत से हवाने कोत्र लिये हैं। रबीन्द्र साहित्य धारि से। और एक बात मैंने सावित्री को केवल मस की मौफ रानी नहीं रखा। पहले से ही लोग उसे घसटा की धाँधों से न बेद इसका भी उपाय कर लिया है। मुझे विश्वास है कि यह कुछ बुरा नहीं रहा। कमघ अकाधित होनेवाले उपन्यास में उठ तरह न करने पर पाहुक नहीं प्यटे। लोग भले ही निन्दा करें पर पढ़ने के लिए उत्सुक रहेंगे। हम लोग एक तरह से धाधा करते हैं कि इतने 'यमुना' (मासिक पत्र) की बिनी बड़ेगी। नहीं तो इन घसतारों में कीके रचहीन उपन्यास निकलने ही रहते हैं जिन्हें कोई पठता नहीं है। 'भारती' पत्र में प्रकाशित 'बाम्बला' 'पुण्यपुत्र' 'बीबी' 'शरद्विवास' धारि उपन्यासों को अपने में बाखू धाने नीम नहीं पढ़ते और यदि कोई पढ़ता है तो बेगार टामने के लिए पढ़ता

होमा । 'मन्त्रशक्ति' उपन्यास को भी बही पुरोहित बही मन्दिर और सब बकवास काई नहीं पड़ता । दूसरों की बात क्या है मैं भी नहीं पड़ता यद्यपि यह मेरा व्यवसाय है ।

११ १०-१३ का फिर वह चरित्रहीन के सम्बन्ध में लिखत है—“तुम मार्गों में 'चरित्रहीन' की आ बुराई फँसाई उमस वह बहुत सतिप्रसूत हो रहा है । यानी कम फयि न ठार दिया है—CHARITRAHIN CREATING ALARMING SENSATION

मैं पूछता हूँ उमस है क्या ? एक शरीर भर की लड़की जिस कारण से भी हो मेस में लौकरानी का काम करती है (Character un-questionable नहीं) और एक घराफ मुबक उसक प्रेम में पड़ता है फिर भी घात तक उसे कोई खास प्रथय नहीं मिलता । और रबीन्द्रनाथ की 'ओमेर बार्सी' (घोल को फिरफिरो) में शरीर भर की बिचबा धपन भर में यहाँ तक कि रिस्तबारों में हा नष्ट हो रही है फिर भी किसी न चूँ तक मर्ती की । बकिमचन्द्र के 'कृष्णकान्त के बसीयतनाम' की रोहिणी याद है ? इसी प्रकार 'मानमी पत्र में प्रभात एक मद्र मुबक के मुँह से और एक मद्र बिचबा के सतीत्व नष्ट करने की बात टान रहा है बस मेरे 'चरित्रहीन' में ही मारा शोष है । आ सोय प्रौप्रबी फेंच या जर्मन उपन्यास पढ़ रहे हैं व घबस्य ही सोचेंगे यह मचमुच घर्नतिक है या नहीं पर तुम मार्गों ने भी इस घमसत मममम है इसलिय मुझे कुल है ।

तानस्ताय का रिजरेक्शन एक उत्कृष्ट घन्व है । जो कुछ भी हो मैं यह स्वीकार नहीं करता और ऐसा इनलिये नहीं करता कि मैं नहीं समझता कि 'चरित्रहीन' में एक हरफ भी घर्नतिक है । मम्मब है कुछ लोग इसमें बुरबि हों पर लोग जो बह रहे हैं वह इसमें नहीं है । मैंने इसका नाम ही चरित्रहीन रगा है इसलिय इसम कुम कुबडनिनी बक आपत करने की बात हापी ऐसी घामा ता नहीं की जा सकती । बिनकी इच्छा हा व पड़ेंगे और आ नाम मे पबडान है व नहीं पड़ेंगे ।”

स्मरण रहे कि जहाँने १०-१ १११३ को इस सम्बन्ध में इसमें भी

बोरोबर शब्दों में लिखा था—“उन लोगों ने वहाँ तक पढ़ा है उसे वही भी शरीर बिलम्बेपन की दृष्टि से रबीन्द्रनाथ से भी बच्चा पाया पर उन्हें भय है कि सायब में प्रान्त में जाकर बिगाड़ दू।”

इसी प्रकार उन्होंने एक पत्र में लिखा था— सोय पहले बाहे कुछ भी कहें पर प्रान्त में उनकी राय बरस जायगी मैं वीय मारना पसन्द नहीं करता और बिना तीले बात सही करता फिर भी कहता हूँ कि प्रान्त प्रबन्ध ही बच्चा रहेगा। नैतिक हा या प्रनैतिक लोग इतना बड़े कि हा रचना मार्के की है और इसमें बदनामी का क्या डर है। बदनामी होनी तो भेटी होती। इसके प्रस्ताव में यह बोके कह रहा हूँ कि मैं गीता की टीका कर रहा हूँ इसका नाम ही बरिबहीन है इस प्रकार पाठक को पहले ही चेतावनी ही गई है कि न तो यह सुनीति प्रचारिणी समा के लिए है और न स्कूली बच्चों की पाठ्य-पुस्तक है। इसके प्रस्ताव को महान की प्रवृत्तारणा जरूर होती। एषया सब कुछ नहीं है। देश की सेवा करनी चाहिये। बरि लोगों को वास्तविक शिक्षा ही वा सके कठमुम्बेपन के प्रत्याचार प्राधि के विरुद्ध बातें बताई वा सके तो इतसे बड़कर प्रान्त की वस्तु और क्या हो सकती है? प्राय प्राय लोग हमारे जैसे शत्रु व्यक्तिओं की बात न गुनं पर एक दिन गुनंके।

“ बरिबहीन पर लोग क्या कहूँ हैं यह मुझे लिखना। इस पुस्तक के सम्बन्ध में लोग इतनी तपू की बातें कह रहे हैं। इस सम्बन्ध में कुछ ठीक-ठीक बारणा बनाना कठिन है। लोग इसे प्रनैतिक तो बता ही रहे हैं पर प्रेरेची साहित्य में जो कुछ भी वास्तविक रूप से बच्चा है उसमें इतसे कहीं पबिक प्रनैतिक घटनाओं की सहायता भी गई है। जो कुछ भी हो साहित्यिकों के मतो से मुझको सूचित करना।

सर्व बाबू की उपरोक्त जक्तियों से उनकी कला बहुत कुछ स्पष्ट हो जाती है। हमने बहुत ही बेहमे तरीके से ‘बरिबहीन उपन्यास’ को संक्षिप्त शर पाठक के सामने पेश किया है उसी से यह पाहिर

जाता है कि घरतू बाबू ने समाज-संस्कार की कोई चेष्टा नहीं की नहीं ता सतीस धीर साबिनी की बजाय वे सरोजिनी को बीच में लाकर उससे शादी नहीं करवाते। साबिनी बाबूबिबवा है पर इसमें कोई शक नहीं कि वह सतीस से उतना ही महत् प्रेम करती है जितना कि कोई स्त्री किसी पुरुष से कर सकती है। फिर भी 'अरिबहीन' के उपसंहार में इन दोनों का मिलन न होकर सरोजिनी के रूप में इन दोनों में चिरकास के लिए एक दुर्लभ व्यवधान की सृष्टि हाठी है। किरणमयी सामाजिक नियमों से बहरा व्यक्तिवार्त्तिका है, क्योंकि उसने पति के रोप के समय डाक्टर से पति-पत्नी का सम्बन्ध कायम किया इसके बाद वह खेल में सही एक परपुरुष दिखाकर के साथ भाग गई, तथा मन में परपुरुष उपेन्द्र से प्रेम किया केवल यही नहीं उसे उस पर व्यक्त भी किया। यह सब है पर जैसा कि पहले मैं बतला भाया हूँ किरणमयी अपनी विद्रोहा की अपार परिमा के बाबजूद भी अन्त में चलकर एक भयकर पबसी हो गई। ऐसी हानत में यह तो कमी भी नहीं कहा जा सकता कि घरतू बाबू ने 'अरिबहीन' में पाप की जय दितलाई। घरतू बाबू ने किरणमयी को किरणमयी भी बिदुषी करके बिसलामा हो पर उसके लिए उन्होंने कई बार पापिष्ठा प्रादि घम्ह इस्तेनाम किन्व है इसे हम नहीं मूल सकते। मैं तो समझता हूँ कि यह एक तरह से किरणमयी के अरिब को पाठक के सामने पिरामा (prejudicial to her character) है। इतना जाने पर भी घरतू बाबू ने किरणमयी को सहानुभूति के साथ चिन्तित किया है वह कहा जा सकता है। घरतू बाबू किरणमयी को पापिष्ठा घबस्य कहते हैं, पर इसके माग यह नहीं कि उन्होंने उसे क्षिप्तुल कंस की तरह काता करके चिन्तित किया हा। कॅब मे एक कहावत है tout comprendre, cest tout pardonner बानी "तब कुछ जान लेने पर मनुष्य सब कुछ क्षमा करने के योग्य हा अक्षता है" घरतू बाबू ने इसी को साबंक किया है। घरतू बाबू ने मानो इसी बात को अपने तिरपनमें अम्ह-दिवस के उत्सव म बीतन हुए कहा था, "तरह-तरह की परिस्थितियों में पढ़कर मैं तरह-

उरु के लीमों से मिला। मनुष्य को यदि अच्छी तरह खोजा जाय तो उसमें से उरु-उरु की चीजें निकलती हैं उस परिस्थिति में उरुकी भूल भूक पबलनन से बिना सहानुभूति किये कोई उरु ही नहीं सकता।"

'चरित्रहीन' उपन्यास में कोई भी उपसंहार ऐसा नहीं है जिसके कारण शरत् बाबू को हाहाकारी शान्तिकारी बिड़ोड़ी या सुतघिनन का पिलाव बिना जा सके। सामाजिक रीतियों को पैरों तले रौंदकर बिचबा बिबाह या पाप की बम से नहीं कराते फिर कौनसी ऐसी बात है जिसे देखकर ब्रह्मण का सङ्गठन समाज शरत् बाबू पर बीकता उठे ? उस प्रश्न का उत्तर देने की चपटा करने के पूव हम पाठकों की दृष्टि इस घोर धाकपिठ करेये कि 'पत्नी-समाज' की बिचबा रमा से श्री के रमेस का बिबाह नहीं कराते 'बिबदास' की पार्वती के साथ बेबदास के बिबाह का तो प्रश्न ही नहीं उठता बह तो बिचबा नहीं मजबा है और तलाक का प्रश्न ही उठना बड़ा बिकर है।

उपन्यास के उपसंहारों में इस प्रकार कोई शान्तिकारीत्व न होते हुए भी शरत् बाबू में ऐसी बातें हैं जो सङ्गठन समाज की तबीयत खराब करके उसे कुच कर देती हैं यह तो स्पष्ट ही बिम्बाई पड़ता है। देना है जो उरु है करते हैं एक तो यों कि नैतिक समतल पर जो होना चाहिये वे उमी की पय विकलाते हैं, ब्यावहारिक या बाहरी जगत में बह जमे ही न हो सके उबाहुरभस्वकप से अत्यंत विराधी त्रासाप्य पाठक के दिल में श्री म्तीस और सावित्री के मिलन की इच्छा उत्पन्न कर देते हैं पर साव ही वे सामाजिक कारणों से एता होने नहीं देते। इस प्रकार कइानी के दोनों समतलों में जो सूझ तथा कहीं-कहीं स्पून संघर्ष उत्पन्न होता है उससे हमका परिपाक अच्छा होता है दुबेकी वनी हो जाती है तथा भावों के संचार के लिए प्रपस्ततर तप वीदा होता है। एक शब्द में हमने उनको कला पबिक पबिनछानी हानी है मने ही उनके नमाज-संस्कार की बर्ही न पहिनने पर भी उनकी पुस्तक नमाज-संस्कार के लिए एक प्रबल धातु का रूप धारण करती

है क्योंकि वह हमें अपने चारों ओर दृष्टि दीवान तथा हृदय टटोलने के लिए मजबूर करती है।

भारत बाबू ने जो दूसरी बात समाज के स्तरों को त्रिलमिसा देनेवासी है यह है उनकी पुस्तकों में फैल हुए यम-तम भयंकर आन्तिकारी विचार जो पात्रों की परस्पर बातचीत के दौराम में पाठकों के सामने उपस्थित किए जाते हैं। इन आन्तिकारी विचारों की यम से भले ही न दिखलायें पर उनमें जो मत्स्य है वह हृदय पर एक घमिष्ट छाप छोड़ जाता है और यही बात समाज के ठकदारों को मापमन्स है।

'अतिरहीन' में बातचीत के छस से इस प्रकार के आन्तिकारी विचार बहुत घा गये हैं। अविचलर य विचार किरमययी के मुँह से ही पेश किए गये हैं। ये विचार कबल एक आन्तिकारी की अग्निपर्यं बचतृता ही नहीं है, बल्कि उनको व्यक्त करने में भारत बाबू ने अपनी कला को पराकाष्ठा तक पहुँचा दिया है। भारत बाबू किरमययी के मुँह से केवल कुछ आन्तिकारी विचारों को ही सुन्दर रूप में प्रकट नहीं करते बल्कि वे कहीं-कहीं मृष्टि के गृहस्यमय प्रदर्शों पर भी यथा-कथा रोचनी की एक म्मक शक्त देते हैं। भारत बाबू इन स्थानों पर कबि हो गये हैं उन शंती के कारण पुस्तक को जिनकी भी धार पड़ा जाय गया ही आमन्स प्राप्त होता है। स्मरण रहे भारत बाबू ने इस प्रकार कबित्व के आर्षेय में जो रोचनी शाली है उनमें कबिता के अतिरिक्त कुछ और भी है जेमा न मामूम इति पर भी वह प्रापुनिकमय विज्ञान के अनुभार है।

'अतिरहीन' का जो अतिरिक्त मार देने पाठकों के सामने पेश किया उनमें किरमययी की इस बातचीत का नमूना न घा लका। घत उलका कछ मोड़ा-भा नमूना पाठकों के सम्मुख पेश किया जाता है। किरमययी घभी बर्मा नहीं भापी है वह उस घनीबोगरीक घबस्था में है जिसमें वह विचार में प्रम न हाव पर भी उनको लेकर लेनपी है। वह विचार में बह रही है—“मेरी बेह की यह जो पीठ जिसे साप रूप बहल है यह पुराणों की ही घाँवों से ही नहीं मेरी घाँवों में भी एक विचित्र वस्तु है।

पपरा कर कड़ा न पड़ जाय तब तक इस दुनिया में घन्घाय तथा मूख रह ही जायपी और तब तक उसे धमा कर प्रथम देना ही पड़ेगा। पाप की बुर करने की सामर्थ्य नहीं थाब ही उसे सहन करने की क्षमता भी न रहे इससे क्या साम ह्यापा देवरजी ?”

दिवाकर ने कहा “नाम ही तो सब कुछ नहीं ? × × ×”

किरणमयी ने कहा—“अवश्य, पर पाप यदि मनुष्य के रक्त में ही बसा हुआ नहीं होता तो तुम्हारे ही बात सत्य होती। उस हालत में ग्याप के प्रसादा नसार में कुछ न रह पाता। क्या क्षमता क्षमा प्रादि हृदय-वृत्तियों के नाम का भी किसी को पता नहीं होता।” इत्यादि।

किरणमयी और दिवाकर की बातचीत इस उपन्यास की जान है। इन में धरतू बाबू का बुद्धिगम रूप प्रकट होता है। स्वयं से वे खबर कर देने हैं निर्मायना देने हैं इसी कारण उनको बाते समाज के ठेकदारों का कमी पसन्द नहीं आई।

‘अरिबहीन’ के सम्बन्ध में इयने जो कुछ कहा है उसे संक्षेप में फिर से पुनरावे। वह यह कि ‘अरिबहीन’ कोई आत्मिकारी उपन्यास इस धर्म में नहीं है कि उसमें पात्रों के आत्मिकारी परिणाम दिखलाये गए हैं बल्कि इसके विपरीत उनके उपसंहार सम्पूर्ण रूप से प्रतिक्रियावादी है। नवीय भाविकी से विवाह न कर सप्रेमियों से करता है। किरणमयी पपली हो जाती है तथा सुरवाता के मुहाबल में पयस्त हो जाती है। इत्यादि। अवश्य उपसंहार प्रतिक्रियावादी होने के कारण पूरी रचना प्रतिक्रियावादी हो गई ऐसा नहीं कहा जा सकता क्योंकि उपसंहार चाहे जो कुछ हो बचापक के बीचम पात्रक का मन बन चुका है और वह चाहता है कि उपसंहार और ही होना तो ठीक था। उपसंहार आत्मानुसंग न होने से पाठक के मन में समाज-व्यक्ति के विरुद्ध और भी अधिक रोष धाता है वह और भी धुन्ध हो उठता है। क्या हम वृष्टि से ऐसे उपसंहारों को प्रतिक्रियावादी कहा जा सकता है यह विचार्य है। प्रश्न तो यह है कि लखक किस पात्र के प्रति सहानुभूति उन्मूलन करने में समर्थ होना है। यदि धरतू

बाबू सावित्री और सतीश का मिलन कराते तो 'चरित्रहीन' की ट्रेजेडी न उतनी चुमती हुई होती न हम उसकी निबिड़ता से तिममिलाकर अपने चारों तरफ देखने को बिबस होते। यहाँ तक तो घरत् बाबू वस्तुवादी हैं यानी सही को चित्रित करते हैं जो हमारे चारों तरफ मौजूद है पर यहीं पर उनका वस्तुवाद सतम हो जाता है। इस ट्रेजेडी का जो स्वामाजिक नतीजा प्रसन्तोप है वह हम उनके उन पात्रों में भी नहीं देखते जिनमें प्रसन्तोप का होना अनिवार्य था। मान लिया कि सामाजिक बन्धनों के कारण सतीश और सावित्री में परस्पर सम्मीरतम प्रेम होते हुए भी उनका मिलन न हो सका यह भी मान लिया कि सतीश—वह सतीश जो सावित्री को उपन्या के साथ जाने देना नहीं चाहता था—सरोजिनी की तरह एक प्रेम करनवासी कमी को पाकर कुछ इत तक बहस मया पर सावित्री का क्या हुआ ? घरत् बाबू के अनुसार उसने इस परम हानि को धात्म-समर्पण के साथ ग्रहण कर लिया यहीं पर घरत् बाबू धार्षिकवादी हैं। घरत् बाबू एक श्रेष्ठ कलाकार हैं इसलिये वे अपने इस धार्षिकवाद को धन-यास ही प्रकट नहीं होने देते तथा उसको स्वामाजिक रूप से विकसित कर दिखाने के लिए लम्बी-चौड़ी बातों की धबतारना करत हैं। सिसक-सिसककर रोती हुई सावित्री सतीश को सरोजिनी के मुपुह करते समय बहती नजर आती है— 'पूछने हो तुम्हें प्यार करती हूँ कि नहीं नहीं तो किस बूत पर तुम पर मेरा इतना जोर जाता क्यों मुझे इतना मुस होता और क्यों मेरा दुःख ही इतना महान् होता। धबी इती कारण तो मैंने तुम्हें इतना दुःख दिया किमी भी प्रकार में अपनी इस बह को तुम्हारे मुपुह नहीं कर सकी। धात्र मैं तुम्हारे निकट कोई भी बात न छिपाऊँगी। मरी यह देह धात्र भी नष्ट नहीं हुई, पर तुम्हारे चरमों में प्रपित होने को मर्यादा भी इसमें न रही। इमी देह की महामयता से इसे बिछाकर मैंने जान-बूझकर बहनों का मुग्ध किया है इस बात का तो मैं किमी भी प्रकार नहीं भ्रम नकती। इसके द्वारा और चाहे जिनकी सेवा हो सके पर तुम्हारी पूजा इनमें नहीं हो सकती। यदि मैं इतना प्यार न करती तो कदाचित्

तुम्हें आज इस प्रकार छोड़कर न जाती।" कहकर वह बारबार घायु पोंछने लगी।

छठीस कुछ देर तक स्वप्न होकर पड़ा रहा फिर बोला—“तो मुझे तुम्हारी बेह की जरूरत नहीं पर तुम्हारा मन ? इसके द्वारा तो तुम कभी किसी को मुक्ताने नहीं गई ? यह तो मेरा ही है न ?”

सावित्री उसी क्षण बोली— ‘इससे मैंने किसी को कभी मुक्ताना नहीं चाहा। यह तुम्हारा ही है यहाँ के प्रभु हमेशा तुम्हीं रहोगे। अन्तर्यामी जानते हैं जब तक बीड़ोंनी चाहे जिस हातत में भी रहें मन से हमेशा तुम्हारी ही बासी रहूँगी।’

इस प्रकार यह दिखलाया गया कि सावित्री ने जान-बूझकर छठीस को छटोबिनी के हावों सौंप दिया इससे सावित्री का चरित्र जिस गौरवमय रंग में रंगा जाकर पाठक के सामने आता है उसकी तुलना गायी चरित्र-प्रधान शरद्व-साहित्य में भी नहीं है पर साथ ही यह गौरव स्वयं एक अपरिचितनवासी गौरव है। ‘चरित्रहीन’ का सुरबाता-चरित्र पतानु पतिक पाठित्व में अपना छापी नहीं रखता पर सावित्री के प्रेम तथा त्याग के सामने वह भी पीका पड़ जाता है। यहीं पर शरद्व बाबू आरत की घोर ध्यान बेग पर सचमुच यह समझ में नहीं आता कि शरद्व बाबू पर सनातन धर्म का ठकेदार समाज नाराज क्यों हुआ।

शरद्व-साहित्य की सावित्री कोई प्रकेशी उपज नहीं बल्कि उसकी एक परम्परा ही मौजूद है। ‘देवदास’ की पार्वती इसी परम्परा की एक उपज है अथवा उसमें और सावित्री में प्रभेद है। सावित्री बालविधवा है पार्वती सचवा है पर पार्वती की छापी उसके प्रेमिक देवदास से न होकर एक गतयोगन विदुर जमीदार से होती है। पार्वती और देवदास के चरित्र शरद्व-साहित्य की अनोकी उपज हैं इसलिये हम देवदास उपन्यास का नशिप्ट सार पाठक के सामने प्रस्तुत करते जिससे इन दोनों चरित्रों की पूरी परचाभूमि एक बार छावों के सामने आ जाय।

देवदास

सबसे पहले हम देवदास को पाठ्यामा के एक पारारती बासक के रूप में देखते हैं। वह इतना पारारती है कि जिस समय स्कूल में टिफिन की छुट्टी होती है उस समय भी उसे छुट्टी नहीं दी जाती। पाठ्यामा के किसी बच्चे से उसकी दोस्ती नहीं है, केवल पारंबती से मैत्रजोन है। पारंबती भी उसी पाठ्यामा की छात्रा है। बेचारी पारंबती से जहाँ तक होता है वह देवदास का हुजम बजाती है पर देवदास कभी-कभी उस पर नाराज हो जाता है तो उसे पीट डमता है फिर पीटने के बाद उसको प्यार भी करता है।

बत्र देवदास पाठ्यामा से कुछ भी पिला प्राप्त न कर पाया तो उस कमकता भेजकर पढ़ाया जाने लगा। उससे बच्चे की तरह पाबती से कमकता न जाने की जो प्रतिज्ञा की थी उसे पिला की बकमक के सामने न रग पाया। बहुत दिनों बाद देवदास गाँव आया तो उसने पारंबती को कमकत की बातें बताई। पारंबती की ओर से कोई नई बात नहीं थी जो भी उसे बह कह न सकी। फिर देवदास कमकता भना गया। पाबती के परबालों के मन में यह इच्छा तथा आशा थी कि देवदास के साथ पारंबती का विवाह हो पर देवदास की माता के एक दिन यह बात साफ कर दी कि ऐसा नहीं हो सकता।

कलकत्त के छात्र-जीवन में देवदास पाबती को भुलता जा रहा था पर पारंबती इकरत घाम्पबीचन में बराबर उसी का ध्यान करती रहती थी। पारंबती की पारी एक बिपुर बनी के साथ तय हो गई। देवदास गाँव में आया था उलन भी मना। देवदास अपने कमरे में सो रहा था रात का एक बत्र रहा था पारंबती ने चुपके से उसके कमरे में शक्ति होकर उसे भकमोकर जगाया। देवदास पहन तो पहनाया कि किसी न दिन तो नहीं मिया पर पाबती बोली—नदी में पानी बहुत है क्या उलन पानी से भी पैरा बर्षक नहीं डक मनेमा? अकस्मात् देवदास के हाथ ककड़

सिया— 'पार्वती ! पार्वती ने देवदास के चरणों में सिर रख दिया और बोली— 'बंदू भैया इन चरणों में चरा स्थान दो ।' देवदास देर तक पार्वती की पार बेवठा रहा पार्वती के चरण धाँसू ससके वरों पर गिरते रहे । बड़ी देर के बाद वह बोला— 'क्यों पाक क्या मेरे धमाका तुम्हारी कोई गति नहीं है ?

पार्वती कुछ न बोली । देवदास फिर बोला—'जागती हो इसमें घर के लोगों की बिलकुल राय नहीं है ।

पार्वती फिर भी कुछ न बोली उसी प्रकार देवदास के चरणों में सिर झाल पड़ी रही । बड़ी मे टनू से एक बच्चा । देवदास ने पुकारा—'पाक ! देवदास न घर के लोगों की राय न होने की बात कही, पर पार्वती बोली— मैं कुछ भी नहीं जानना चाहती बंदू भैया ! देवदास ने पूछा—'पिता-माता का बापी हो जाई ?' पार्वती न उत्तर दिया— 'हरज क्या है हो बाधो ।

—'फिर तुम कहाँ रहोगी ?'

— 'तुम्हारे चरणों में !' रोकर पार्वती बोली । बाँट करते-कहते चार मज पये से देवदास ने उसे चर पहुँचा दिया ।

देवदास ने घगमे दिन पिता से बातचीत की पर ने टय में मठ नहीं हुए । देवदास उसी बिल कलकत्ता रवाना हुआ गया । वहाँ से उसने पार्वती को एक पत्र मिला— और एक बात तुम्हें मैंने कभी बहुत प्यार किया है ऐसा मुझे मानूँ नहीं तुम्हारा धात्र भी मन में तुम्हारे लिए बहुत कष्ट नहीं मानूँ हो रहा है । मेरा कुछ सिर्फ यही है कि तुम मेरे लिए कुछ पाओगी । कोसिस करके मुझे भूल जाना और मेरा धान्तरिक धात्रीबाँध है कि तुम इसम सफल होया ।

देवदास कसकते म धाकर एक बेस्मा के घर गया पर वहाँ भी न गया । वह दो-चार दिन म ही बाँध सीट आया । यहाँ पोसरे क पाम पार्वती से उसकी भेंट हुआ गई । देवदास ने पार्वती को बुलाया बोला— 'मुझे माफ करो पाक ! मैं अपने का सभन्ध नहीं पाया वा वीधे भी हो

पिता-भावा को राजी कर दिया।

पावती ने देवदास के भूरे पर लीची दृष्टि डाली। बोली—“तुम्हारे मां-बाप हैं मेरे नहीं हैं? उनकी राय की जरूरत नहीं है?”

—“क्यों नहीं पाऊँ उनकी राय ली है ही सिर्फ़ तुम ”

—“तुमने कैसे जाना उनकी राय है उनकी राय बिलकुल नहीं है।”

देवदास ने बहुत समझप्या पर पार्वती घटस रही। बोली—“मैंने तुमको प्यार नहीं किया मैं तुमसे बेवसल डरती ही रही। राह छाड़ दो।

देवदास इन पर क्रुद्ध हो गया और बाँसुरी उस पर दे मारी जिससे पार्वती की भौंहों के नीचे जरा फट गया और टप-टप रूख गिरने लगा। पावती रो पड़ी—“देवु भैया।” देवदास की धारों में धाँसू था गये। उसने स्नेह से दँपे हुए घने से कहा—“क्यों पाऊँ!” शायद बानों में इसी प्रकार कुछ और बातचीत होती पर इनके में किमी की चाहत पाकर वे प्रसन्न हो गये।

यथासमय पावती का विवाह झाँठीपोठा के जमींदार की मुबनमोहन चौधरी के साथ हो गया। वह यथासमय पति के घर चली गई। वहाँ वह अपने से अधिक उन्नत के पुत्र के साथ बड़े मज्द में गृहस्त्री बनाने लगी। उसके घर में मान से मुबन बाबू के घर की हासल ऐसी बढ़न गई जैसे स्वयं मङ्गी था गई हो। मुबन बाबू की एक लबानी मङ्की इन रात्री से नाटाक भी पर पावती ने अपने स्नेह तथा ग्याव से उसे भी बस में कर लिया।

देवदास के पिता का देहावत हो गया। सारी सम्पत्ति का धाधा देवदास के हाथ में आया। पार्वती भी मायके में आई थी देवदास से उनकी मेट हुई तथा कुशलप्रसन्न हुआ। पार्वती ने देवदास के साथ कमरवा रहने-राज मोहर यमदास से पूछा ता पता चला कि अब सम्पत्ति हाथ में आ जान से देवदास बिलकुल त्रिपट् जायगा। सब बात तो यह है वह पाराब पीता है और न मायूम “मिटने हवार रणों का गहना बनवाकर उनकी नजर कर पुना है।” पावती मग्न रह गई। चाह उमन हो तो

अपने पैरों पर कुम्हाड़ी मारी थी पर अब वह कुम्हाड़ी उसी के चिर चिर रही है। वह दूसरे की गृहस्त्री सौभाग्य के लिए मरी जा रही है और उसका देवू भैया इस प्रकार लपट हा रहा है।

पाम को वह देवदास से मिली। देवदास ने कहा—“हम दोनों ने बचपन किया उसके फलस्वरूप क्या से क्या हो गया। तुमने क्रोध में क्या-क्या कहा और मैंने तुम्हारे ललाट पर वह राम है दिया।

देवदास ने ये बातें ईसते हुए कही थी पर पार्वती का हृदय जैसे पट गया। वह बोली—“देवू भैया। यही शाय तो मेरी साम्बना तथा सम्बल है। तुम मुझे प्यार करते थे इसलिए क्या कर बचपन का इतिहास तुमने मेरे माँके पर लिख दिया। यह मरी लगना नहीं है कर्मक नहीं है मेरे गौरव की सामग्री है।”

देवदास पार्वती की ओर देखता रहा। बोला—“तेरे ऊपर बड़ा क्रोध थाता है X X पिताजी यसे धारा यदि तुम जाती तो फिर मुझ चिन्ता ही क्या होती?” पार्वती रोने लगी। पाल समय पार्वती ने केवल एक बात मानी वह यह कि देवदास एक बार उसकी देपरेश में उसके नये घर में घाकर रहे। देवदास ने कहा—“हैं जाईया मेरी सौभाग्य करने पर यदि तुम्हारा कष्ट दूर हो तो जाईया क्या नहीं? मरने के पहले भी तुम्हारी यह इच्छा मुझ याद रहेगी।

देवदास अपनी माँ को काशीजी पहुँचाकर फिर कलकत्ता लौट गया। वहाँ वह जिय देव्या के पाम अधिक जाने गया था पता लगाने पर मात हुआ कि उसने बस्यावृत्ति छोड़ दी। इसका नाम चन्द्रमुखी था। देवदास के माय प्रेम हो जाने के कारण ही इसके जीवन में यह कायापलट हो गई थी। चन्द्रमुखी जब देवदास के दाँव के पास एक सरीफ औरत की तरह कुछ खमीन सरीफकर रहने लगी थी।

अपनी मरी मनोरमा ने पार्वती को एक पत्र लिखा जिसमें पता बना कि देवदास हुए बर्जे का उच्छृङ्खल जीवन बिता रहा है शराब पीता है इत्यादि। मनोरमा ने लिखा था—“वह गाँव में घाया था मैं सामने

पढ़ गई, तो मुझसे कहने लगा कि तुम लोगों को देखकर बड़ी खुशी होती है। मैं तो डरी कि कहीं मेरे ऊपर हाथ न डाल दे पर वह इतना ही कहकर चला गया। सुनती हूँ बहुत ही भ्रष्ट है।" यह पत्र पाकर पार्वती अपने माँ के लिए रवाना हुई, पर देवदास माँ से बस चुका था। पार्वती ने फिर धुन लिया—“विस्मय की बात है।” वह मनोरमा से किसी। मनोरमा बोली—“पाह तुम देवदास को देखने आई थीं ?

—“नहीं उनका हाथ से जाने के लिए आई थी। यहाँ उनका अपना धारणी तो कोई है नहीं।”

मनोरमा धवाक रह गई बोली—“कहती क्या है तुम्हें सज्जा नहीं समती ?”

—“सज्जा किस बात की ? अपनी थोड़ को के जाऊँगी इसमें सज्जा की क्या बात है।”

—“छि यह क्या बात कहती हो ! कोई रिश्ता भी तो नहीं है इस बात को मुँह पर मत माफा।”

पार्वती स्नात हुई ही हँसकर बोली—“मना बहिन जब न होय दुषा तब न मन में यह बात बसी है इसीलिए कमी-कमी यह बात मुझ में निरस जाती है। तुम मेरी बहिन हो इसलिए तुमने यह बात सुनी।”

धमन तिन पाबंतो फिर अपने पतिगृह के लिए रवाना हो गई।

ब्रह्ममुनी को गाँव में रहने समय ज्ञात हुआ कि देवदास बसकल में बड़े जोरों के साथ फिर वही पुराना रबैया बना रहा है। जाने बितन हजार रुपय फटा झण्ड। यह सुनकर ब्रह्ममुनी बसकल गई, और गिरफ्त के गहने गरीबकर फिर भराग पर बैठ गई पर जो घाटा उभे ही निरसबा डेनी। वह सब तरह में देवदास का पता लगा रही थी। धमन में देवदास का पता लगा। वह गगन पीकर सड़क पर पड़ा था ब्रह्ममुनी उभे उठा साई। इसी हासत में वह गगन माँपन लगा। ब्रह्ममुनी उभे बड़ी कठिनाता में मुना पाई। जब वह जगा तो ब्रह्ममुनी को पढ़वान गया। देवदास के माँह में दर या बाहर बुलाया गया उनमें परदा

करके सिर हिला मिया। दो दिन में बुखार भी धाया। एक महीने से अधिक इलाज होने पर देवदास कुछ ठीक हुआ। इसी के बाद देवदास ने चन्द्रमुखी से ये बातें कही हैं जिसमें उसने कहा कि वह समझ नहीं पाता कि वह चन्द्रमुखी का अधिक प्यार करता है या पार्वती को।

स्वास्थ्य सुधारने के लिए देवदास इलाहाबाद गया पर स्वास्थ्य में कुछ भी उन्नति नहीं हो रही थी। वहाँ से वह बम्बई गया तो कुछ स्वास्थ्य सुधरा। तब हुमसी का टिकट लेकर घर चलने को तैयार हुआ। बंगाल के बाद उसे गाड़ी में बुखार धाया। माफो जब पाहुणा स्टेशन पर पहुँची तो वह चुपके से साय के पुराने पीकर भ्रमदास को न बठाकर रेल से उतर गया और काँपटा हुआ स्टेशन के बाहर निकल कर बोझावाड़ी बामे से कहा— 'हाठीपोटा चलया?' गाड़ीवान ने रास्ता लराब बता कर चलने से इनकार किया। तब पासकी सोजी गई, वह भी न मिली। देवदास सन्न रह गया। 'तो क्या वह पार्वती के यहाँ न पहुँच सकेगा?' बड़ी कठिनाई से एक बैलवाड़ी मिली। बैलगाड़ी के गाड़ीवान ने कहा— 'बाबू रास्ता लराब है, हाठीपोटा पहुँचने में दो दिन लयेंगे। देवदास मन ही मन हिसाब करके लगा— 'दो दिन? दो दिन में जीऊँगा भी?' फिर भी वह गाड़ी पर चढ़ गया। गाड़ी पर बैठकर माँ की बात याद घाई फिर चन्द्रमुखी की। जिसको पाकिष्ठा समझकर उसने हमेशा पूजा की थी। आज उसी को अनमी के बगल में गौरव के साथ प्रणत होते बैठ उसकी घाँसों में घाँसु घा गये।

गाड़ी पर चढ़ने के बाद देवदास का खबर धा गया। जब अथल दिन दुपहर को गाड़ी ठहरी तब भी कई कोस बाकी थे। गाड़ी ठहरकर बैलों को चारा देते हुए गाड़ीवान पूछा— 'बाबू, तुम कुछ न खाओये?'

—'महीं बड़ी प्यास लगी है। चाँदा पानी प चकत हो?' गाड़ीवान पान ही के ठासाब से पानी न प्राया। अब तो देवदास की नाक से साँस के साथ टप-टप करके लुभ भी निकल रहा था। सन्ध्या समय भी देवदास ने पूछा— 'चितना बाकी है?' गाड़ीवान ने कहा— 'दो कोस रात

रस बने पहुँच आऊँगा।" जब माड़ी निश्चित जगह पर पहुँची तो गाड़ीवान ने धाबाक दो 'बाबू सा मये ?' देवदास के घोंठ हिस उठे पर कुछ बोम न सका। उसने हाथ उठाना चाहा पर हाथ न उठा। माड़ीवान ने पीपल की बँधी हुई बेबी क नीचे बिस्तार सगाकर देवदास को सुला दिया। सबेरे लोग इकट्ठा हुए पुसिस घाई गाड़ीवान को कुछ जानता था कह गया। डाक्टर घाया बाला—“घमिष घबस्पा ई। ऊपर से पार्वती मे मुनकर घाह भरी।

पुसिस ने जब की तमासी ली घँगुठी देखी बिट्टियाँ पड़ी तो जात हुआ कि यह तालगोनापुर के देवदास मुसोपाध्याय की मास है। ब्राह्मण होत हुए भी उसकी मास का गबिबासों ने सुमा न चाहा तो बाँडासों के द्वारा उठवाकर घपजमी करने जाल ली गई। पार्वती ने घर में पूछा—
‘कौन बा जी ?’

उमसे उम में बड़े उसके सङ्के मे कहा—‘देवदास मुसोपाध्याय। पार्वती को बिश्वास न हुआ उसने पूछ बिबरण पूछा तो मामूम हुआ हूँ बही है। यह दीइकर उठरने लयी। उसके पुत्र मे पूछा—
‘कहाँ बती ?’ पार्वती बोली—‘देबू मैया के पास।

—‘वे तो हूँ महीं उनको बोम से गये।

—‘माँ! माँ!! बहती हुई पार्वती बीबी।

महेन्द्र दीइकर घामने घाकर, बापा सेमे का हुआ। यह बीसा —
‘तुम पाणत हो गद क्या माँ, कहीं बा रही हो?’

पार्वती न महेन्द्र पर तीरण बटास बिमा बोली—
‘महेन्द्र क्या तुम मुभं सधमुब पाणत समभ रहे हो ? रास्ता छोड़ बा।

महेन्द्र ने रास्ता छोड़ बिमा बादर उम समय भी कागिध नाम कर रहे थे। भुवन बाबू ने घाँग पर चस्मा बढाने हुए पूछा—
‘बीस है?’

महेन्द्र बोला—
‘छाटी घम्मा जा रही है।

—‘बर्गे ? बही ?’

महेन्द्र ने कहा— 'देवदास को देखने ।'

मुब्त जीधरी चिन्ता उठे— 'तुम सोय सब के सब पापक हो भये क्या ? पकड़ो पकड़ो पकड़ सो उसे पामन हो गई है । ओ महेन्द्र ! ओ छोटी बहू !'

इसके बाद मौकरानियों ने मिलकर पार्वती की मुसित देह को मकान के धम्बर किया । दूसरे दिन जब उसकी मूर्छा टूटी उसने केवल इतना पूछा—“रात में घाकर पहुँचे वे न ? ओह सारी रात ?”

×

×

×

यही देवदास उपन्यास है । इसमें शरत् बानू ने विशेष समाज जाणित कराई हो ऐसा तो मामूम नहीं होता । देवदास और पार्वती एक दूसरे से प्रेम करते हैं । एक साधारण भगड़े के कारण प्रबन्ध इस भगड़े की परबादूमि में सजातन समाज है पार्वती का विवाह एक ऐसे व्यक्ति से होता है जिसे विकर उछे कुछ भी कहना नहीं है फिर भी जिसे वह प्यार करने में प्रसमर्भ है क्योंकि उसका हृदय देवदास के प्रेम से सभरेज है । दोनों धर्मात् देवदास और पार्वती अपनी मजती बाव को महसूस करते हैं पर कुछ कर नहीं पाते क्योंकि पार्वती का विवाह हो चुका है और वह विवाह किसी भी तरह हट नहीं सकता बिलकुल धमिट है । कोई नहेमा जाणित का ठकावा तो यह है कि पार्वती अपने विवाहित पति को ठकाकर बेती और हृदय के पति के साथ विवाह कर लेती । ऐसा होने में पहली बाबा तो यह है कि हिन्दुओं में ठकाक नहीं या जिसे जिसे याबी हो जाती वह मृत्यु तक के लिये हो जाती । दूसरी बात यह है कि यदि शरत् बानू अपने उद्भावनकील मस्तिष्क से और कोई तरीका निवाधकर पार्वती को देवदास के निकट पहुँचा भी बेते तो वे साधारण हिन्दू विवाह की मयानक ट्रेजेडी को अपनी कला क सुन्दर में कैसे उभार पाते ? इस लिये उम्हने पावती और देवदास के प्रेम को नहीं पहुँचा दिया है, वहाँ पहुँचाने से वे पर-पर में डीने वाली हिन्दू विवाह की ट्रेजेडी को बिलकुल मूर्त कर पाते । हम कृष्टि से देख जाने पर शरत् बानू मूरम रूप से जिया

धीन क्रान्तिकारी के ही रूप में हमारे सामने आते हैं। देवदास और पार्वती शर्मा बाबू के विभाग की उपलब्धि नहीं है, यस्कि व भारतवर्ष के परम मनीषी हैं। इस प्रकार भारतीय विवाह के बोझ के घन्दर की पोस को इस मुन्दरता से उखड़कर सोल जालने में वे समर्थ हुए हैं। यहाँ तक तो वे बस्तुवादी हैं पर जब हम देखते हैं कि उन्होंने पार्वती और देवदास की तरह एक-दूसरे को निविड रूप से प्यार करने वाले व्यक्तियों के घन्दर मूस से भी एक भुम्बन तक होने नहीं दिया केवल यही नहीं इस घारमत्याग को एक सराहनीय परिप्रेक्षित में पेश करते हैं तो हमें सन्दिग्ध होने लगता है कि बर्बादिक्रान्ति के प्रति उनका जो इच्छा है वह कहीं इच्छाकृत तो नहीं है या ऐसी विपत्ति में पड़े हुए दो चाहनेवालों के लिए उनका कचन कहीं यह तो नहीं है कि वे सब एक ही पद्धति के सामने कुटना टककर अपने जीवन को तथा दूसरों के जीवन को मष्ट करत रहे, जब तक सामूहिक सुधार न हो जाय।

शर्मा बाबू चाहते रहे हों या नहीं पर 'देवदास' पुस्तक तलाक के लिए एक उचित मुकाम पर पड़ा करती है जैसे 'परिबर्हीन' विधवा-विवाह के लिए एक तर्क पेश करता है यद्यपि उसमें सराजिनी के बीच में आ जाने से यह तर्क डूब-सा गया है। 'वस्तीसमाज' में विधवा-विवाह का तर्क और परबी 'परिबर्हीन' से कहीं साफ है। 'देवदास' में फिर भी एक समस्या है वह यह कि यदि मान लिया जाय कि स्त्री-मुस्य के मिसल के क्षेत्र में प्रेमत्रय विवाह ही धार्मिकी शब्द अन्तिम भीमांसा है तो देवदास किसका है? अष्टमुखी का या पार्वती का? पार्वती भी देवदास को प्रेम करती है अष्टमुखी भी यों ता यही मामूम पड़ता है कि पार्वती देवदास से अधिक प्रेम करती है इसलिये उसी का पसड़ा भारी होना चाहिये पर जरा गहरी जाँच करने पर पार्वती का यह बजज टिक नहीं सकता। पार्वती प्रेम करती है फिर भी दुगरे से घाबी कर लीती है अथवा उसको बहुत कुछ मजबूर होकर एमा करना पडा यह कहा जा सकता है पर अष्टमुखी देवनाम से प्रेम करने लगीती है तो एवदम अपने जीवन की कायापमट कर लेती है।

वह बेवशवृत्ति ही छोड़ देती है। अन्नमुखी यदि पार्वती की तरह मुबन बीमरी के साथ ब्याही जाती, तो वह इस निपटि तथा अदृष्ट को इस प्रकार न मान लेती वह भाग जाती न मामूम क्या करती शायद वह एक क्रॉच उपन्यास की नायिका की तरह बैबदास के सम्मुख आकर कहती—“मैं तुमसे धरत नहीं रह सकती पत्नी की मर्यादा तुम मुझे न दो समाज न दे पर मैं तुम्हारी उपपत्नी होकर ही रहूँगी साथ न छोड़ूँगी।” इसीलिए यह एक समस्या है और यह एक सामाजिक समस्या है कि यदि एक व्यक्ति को दो स्त्रियाँ चाहें तो हमारे माने हुए सून प्रेमजन्य विवाह के अनुसार वह किससे विवाह करे? इसका उत्तर तो सहज मामूम होता है, वह यह कि प्रेमजन्य विवाह का लक्ष्य यह है कि आकर्षण पारस्परिक हो पर यदि यह कहा जाय कि वह व्यक्ति दोनों स्त्रियों को चाहता है तब तो समस्या और भी बढ़ि हो जाती है। बैबदास उपन्यास में परिस्थिति सचमुच इसी रूप को पेश करे है पर अन्नमुखी बैबदा की इसीसे पाठक की सहानुभूति उसकी ओर उतनी नहीं जाती अतः पार्वती ही पार्वती नजर आती है।

अन्नमुखी जिस प्रकार बेस्मा से एक अरीफ औरत हो जाती है तबन यही नहीं बैबदास की आँकों में उसकी माँ तथा पार्वती की समतुल्य मर्यादा पाने में समर्थ होती है यह इस बात को दिखलाता है कि धरत्पत्र का केंद्रवर्ती एक बैबदा है न ही वह भी उठ सकती है। समस्त धरत्-साहित्य में ही अन्नमुखी एक ही अरि है जो एक बाबाक बेस्मा से फिर उठती है। जब वह उठती है तब हम देखते हैं कि वह किसी प्रतिज्ञा से कम प्यार नहीं करती। यदि अन्नमुखी अपनी बुद्धिमत्ता से बैबदास को ठीक समय पर लोच निकालकर इलाज न कराती तो बैबदास पार्वती के दरवाजे पर न मरकर कमरुत की किसी सड़क पर मर पड़ा मिलता।

हम यहाँ पर पाठकों की दृष्टि फिर से इस बात की ओर आकर्षित करना चाहते हैं कि बैबदास का अरि सूरत लठीय से मिलता है। लठीय

घौर देवदास दोनों निकम्म बनी मुबक हूँ दोनों को स्वयं-वीर्य की कोई चिन्ता नहीं है, दोनों जिसके साथ प्रेम में पड़ते हैं उसको पाते नहीं हैं। फिर भी यह एक देखने की बात है कि 'अरिजहीन' के सतीय के प्रति पाठक की सहानुभूति उतनी नहीं जगती जितनी देवदास के प्रति जगती है यद्यपि मनुष्यता की दृष्टि से दोनों एक ही समतल पर हैं बल्कि सब बात तो यह है कि सतीय देवदास से कुछ ऊँचे वर्ग का व्यक्ति है। फिर देवदास के प्रति इस सहानुभूति का कारण क्या है यदि हम विचार करें तो सात होना कि इसमें एक बात है वह यह कि सतीय जो देवदासगामी तथा पराधी हो जाता है उसका कारण सावित्री से उसका प्रेम व्यर्थ हो जाना नहीं है, कम से कम वही एकमात्र कारण नहीं है पर देवदास के देवदासगामी तथा पराधी हो जाने का एकमात्र कारण पार्वती के साथ उसके प्रेम का तिप्पस हो जाना है। इसी कारण देवदास बिसहकर एक साधारण धारारा में परिणत हो जाता है फिर भी उसके प्रति पाठक की सहानुभूति बचकर बनी रहती है तथा जब वह मरता है तो उसे प्रेम के एक अहीन की मर्णा प्राप्त होती है।

यदि यथानुगतिकता के बावजूद सनातन समाज की दृष्टि से देवदास या पापती कोई सती नहीं है यद्यपि वह अविचलित प्रेम की देवी है। प्रेम घौर यथानुगतिक सनीत्व में इस सम्भव अविचलितता को दिग्भ्रमकर तथा प्रेम के ही प्रति पाठक की सहानुभूति उत्पन्न कर वर्तमान विवाह प्रथा को पोषण को बढ़ाया गया है। 'देवदास' में यह बात बड़े पंनेपन के साथ साफ़ है यदि है कि विवाह एक बार हो जाने के बाद जो वह टूट नहीं सकता वह एक अविचलित प्रेम बल है। इसका बाद 'अरिजहीन' तथा 'देवदास' में भी एक घौर बात की घौर हम दृष्टि आटूट करना चाहते हैं। वह यह कि देवदास के अराज्य से स्पष्ट हो जाता है कि भारत बाधु की नयन में एक व्यक्ति देवदासगामी होना ही अपनी प्रेमिका के प्रति अविचलित बना रह सकता है। देवदास ऐसा ही है सतीय ऐसा ही है। इस धारण को बिना पसत या मती बनाये ही हम मान सकते हैं कि

यह बात बिसमकृत धसम्भव नहीं है, यानी इसमें नियम का व्यतिरेक होना हुए भी ऐसा कभी-कभी घायब हो सकता है। बर्दाश्त रखते तो यहाँ तक मानते हैं कि यदि स्त्री या पति का एकाग्र बच्चे परस्वसन भी हो काम तो उसको कुछ न समझना चाहिय क्योंकि इससे उनके सम्बन्ध में कोई फर्क नहीं आता।

'देवदास' में कोई सुन्दर या पार्श्विक बातचीत हम नहीं मिलती। उसमें का कोई भी पात्र या पात्री पार्श्विकता प्रकट करती हुई या एक साधारण नियम निकासकर परस्पर बातचीत करती हुई हमें नहीं मिलती। इसी कारण बुद्धि की भावघनाजी कही न वीक पढ़ने पर भी 'देवदास' उपन्यास में हमें यौतिकविद्या का निर्मल आनन्द आता है। 'देवदास' में चुमती हुई, फड़कती हुई बातचीत तो कई जगह आती है ऐसी जो एक बच्चे पढ़ से तो याव रहे पर उसमें तर्क का बीसा प्रकाश या कमलकार नहीं है जो 'अरिजहीन' की किरणमयी की बातचीत में है। पार्श्वी प्रेम की पगी प्रेममयी है, उसमें मानो बुद्धि की प्रखरता की दुम्बाह्वय ही नहीं है। यहाँ यह कहती है कि 'तुमने मेरे माथे पर कृपा कर बचपन का इतिहास लिख दिया' यहाँ पर उसकी बाते कितनी प्रेम से सनी हैं जो कभी मुनाई नहीं आ सकती।

हम पाठक को धरद्व-साहित्य का कुछ परिचय दे चुके। भाये हम 'बामुनेर मेमे' (बाह्यप की सड़की) नामक प्रसिद्ध उपन्यास का परिचय देंगे जिसमें उन्होंने केवल धार्मिक डोंग को ही नहीं हिन्दुधर्म के वर्पाधम की जड़ पर भी सबसे जबरदस्त धाधात किया है। उनकी सब पुस्तकों के लिए हिन्दू-समाज उन्हें जभा कर सकता है पर 'बामुनेर मेमे' में उन्होंने हिन्दुधर्म की समाज-पद्धति की मौलिक चीजों को जो जबरदस्त बल्का दिया है धीर जो अपानक ओट उसे पहुँचाई है यह धनुमनीय है। 'अरिजहीन' को मैं पहल ही बहुत धंधों में एक अपरिचितनवाबी बटा चुका हूँ। सन्नेह नहीं कि 'बामुनेर मेमे' की ओट इसके मुकाबले में बहुत पहली धीर तिलमिला देनेवाली है।

बामुनेर भेये (ब्राह्मण की बेटी)

मुहम्मद मूमना खतम कर राममणि सम्झ्या के पहल घर लौट रही थी। साथ में दम-बारह बप की पानी थी। वह फुन्सी हुई घाये-बाग बस रही थी मानने रस्मी स बंधा हुआ एन बन्दरी का बन्धा मा रहा था वह उस रस्मी को साथ गई। बस इन पर बाबी राममणि बहुत खिन्न हुई कि मङ्गलवार की बारदेमा में उमने ब्राह्मण की सङ्गी हाकर बन्दरी की रस्मी बंधे मौब भी। मानने ही बारह-तेरह बप की एक बन्दार (हुन) की सङ्गी घाठी लिखाई की कि राममणि सयी भ्रमण कि वही उमन पोती को छु ता नहीं सिया फिर लगी नाराज होने कि बमारों के पुरब म यहाँ ब्राह्मणों के पुरबे म बहु बर्षोंकर बकरी बंधने छाई। उन सङ्गी म बतसाया कि अब बहु इसी पुरबे म खूती है। बाद यह है कि उसको तथा उसकी माता को उसके पिता के मरने ही बिरादरी बामा ने निकास दिया था। उस समय रामतनु बन्दोपाध्याय के सामान न इनको बरा खन की जयह की थी।

अब तो राममणि बन्दरी की रस्मी नून गई। वह पहुँची जमी के घर जितने इस बिराधय ही सङ्गी पर पयार-परिवार का साकर ब्राह्मण टोन में बसाया था। वह घर पर नहीं था तो उमकी लङ्गी सम्झ्या पर ही बगम पड़ी। बाती—“तुम्हारे बाप मरने समुर की जायदाद भोग गृहे हैं भोगे पर यह क्या घनाचार कि ब्राह्मणोंके में बमतों को साकर बमारों। सम्झ्या भी उबन पड़ी इनने म सम्झ्या की भी जयदाधी घोर मुतकर धा गई। जयदाधी का बरकर राममणि घाये म बाहर हातर पिम्सात्री हुई बोली—“मुतनी हो सङ्गी की बाग बहती है गोताक बहूड ना हमार पिता का छिग हो बाट लगे। बतती है बपनी जमीन पर हमन बमार बसाया किसी क बाप का क्या ? सम्झ्या न एक भी बाग ऐसी म कई थी फिर भी जयदाधी जय उस पर बिरादने सयी ता यह बाप क माग भोगर जाती गई।

रासमणि घाबकम की सभी लड़कियों की एक ही सोच में बुराई करने लगी फिर बोली— 'समूह चक्रवर्ती का लड़का तुम्हारे यहां भाता-जाता है क्या ? मैं ता कम पुमिन की मां से इसी बात पर लड़ गई कि यमा ज्यो क रहते हुए ऐसा झूठाचार हो सकता है ।' दणारा प्रत्य की धोर वा जो समाज क स्तम्भों को घाबाज को हुकराकर विभायत मया था ।

जमझात्री गांव की इस रासमणि मौसी को जानती थी । वह समझ गई कि रासमणि की बात यदि न मानी गई तो वह सध्या के चरित के सम्बन्ध में अजीब-अजीब कहानी बढना न छाड़ेगी । इसलिये उसने पति को समझाकर 'जमट्टों का बाह्यगटोले से निकलबा देमा छहज ही में बहूत कर लिया । बोली— 'जहर मौसी मैं कम ही उगें बड़े-सड़े निकलबा दूंगी ये रहेमे तो हमारे ही पोखरे से पानी-बानी सेमे फिर जन्हीं का पानी छ-छूकर तो हमें भी जमना-फिरना पड़ेगा । जाते समय रासमणि कह गई— 'मुनती हूँ सध्या का बाप उसे पका रहा है मुनकर थोथोक बहा तो मबाक रह मये । सगूने कहा—मना करो इस बात को जस्वी मना करो । पढ़ी कि बस बिमड़ी ।'

जमझात्री के पति प्रियनाथ को दुनिया की कुछ परबाह न थी वे अपने वा होम्बोपैयी क घगइयत पति उमझने थे । उनको बस इसी की धुन लगी रहती थी कि कोई रोयी उतकी हो हुई दबा पीना स्वीकार करे पर रोयी उतने ऐसे भापते थे जैसे दमराज से । फिर भी यदि कोई उनकी दबा पीना स्वीकार करता तो वे अपने का हुताह्वय समझने से केबल जो जान से उतकी पैबा ही गही करते थे बल्कि उसको पप्य के लिए धमूर घनार भी पड़ेबाठ थे । साथ होम्बोपैयी से उनके प्रतिपागी पराज से ही चिकित्सा करबाते थे । मुकछिपकर रोग सध्या से भी दबा से जाठ न पर प्रियनाथ बाहु से कई चिकित्सा न करबाता था । प्रियनाथ ने जहां मुना कि इस-पांच गांव क घग्बर कोई बीमार है तो वे स्वय ही जा पड़ेबाते थे । इस प्रकार रोगियों के टिकार मे ही वे दिन बितात थे मक्कर न राने के समय बर से पड़ेबात । जमझात्री माराज होती पर

सगंध्या बुधबान प्रतीया करती ।

त्रिस घोभाऊ बट्टो क नाम से गाँव के देर-बकरी एक घाट पर पानी पीत थे तथा त्रिसका नाम लेकर रासमणि में सगंध्या घीर जगडाश्री को दणया या धर्मी हात में उनकी स्त्री की मृत्यु हुई थी । उनकी स्त्री की सेवा करने के लिए सानी घाई थी । वह बास-बिबबा की चाई पञ्चीस साल की उम्र थी । वह सब पाना चाहती थी पर गोलोक बट्टो उसे जाने देना नहीं चाहते थे । वे उमी में अपनी स्त्री का नुस्खान भूमना चाहते थे । गोलोक बट्टो छोटे-मोटे खाते-पीत धर्मीदार थे पर वे इसी पर निर्भर करनेवाले व्यक्ति नहीं थे वे भीतर ही भीतर बोटवार बाबू के साथ नाम्ने में विवाह में बकरी तथा भेड़ चालान देने का काराबार करते थे ।

सगंध्या कुछ दिन से बीमार थी । धर्मी उतने साबुगना पिया था । वह बैठकर पान खा रही थी इतने में धरन घा गया । वह पसीने से लपपय था तथा उमका मूँह मुका हुआ था । बात यह है कि वह कनकते से धाया था पर धर्मी घर न जाकर स्टेशन से सीधा वहीं धाया था । सगंध्या न कोई बुने का पैटर्न मोगाया था उसी को देन के लिए वह घर न जाकर पहन यहाँ धाया था । सगंध्या उनी पैटर्न की परीक्षा करती हुई उममे कह रही थी— इतनी पत्नी को क्या उकरत थी ? धैया ! तुम बाबू को धान ।” इतने में जगडाश्री बाहर न धाई तो धरन को रेख कर धम उठी घीर सगंध्या से बानी—“जरा पान मूँह से घुक है फिर त्रिडना पाहे धाराक करो ।” वह धाँधी की तरह धाई थी धाँधी की तरह बनी गई ।

धरन मन्न रह गया । सगंध्या कुछ देर चुन रही फिर पान घुककर मँगानी होकर बोनी— ‘क्यों तुम इस मकान में भाते हो धरन भैया क्या तुम ह्य लोनों का संबंधार करके ही मालोमे ?’

पहन तो धरन से कुछ बोना न गया, फिर धीर धीरे बोना— ‘तुमन मूँह का पान घुक दिया सगंध्या क्या मैं गधमुच तुम्हारे लिए धरुन हूँ ?’

सम्प्रा धीस पोंछती हुई बोपी— तुम बिलासत गये हो म्नेच्छ हो ईसाई हा तुम मेरे ही निकट नहीं सब के निकट धरूत हो । तुम्हें याद नहीं उच बिन तुम्हें पीनल के मोटे म पानी पीने को दिया गया ना ?”

पर मैंने समझा था —कि प्ररण कुछ पर बास न पाया एक मिनट के लिए स्मिर रहूँकर यह बोला—“मैं धामय इस पर म कमी न घाई पर मुझे बुधा न करता सम्प्रा मैंने कभी कोई पृथित नाम नहीं किया ।” धरम जसा गया जगडाभी कही पास ही कड़ी की यह मुस्कराती हुई धाकर बोपी—“धम धामद न घामे ।” पर यह इतन ही से कुछ न हुई सम्प्रा को कचडा नी बदलने का हुकम हुआ । सम्प्रा गनी हो गई । इतन में मकान के धन्दर धीयन में किपी ने जम्मे करके पुकारा । जगडाभी रीजी धरे ! यह तो स्वय पोसोक चट्टे मे ।

बोसाक एकदम धामने धा गया उसने सम्प्रा की तदियल धराब होने की बात पुछी । जगडाभी ने कहा ‘धमी तो धाम भी माबुधामा ही धामा है । यीसोक बोसा—“कही तो सम्प्रा धम तक कई लड़कों की मां होकर किपी का धर बसाती कही तुमने उसकी धमी धारी न की । उसकी इतनी उध हो गई ।

जगडाभी डरी कि न माबूम धम क्या धानेबाधा है बोपी—“सककी के पिता को कुछ धिक भी ही वे तो दना करने में ही पागल हो रहे हैं ।

गोसाक बोसा—“समी तो मुझे माबूम है तून ही तो प्रध किबा है कि धार्तिकेय की धरह बुद्धा म मिसै तो धारी ही न करेपी । तू तो यह धानती है कि हम कमीनों वे तो बहुत से भोगों को धरत-धरते कग्या का धाम लेकर बुद्धों की कृसीनना की रधा करनी पडती थी । मधुनुरध तू ही धाम है ।”

धाड़ी धेर इधर-उधर के धाव यीसोक सम्प्रा की धोर धेरकर बोस उध—“धकडा जम्मे तुम्हें यदि धार्तिकेय न धाहितै ती इधका मेर ही धाव धरों न धीप हो धरों सम्प्रा ? मुझे पसन्ध तो करोपी ?”

सम्प्रा धामद दुमरे धमय इमे जडाध में मेठी ‘धर इध ममय जनी

भुमी की बोस उठी— 'क्यों नहीं दादा धाप रस्सी की खाट पर पड़कर घायने घोर में माता लेकर कड़ी रहूंगी। यह कहकर वह जम्बी से जमी गई।

पोसोक का बेहरा समझमा गया पर वह हँसकर बोसा— 'पोली सगली है, कह भी सक्ती है पर मैंने रासमणि से गुना जो मूँह में धावा छो कहती है।'

जपडाजी न बहुत समझया कि ऐसा नहीं। पोसोक जब तेज पड़ने लगा उसने कहा— 'जमट्टों को तो निकलना दो।' सग्या कहीं पास ही से बोस उठी— 'उनको पिताजी मे निराश्रय जानकर जमह दी है कोई कैसे निकाल ?'

पोसोक बोसा— 'घण्ट निराश्रय ही सही पर यही तो एक जमह नहीं है। धरग से कहो अपने घर में न जाकर बसा दे। उसकी जाति जाने का डर नहीं।'

सग्या सामने आकर बोसी— 'उनको परबाह बना जाहे जाति आय या रहे।'

पोसोक ने चोट करने के लिए कहा— 'तो तुम लोगो में यही सप्ताह होयी है ? घण्टा !'

सग्या तिलतिलाकर हँस पड़ी बाणी— 'जे तो धाप जेधों की सप्ताह मना कुरे-बिस्ती स सप्ताह मैना समझते हैं मना मुमसे क्या सप्ताह सते ?' फिर वह जमी गई। जपडाजी कहने लयी 'घण्ट ने जमी ऐसा न कहा होया यह मभायी बनाकर कह रही है।' पोसोक इस बात से गुग न हुया बोसा— 'जग्या घाबरास क मड़के-मड़कियों का यही हास है। घर में कस्ता-बिस्ती ही सही पर एक बात मैं बहे जाता हूँ मड़की की पानी पत्नी कर दो। हम पाप का मतम ही कर दो।'

मगग दिन त्रियनाम मे जम्बी से जमारिम मे कहा— 'तुनो मैं क्या नहीं कर सकता तुम लोग वहीं घोर जाया तुम लोग बड़े बबसाज हो। तुमन बकरी को माड़ क्यों पिताया ?'

—“लेकिन बकरी को तो माड़ सभी दिखाते हैं दहा भी !”

प्रियनाथ होम्योपीबी की चिन्ता में मस्त ब सोल—‘बिसकुल भूखी बाठ है कोई बकरी माड़ नहीं खाती बकरी खाती है पास ।

बाठ इस पर ठब रही कि बकरी माड़ न खाने पायेयी । अमारिन बुझिया बोसी—“दहा भी बिटिया ने यो बिन से बाना नहीं खाया !”

‘बाना नहीं खाया ? पेट फूसा है ? कम्ब ? अजीर्ण ! दबा दू ? सस्कर, एकोनाईट ?” सुघ होकर प्रियनाथ बोसा ।

“नहीं दहा की भूख है बाना नहीं है भूख के मारे मरी जा रही है !’

समझकर प्रियनाथ बोसे—‘घोह !”—फिर सिर झुजसाकर बोसे—‘आधो पोखारे के पास लड़ी रहो जब सग्या धामे तो कहना मेरी दबा के बक्स में एक घठपी है दे दे । पंडिताइन न जान पामे समझी ?

प्रियनाथ असा गया ।

एक बिन सग्या एकाएक अरुप के बैठकलाने में पहुँची । बोसी—“एक अनुरोध के लिए घाई है तुम आजकल पर से नहीं निकसते ?

—“नहीं मैं जस्वी ही यहाँ से बुरोनास लठकर बहाँ जाने की सोच रहा हूँ जहाँ मनुष्य मनुष्य को बिना किसी बोप के ही हीन नहीं समझते सांछित नहीं करते । मैं बिन रात यही बात सोचा करता हूँ ।”

सग्या बोसी—‘जम्मभूमि छोड़ आघोने ?

—‘मैं जम्मभूमि छोड़ रहा हूँ या जम्मभूमि मुझे छोड़ रही है ? मैं आज तुम्हारे निकट भी अछूत हूँ इतना अपमान सहकर भी तुम मुझे यहाँ रहने को कहती हो ?”

सग्या बोसी—“यह अपमान तुमने स्वयं ही बुसाया ? मैंने तुमको इधारे से कई बार बताया है कि तुम जो चाहते हो वह कभी नहीं हो सकता । तुम्हारे प्रायश्चित्त करने पर भी नहीं फिर भी तुमने भिक्षा की अबदेस्ती रातम होने नहीं दी । पिताजी राजी हो सकते हैं माताजी भूख सकती हैं पर मैं तो नहीं भूख सकती कि मैं कितने बड़े कुल के बाह्यन

की बग्या हैं।

घरप्य हतबुद्धि होकर बोला— घोर में ?”

सग्या बोली— तुम एक ही जाति के हो पर बाप घोर बिल्सी एक नहीं है। सग्या बालने को ता बोल गई पर ऐमा कह बासने के बाक घपने मन ही मन मिहर उठी। घरप्य बोला महीं उमन केबस घपनी व्यपित्त बिस्मित दृष्टि को सग्या के चेहरे पर झूटा लिया। सग्या बोली— तुम मुझे बहुत दिनों तक याद रखोगे इस प्रकार बार-बार तुम्हारा घपमान किसी ने किया महीं होगा।”

घरप्य बोला— ‘और यह तो बताओ तुम किस काम के लिए आई थी ?”

—“हैं तो देखो दुनिया में घासघस का कोई घन्त महीं है। यथा न यदि तुम्हीं याद हमारी इज्जत न बचाओ तो वह बचती नहीं दीवती। बाप यह है एककड़ि अमाग की बिबदा स्त्री तथा बग्या को एककड़ि न बाप ने निकाम दिया है पर हमने घपने पुराने मनेतियों के बाई में उन्हें घापय किया है। अब घन्त यह लडा हुआ है कि काहलण्टोमे में वह रह नहीं सकती। पूछत हो क्यों ? के अमार है के हमारे पोन्नरे से पानी सेन है सड़क पर बकरी को माड़ विमात है। समाजवति गोसोद बट्टो के वर भूल से उग माड़ पर पड़ गये इसलिये माताजी ने तय किया है कि कम मबेने उन्हें भादू मारकर निकाम बेंबी तब स्नात करेगी। तुम उन्हें घपान को के बिलकुल निरापय है।”

घरप्य न कहा—“बचठी बात है हमारा जड़िया मानी पर गया है उनटे बयने को ग्यासी करबा बेंय।”

सग्या ने इसका उत्तर नहीं दिया जायन वह घपन को मंमान रही थी फिर धीरे धीरे बोली— ‘घब मेर मुंह में पान नहीं है नहाने मी घाई थी। इस समय तुम्हें प्रणाम कर जरा वर ए जाऊँ—यह कहकर उमन भुटकर घरप्य को प्रणाम किया घोर जपनी गई। घरप्य स्तम्भ होकर बंठ रहा न उमने कुछ पूजा न पीदे ने उसे पुकारा।

रासमणि एक दिन जगन्नाथी के महीं धाई लो कहने लगी—“जम्पो जल्दी से वंचानन और विद्यासाही क महीं पूजा भेज दे । तेरी किस्मत खुल गई । तूरी उस पयसी लड़की ने इतनी तपस्या की थी मैं लो नहीं जानती पर मैं कहे रखती हूँ मेरे लिए खोल की एक पयसी कष्टी बनवा देना ।

जगन्नाथी ने जब ब्याकुल होकर पूछा— ‘बात क्या है मइ लो बताओ मीठी?’ तब उसने बड़े चुभाप फिराब से कहा— घभी पार कान से छे कान न होने पावे कहीं लोग कुछ बाबा न दें । मोलोक मैया मेरे घलाबा क्रिसो को कुछ बताते लो हूँ महीं आज जन्होंने मुझे बसाकर कहा— ‘जाओ बहिन जाकर जम्पो से कहा नि घपमी बेटी के लिए कइ चिन्ता न करे, उसे मरे हाथ मं सौंपकर राजा की सास बनकर निरिचन्त बैठी रहे । हम बात को सुनकर राजा की होनेवाली सास कुछ लुस न हुई । जगन्नाथी ने कहा— ‘मोलोक मामा ने मजाक किया होगा । रासमणि बोली— “अँह मुझ्से मजाक धीर बे ? माई-बहिन में मजाक ? यह कनी हो सक्ता है ?

जगन्नाथी टालती रही पर रासमणि बोली—“मैंने भी पहले घोषा था कि यह असम्भव है पर सन्ध्या भी लो एक ही लठमी प्रतिमा-सी है मुनि का मत भी दिन जाय मइ मोलोक लो मनुष्य है ।

जगन्नाथी समझ गई कि बात सही है । रासमणि जमी गई लो बह सन्ध्या के पास गई । बह एक बिट्टी पड रही थी यह बिट्टी काटी ली से उसकी दासी के महीं से धाई थी । जन्होंने सिखा था कि मैं जगन्नाथी की प्राचना स्वीकार कर सन्ध्या की छादी में स्वयं उपस्थित रहकर कन्यादान करने ला रही हूँ । इसी समय विनाश व्यस्तता के साथ बीड़ते हुए भाव—“हा पया न हाइपोकोण्ड्रिया मैं दो दिन न गया बस !

जगन्नाथी न पूछा— ‘किमको गया हुया ?’

विनाश बोले—“घरभ का हाइपोकोण्ड्रिया हो पया मैं जैती डायनोमिस कर्हेगा ऐसा कीन सामा कर सक्ता है ? यह सामा डाक्टर

का दुम बनठा है वह इस रांग का नाम भी जानता है ?" जगदात्री ने जब बहुत पूछा कि यह रोय क्या है, तो बोले— वहीं नहीं समझता तुम क्या समझेगी ? इसको मानसिक व्याधि हो गई है । वह अपनी सब जाय-दाब पानी के हाथ पर हागन कृष्ण के हाथ देबकर गाँव छोड़कर बसा जा रहा है ।" जगदात्री बोली— 'मझ्ठा उन एक बार मरा नाम लेकर मेज का बहना तुम्हारी बाबी बुमा रही है । सम्झ्या धकी हाकर मुम रही थी उनका बेहय पीला पड गया उसने हाठ कौपने सय टिर भी उमने दुगठा क माप कहा— 'बर्वाँ माँ तुम बारबार उनको बुसाकर सम्मान करना चाहती हो उन्हेन तुम्हारा क्या बिगाड है ?"

जगदात्री बोली— "बुसाकर दो घण्टी बाँते बरने में भी हरज है ?"

सम्झ्या बोली— "बसा हा या बुरा हा ब रह या जायेँ ममान-जमीन बेधेँ या न बेधेँ हम लोपों के साथ उनका क्या सम्बन्ध है कि तुम नाम ब्बाह पीब न पडोगी । यदि तुम उन्हेँ इस ममान में बुसाकर साधा तो मैं तुम्हारे कमम लाकर कइनी हूँ कि मैं जाकर पोखरे में कूद पड़ेँगी" — बहकर पट अफ्री स पनी गई । जगदात्री प्राणभय से घुप हो रही पर वह प्रियनाथ के बोली— 'तुम सडकी की धानी करोगे कि नहीं रसिकपुर में एक दुहा का पता लय रहा है तुम देगन बब जाओगे ?" प्रियनाथ ने कहा कि उन्हेँ फरमल बब है धारा का रपाव करना है फिर मोसोक की नासी बीमार है उमेँ देखना है । जगदात्री बोली— "बाहेँ कुछ हा एक बार रसिकपुर हो जाओ ।" प्रियनाथ इस पर बोला कि जिसको बह सायाद बनाता चाहती है पट तो नरदाज तथा दुबचग्गि है । जब जगदात्री बोली— 'हो दुबचरिज सडकी कम मे बज कुछ दिन ता बिरुर पहिनेगी । तुम बिस दुबचरिज स बरछ हो ? तुम तो पावस हो जब तुन्हेँ गडकी बी जा मरतो है तो उसे सडकी नहीं बी जा सकती ?" प्रिय बसाक होकर देगले रड फिर बज ग्य ।

इपर जानरा बीमार थी । मोसोक उगकी रग-रग कग्ने मया । एक दिन जानरा पूछ बैठी— 'बसा तुम प्रियनाथ की सडकी सम्झ्या से पाती

करने का निश्चय कर चुके हैं ?" गोलोक ने इन्कार किया तो जानवा बोली— 'रासमणि को तुमने मेरा या धमहन में घाली है तुम्हें ऐसा करना था तो तुमने मेरा सर्वनाश क्यों किया तुमने मेरे लो मूँह बिखाने की या लड़ी रहने की कोई मुझाइया ही नहीं रखी ? इतने में भोकरानी ने धाकर खबर दी कि जानवा के ससुर धामे हैं । गोलोक धम जानवा को मेजना चाहता था क्योंकि वह मर्मवती हो चुकी थी पर जानवा सबके समझने-सुझने पर ली जाने को राजी न हुई । उसने गोलोक से कहा— "तुम्हें लेकर दुर्गुपी ।"

गोलोक को जब ज्ञात हुआ कि बंध्या का विवाह उससे न होगा किसी भीजवान बीरबन्ध मुञ्जोपाध्याय के साथ होगा तो वह बहुत नायब हुआ और अपने पुत्रवरों को इस बात का पता लगाने के लिए बीड़ाने लगा कि प्रियनाथ की माँ के विषय में एक प्रस्ताव जो सबके कान में बीस साल पहल था चुकी थी वह कहाँ तक सच है ?

जपडागी तथा उसकी सास कालीतारा सध्या क विवाह के बारे में आजकल मस्त रहती थी । जपडागी बराबर कुल की मर्यादा के लिए घतर्क रहती पर उसकी सास को इन बातों का बोह न था । कालीतारा अपनी पोती को भी यही समझती थी जपडागी को यह बहुत बुरा मयता था ।

राठ धनिक नहीं हुई थी । रासमणि जानवा से कह रही थी— 'तुम जानवा पयसी न बन बचा पी ले फिर जैसा या सब बीसा ही हो जायगा कोई जान भी न पायेगा ।"

जानवा बोली— 'ऐसी बात तुम लोग हम कैसे कहती हो बहिन ? इस प्रकार पाप पर पाप कैसे कई ? नरक न भी तो जयह न मिलगी ।' रासमणि बोली— 'इतने बड़े देवपुत्र्य व्यक्ति की इठी करवाघोबी यह बचपन मूख रहा । जानवा रोती हुई बोली— "तुम लोग हमें जिय देकर परवा जानोपी से जानती हैं ।" रासमणि बोली— 'म ठा केधोरा बुझिया की बचा न पियो न सही पर प्रियनाथ की बचा ठा पियोपी ?"

ज्ञानदा बोली—“बे हगे ?” रासमणि बोली—“क्यों नहीं ? गोसोक दहा ने कहा तो उसका फरिदता देना वह क्या चीज है ?”

इतने में प्रियनाथ धाये बड़बड़ा रहे य—“जिपर न जाऊँ उधर ही गड़बड़ कम सड़की की छापी है इपर इतने रोगी है कम धर से निकल न पाऊँगा खुदा ही हाफिज है ।” प्रियनाथ ने ज्ञानदा की नाडी देखकर कहा—“बस धमीर्ण है टाहम सयेगा सेकिन ममा मैं दबा करेँ और प्रच्छी न हो ।” रासमणि न कई बार इधारे से समझया कि मामसा क्या है पर प्रवीण चिकित्सक प्रियनाथ जब इस पर भी नहीं समझ तो उसने प्रियनाथ को धलग से जाकर बस्तुस्थिति समझई । प्रियनाथ तो हक्काबक्का रह गया । रासमणि बोली—“गोसोक दहा के ऐसे पूजनीय ध्यक्ति का ठेका सिर नीचा हुपा या रहा है । वे तो पुरख हैं उनका क्या होय इमी धमादी ने तो धाकर मायाजास फैसाया ।” प्रियनाथ ने कई बार पूछ निगसकर कहा—“येर पास यह सब दबा नहीं है धाप बिपिन डाक्टर या पराध डाक्टर को लखर दें ।” न धपनी पुस्तकें लपा दबा का बचस समेटने सये । गालोक भी पहुँच गया बोला—“मैं तुम्हारा समुर सपता हूँ मैं कहता हूँ इसका कुछ तम करो ।” प्रियनाथ यों तो निमबिस्मा था पर इस पर तमक कर बोला—‘घाय समुर है तो हुपा करेँ, पर क्या जीव-हत्या करेँ ? परसोक में क्या जबाब दूँया ?’ योभाक डिबाड़ों क पास जाकर लड़ा हो गया और बिलपुस दूगरा ही घादमी बनकर ठेकर बबलते हुए कटोर स्वर म बोला—“इतनी रात सये तुम एक भले घादमी के घर में क्या कर रहे हो ?”

प्रश्न सुनकर प्रियनाथ धारण्य में पड़ गया बोला—“बाह यह भी गूब तमागा है । मैं दबा देने धाया और क्या धारने ही तो बुसाया था ।” गालोक बिल्साकर बोला—“माने बदमाज हुरामी ! तू क्या जाने इजाज करला ? जिमने तुम्हे पर मैं पुसने दिया ? धानिख तुम्हे पीछे के दरबाज से खानकर भीतर जिमने दिया ?” ज्ञानदा की धोर मुटकर गोकोक बोला—“हरायजादी धग्गे समुर रोकर लो गय तू न पर ।

भीतर भीतर दुपहर रात का इलाक हो रहा है ! कम यदि छिर मुड़वा-
कर बड़ी इसबाकर यौव से न निकलवा खुं तो मेरा नाम योशोक नहीं ।”
रासू की धोर देखकर बोले—“देखा इन सागों का रंग । मैं इस-बीस यौव
का समाजपति हूँ और ऐन मेरे ही घर में यह पाप ? तू क्याह रही ।”
रासू भी मबरग यई थी धम्मलकर बोली—“जकर क्याह हूँ मैं बरा बेघने
बसी धाई कि जानदा कौसी है तो यहाँ देखती क्या हूँ कि बोनो पुलछरें
उड़ा रहे हैं ।” शिव का तो यह हात या कि काटो तो खून नहीं योशोक
ने बीस की तरह उसके हाथ न सब किताबें छीन लीं—“निकल सासे
उस्सू के पढ़े हमारे घर से तू रामरतु का बामाह है, नहीं तो पहले मैं
तुम्हें पुतियाकर धबभरा करता फिर पाने में भासाम करता ।” यह कह
कर गोशोक ने धमके पर धक्के देकर उसे घर से निकाल दिया । शिवनाथ
कह रहा था—“बाहू यह तो धक्का तमाया रहा” और निकल गया ।

धमके दिन सग्या की घाटी में धरम बुलाया तक न गया था । वह
तर ही पर था । धरमक रात होने पर भी वह धम रहा था । इतने में
किसी ने उसके कमरे के दरवाजे पर पुकारा । धरम ने सुरस्त खोल दिया
धरे । यह क्या ? यह तो सग्या थी । वह मात रेघम की साड़ी पहिने पी
रबी का ऐसा कम धरम ने कमी नहीं देया था वह सुख हो गया ।
सग्या जैसे तूफान की तरह धाई पी बैसे ही तूफान की तरह बोली—
“तुम्हारे धमावा मेरा पाज कोई नहीं है असो ।” धरम ने कहा—
“कहाँ ?” सग्या बोली—“जहाँ से एक व्यक्ति धभी उठ गया बड़ी
बसो ।” धरम समझ गया किसी कारण से दरवासे दर की पीढ़े पर से उठा
में घने । ऐसा तो असमर होता है । धरम ने कारण पूछा तो सग्या ने
धीरे-धीरे बताया—“बिबाह समा में माताजी मुझे बान करने के लिए
बैठी थी शरी खुद बैठी थी । इतने में मृत्युञ्जय घटक दो व्यक्तियों को
लेकर पहुँचा । उनमें से एक ने शरी की धोर दलकर कहा—“शरी
हम पहचानती हो ?” दूसरे ने शरी ने कहा ‘तुम्हें लड़के की घाटी करके
पहले ही एक बाह्यपी की जाति के ली धब हम शरी की गारी करके इन

माया को भी जातिभ्रष्ट कर रही हो! फिर सबको पुकारकर उसमें
 बजा— 'सब साम मुता यह जिसको तुम सब परम कुमोम ममन्त हो
 दाहण महा हीरु नार्ई का सटका है। मृत्युञ्जय ने गगाजम का पटा
 गरी की धार बनाकर कहा— ई यह बात मच कि महा कहिए प्रियनाथ
 किमना मरना है मुग्घ दाहण का या हीरु नार्ई का? मरी
 गन्धामिना दाणी मिर नीचा किय 'श्री किमी प्रकार मट मुँह में म सा
 मकी। इमक बा' उम सोना म म एक म मारी यमा गोतरर बतलाई।
 वह यह कि बा' मास की उम्र म दादी की दादी हुई थी। जब जतरी
 पन्द्रह-मास साम की उम्र हुई ता एक मन्वित म अपन का मुहुन्द
 दाहण बनाया बा रात्र रहकर पाच रपया तथा एक रपका सेकर बसा
 गया। "मक बाइ म हो वह भक्ततर दाता या सब कह कट म लता या।
 बात यह है कि दादी बड़ी मुबमूरत थी। इमक बा' जब एक दिन उसकी
 धममी हटीत लुनी ता पिताजी पदा हो चुक य। ई माँ होती तो गता
 दबा देती मरक का बदन न देती। ही जब वह पकड़ा गया ता उमन
 का यह कृत्य उमने अपन निम में गरी बल्कि मुहुन्द दाहण की धमु-
 मनि तथा धनुराध में किया। एक तो मुहुन्द बुद्दा धादमी य हुमर कई
 नाम में गन्धिया में परेमान य। इमलिए धपनी परिचित मित्रों म रपया
 बमुम करने का मार उठूनि शाक क ठगर देकर कहा— 'हीरु। तू दाहण
 का परिचय पाद कर म घोर एक जनक रग म जा कुछ तू पैदा करेया
 उम्बा दाया मेरा रहा। इम प्रकार उमने दम-बारह जगह पर किया
 या। उमन कहा 'मृ काम उमके मामिध में ही नहीं किया ऐसे ही बहुर
 के वर्मीन दाहण अपन में दूर रहनकामी मित्रों में पैदा करन के लिए
 हुमरों की मरद मच है।
 धर मा' म मरदकर बोला— 'उम मच होगा नहीं तो दाहणों
 म गोता' तेमा पमार्ई बँस पदा हाण धीर य ही मिधू मनाज क गोतरपान
 पर ई ८ है।
 गन्धा बातनी गई— मृतकी है हीरु में मुग्घ से पूजा का कि

पण्डित जी। ईश्वर के यहाँ क्या बचाव होने ? तो उन्होंने कहा था पाप सब हमारा है, मैं उसका बचाव दूँगा। हीरू ने फिर पूछा था पण्डित जी ! धाँसिर उसकी क्या गति होगी ? हँसकर पण्डित जी ने कहा था उसकी गति क्या होगी न होगी यह बिरुवा हमारी है, वे हमारी रिश्तियाँ हैं न कि तुम्हारी ? दासी ने मुझसे तुम्हारी बातें कहा था 'कौन छोटा कौन बड़ा है यह केवल ईश्वर जानते हैं मनुष्य किसी को कभी नुषा न करे। पर उस समय मैंने नहीं सोचा था कि इसका क्या धर्म है भाव मुझे इसे समझना पड़ेगा। रात धाँसिर ही रही है। असो धरत मीमा। तुम मुझसे कभी कुछ न पाओगे तुम्हारे महत्व तथा रवाय को मैं बिरुवात तक न भूलूँगी।"

धरत ने सफ़ाते हुए कहा—“पर तुम्हारे साथ तो मैं नहीं जा सकता सग्या !” सग्या बोली—‘फिर मैं जाऊँ किसके यहाँ हूँगी बीटेंगी कैसे ?’ धरत धकस्मात् न बोल सका पर सोचकर बोला—‘मुझे भाव समा करो सग्या मुझे जरा सोचने दो।’

—‘सोचने दूँ ?’ धरत जरा क्यों रुक सोच लो। शायद सोचने का समय धाँसिर ही मिले। इतने दिनों तक मैं भी सोचा करती थी कि रात। जब मैं तुमको अपनी तुलना में छोटा समझती थी उस समय मैं सोचती थी जब तुम्हारे सोच-विचार का समय आया है। धरत मैं जाती हूँ। कहकर वह चली गई। धरत उसी प्रकार निरपेक्ष बँध रहा।

दूसरे दिन सग्या और प्रियनाथ बुन्दावन या काशी नहीं जा रहे हैं—यह सुनकर धरत उनके घर पहुँचा। बोला—‘भाप जा रहे हैं और सग्या भी ?’ प्रियनाथ बोले—‘सग्या जानती नहीं वह कहाँ है ये तो पताई के लिए उधका मेरे साथ जाना जरूरी है।’

धरत धवाक होकर बोला—‘सग्या तुम भी जा रही हो ? मैं उस दिन अपनी बात स्पष्ट नहीं कर पाया था, पर मैंने निश्चय किया है कि मैं तुम्हारी बात पर ही राबी हो जाऊँगा।’ प्रियनाथ न समझकर केवल

देखने लगे। सन्ध्या बोली—“उस दिन मेरा भी चित्त स्थिर न था धरमजी पर धाव मेरा चित्त स्थिर हो गया है। मैं पिताजी के साथ यही बात जानने जा रही हूँ कि धौरत के लिए धानी करने के प्रस्ताव भी कोई काम है या नहीं? इसलिये धमा करें हमें देर हो रही है हम चले।”

धरम ने कहा—“एस दुःख के समय अपनी माँ को छोड़ चली?”

सन्ध्या बोली—“क्या कहे धरम नया धब तक माँ-बाप दोनों में हिस्सा था धब एक को छोड़ना ही पड़ेगा। माँ के लिए फिर भी कोई तरीका धायब निकसे। भोगों ने कहा है कि उनके लिए धायब प्रायश्चित्त है। हो तो धच्छी बात है। फिर तो उन्हें देखने-मुमन बासों की कमी न रहेगी पर पिताजी का सँभालने का भार भरे धतिरिक्त कोई नहीं ले सकता।” धरम को छोड़कर बह चमने लगी। रास्ते में धरम को मामूम हुआ कि भोग गोभोक की छावी का म्पीता लामर सौट रहे हैं।

पिता को भेकर सन्ध्या बब स्टेसन पहुँची तो उस समय गाड़ी धाने में कुछ देर थी। एक धौरत धुपचाप एक पेड़ के नीचे बैठी थी। सन्ध्या पहिधान मई यह जानबा थी। सन्ध्या ने पूछा कि बह कहाँ जा रही है तो जानबा कुछ बता न सकी धौर रात लगी। जानबा को टिकट सेत समय प्रियनाथ ने पूछा—“धाप कहाँ जायेंगी?” इसका उत्तर में जानबा ने पूछा—“धाप कहाँ जायेंगे”—“हम भोग बुन्दाबन जा रहे हैं। प्रियनाथ बोला। जानबा न धपना कुम धन पधाम रधमा देकर कहा—“भरे लिए भी बुन्दाबन का एष टिकट धरीद दें सन्ध्या तो चम ही रही है न? सिफ रास्त भर पहुँचा लीजिये।”

प्रिय कुछ देर धुर रहा फिर बोला—“धच्छा हम लार्पो के धाव चमो।”

×

×

×

एस दुस्तक में पहली इष्टम्य बात तो यह कि इसमें धरम बाबू देवदास-धरमरा को पूर्णता के साथ निमाने हैं। सन्ध्या धौर धरम में प्रेम है पर बह उतना स्पष्ट नहीं है जितना देवदास धौर पावती में है। बहूवे

ही वृत्त में हम देखते हैं कि प्रेम का यह उत्सुख समाज के पत्थर से बज जाता है सन्ध्या एक प्रकार से भ्रमण की अपमानित करके घर से निकाल देती है। सन्ध्या और भ्रमण में दबकास और पार्वती की तरह मिश्रण भी नहीं होता समाज का दुमोटा प्राचीर उनके भ्रमण बढ़ा रहता है। पहल यह दोबार सन्ध्या की ओर से है फिर जब सन्ध्या के पिता के व्रम की प्रसमियत पुन जाती है तो सन्ध्या इसे ठोड़ देती है बल्कि यह दोबार सन्ध्या की पीठ पर धरदरबम फिर जाती है, पर धब धरण की बारी घाती है उसकी ओर से दीवार बड़ी होती है। सन्ध्या की दीवार तो समझ में आती है कि किस बीज की बनी हुई थी यह जातिभेद की दीवार थी पर भ्रमण जब सन्ध्या से कहता है— 'मुझे सोचने दो ता चाफ समझ में नहीं आता कि वह किस सोच में पड़ता है। चायब उसकी तरफ से यह घायति है कि वह एक नारी की पोती और सो भी इस प्रकार उत्पन्न सन्ध्या से विवाह नहीं करता चाहता। इसमें सन्देह नहीं कि भ्रमण की घायति सन्ध्या की घायति से कहीं अधिक उचित तथा समीचीन है, कहा जाता है एक सामाजिक क्रान्तिकारी भी एक बोवली को पत्नी रूप में सने के पहने तीन बड़े साधेया। फिर भ्रमण कोई क्रान्तिकारी न था उस का क्रान्तिकारित्व केवल इतना ही था कि वह विसायत गया था और वहाँ से लौटकर अपने प्रायश्चित्त करने से इनकार किया था। भ्रमण सब कुछ जानत हुए भी दो-एक दिन सोच-विचार करने के बाद सन्ध्या से विवाह करने को तैयार हो जाता है पर सन्ध्या एक छाहीय की तरह कहती नजर आती है— 'मैं पिताजी के साथ यही बात जानन जा रही हूँ कि औरत के लिए सारी करने के असावा भी कोई काम है या नहीं ?'

सन्ध्या की यह बात बड़ी कदम है, पर यहाँ हम माचारण पाठक की तरह भावुकता में न बहकर यह पूछना चाहें कि क्या सन्ध्या सचमुच उसी प्रकार छाहीय बनने की इच्छा है जैसे वह बोसती है? वह तो ऐसे बात करती है जैसे उस पर बड़ा भारी जुल्म किया गया है पर क्या यह बात सच है? आगिर उम पर यह धरमाचार करनेवाला कौन है समाज यानी

उसका बहु पति जो बिबाह-मंडप के पीछे पर से उठ गया या मरुप ? बहु स्वयं जातिभेद को तब तक घटकर छाय समझती है जब तक उसके सामने यह बात बड़े भयानक तरीके से खुल नहीं जाती कि इसी जातिभेद के नियम के अनुसार न बहु ब्राह्मण है न जाई यहाँ तक कि बहु एक दोगल की सड़की मात्र है। अपने ही बिचारों के अनुसार बहु मीच से मीच है उसको कोई जाति नहीं है। अपने ही बिचारों के अनुसार इस बात के पुनः जान के बाद एक जाई सुकट भी उसके लिए उच्च कुल का बर या इसलिये सब बातें जानने के बाद परि ब्राह्मण घोर से भी कुसीन बर पीछे पर से उठ गया था मैं समझता हूँ इससे सग्या को गहीर की तरह मुँह बनाने का अधिकार न था। भरना तो बैचार्य ब्राह्मण ही था हाँ कुसीन ब्राह्मण से जब नीचे बर्जे का बरबर्ती ब्राह्मण था पर उसके बिबाह प्रस्ताव को तथा प्रेम को सग्या ने यह कहकर टुकर दिया था कि बाप घोर बिस्ती में बिबाह कैसा ? फिर यदि बहु बिबाह-मंडप में बैठी होती और बजाय यह खुलने के कि बहु दोगले की सड़की भी नहीं यह पुमठा कि जिससे उठनी पादी हो रहो है बहु कुसीन ब्राह्मण नहीं बल्कि उठना पिठा जाई की घोरत से पैदा था तो क्या सग्या उस बर से पादी करने की बजाय किसी भी ऐरे-जैरे ब्राह्मण से घारी करने को तैयार न हो जाती ? फिर जब यह व्यवहार उसके साथ हुआ तो बहु यहीद क्यों बननी है बड़-बड़कर दानिकता क्यों छाँटती है जैसे उस पर बड़ा मारी घत्याचार हुआ ? हमें तो रोम्पा रोसा की बहु बात याद आती है कि प्रत्येक घत्याचार पीड़ित एक घमकस घत्याचारी है। सग्या को यह कहने का कोई हक नहीं कि "मैं यह जानने जा रही हूँ कि घोरन के निणःपादी करने के घलाबा भी कोई काम है या नहीं ?" यह लिबपा की कोई प्रतिनिधि नहीं है। यदि सग्या में कोई बिधीयता है तो यही कि उसके तर्ज पर लोबनेबानी हजारीं लिबपा भारतवप में है उसी की तरह जाति का अधिकार रखने वाली उसी की तरह जातिभेद के पत्पर पर प्रेम को भी पटक देनेबानी भी है पर सजा बेबल उनी को निनी। यदि इसे महत्त्व कहा जा सके तो यही सग्या

है कि यदि गरीब बन्दे होगा चाहें तो एकाद मासके में अपनी बोड़ी बहुत उन्नति कर सकते हैं पर कई प्रकार से होने बाल जिस छोपक के कारण वे निरन्तर डूबे जा रहे हैं, उतनी धार धार बाबू न अपने उपन्यासों में कहीं संकेत नहीं किया। मध्यवित्त बन्धी की बेकारी की धार भी उतनी कृष्टि नहीं है उनके समसम सभी पात्र बनी नहीं है तो कम से कम उन्हें रोटी-दान की कोई फिक्र नहीं है। 'पत्नी-समाज' क रमण की तरह धारू बाबू क विचार सुधारवादी हैं बन्धी-युग्म समस्या तथा कर्म के प्रतिरिक्त किसी भी समस्या के विषय में वास्तिकायी विचार नहीं रखत।

बर्मा में रहते समय शरत्चन्द्र पहल-पहल साहित्य-क्षेत्र में प्रवर्तनीय हुए तब उनके पास विभिन्न पत्रिका-सम्पादकों के कहानी मांगते हुए पत्र आने रहे। पर वे कहानी लिखना उतना पसन्द नहीं करते थे इसका परिचय बार-बार उनके पत्रों से मिलता है। उद्दान ३ १ १३ के एक पत्र में लिखा— 'तुम्हारी पत्रिका के लिए ये लोग कहानियाँ लिखें तो मैं कबल निबन्ध लिखूँ। कहानी लिखना मुझे न तो अच्छा आता है और न लिखने में ही रस आता है।'

उन दिनों का कहानियाँ बँपला पत्रिकाओं में प्रकाशित हायी भी उतना न सम्पुष्ट नहीं थे। १० १० १३ को रण से एक पत्र में उन्होंने लिखा था— 'आजकल मासिक पत्रों में जो कहानियाँ प्रकाशित होती हैं उनमें स रपय में १४ आने आलोचना के योग्य ही नहीं हैं न तो वे कहानियाँ हैं न साहित्य स्वाधी और सजनी का निरा धपय्यवहार है और पाठकों पर धर्याचार है। धर की बार पत्रों में जो कहानियाँ हैं उनमें में एक भी अच्छी नहीं है। अधिकाँध अधाट्य हैं। किसी में न वस्तु है न भाव है कम वागादम्बर है। बटना और वीचोय की अर्धवस्ती कृष्टि है। बड़ी बेरया को बन्दे कपड़े पहनाकर सुबनी बनाकर लोगों को भ्रमाने की धाटा करते हुए चलने पर मन में जो विनृप्या सज्जा और कदना प्रपठी है इन पैदाओं की कृष्णी सिलत की बट्टा पर वसी तरह की भावना

का उद्वेग होता है। यह और चाहे कुछ भी हो पर स्वस्थ विमकुम ही नहीं है।”

शरत्चन्द्र ने मागसपुर में रहते समय कुछ कहानियाँ प्रादि लिखी थीं जिन्हें लोग बिना उमसे पूछे छाप लेते थे। इस पर वे बहुत नाराज होते रहे। बात यों ही कि जब वे एक लच्छक के रूप में प्रसिद्ध हुए तो होकर मभी कि कौन पत्र उनकी खींचें प्रथिक् छापता है। पर शरत्चन्द्र अपनी अप रिपबन्ध रचनाएँ छपाने पर बहुत नाराज होते रहे। उन्होंने १९१३ में एक पत्र लिखा— जब की बार साहित्य में मरने नाम से क्या कूड़ा-करकट छाप दिया गया। क्या वह मेरी रचना है मुझे तो क्या भी याद नहीं पड़ती। यदि हो भी तो उसे छपाने से क्या मतसज ? लोग बचपन में बहुत कुछ लिखते हैं पर उन्हें प्रकाशित चाहे ही करना चाहिए। आपने बोम्ब (बोम्ब) नामक कहानी छापकर मुझे जैसे मगिजत किया है। सुरेशचन्द्र समाजपति न भी इसी प्रकार इसे छापकर मुझे सज्जा दी है।

वे स्वयं चित्रकार और कहानीकार थे पर न अपनी कहानियों या उपन्यासों में चित्रण न बहुत बिकर थे। १८-१९ को उन्होंने प्रत्यन्त मार्मिक शब्दों में प्रमथनाय मद्रासाय का लिता—“क्या तुम चित्र देतेबाम हा ? यह तो भयकर बात है। बुझाई है मेरी कहानी में चित्र चित्र न दगा। घरे बाप रे यह भङ्गवेरी का पेड़ और यह मृत्पु-सैया तब तो मैं सज्जा न मार मर जाऊँगा। इसके अलावा मैं आशा करता हूँ कि मेरी कहानी पर चित्र न बनाया जाय तो भी लोग उम पढ़ग।

इसी प्रसंग पर उन्होंने एक दूसरे पत्र में लिखा— ‘तुम मरी उम तीन कहानियों का (सिन्दुर छेदे रामेर मुमति और पथ निर्वेत्त) पुस्तकाकार छाप्यो ता मुझे आपति नहीं है। हाँ चित्रगा एसा मानूम हाता है। तुम बंभ चाहा छानो पर चित्र हविज न देना यह मेरा अनुगोप है। कापी राइट बेच दो तो बेचो न बेचना चाहा तो न बेचो मैंने तुम पर सारा भार द दिया। इस सम्बन्ध में मुमछ आन कट पूछा भी नहीं। पर प्राशिवन

के महीने में 'भारतवर्ष' में जो कहानी निकलेयी उसे लेकर चार कहा
नियाँ एक साथ छपें तो अच्छा रहे।"

पधेर बाबी

धनुष अपने परिवार का सबसे छोटा लड़का है। उसके धीरे सब माई
अच्छी नौकरियों में हैं और धार्मिक हैं पर वह अपनी माँ की तरह यो-
शाहजब में नक्ति रखने वाला है। वह धिक्का रहता है तथा वह एकारपी
पूणिमा का व्रत भी रखता है पूजा-भाठ भी करता है। उसने शुरू से लेकर
घाखीर तक कामेज की सब परीक्षाएँ योम्यता से पास की हैं। उसकी
माता करुणामयी घर में अपने धर्म्य पुत्रों के साथ रहती है पर वह स्वयं
पाक करके खाती है। वह अपनी दूसरी पत्नीहमों के धार्मिक रण-रंग की
पसन्द नहीं करती थी और उसने निश्चय लिया था कि धनुष की सारी
किसी निष्ठावती कन्या से करेगी।

धनुष धनी परीक्षा के बाद बहुत दिनों से बेकार था। एकाएक उसने
एक दिन माँ से कहा—'माँ मुझे एक अच्छी-सी नौकरी मिली है। बात
यह थी कि उसके कामेज के प्रिन्सिपल साहब ने ही इस नौकरी का बन्दो
बस्त कर दिया था। बोबा कम्पनी ने बर्मा के रंगून शहर में एक नया
दफ्तर खोला था वे चाहते थे कि किसी विद्वान बुद्धिमान तथा सच्चरित्र
मुबक को वहाँ का भार लेकर भेजा जाय। धनुष ने कहा—'मर्याद के
किराये के प्रतिरिक्त चार-ती रुपये तनखाह खेगी और कौचिना करने पर
भी यदि छ महीने के अन्दर कम्पनी का टाट न उलटवा सकूँ तो तनखाह
और भी दो बी बढ़ेगी। यह कहकर वह हँसने लगा।

किन्तु बर्मा का नाम सुनकर माँ का चेहरा फट पड़ गया। वह
निश्चयक कंठ से बोली—'तू क्या पागल हो गया धनु क्या उस देश में
कोई कमी जाता है? मुना है वहाँ जातपाठ धाधार-विचार कुछ नहीं
है। भसा में तुम्ह वहाँ बिज नकती है? ऐसे रुपये से तुम्हें कोई मतलब
वही।

घपूब न कहा—'लप्यो की डकरत सुम्हें मने ही न हो मुझे है तुम्हारी घाजा से मैं निरपरमा होकर भी रह सकता हूँ पर सारी बिलगी में भी ऐसा घबसर क्या फिर घायेगा ? बोया कम्पनी का तो कुछ घटकेगा नहीं उसको संकड़ों ब्यक्ति मिस जायेंगे ।

माँ फिर भी राजी नहीं हुई बोसी—'मैंने तो मुना है वह एकदम म्मच्छ देन है ? जब माँ का कुछ भी नहीं बला तो बासी—'घायामी बीवाय में मैंने तुम्हारी घादी का निरबय किया है । घपूरब बोसा—'तुम एकदम निरबय कर चुकी हो घच्छी बात है । जमी तुम बुना भेजोगी सभी घाकर तुम्हारी घाजा का पालन कर पाऊँगा ।

करनामयी हारकर घपने बड़े लड़के बिनोदकुमार के पास गई कि घायर उभर से कुछ रोक-घाम हो पर वहाँ घौर भी सूया जबाब मिसा ।

घन्त में माँ न घर के पुरान नीकर तिबारी के घाय घपूब को रबाना किया । करनामयी ने तिबारी को इसलिये चुना कि वह छूत-छाठ के मामल में बहुत बट्टर था इमी माने वह करनामयी का घडाभाजन हो चुका था । उनको पूरा बिराघाम था कि गेम रगोइया की देन देन में रहने पर घपूरब म्मच्छ देन में रहकर भी घर्म से ब्युन नहीं होया । जहाज पर पुड़ा बबाने हुए, मग्ग घाठ हुए तथा हने नारियल का पानी पीत हुए घर्ममृत हासत में ये दोनों रंगून के घाट पर पड़ूब । वहाँ बोया कम्पनी के दो दरवान तथा एक मग्गी मुग्गी न जमबा स्वायत किया । उनसे लिये तीम रपय भाड़े पर एक मबान लिया गया था । उनको वही ले जाया गया । मबान का बेहरा देनकर घपूब मग्गाटे में घा गया । न ती जममें कोई घी घी न कोई बंघ था । एण पतनी-सी लकड़ी की मीड़ी ऊपर मई थी । इम मीड़ी से मबान के छ बिराघदार नाम सते हैं । यह किमी को निबी नहीं बी । घयर इमन वहीं बिभी का घैर घिमलता तो वह पहन राजा के पन्धर जड़े हुए राजपय पर बिरता फिर जहाँ के घस्पताल में घाना पड़ता घाये जो तृतीय गति हो सचठी है उमें न सीबना

ही घण्टा है।

दरबान ने बाहिनी और के बोमजिसे का एक दरवाजा खोलकर कहा—'साहब यह आपका मकान है। इसी के सामनेवाले बाईं ओर के बन्द किनारों को खोलकर अपूर्व ने पूछा—'इसमें कौन रहता है ?

दरबान ने कहा—'सुना है इसमें एक बीबी साहब रहते हैं। अपूर्व न जब पूछा कि सिर के ऊपर तिमजिसे पर कौन रहता है ? तो उसने कहा—'कोई काम साहब रहते हैं, धायद कोई मद्रासी हागे। अपूर्व फिर एक बार सम्झने में हो गया। अपने चारों तरफ के पड़ोसियों का यह परिपश्य पाकर उसने गहरी साँस ली। जिधर बेसो उधर म्नेच्छ ही म्नेच्छ ब। यह अपने कमरे में चुना तो उसका विस और भी बैठ गया।

ठिकारी को रसोई करते छोड़कर अपूर्व तारखर के लिए रवाना हो गया। पकाने के सब सामान साथ ही में ले। करनामयी ने सभी चीजें बाड़ी-मोड़ी गठिया दी थीं। मकान के बाहर निकलते ही अपूर्व को पता चल गया कि यह देही तथा बिसायती मेमों और साहबों का मुहस्ता है। उस दिन ईसाइयों का कोई त्योहार या प्रत्येक मकान पर उसका कोई न कोई चिह्न था। अपूर्व ने जब दरबान से पूछा कि रंपून में बहुत-से बंगाली भी तो रहते हैं उनके मुहस्थे में मकान न चुमकर यह मुहस्ता क्यों चुना गया तो इसके उत्तर में उसने कहा—'घण्टसर लोग इसी बनी को ज्यादा पसन्द करते हैं। इस बात पर क्या कहा जाता। अपूर्व तारखर पहुँचा तो मामूम हुआ कि मद्रासी तारखाबू टिफिन करने गय हैं। पंटा भर बाद जब वे धाये ता पड़ी की तरफ बेगबर बान—'घाय छुट्टी का दिन है दो बजे के बाद दफतर बन्द हो चुका है इस समय दो बजकर पन्त्रह मिनट हो चुका है।

अपूर्व ने बिसपूस भुंमसाकर कहा—'यह मुहदारा दाप है मरा नहीं। मैं तो यही एक घंटे से इटा हूँ। "म पर उसने अपूर्व के मंह की ओर ताककर बिना किसी द्विचक्रिवाहट के कहा—'महीं मैं तो मिर्क दस मिनट के पिय गया था। अपूर्व ने दस पर उसके माथ तक किया भगड़ा दिया

यहाँ तक कि रिपोर्ट करने का डर दिखाया पर भसर कुछ भी नहीं। वह निबिहार जिल्ल से अपने कामकाज को दुरुस्त करने लगा और समय गप्ट करना निष्कम समझकर अपूर्व बड़े डाकघर का रबाना हो गया और वहाँ से किसी प्रकार माँ का तार भेज सका। माँ न बार-बार बाबा करवा लिया था इस कारण यह तार उसी दिन भेजना बहरी था।

जब वह पका-मोटा मस्नाया हुआ अपने किराये के मकान पर पहुँचा तो सीढ़ी पर पैर रखते ही उसने देखा कि तिबारी एक बड़ी साठी बार बार टोंक रहा है और बिना दके हुए बरुटा जा रहा है और उसका प्रनिपत्ती घासी बदन पड़कून डाटे हुए तिमंत्रिमे के कोठे से अपने खुले बरबाज के सम्मूय लड़ा रहकर हिन्दी और अंग्रेजी में उसका जवाब दे रहा है और एक मोड़े का चाकुक उठाकर बीच-बीच में हवा में म्ठकारता जा रहा है। तिबारी उसका नीच कुसा रहा है और वह तिबारी का ऊपर कुसा रहा है। सौजन्य का यह भावान-मदान जिस भाषा में हुआ है उसको न कहना ही अच्छा है।

अपूरुष की समझ में नहीं आया कि इतना ही देर के अन्दर तिबारी न ऊपर के साहब से इतनी पतिव्रता कैसे करती। उसको देखकर दोनों पक्षों में नई जान-भी आ गई। तिबारी ने उसे देखकर साठी और भी जोर न टोकर एक मधुर सम्भाषण किया साहब ने उसका जबाब देन हुए जारों से चाकुक फकारा। अपूर्व बीच में पड़कर तिबारी को कमरे के अन्दर घसीट न गया तो कमरे के अन्दर जो हास हुआ था उस दिवाज हुए तिबारी न कहा—'यह देखिय उम हगमजाद साहूय न क्या करे किया है। सबमुप अपूर्व ने इगता सिचड़ी की हीदा से अभी तक मसान की गुनाहू निबम रही है पर उमके ऊपर-नीच घाम-गाम पानी बह रहा है। अभी के बिछे हुए साफ बिस्तर पर मसा जाना पानी पड़ा है। कुर्सी पर पानी मज पर पानी फिताहें भीगी हुई अजीब हाजत थी। उसके कीमतो नये मूट पर नई बाग मये है।

अपूर्व ने पूछा—'यह सब बना हुआ? तिबारी ने उँगली से ऊपर

नहीं-नहीं मेम साहब वह सब तुम ले जाओ । बाबू का चुके हैं, हम लोप वह सब नहीं छूटे । —अपूर्व ने समझ लिया यह वही ईसाई मड़की होगी । तिबारी फिर कह रहा था—‘किसने कहा हम लोगों ने नहीं लाया ? लाया है वह सब तुम सं जाओ, बाबू यदि मुर्दे के लो बहुत पुस्सा करेये । अपूर्व घाने बड़ नया धीर तिबारी से बोला—‘उमको सहस्रों धम्यबाद पर सचमुच हम साम का चुके हैं । —मड़की एक मुहूर्त तक मौन रही फिर बोली—‘हां बकर, पर खाना घम्पी तरह न हुषा होगा । धीर यह सब लो बाजार के फल हैं, इसमें क्या हर्ज है । —अपूर्व कुछ विमल गया उसने सबक कंठ से कहा—‘नहीं कोई बोप नहीं है । फिर तिबारी की धीर मुँह करके कहा—‘इसे जाने में क्या बोप है महाराज ? —पर तिबारी महाराज इस बात से कुछ नहीं हुषा वह बोला—‘बाजार का फल है लो बाजार से माने से ही बतगा फिर घाने रात को इनकी क्या बकरत है ? —फिर उसने ईसाइयत की तरफ रख करके कहा—‘मेम साहब वह सब तुम ले जाओ हमें नहीं चाहिए । मड़की बोली हैरतक चुपचाप बसी रही फिर हाथ बढ़ाकर फलों की टोकरी उठाकर धीरे-धीरे बसी गई । जब वह बसी गई लो अपूर्व ने कुछ दबी हुई रगई के साथ कहा—‘छाते चाहे न प्यते उनको ल लो सबते ही से । बाबू को चाहे उन्हें चुपचाप फेंक ही देते । तिबारी ने कहा—‘इससे क्या फावदा था ? इस पर अपूर्व ने कहा—‘फायदा ? मुर्दें बेबार कहीं का धीर वह वहाँ से जाता गया ।

अपूर्व की यह अम्मीर की कि जब साहब का नया उतर जायगा तब वह धकस्य ही माथी मापने चायेगा । फिर वह मुझीस धीरत उसे धकस्य ही मजबूर करेगी । इस बातें वह उस मड़की से कुछ एकालमता का अनुभव कर रहा था पर तबेच हुषा दिन भी बढ़ नया लेकिन माथी मापने का कहीं नाम नहीं था । बड़ी बेर में साहब घाने । वे तिबारी से बोले—‘ए, तुम्हारा साहब बिबर ? अपूर्व दूर से मुन रहा था उसने मन ही मन कहा—‘परचावाप करने वाले का यह कौन-सा लहवा है ? अपूर्व धीरे-धीरे

पास जाकर बड़ा हो गया। साहब ने उसको तिर से पीर तक देखकर कहा—'तुम घंघरी आगत हो? —उसने कहा—'हाँ जागता हूँ। साहब बोले—'मेरे सो जान के बाव कल तुम ऊपर गय न? अपूर्व ने कहा—'हाँ। साहब ने कहा—'टीक तुमने माटी ठोकी थी? अनधिकार प्रवेग के लिए बप्टा की थी? —अपूर्व के घाघय का ठिकाना नहीं रहा। साहब ने कहा—'पमर कहीं हमार बिबाह गुम रहते ता तुम घायल हमारी बीबी या सड़की पर घाघनन करत! तमी जब तक हम जमत रह तुम नहीं घाये? अपूर्व ने पूछा—'तुम तो सो रहे थ तुमने मह सब कसे जागा? साहब ने कहा—'सब मीने अपनी सड़की छ मृना। इस बात से अपूर्व का बड़ा बरफा पहुँचा। साहब ने कहा—'खर मैं पगर जागता होगा तुम्हें मात मारकर रास्त में डाल देता घीर तुम्हारे मुँह में एक भी बीत बिना ठोके नहीं छोड़ता पर जब उन मीर को मीने आ ही दिया तब मुझ घब पुत्तिम की शरण सेनी पड़ेगी ओ कुछ भी इम्माफ मिस पाय। हम जा रह हैं तुम हमके लिए तैयार रहा। अपूर्व ने तिर हिमाकर कहा—'घबटा—पर उनका बहुरा उतर गया। साहब ने सड़की बा हाय पकड़कर कहा—'आघा' घीर उतरले-उतरन कहा—'बाबई! घरसित स्त्री के बरक पर हाय डामने की बप्टा मैं तुम्हें ऐना सबक मिबाजगा कि बनी भूमोय नहीं।

साहब ता जल गय पर तिबारी का बुरा हास हुआ। उसने कहा—'उमी बरक ता मीने कहा या जा कुछ हुआ सो हुआ घब उनको घीर देखन में फायदा कहा है। मे साहब-मेम हैं न! अपूर्व ने कहा—'साहब है ता क्या? तिबारी ने कहा—'पुत्तिम में गय न? अपूर्व ने कहा—'गय तो क्या? तिबारी ने घबडाकर कहा—'बड़े बाबू को एक तार मेज रें? अपूर्व ने इस बात को स्वीकार नहीं किया।

गान समय अपूर्व ने कहा—'पुत्तिम में गय तो क्या घाघिर साहब मरों को कुछ पबारी भी लगती कि रीमे ही? तुम्हारा बोई गवाह है? तिबारी ने कहा—'साहब मेरों बो बाई पबारी भी लपटी है? उनका

कहना ही काय्ये है। अपूर्व न कहा—'देखा उस लड़की को कौसी मीमी बिस्ती बनकर फल देने घाई थी और ऊपर जाकर ही कितनी झूठी शिकायतें कर जातीं। तिवारी ने कहा—'ताज्जुब क्या है ईसाहन जो है। अपूर्व को फौरन स्मरण हो आया कि इनको लाघासाध का कोई मान नहीं फिर सामाजिक हिताहित का क्या हो। उसने कहा—'अमाने दुष्ट! इनसे अससी साहब कितनी गुना करते हैं एक मेज पर बैठकर खाना नहीं खाते। किन्तु तिवारी इतना बबकासा गुना या कि जब घाड़ में बैठकर गानियाँ देने की हिम्मत भी नहीं रह गई थी न उसमें यह रिसवस्ती ही थी कि अन्नानी साहब उन्हें क्या समझते हैं।

अपूर्व ला-मीकर इतर मया। वहाँ रामदास तलवरकर नामक कम्पनी के एक कमचारी के साथ उसका परिचय हुआ। वे पायजामा तथा मम्बा फोट पहने हुए थे माये पर लाल चन्दन का टीका था। पंखेजी का उच्चारण सुन्दर था पर बहु बोलता हिन्दी ही था। दोनों बात कर रहे थे तब तक जब मीनेजर स्वयं आ गये। भारती अम्बदा या अपूर्व पर पूरा भरोसा करने के लिए तैयार था। वे काम समझकर चले गये। तलवर कर राह में नहीं रहते थे कोई बस मील पश्चिम इन्सिग में अपनी बीबी तथा लम्बी-सी लड़की के साथ रहते थे।

जिस समय अपूर्व ने अपने मकान पर तिवारी को सही-ससामत पाया तो उसके दिस पर से जैसे एक पत्थर-सा उतर गया। वहाँ तिवारी ने यह शिकायत की कि ऊपर का साहब एक जमह पर बाड़े होकर बराबर गुना पीटता रहा। अपूर्व के साथ तलवरकर आज टहलते-टहलते आ गया था अपूर्व ने उसको अपनी परेशानी का सारा हास कह सुनाया। उठी समय वह लड़की आ रही थी। रामदास ने उसका रास्ता रोककर कहा—'मुझे एक भिगत के लिए माफ़ करें मैं इन बाबू साहब का भिगत हूँ इनके प्रति व्यर्थ का उपद्रव करने के लिए आपको बुधित होना चाहिये। लड़की ने शोक में कहा—'इच्छा ही तो यह बाँटें आप पिताजी से कह सकते हैं। रामदास ने कहा—'आपके पिता पर पर हैं? लड़की ने

कहा—'नहीं। रामदास बोला—'तो मैं अब इन्तजार नहीं कर सकता मेरी घोर स उनको कहिएगा कि उनका उपद्रव के कारण मेरे मित्र का यहाँ रहना प्राप्त हो रहा है।—सकृती ने पहले की तरह कड़ब लहब म कहा—'ता ये जाने न जायें। रामदास जरा हँसा फिर बोला—'इससे कुछ भी भ्रमा नहीं होया क्योंकि यदि गये तो मैं उनकी जगह पर घा जाऊँगा। मेरा नाम रामदास तसकरकर है मैं महाराष्ट्री ब्राह्मण हूँ। तसवार दर का पुरु धर्म है। पुत्र इबनिङ्ग।

अपूर्व रामदास को स्थान तक पहुँचाकर सीट धाया तो उमने सोचा कि रास्ते में एक सकृती के बेंच पर बटा जाम पर ज्यों ही वह बैठ पीछे से किसी न जोर का धक्का दिया और वह जमीन पर मुँह के बस गिर पड़ा। जब वह किसी प्रकार सँभलकर उठा तो उमने देखा चारों तरफ एंम्सो-इडियन छोदरे गड़े हँस रहे हैं किसी क मुँह में पाइप है तो किसी के मुँह में सिपरट। बेंच पर कुछ सिपा या उसकी घोर ध्यान बिलात हुए उनमें से एक ने कहा—'देवता नहीं साम यह साहब सोम के वास्त है।—बोध शाम तथा लम्बा से अपूर्व बिमकुल बैकानू हो रहा था वह शायद एक्दम हिताहित मुमाकर इन झुड़ पर बुर पड़ता पर कुछ हिन्दुस्तानियों न जो बही मौजूद थे उमे पकड़ लिया। वह इन लोगों के हाथ से छुट कारा पान के लिए छटपटान लगा तो इन पर एक ने उसे धकिया कर कहा—'पर बंमाली बाबू आप हैं किम होना में ? अगर आपने साहबों का बदन छुना कि गय जलगाया।—बही से अपूर्व स्टेजन मास्टर के पाम गिकायत सकर पहुँचा पर बही बोर्ड मुनबाई नहीं हुई। उमने उमटा यह बहा—'तुम दूसरों के बेंच पर बैठ कैसे गये ?—क्या करता अपद्रव दिन ममोमकर पर सीट धाया। रात का उमने गाना नहीं गाया। बिस्तुरे पर पड़े-पड़े वह सोचता रहा बही इन हिन्दुस्तानी मौजूद क किसी ने उनकी ग्नाति में हिस्सा नहीं लिया। बस्कि उन सोमों न अपमान की माना बड़ा ही दी। देवबामियों के बिबद्ध देवबामियों का यह रग ? ऐसा क्यों हुआ ? यह कैसे सम्भव हुआ ? वह यही सोचता रहा।

बो-तीन दिन तक कोई नया हुल नहीं लिखा तो धपुर्ब ने समझ कि अब मामला मुलम्ह गया। एक दिन धपुर्ब बस्तर से सौटा तो तिबारी ने रोते हुए कुछ कामवात उसके हाव में दिये। ये घदालत के सम्मन के आगज थे। रोते हुए तिबारी ने कहा—‘बाबू, मैं ता कधी घदालत में नहीं गया। धपुर्ब ने कहा—‘तो मैं ही कब गया हूँ? ऐसे हर बात में रोना ही या ता बिदेस में क्यों भाव?’

जो कुछ भी हो यवासमय घदालत में भुकरया हुआ तिबारी का कुछ नहीं हुआ पर धपुर्ब को बीस रुपये का जुर्माना हुआ। रामदास भी घदालत में था। धपुर्ब को यह जुर्माना बहुत अखरा उसने कहा—‘बीस जुर्माना हुआ रामदास क्या किया जाय? अपील? क्यों?’ रामदास ने कहा—‘नहीं बीस रुपये के बदले दो हजार रुपये का खर्च उठाया जायया नहीं कभी नहीं। फिर भी धपुर्ब नहीं माल रहा था, एक दोनों टहलने बने गये। रामदास ने कहा—‘भाप बदनामी की बात कह रहे थे सो बदनामी क्या? यह सनी जानते हैं कि जोसेफ के साम हासदार की लड़ाई होने पर संवेजों की घदालत में क्या होता है। रहा बेकनूर क्या? इसी प्रकार बेकनूर होते हुए भी मैंने दो साल की अजा काटी और बेंत खाव— यह कहकर उसने कहा ‘मरि मैं पीठ पर से कपड़ा हटा सकता तो भाप अभी हाग बैच सेते। रामदास ने फिर भी पूछी कहानी नहीं कही। जब धपुर्ब घर पहुँचा तो देखा कि मुकरया हो जाने पर भी तिबारी अभी तक जैसे बरा हुआ है। उसने कहा—‘बाबू जल्दी में दो नोट आप कार्या पर डाल यव थे। धपुर्ब को बड़ा आश्चर्य हुआ पर ऐसा होना कोई असम्भव नहीं है, यह समझकर उसने उन नोटों को बिच में डाल लिया।

फिर जी तिबारी रोज यही कहता रहा कि यह नफान छोड़ दिया जाय। मुकरमे के हने भर बार एक दिन धपुर्ब को तिबारी से पता लगा कि अंगर के साहब टाँव तोड़कर प्रस्पताल में पहुँचे हैं। मकानवाला भाड़ा माँगन भाया था उसने मड़ गया और लीड़ी पर से फिर पड़ा।

एक दिन राम को धपुर्ब घर आया तो अपने किबाड़ बग पाये।

बात यह है कि तिबारी को अपने जिन का एक धादमी मिला गया था वह उसी के साथ तमाचै में गया था। पाकट में चाभी निकाली तो वह नहीं लगी। यह तो कोई नया तामा था। वह दो मिनट तक इसी उधैरबुन में पड़ा था कि क्या करे, इसमें मैं ऊपर की उस लड़की ने फिर निवास कर कहा—'छरिए, मैं लोसती हूँ।' धपुब को बड़ा आश्चर्य हुआ कि यह चाभी उसके पास कैसे पहुँची। वह लड़की का पहुँची और उसने चाभी लोम ली। वह बोली—'मेरी माँ बड़ी दरपोक है वह तबन मुझमें सड़ रही है कि कहीं पापन मेरा एतबार न निमा तो मुझे खोरी के जुम में जेल जाना पड़ेगा। मरिज मुझको यह डर बनई नहीं है।' धपुब ने पूछा कि माममा क्या है? लड़की ने कहा कि भीतर जाकर देखिए। भीतर जाकर देखा कि कमरे का सारा सामान घस्तभ्यस्त पड़ा था। धपुब ने पूछा कि यह कैसे हुआ। तो मानूम हुआ कि तिबारी के जाने के बाद कमरे में एक प्रकार का मन्हेहनक इन्ध निजमता मुनकर लड़की ने ऊपर के छेद से देखा कि खोर खोप बरस ठोड रहे थे। वह खोर में बिम्साई। इस पर खोर भाग गये। तब उसने कमरे में अपना तामा सफा किया और वहीं खोर फिर से लौट न घाएँ इमानिए पहल दे रही है। उस लड़की का नाम भारतीय था। वह धपुब की इजाजत से कमरे में बानिभ हुई। फिर दोनों मिल-मिलाकर देखने लगे कि क्या-क्या खोरी हो गया। मानूम हुआ कि कुछ खोरे गईं जरूर हैं मरिज घबिह नहीं। अब रपना का हिमाक होने लगा तो धपुब को यह पत्रा नहीं था कि उसके कमरे में जिनन ग्यय थे। तब भारतीय ने कहा कि पर से जिनने ग्यय मबर क्ये थे उसका हिमाक किया जाय। तबनुमार धपुब निकाने गया। इसी शौरत वह बीन ग्ये जुमलि या पिना गया। इस पर भागती बोली—'नहीं उन बीन रपनों को मैं निकाने नहीं बुँदी। यह जुमलि तो घन्यापजुन था मैं इसे न पटाऊँगी।—इस पर धपुब ने ताग्जुब करते हुए कहा—'जुमलि घन्याप पूर्ण हो सकता है पर मैंने रपने दिने यह तो मरि नहीं है। भारतीय ने इस र फिर कहा—'वह ग्ये घापने दिने क्यों मैं उन ग्ययों का नहीं

गिरनी बो सी घस्सी बपये बोरी हा यये । जाते समय भारती न कहा—
‘मामले को पुलिस में न बीजिए, पुलिस का तजर्बा तो आपको हो चुका ।
मैं आपको एसा कभी भी नहीं करने दूंगी । कानून तो उस दिन भी था
जिस दिन आपने कुर्माना दिया था । घपूर्ब ने कहा—‘जोय यदि भूठ
बामें मुकबमा बनाई तो इसमें वामून का क्या बाप है ?

इस प्रकार चारी को दबा देने की सहाह घपूर्ब को घच्छी नहीं लगी ।
भारती की बिना मांगी सहायता भी उसे घब घच्छी नहीं लगी और उसके
मन में कुछ अज्ञानित घट्टा की घंका हुई । यह सभी घायब अनिनय है ।
घपूर्ब ने तड़ से कह दिया—‘भार को हम उसाह नहीं दे सकत पुलिस
का खबर करनी ही पड़ेगी । भारती बरकर बोसी—‘यह क्या बाउ है ।
चोर भी नहीं पकडा जायता खय भी नहीं सौज्ये बीच में मैं लीची-घीची
फिरैमी । मैंने देला ताता सयाया फिर घाकर सब चीजों को बंग से
रखा मैं तो कहीं की न रहूंगी । घपूर्ब ने कहा—‘इसमें क्या है जो कुछ
जैसा हुपा साफ-साफ कह बीजियेया । भारती ने ब्याकुल होकर कहा—
‘कहने से क्या होता है ? घभी घभी उस दिन वह भयडा हुपा बातचीत
बन्द एकाएक आपक लिए मेरी महकबत उमड़ पड़ी यह पुलिस क्या
एतबार करने लगी ।’ घपूर्ब के मन का सभेह घोर भी बुड़ हो गया । उसने
कहा—‘लेकिन मैं चोर को बिना सजा रिनाये न छोडूंगा । उसके मुंह की
घोर हठबुडि की तरह टाकती हुई भारती बोसी—‘घाप क्या कर रहे हैं
घपूर्ब बाबू ? तितानी घच्छ घादमी नहीं है उन्होंने घकारण ही घापके
साथ घग्माय किया मैंने उनका साथ दिया यह भी माना पर इसी कारण
बचत तोड़कर बोरी करवेंगी ? इन बदनामी के बाद मैं भी नहीं सकती’—
इतना कहकर वह घापी की तरह निकल गई, उसके होठ फड़क रहे थे ।
घपूर्ब बाने में रिपोर्न करन के लिए चल पडा । तितानी की तरह
उसको घुब बिरवास तो नहीं था कि भारतो ने ही बोरी की है पर भारती
के मधुमुठ चरिब से उसको घोर सभेह हो रहा था । घाल में
बुमने ही जा रहा था कि इनने में निमाई बाबू से मेट हो गई । ये महा-

मय पुस्तिस में काम करत थे । प्रपूर्व के पिता न इन्हें मौकरी दिमाई थी । इस माते निमाई प्रपूर्व के पिता को नैया कहता था और प्रपूर्व प्राणि उमको निमाई बाबा कहत थ । बावपीठ से मापूम हुआ कि वे किसी काष्ठिकारी इस की प्रोज में बर्मा प्राये हैं । इस समय अहाब घाट पर आ रह थ । सम्पनापी नामक एक मयकर काष्ठिकारी के प्राणे की खबर थी । प्रपूर्व का इतना कीतूहस हुआ कि वह भी उनके साथ हो सिपा । निमाई बाबू ने प्रापति नहीं की । बन्दरगाह पर भीड़ थी । प्रपूर्व ने सोचा— ऊपर-भीधे बल में स्वय में इतने लोग पड़े हैं, किसी के हृदय में कोई दांवा नहीं है, केवल त्रिमन प्रपने तरय हृदय का सारा मुग साठ स्वाय तथा सब प्राणापों का बिमजन क्रिया है, उमी के लिए जेल तथा फांसी का पय निमाई बाबू के रूप में यहाँ गड़ा है । निमाई बाबू अपने दमबस महित ऐसी अगह गड़े हुए, त्रिमने कि हरक प्राणे-जाने बाने को वे ध्यान न देग मछें । प्रपूर्व वहाँ एक निरुबाग बुठ की तरह गड़े होकर मन ही मन कहने लगा प्रभी तुम्हारे हाथों न हृपकड़ियां डाली जायेंगी, तमापे के मूंग सोय तुम्हारे प्रपमान को प्रांग घोसकर देखेंगे व जान भी नहीं पायेंगे कि उन्ही के लिए तुमन प्रपना सबसब बड़ा दिया है । × × / त्रिम बिस्मून भूतकास न तुम्हारे ही सिण पहती खजीर बनाई गई थी तथा कारामार का निर्माज तुमका ध्यान न रखकर हुआ था यही तो तुम्हारा मोरब है । कोई तुम्हारी प्रबजा नहीं कर मचना, यह बिपुस मेना तथा पहरा तुम्हारे ही सिण है । कुग का बिपुस बाबू तुम ही उठा मकन थ । तमी भावान न यह मारी बाभा तुम पर दास दिया है । इ मुक्तिपथ के प्रप्रभूत पराधीन देग के गत्रबिडोली तुम्हें मंभड़ों ममस्कार हैं । निमाई बाबू न एबाएक घाटर कहा— त्रिम बाग का डर था यही होकर रहा बिटिया प्राग गई । प्रपूर्व न पूछा— कैंने ? निमाई न कहा— 'प्रमर यही जानता तो भाय कैंन जाता । न मापूम त्रिमकी भाया बोलता हुआ त्रिम भेप में निरुन तथा ।

बुठ घाहमी फिर भी अन्ध में गिरानार कर त्रिये मय थे । इव

मे से एक के सिवा सभी बीच-बड़ाल के बाहर छोड़ दिये गये । घाबिरी व्यक्ति को निर्माई बाबू के सामने हाजिर किया गया । प्रदुभत व्यक्ति था । यह घाबमी खाँसते-खाँसते थाया । उम्र तीस-बत्तीस से अधिक नहीं होनी पर जितना ही बुबसा था उतना ही कमबोर था । मामूम नहीं होता था कि जब भायु की कोई अधिक मिवाद बाकी है । भीतर कोई बुरारोम्य छप है । फिर भी उस झीन शरीर की बोगों घाँवों की दृष्टि प्रदुभत थी । बह माँस लम्बी थी कि योल कुछ पठा नहीं बसता था । गहरे टालाव की तरह उसने फिर भी कुछ था बघ । उसके कपड़ों की घोर वेसकर हुईसी घाटी थी । सामने बड़े-बड़े बाल से पीछे की घोर के बाल छोटे करक लँटे हुए थे । बीच में माँप कड़ी हुई थी बाल ठेक से पूब तर थे । नींदू के ठस की दू से कमरा महक रहा था बबन पर इन्द्रधनुषी रंग के बापानी रेघम का बुड़ीबार कुर्ता था उसके बुक-पाकेट पर बाप का बेहूत बना हुआ एक कमास का कुछ हिस्ता दिखाई दे रहा था । प्रपूर्व ने इस घाबमी घापमी को जब रखा तो उसने कहा—'बाबा जी यह व्यक्ति हँसब बहु नहीं है जिसकी घापकी ठलाघ है । उबका नाम पूछा गया तो मामूम हुआ पिररीघ महापात्र है । बापाठमायी कैने पर पाकेट से एक सोहे का कम्पास एक लकड़ी का स्केल कुछ बीड़ियाँ एक बिपा सलाई तथा एक गजि की चिमम निकली । पूछने पर घाबमी ने कहा—'बहु माँका नहीं पीठा पर यह चिमम कहीं मिस मयो इसमिए रख दिया कि घामर किसी के काम घावे । हाव देखने पर मजि का चिह्न मिसा । कुछ भी हा गिररीघ महापात्र छोड़ दिया गया ।

मइधपन ने ही प्रपूब स्त्रियों के प्रति अदाशील नहीं था बल्कि उनके प्रति कुछ विनृष्य ही था । घामियाँ यदि उसके परिहात करती तो बहु मन ही मन बड होता था यदि वे अनिच्छता करने घाती थीं तो बहु दूर हट जाता था । माँ के घतिरिक्त किसी स्त्री की मेका उसे घषडी नहीं ममती थी । किसी मइधमी ने कालेज में पढ़कर परीखा पास की इस बात से उमको खुशी नहीं होती थी घौर-घाघाघाँ म यह पत्र

कर कि विसायत की श्रौतों राजनीतिक प्राधिकारों के लिए लड़ रही है उसके बदन में प्राण सप जाती थी। फिर भी उसका हृदय बड़ा मजबूत था। इस नाते वह स्त्री-पुरुष सभी प्राणियों से प्रेम करता था किसी को कष्ट देने में हिचकता था। इसी कमजोरी के कारण वह भावों को प्रपट्टी समझकर भी सजा नहीं दिया सका था। पर पुरुष के जीवनपूर्ण हृदय के नीचे और भी बहुत-सी दुर्बलताएँ गुप्त रूप से एकत्र में निवास करती हैं इसका उसे पता नहीं था।

इस्तर के काम के दिवसों में प्रपूर्व कई हफ्ते तक रंगून के बाहर दौरा करता रहा। जब वह रंगून सीटा तो देखा कि मकान के सामने गाड़ी खड़ी फिर भी तिबारी का नहीं पता नहीं। कमरे के किबाड़ों पर ओरों से बक्का देठा रहा तो धीरे से किबाड़ खुला और उसके सामने—घरे। यह कौन है? भारती। उसकी यह क्या प्रति थी। पैर में बूते नहीं पहिने में काले रंग की साड़ी थी बाल सूखे तथा बिखरे हुए थे, मुँह पर घाल गन्नीर बिपाय की छाया थी यह बंसे बहुत दूर से धाई हुई तीर्बवासी थी धूप में सिककर, पानी में भीयकर, घनाहार, प्रतिदा में दिन-रात चलकर यहाँ धाई थी किसी भी मुहूर्त में रास्ते पर पिर कर मर सकती है। इस पर कोई कमी जीव कर सकता है प्रपूर्व इसकी कल्पना ही नहीं कर सकता था। भारती ने सिर मचाकर जरा-सा नमस्कार कर धीरे से कहा—‘माप धाये है, अब तिबारी भी धायेगा।’—पूछने पर प्रपूर्व को मालूम हुआ कि इधर बेचक फैल रहा है तिबारी भी उसी का धिकार हुआ है। भारती फिर बोली—‘बलिये अमर के कमरे में यहाँ मापका घुसना ठीक न होगा।’ प्रपूर्व न प्रायश्चय के साथ कहा—‘अमर के कमरे में? भारती ने कहा—‘कमरा सभी हमी लोगों के कम्बे में है, पर मैं अब यहाँ से बसी गई हूँ। साफ है नस में पानी है मापको कोई कष्ट न हुआ। साथ का सामान वहीं न बलिये। प्रपूर्व राबी हो गया। इसका बाब सामान रखकर नहाने गया फिर वहाँ से सीटा तो भारती ने उसको सामने रखा हुआ मिलास बिलाकर कहा—‘नीजिए

मे से एक के सिवा सभी जाँच-पड़ताल के बाव छोड़ दिये गये । प्राचिरी व्यक्ति को निर्माई बाबू के सामने हाज़िर किया गया । प्रसूत व्यक्ति था । यह आदमी साँसे-साँसे घायल । उम्र तीस-बत्तीस से अधिक नहीं होती पर जितना ही बुबसा था उतना ही कमबोर था । मामूम नहीं होता था कि अब प्रायु की कोई अधिक मियाद बाकी है । भीतर कोई दुरारोम्य रोग है । फिर भी उस खीन घरीर की दोनों पाँखों की दृष्टि प्रसूत थी । वह पाँस लम्बी थी कि गोस कुछ पटा नहीं चलता था । बहरे तालाब की तरह उसमें फिर भी कुछ था बस ! उसके कपड़ों की घोर बेबकर हँसी घाती थी । सामन बड़े-बड़े बाल ये पीछे की ओर के बाल छोटे करक छँटे हुए थे । बीच में माँग कड़ी हुई थी बाल तेल से लूब तर थे । नीबू के तैल की बूँदें कमरा महक रहा था बदन पर इन्द्रजनुयी रंग के बापानी रेशम का बूड़ीदार कुर्ता था उसके बुरु-पाकेट पर बाबू का केहरा बना हुआ एक इम्प्रा का कुछ हिस्सा दिखाई दे रहा था । प्रपूर्व ने इस आदमी का जब देखा तो उसने कहा—‘बाबा जी यह व्यक्ति हँसब बह नहीं है जिसकी आपको उलास है । उसका नाम पूछा गया तो मामूम हुआ गिरौस महापात्र है । बामातलाधी लेने पर पाकेट से एक लोहे का कम्पास एक सड़की का स्केल कुछ बीड़ियाँ एक बिया सलाई तथा एक गाँजे की बिलम निकसी । पूछने पर आदमी ने कहा— ‘बह गाँजा नहीं पीता पर यह बिलम कही मिल बनी इसलिये एक बिया कि घायब किसी के काम आये । हाब देबने पर यजि का बिहू मिला । कुछ भी हा बिरीस महापात्र छोड़ दिया गया ।

सड़कपन मे ही प्रपूर्व स्त्रियों के प्रति आशाशील नहीं था बल्कि उनक प्रति कुछ बिदुष्य ही था । भाभिवा यदि उससे परिहास करती तो बह मन ही मन लूय होता था यदि वे बनिप्यता करन घाती थी तो बह दूर हट जाता था । माँ के प्रतिरिक्त किसी स्त्री की सेवा उसे घण्टी नहीं लागती थी । किसी लड़की ने कालेज में पढ़कर पटीरा पाल की इस बात से उसका खुशी नहीं होती थी और-आनकारों में यह पड

कर कि बिसावठ की औरतें राजनैतिक अधिकारों के लिए सब रही हैं उसने बदन में प्राण सम पाती थी। फिर भी उसका हृदय बड़ा मजठ था। इस नाते वह स्त्री-मुख्य सभी प्राणियों से प्रेम करता था किसी को कष्ट देने में हिचकता था। इसी कमजोरी के कारण वह भारतीय को धनदायी समझकर भी उबा नहीं बिता सका था। पर पुरुष के दीनपूर्ण हृदय के नीचे और भी बहुत-सी दुर्बलतायें गुप्त रूप से एकान्त में निवास करती हैं। इसका उसे अभी पता नहीं था।

अपठर के काम के सिलसिले में अपूर्व कई हफ्ते तक रंगून के बाहर बीरा करता रहा। अब वह रंगून लौटा तो देखा कि मकान के सामने गाड़ी ठहरी फिर भी तिबारी का कहीं पता नहीं। कमरे के किनारों पर जोरों से धक्का देता रहा तो धीरे से किबाड़ खुला और उसके सामने—अरे ! यह कौन है ? भारती। उसकी यह क्या मूर्ति थी। पैर में बूते नहीं पहिने में काले रंग की साड़ी थी बाज धूके तथा बिछने हुए थे मुँह पर सान्ध गम्भीर विषाद की छाया थी यह जैसे बहुत दूर से आई हुई तीर्थयात्री थी घुप में सिककर, पानी में मीसकर घनाहार, अमिडा में दिन रात बसकर यहाँ आई थी किसी भी मूर्खों में रास्ते पर फिर कर मर सकती है। इस पर कोई कभी कोब कर सकता है। अपूर्व इसकी कल्पना ही नहीं कर सकता था। भारती ने सिर नकाकर अत-सा नमस्कार कर बीर से कहा—'घाप घाये हैं अब तिबारी भी जायेगा।—पूछने पर अपूर्व को मासूम हुआ कि इतर बेबक फीस रहा है तिबारी भी उसी का शिकार हुआ है। भारती फिर बोली—'अलिए ऊपर के कमरे में यहाँ घापरा बसना ठीक न होया। अपूर्व ने धारण्य के साथ कहा—'ऊपर क कमरे में ? भारती ने कहा—'कमरा अभी हमी लोगों के कमरे में है पर मैं अब नहीं से बनी गई हूँ। साफ है नस में पानी है घापकी कोई कष्ट न होया। साब का सामान नहीं ले अलिए। अपूर्व राजी हो गया। इससे बाव सामान रतनाकर नहाने गया फिर वहाँ से लौटा तो भारती ने उसको सामने रखा हुआ गिनास दिखाकर कहा—'अलिए

बहु मिलास जमाने के ऊपर कायल की पुर्किया में समकर है उसे हाप में
 मेकर मेरे साब मल पर पाइए, और इस प्रकार सरबत बनाइए। कहकर
 उसन हारे से प्रपुब को परयत बनाने का तरीका बतनाया। इसके बाद
 उसी के हाप से चिचड़ी बड़वाई। जब प्रपुब चिचड़ी पका रहा था तो
 वह चौपट के बाहर से उसे पकाने की सिखा दे रही थी। प्रपुब ने
 पूछा—'घाप कम प्रायेवी कही जायेवी। तो उसने बात टाल दी कि
 हम खोनों के खाने में क्या भ्रम्ट है। प्रपुब पकाने में बराबर तमती कर
 रहा था। पामा खतम हो जाने पर प्रपुब ने पूछा कि तिबारी तक तो मैं
 समझ गया पर घापके पिता ने उसमें घापकी इस दिसचस्पी पर
 प्रापति नहीं की? भारती ने कहा—'धोहूँ ही उनका तो देहास हो
 गया ने घस्पताल ही में मर गये। प्रपुब कुछ बेर तक बुप रहा फिर
 उसन कहा—'घापके काने कपड़े देकर मुझे देखी ही भयानक दुर्पटना
 का अनुमान कर भना चाहिए था। भारती ने उसी सीस में कह बाला—
 'इससे भी बड़ी दुर्पटना तक हुई जब माताजी घबानक मर गईं। मैं मर
 गई। गुनवर प्रपुब स्वल्प हा रहा। भारती ने प्राँसे दूसरी घोर कर
 ली। जय हो मिनट बाद उसने प्रपुब की घोर मुँह केरा तो देखा कि
 उसकी घौलो म भी घौसू उसक रूँ है और वह एकटब भारती की घोर
 देख रहा है। भारती ने फिर मुँह केरा पर बोड़ी ही बेर में घाल होकर
 बाली—'तिबारी बड़ा घच्छा घाबनी है। उसने बिपति के समय बड़ा
 उपकार किया। जब मैं इस मकाल को छोड़कर जाने लगी तो यह रोने
 'घापत्री बोरी का सब मास बरामब हो गया है पुनित में भया है।
 तिबारी को जो सोन उन दिन तमाया दिगाने में गये यह उर्दी के विरोह
 का नाम है।' बीरे पीरे उसने बड़ भी बला दिया कि कैसे वह एक दिन
 तिबारी को देखने प्राई ता उसको बुलार में बेसुब पाया और सब स वह
 बिन रात यहीं रहकर समची परिचर्या करती है।
 प्रपुब इस पर घफनोस करता रहा कि उन तब रवों नहीं की

मई। उसने सिकायत के स्वर में कहा— धाप नहीं देख रही हैं धापका बेहरा कितना बिगड़ गया है ?

भारती बरा हँसकर बोली—‘अर्थात् पहले इससे बहुत अच्छा था ?

अपूर्व को इसका कोई उत्तर न सुझ पड़ा पर उसकी धाँसों की मुख्य दृष्टि जैसे भटा और कठलता के संभावस से इस तदपी के सर्वांग की सब ग्मानि तथा क्लान्ति को भोये दे रही थी। तिबारी के लिए उसने जो कुछ किया था उससे अपूर्व के मन पर बड़ा प्रभाव पड़ा वह इस बात के लिए तैयार नहीं था कि भारती का स्वास्थ्य एकदम ही खराब हो जाय। यद्यत् मह तय हुआ कि उसे धब छुट्टी भी जाय पर जब अपूर्व आकर रोगी के पास सड़ा हुआ तो रोगी की हालत देखकर उसकी सिट्टी पिट्टी मूस मई। वह बिलकुल बच्चे की तरह ब्याकुल होकर धोस उठा—‘मुम्झे न होगा। भारती कुछ बेर तक मौन रखी फिर बोली—‘धापसे न होगा ? अच्छा। उसक कठस्वर में बिस्मय के धामास के अतिरिक्त कुछ भी नहीं था पर यह कैसा उत्तर था। क्या उसने अपूर्व के निकट यही धाधा की थी ? अकस्मात् जैसे मार खाकर अपूर्व की नींव सूट गई। उधर तिबारी बेहोस पड़ा था। भारती ने कहा—‘दिन रखते-रहत कुछ करना चाहिए, धाप कहें तो मैं जाते बक्त अस्तवास मे टैसीफोन कर दूँ। अपूर्व बोला—‘धापन कहा था वहाँ जानेवासे सब मर जाठ है ?

भारती बोली—‘कोई नहीं जीठा ऐसा तो मैंने नहीं कहा था।

अपूर्व बोला—‘यागी अचिक्ठर तो मर ही जाते हैं। हाँ तमी तो होय रहते वहाँ कोई बागा स्वीकार नहीं करता।

अपूर्व ने पूछा—‘क्या तिबारी हमेशा वेहास ही रहता है ? भारती बोली—‘नहीं अक्सर होश में था जाठा है। इतने में तिबारी एकाएक बीज पड़ा। इन पर अपूर्व चौक पड़ा यह भारती से छिया नहीं रहा। तिबारी ने इसके बाद मिड़गिड़ाकर कुछ कहा। अपूर्व नहीं समझ पर भारती समझ गई और उसने फौरन पानी का मोटा उखकर उसे स्नह के साथ पानी पिना दिया। भारती ने तिबारी से कहा—‘तुम्हारे बाबू

भा मये। इस पर तिबारी हाथ उठाना चाहता था पर न उठा पाया। उसकी धाँसों में धाँसू उमड़ पड़े। प्रपूर्व की धाँसों से भी भङ्गी लग गई, कई बार इसे उसने रोका पर न रुकी। उसने धाँसों पर धोती का सट कटा हुआ हिस्सा रख लिया। भारती पास घाबर बोली—'तो भेज बीबिए धस्पताल ही न। प्रपूर्व ने बिना धाँसों खोल ही फिर हिमावर कह दिया—'नहीं। भारती ने कहा—'भङ्गी बात है मैं जाती हूँ कम समय मिला तो धाँसेनी। भारती जाने लगी तो प्रपूर्व एकाएक बोस उठा—'यदि तिबारी पानी मदि तो ? भारती बोली—'पानी वीजियेया। प्रपूर्व ने कहा—'यदि करबट बदलना चाहे तो ? भारती बोली—'करबट बदल वीजियेया। प्रपूर्व फिर भी बोला—'मैं सोझेंगा कहाँ ? भारती बोली—'क्यों तिबारी क कमरे में एक बिस्तर है उस पर। फिर भी प्रपूर्व बोला—'मेरे जाने-पीने का क्या बन्दोबस्त होगा ? भारती ने ध्यान से उसके मूँह की ओर देखा और बीरे से बोली—'यानी घायको इ प्रकार इसरी बातें न कहकर मुझसे यह कहना चाहिए कि कृपा कर मेरा साठ बन्दोबस्त कर वीजिये। प्रपूर्व ने कहा—'एसा कहने में कोई हर्ष नहीं। भारती बोली—'तो फिर कहिए। प्रपूर्व किसी तरह न ठाक कर बोस उठा—'बही कह रहा हूँ। यह कहकर उसने मूँह बना लिया। थोड़ी देर ठहरकर भारती बोली—'पर तिबारी ने तो मेरे हाथ का पिली पी लिया। प्रपूर्व ने कहा—'होउ रहत नहीं पिया मूरपुछाया पर पिया न पीने पर घायब मर जाता। घायब ऐसी हासत से नहीं होता। इससे जाति नहीं जाती घायब कोई प्रायश्चित्त करने से काम चस जाय। भारती भीहे तानकर बोली—'और घायब उसका दर्षा घायको ही देना पड़े। नहीं तो फिर घाय उसके हाथ से पायेवे कैसे ? प्रपूर्व ने कहा—'बकर ईगा ईस्वर उमका प्रणज ता कर दे।' भारती बोली—'और मैं ही उसकी सेवा कर उमे प्रणज करूँ ? क्यों ? धमकत यदि प्राणदान करे तो कुछ नहीं पर यदि उमने मूँह में पानी दे दिया तो बम प्रायश्चित्त भी प्रकरण हो गई क्यों ? बहु जाने लगी। पर जान के पक्षे सीरकर

बोली—'कल मैं आऊँगी और यदि मैं न आऊँ तो तिवारी क मन्धे हो जाने पर उससे कह बीजियेगा कि यदि आप न आते तो मैं न जाती। म्लेच्छ सोपों का एक समाज है आपके साथ एक कमरे में रात कैसे बिताऊँ ? कल सुबेरे तनवरकर बाबू को बुला लीजियेगा वे सब व्यवस्था कर देंगे। यह कहकर जब भारती निकल गई, तो एकाएक अपूर्व सम्हालने ल सका उसकी तबीयत जाने कसी हो गई, वह बाहर निकला और ओर से पुकारा—'भारती ! भारती मे जब पीछे मुँह केरा था उसने इवारे से कहा— एक बार आइये। और उसने कुछ कहा न गया। जब भारती ने लौटकर अपूर्व को कमरे में नहीं पाया तो कुछ मिनट ठहरकर पुसमखाने की ओर भाँका देखा अपूर्व जमीन पर सेटकर उमटी कर रहा है और उसका साथ चरिर पसीने से तरबतर हो रहा है। भारती एक मिनट के लिए हिचकिचाई, फिर वह अपूर्व के पास बैठकर उसके मिर पर हाथ रखकर बोली—'ठठ बैठिये। भारती का उस समय जाना न हो सका।

इस घटना के बाद एक महीना बीत चुका है। तिवारी घब्रटा हो गया पर उसमें अभी ठाकुर नहीं आई। भारती उस दिन जनी गई थी सब से लौटकर नहीं आई थी। तनवरकर की देखरेख में तिवारी तथा अपूर्व की सेवा हुई थी। तिवारी के लिए यह तय हुआ था कि वह जरा मन्धे हाते ही देम लौट जायगा। एक सप्ताह में ऐसा हो सकेगा यही प्रतीत होता था। तिवारी के मन में यह विचार आता था कि कहीं ऐसा न हो कि म्लेच्छ सड़की के हाथ से पानी पीने की बात देव तक पहुँच जाय और उसकी मौकरी भी जनी जाय। साथ ही उसके विचारों की एक दुमरी भी बिगा बी। दुपहर के समय मौझा जासकर सड़क की उसी ओर ताकता रहता था बिबर से भारती आ सकती थी। एक दिन दफ्तर से लौटकर अपूर्व ने अचानक पूछा—'भारती का क्या मकान कहाँ है तिवारी ?

तिवारी कह उठा—'मैं क्या जानूँ ? अपूर्व ने बात को साफ करत

काम के हरे पत्थर के कर्णफूल बर रोशनी पड़ने से पत्थर सौंर की घाँब की तरह जल रहे थे। उस समय जो बातचीत चल रही थी वह उसके लोगों की छुट्टी हुई तो सुमित्रा ने धर्म्म की तरफ ध्यान दिया। वह बोस उठी—‘धर्म्म बाबू ! धर्म्म ने चीककर सिर उठाया। सुमित्रा बोली—‘घाव हम लोगों को नहीं आगते पर भारतीय की बहीलत हम सभी घावको आगते हैं। मुना कि घाव हम लोगों की समितिका सदस्य होना चाहते हैं।’ धर्म्म से ना नहीं कहा गया। जो घावमी कोने में बैठकर लिख रहा था उसकी तरफ मुँह करके सुमित्रा बोसी—‘बाबू साहब अगर धर्म्म बाबू का नाम तो लिख लीजिए।’

घाव मारने के पहले ही उसका नाम एक मोटी कापी पर लिख गया, देकर वह मन ही मन बेचनी का अनुभव करने लगा। उससे घाव रुका न गया वह बोल उठा—‘सिर्फ सिर्फ समिति का उद्देश्य कुछ मामूम नहीं हुआ। सुमित्रा बोसी—‘तो क्या भारतीय ने घावको नहीं बताया ? धर्म्म ने कुछ देर सोचकर कहा—‘कूच बताया है, पर मैं पूछना वह चाहता हूँ कि घाव-भमी नबतारा के पति त्याग कर घाव लोगों में धाकर काम करने पर बाधनीत हो रही थी तो क्या उधमूच घाव लोग उसके धाव-रम को धम्याधर्म्म नहीं समझती ?’

सुमित्रा बोली—‘कम से कम मैं तो नहीं समझती क्योंकि मेरी घावों में घाव से बढ़कर कुछ नहीं है। धर्म्म न भडा के साथ कहा—‘खैर घाव को तो मैं भी घावों से अधिक प्यार करता हूँ। यह भी मानता हूँ कि घाव केवा करने का अधिकार सभी-धुरप लोगों का बराबर है, फिर भी लोगों के कर्मखेन तो घाव-भलन हैं ही। हम धुरपगन बाहर धाकर काम करने पर सभी बर के घाव-धुर में रहकर ही पति-धुरकी सेवा से ही घावने को सार्बक करेगी। वहाँ रहकर धाव का जितना बास्तविक नक्याण कर सकती बाहर घावने पर धुरपों की भीड़ से तो जलमें बाण ही पहुँचेगी।’

सुमित्रा हँसी, फिर बोली—‘धर्म्म बाबू, यह जाने की बात है। जिन्होंने कभी घाव का कोई काम नहीं किया है वे ही ऐसी बात कह सकते

हैं, या जिनके निकट अपना स्वार्थ देश के स्वार्थ से कहीं बढ़कर है वे ऐसी बात कह सकते हैं। यदि आप स्वयं कभी देश-संघा करें तो आपको यह अनुभव होगा कि जिसे आप भाव पुर्यों की मीढ़ में खड़ा होना कहते हैं वह बही होना तभी देश का काम सम्भव होगा।

अपूर्व ने फिर भी कहा—'पर क्या इससे दुर्नीति नहीं बढ़ेगी? क्या चरित्र क्षुण्ण होने का भय नहीं रहेगा?

सुमित्रा बोली—'क्या भीतर कम भय रहता है?

अपूर्व बोला—'आप मुझे समा करें नारीत्व का जहाँ परम उत्कर्ष है उसी सतीत्व तथा पातिव्रत्य धर्म को आप लोग अज्ञानता की दृष्टि से देखती हैं, क्या इससे देश का कोई क्रस्याय होगा?

सुमित्रा बोली—'जो बात मैंने कही थी वह कुछ धीर थी। और जिसे आप सतीत्व कह रहे हैं वह तो केवल शरीर तक ही सीमित नहीं है उसमें मन की भी तो अकरुण है अपूर्व बाबू। शरीर और मन दोनों से जब प्रेम हो तभी न प्रेम है? मन्त्र पढ़कर सारी करा बेग से ही क्या कोई किसी से प्रेम कर सकता है? क्या यह पोखर का पानी है कि चाहे जिस पात्र में डाल दो उस काम चम आयगा?

अपूर्व को कुछ जवाब न सूझ पड़ा तो वह बोल उठा—'हमेशा से चला तो आ रहा है।

सुमित्रा फिर हँसकर सिर हिलाते हुए बोली—'हाँ सो तो चम रहा है। प्राणनाथ कहकर वह पत्र भी लिखती है और अज्ञानमिथ भी करती है। पर यह बँसे हो है जैसे कोई अविपुत्र ब्रूम से बबल बाबल की पीठों का पानी पीते थे। चाहे जो कुछ भी हो नकली को अममी कहकर कोई गब नहीं कर सकता।'

अपूर्व को यह घालोचना बहुत बुरी लगी उनका कहा—'क्या इससे अधिक किसी को नहीं मिसठा?

सुमित्रा बोली—'नहीं, ऐसा तो मैं नहीं कहती। अकस्मात् भी ता चम्ब है।'

इस प्रकार जब यह बहस मूक ओर पलक रही थी उस समय यह घावमी को अब तक कोने में पीठकर लिख रहा था एकाएक उठा। सभी साम-साम खड़े हो गये। अशुभ ने देखा भर यह तो बही गिरिधर महापात्र है। गिरिधर अशुभ के पास आकर बोले— हमें आप नूस तो न मये होंगे हमको यहाँ सब बाण्टर कहत है। यह कहकर बै हँसे। अशुभ ने कहा— मेरे बाबाजी क नोटबुक में कोई नूसरा ही भयंकर-सा नाम लिखा है

गिरिधर ने उसके दोनों हाथ अपने हाथों में ल सिए और कहा—‘सम्य साधी न ? इतना कहकर फिर बह हँसे। फिर कि अशुभ को कुछ दूर तक पहुँचान के लिए पर से निकल पड़े। रात अधिक हो रही थी।

शास्त्र ने अशुभ को भारती के घर पहुँचा दिया। रास्त में कुछ बात चीठ हुई बिचसे अशुभ अस्पष्ट रूप से समझ गया कि जिन लोगों के सम्पर्क में यह था चुका है वे सब के मुख रहस्य में घाबृत हैं। सुनिना का पति है कि नही घात्रि प्रसनों का बाण्टर से उये कोई उत्तर नहीं मिला। शास्त्र अजीब घावमी था कि किसी पत्रलपू प्रसन्न का उत्तर ही नहीं देता था घाव ही उसका व्यवहार कुमा हुआ था। भारती के यहाँ पहुँचकर बाण्टर को भारती से मामूम हुआ कि एक परिचित परिवार किसी भयंकर घावत्त में रँसा है। सब के अंधकार में जैसे कू मन्तर हो गये। भारती के दूठ बधाकर उसके घाने-पीने की व्यवस्था कर बी। घाने-पीने के बाद अशुभ ने जब भारती को उसके कप के लिए सम्मन्दा दिया तो वह बोत पड़ी—‘जब ईश्वर ने बोझ दिया है तो उसे डोना ही पड़ता है इसकी सिकामत में निमये कर्के ?

अशुभ ने आश्चर्य क साथ कहा—‘इतका अर्थ ?

भारती कुछ काम कर रही थी उमी प्रकार काम करते-करते बोली— ‘इसका अर्थ क्या लाऊ है क्या मैं लुब ही जानती हूँ ? किन्तु देत रही हूँ कि जबसे आप बर्मा आय हैं तब से बराबर आपका बोमा मैं किसी न किसी रूप में हो रही है। पिताजी के साथ कपड़ा घावका हुआ पर बुर्जना भरा मीने किया। पर पर पहरे के लिए घाव छोड़ गये तिवारी को वह बीमार

पढ़ा उसकी सेवा मुझे करनी पड़ी। बुलाकर आपको डाक्टर भी लाये, और तमाम टंटे मुझे करने पड़ रहे हैं। अब डर यह हो रहा है कि कहीं सारी बिन्दगी आपका बोझ मुझे न उठाना पड़े। और अब रात अधिक हो चुकी है अब आप सोयेंगे कहीं यह कहिये ?

अपूर्व ने कहा—‘बाहू इसको मैं क्या जानूँ ? —भारती बोली—‘होटल में डाक्टर बाबू के कमरे में आपके सोने की व्यवस्था हो जायगी।

अपूर्व तैयार तो हो गया पर उसने जरा सकोच के साथ कहा—‘ठीक है, सक्रिम आपका सक्रिया और बिस्तरे की जागर मैं ले जाऊँगा मर जाने पर भी मैं बूसरे के बिस्तरे पर नहीं सो सकता।

भारती का मस्तिष्क बंसीर बेहुरा स्निग्ध हँसी से भर गया बोसी—‘यह भी तो बूसरे का ही बिस्तार है अपूर्व बाबू। इससे बूना नहीं होती बड़े आश्चर्य की बात है। जो कुछ भी हो आप इसी खाट पर सो सकते हैं—यह बात उसने इच्छापूर्वक ही नहीं कही कि अभी कुछ देर पहले उसके बिने हुए बत्त को पहनकर भगवान की उपासना करने में भी उसे बूना हो रही थी।

अपूर्व अत्यधिक संकुचित होकर बोसा—‘आप कहीं सोयेंगी ? आपको तो कष्ट होगा ?

भारती ने रँगमी से इंसारा करते हुए कहा—‘उस छोटे से कमरे के एक कोने में जो चाहे सो बिछाकर मैं मजे में सो जाऊँगी। तिवारी के बमल में कितनी रातों हाप को सक्रिया बनाकर मैंने काट रीं यह आप भूस गय ?

अपूर्व कुछ देर तक सोचकर बोसा—‘उस समय तिवारी कठिन रोग में था पर इस समय लोग क्या समझेंगे ?

—‘कुछ भी नहीं क्योंकि यहाँ लोगों को बूसरों की बात लेकर ध्यर्ष ही मन का कष्ट देने की धारत नहीं है।

अपूर्व बोसा—‘नीचे के बेंच पर भी तो मैं मजे में सो सकता हूँ ?

भारती बोली—‘हाँ पर ऐसा मैं करने न दूँगी क्योंकि उसकी जरूरत ही न रहेगी मैं आपके लिए असुस्था हूँ आपसे मेरी कोई दावि हो सकती

है ऐसा मैं नहीं समझती।

अपूर्व ने आशेय के साथ कहा—'यह बय मुझमें भी नहीं है पर आप जब अपने को असह्यता कहती हैं तो दुःख होता है क्योंकि इसमें भूखा है पर मैं आपसे भूखा तो करता नहीं। हमारी बाछि बल्य है आपका छुपा नहीं जाता पर उसका कारण भूखा नहीं है। यही पर बाछिभीत उठम हो गई और भारती को कमलस रक से पीचकर उस छोटे कमरे की ओर बह गई।

सबैरे भारती की पुकार से अपूर्व की मीच कुमी। वह बोली—'आपको बफ़र जाना है न? बाली तैयार हो जाइय। कम बाछिबि सन्कार में बुटि रह गई थी तो आप पूरी करती है।

अपूर्व ने हँसते हुए कहा—'डाक्टर बाबू कहाँ है? वे तो आशय घनी तक पड़े-पड़े होते होंगे ?

इस पर भारती उख हेली ने माग न लेकर बोली—'घमी तो ब सस्पताल से लीं सने न सने का उतक निकट कोई मूस्य नहीं है। अपूर्व न इस पर आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा—'इससे वे बीमार नहीं पडत ?

भारती ने कहा—'कभी बेछा ता नहीं उतक पास से सुप तथा अनुक बोनों हार मानकर मान गब है मनुष्य के ताब उतकी तुपना नहीं होती।

जाने के पहले अपूर्व एक बार डाक्टर से मिलन यवा। दवा तो डाक्टर एक ऐसे कमरे में है जो बहुत ही छोटा है। महीने में केवल बस घाने किरामे का कमरा था। मुमिषा भी वहीं थी पर सस्पल्ट रमानी क कारण पहन-गहन बहु दंभने में नहीं घाई। डाक्टर पगड़ी डटे हुए एक घर्मीब मेग में थे। मुमिषा के स्वर से ज्ञात हुआ कि वह कृछ विचलित थी पर डाक्टर का स्वर बँसा ही दुडू था। डाक्टर बोले—'घब मैं बातता हूँ यह सोच रहे थाप देगिएगा।

अपूर्व वृछ बैठा—'आप कहाँ जा रहे हैं। तो इसके उत्तर में डाक्टर ने बताया कि वे मामी ओर उसके उत्तर में जा रहे हैं। इस पर मुमिषा

एकएक बोस पड़ी—'तुम जानत हो तुम्हें वहाँ बहुत-स लोग पहचानत हैं वहाँ तुम किसी की छाँव में घूम नहीं सके सक्ते थप कुछ दिन उस तरफ नहीं पड़े तो क्या ? —घन्ट की घोर सुमित्रा का स्वर जान कैसा मालूम हुआ । डाक्टर ने केवल मुस्कुराते हुए कहा—'तुम ताँ जानती हो न बाँटें तो सारा खेल ही बिगड़ जाय । सुमित्रा धागे न बीसी । डाक्टर ने कहा—'थप समय हो रहा है मैं बसठा हूँ । प्रभू का लालू मुख रहा था क्योंकि डाक्टर किस विपत्ति का सामना कर रहा है वह उसे सोच रहा था । उसने मूट से पैर छुकर डाक्टर का प्रथम किया डाक्टर ने उसके सिर पर हाथ रख दिया फिर जल्दी से निकल गया । प्रभू जब उठकर खड़ा हुआ तो उगल दसा कि वह भारती के बयस में धकेला सड़ा है और पीछे उस टूटे कमरे के बाँध किबाड़ों की धाड़ म कर्तव्य-कठिन धरोप-बुद्धि-दासिनी पच के बाबेदार की गयसेघाहीना तेजस्विनी धम्मला क्या कर रही है यह पता नहीं गया ।

कुछ दिनों के बाद सुमित्रा के नेतृत्व म फयार-ईशान में जो समा बुझाई गई उसमें धर्मिक नीड़ नहीं हुई और जिन सोपों ने व्याख्या देने का पारा किया था उनमें से बड़े-रे धा नहीं पाय । सुमित्रा की बकृता ही एक उत्सव योम्य बात रही और रोसमी का बन्दोबस्त न रहने के कारण इस समा को भी जल्दी खतम कर देना पड़ा । फिर भी इस प्रथम प्रयास को व्यर्थ नहीं कहा जा सकता । प्रपूर्व जैस प्रमाड़ी को भी धनुरोष के कारण लड़ होकर दो-बार पाव्य रहने पड़े । फिर एट्ट दिा प्रभू को एक समा में बकृता के लिए बुलाया गया । प्रभू ने पहुँचकर देखा कि समा में बड़ी भीड़ है । विपुल जनता के बीच में मँच बना हुआ था । मँच के सामन सड़े होकर कोई पंजाबी बड़े जोर से बोस रहा था । सामन बह कोई बरनास्त किया हुआ मिस्त्री या धीर कोई था । बत्थ जोरों के साथ बोसते ही पड़े । लोग भी जोध में हो रहे थे इतने में कोई भयानक विघ्न हुआ । बात यह की कोई बीस-पचीस गोरा पुसिय पुइसबार सोगों की बिना परबाइ किये हो भीड़ के मन्दर मुख रहे थे । बात की बात में सोय

ठिठर-बिठर हो गये और बकलूठा बग्न हो गई।

गोरु सरकार मंत्र के पास आकर बोला—'मीटिंग बन्द करो।

सुमित्रा बीमारी से हाल ही में उठी थी पर उसने तड़पकर कहा—
'क्यों ?

गोरे ने कहा—'हुकम। सुमित्रा बोली—'किसका हुकम ? गोरु बोला—'सरकार का हुकम। सुमित्रा बोली—'ऐसा क्यों ? गोरे ने कहा—'ऐसा इसलिए कि मजदूरों को हड़ताल करने के लिए मड़काना निषिद्ध है।

सुमित्रा बोली—'भयं में किसी को मड़काना हमारा अहंसा नहीं है, पर यूरोप की तरह संकटित होने के लिए उन्हें समझना हमारा अहंसा है।

गोरे ने कहा—'संकटित करना ? मामूली के बिना ! इससे तो शान्ति भंग हो सकती है, यह बिलकुल ही वैरकावमी है। सुमित्रा बोली—'शान्तिभंग हो क्यों नहीं सकती जिस देश में सरकार का धर्म ही अहिंसक व्यापारी है और समस्त देश के रक्त-शोषण के लिए ही जहाँ यह बिराट मन्त्र पड़ा है' । वह अपना बलम्य समान्त भी नहीं कर पाई कि गोरे की धीरे धीरे नाम हो गई और वह तड़पकर बोला—'फिर यह बात कही कि मैंने विरहभार किया। सुमित्रा के आश्चर्य से जब भी बचभला नहीं व्यक्त हुई। सुमित्रा को आज म्बर या कई दिन के लंबत हो रहा था। फिर भी वह तैयार थी। गोरे ने उसकी दृढ़ता से सहमकर पड़ी देखते हुए कहा—'बस मिनट समय देता हूँ इस बीच बनेसुबे लोगों को समझ कर धन्य कर बीजिये। सुमित्रा स्वयं बोलने में असमर्थ थी। उठने बिस्वाकर धपूर बाबू से कहा—'धपूर बाबू बिस्वाकर सबसे कह बीजिय संभव्य हुए कबीर इनका नाम नहीं है। मासिकों ने ह्वाय जो अवमान किया है यदि के मनुष्य हों तो इसका बदला में। धाने वह कुछ बोल न सकी। धपूर का आदेश सुनकर धपूर का बेहारा फक पड़ गया। बिह्वल नेत्रों से सुमित्रा की ओर देखकर वह बोल पड़ा—'या इत

तरह भड़काना रैरकातूनी न होगा ?' सुमित्रा बिस्मित मृदुक्क से बोली—'क्या विस्तीर्ण के बार से समा को छोड़ देना ही कातूनी है ? स्वयं का रक्षणार्थ मैं नहीं चाहती फिर भी सारी ताकत से इस बात को समझा दीजिये कि इस अपमान को वे न भूलें । प्रपूर्व ने मुष्क कण्ठ से कहा—'मैं तो झण्टी हिन्दी जानता नहीं । सुमित्रा को बोलना वहीं पड़ा फिर भी उसने कहा—'जो कुछ पाती है उसी में दो-चार शब्द कड़ु डीजिये । क्या करता प्रपूर्व खड़ा हो गया पर उसके मुँह से बात ही नहीं निकल रही थी । तब रामदास तलबतरकर उठकर खड़ा हो गया । उसने पुलिङ्ग के बुझसकारों की घोर तँपती से दिखाते हुए बची हुई जनता से कहा—'इन कृतों को जिन्होंने हमारे, तुम्हारे, सब के ऊपर छोड़ दिया है, वे तुम्हारे ही कारखानों के मालिक हैं । वे किसी भी प्रकार नहीं चाहते कि तुम्हारी दुस्त-दुर्दगा की घोर जोई तुम्हारी भाँख खोल दे । फिर भी तुम उन्हीं की तरह घादमी हो, बीसे ही घंट भरकर सान का तथा दिन सोलकर रैन करने का जग्मगत अधिकार तुमने भी ईश्वर के पास से पाया है इस बात को वे सारी शक्ति तथा बदमाशी का उपयोग करके तुमसे बचावा चाहते हैं । क्या इस साथ को तुम नहीं समझोगे ? यह केवल गोपकों के विरुद्ध घोषितों की घातमरसा की लड़ाई है । इसमें न देव है न जाति है, न धर्म है, न मतवाद है इसमें केवल दो ही पक्ष हैं एक तरफ मनोमत्त मालिक है और दूसरी तरफ उसके द्वारा प्रबन्धित भूला मजदूर है ।' इत्यादि ।

बारि ने जितनी हिन्दी सीखी थी उसमें वह समझ न पाया कि क्या कहा जा रहा है पर जनता के मुँह पर उत्तमता के लक्षण देखकर वह स्वयं भी उत्तबिध हो गया । बबतृता चलती रही इतने में एक बंबाबी ने मोरे के कान में कुछ कहा जिससे उसका चेहरा तमतमा गया । वह मरज कर बोला—'शर्मण यह सब न बनेमा इससे शांतिर्मम होना । प्रपूर्व बौक जटा यह रामदास के कृतों का विभारण पकड़कर जीचने लया । बोला—'याद रखो कि इस मित्रहीन देव में तुम्हारी स्त्री तथा नन्ही

भी हो वे तलवारकर के वंद की बूस के योग्य नहीं हैं मैं इसे साफ़ कहता हूँ। ये उसकी बकूल्यव्यक्ति तथा निर्भीकता पर मन ही मन जमतते हैं। इसलिए मुन्हें घाय जाने न दिया और मुझे बामाकी से रोक लिया। भारती ने कहा—'घायको मैं गसत समझी थी। मय से जिस व्यक्ति को हिताहित ज्ञान नहीं रहता उस पायल का यही कोई स्वान नहीं है। जाइए, इस पर बुपबाप उठते ही डाक्टर ने उसका हाथ पकड़ लिया और कहा—'घोड़ी डेर ठहरिए, स्टेसन जाने के रास्ते में मैं घायको भर पहुँचा दूँगा। फिर डाक्टर ने लिली हुई चिट्ठियों को भारती के हाथ में डेते हुए, हुँसकर कहा—'एक मुमिबा की एक तुम्हारी एक पत्र के बावैदारों की है। मेरा उपदेश घायस सब इसी में पायोमी। चिट्ठियों को मुट्ठी में लेकर भारती बोली—'कितने दिन के लिए जल दिये ? डाक्टर ने मुस्कराकर कहा—'देबा न जानति । इसी समय एक भोजामाड़ी भाकर किबाड़ के पास ठहरी। एक के पहलाबे में ऊपर से नीचे तक मूट या डाक्टर के घसाबा उसे कोई नहीं जानता था और दूसरा व्यक्ति स्वयं तलवारकर का। मूटबासे सजजन ने कहा—'जमानत में इतनी डेर हुई, मुकरमा घायर न जते। रामदास ने डाक्टर से कहा—'उस दिन स्टेसन पर मैंने घायका पहचान लिया था। पूना को जेस में डेरे जाने के बाद ही घाय जने गय। नीलजांत जोमी को फौसी हुई न घायको जी फौसी ही होती यदि घाय बीबार न फौड जाते। डाक्टर ने कहा—'हाँ बात ठी ऐसी ही है। घायुं बाँड बबाकर घपने को लँनासने की जेष्ठा कर रहा था बह यह मुनकर जस्टी से बाहर निकल गया।

कम मारी रात भारती का नीर नहीं घाई थी। बह बाहली पी जस्टी को जाय। मन्व्या समय बह इनी जहेरप से लला जस्टी बना जेने में ज्यन्त थी इतने में मुमिबा का एक पत्र मिला कि जिस घबस्था में भी हो जसी थायी। उसने पत्र-बाहूक से पूछा—'जया बात है हीरासिंह ? यह हीरासिंह के जनेबार का मरत्य न होने पर भी बड़ा बिरबासी था। पंजाबी

चिकित्सा या हायड्रोग की पुस्तिक में रद्द चुका था। उसमें भीरे से कहा—
 'चार-पाँच मील पर एक बरूटी समा हो रही है जाना ही पड़ेगा। रात
 दस बजे एक खंडहर में जाकर सुमित्रा की गाड़ी रकी। हीरा का हाथ
 पकड़कर भोंबेरे में टटोलते-टटोलते वह समास्पताल में पहुँचकर डाक्टर के
 बचन में धम से बैठ गई। हीरासिंह कमरे के बाहर ही रह गया। प्रजात
 मय से भारती का दिल बड़क रहा था। भारती ने देखा जो लोग बैठे
 हैं उनमें से चार-पाँच को वह कतई नहीं पहचानती। परिचितों में सुमित्रा
 तलबकर तथा वह सूटभारी व्यक्ति कृष्ण ऐयर बे। पहले ही एक मीपप-
 कृति व्यक्ति के अन्तर धाँस पड़ती थी उसक पहनने में बेरुपा रंग की सुंगी
 थी श्रीर सिर पर बड़ी-सी पगड़ी। मुँह हँडिया की तरह मोस घोर देह
 मंडार की तरह स्तन मांसल घोर कर्ण्य थी। रङ्ग ताम्बे की तरह था।
 यह व्यक्ति मंगोल जाति का है यह देखते ही साफ हो जाता था। इस
 बीमत्स व्यक्ति को भारती हाककर देख ही न सकी। सुमित्रा बोली—
 'बोबा कम्पनी न धाय रामदास को बर्कान्त कर दिया अपूर्व की भी बही
 बधा होती यदि वह पुस्तिक के निकट हम लोगों की सारी बातें सुनकर बता
 न देता।' वह मीपप व्यक्ति चिन्ताकर कह उठा—'डेप। रामदास ने
 कहा—'सम्प्रसाधी ही डाक्टर हैं यह खबर से जानत हैं होटल के कमरे में
 उन्हें पकड़ा जा सकता है यह भी अपूर्व बता चुका है। यही तक कि मुझे
 इससे पहले राजनीतिक अपराध में दो साल की सजा हुई थी, यह भी बता
 दिया।'

सुमित्रा बोली—'यदि डाक्टर पकड़े जायें तो उन्हें या तो फाँसी होनी
 या फाला-पानी, सज्जनो धाय इसकी क्या सजा ठरबीज करते हैं ?

सब ने एक स्वर से कहा—'डेप ! सुमित्रा ने पूछा 'भारती तुम्हें कुछ
 कहना है ? भारती ने कुछ कहा नहीं केवल सिर हिसाकर बता दिया कि
 उसे कुछ नहीं कहना है।

उस भयंकर घाबरी ने धब बात की उच्चारण सुनकर मासूम हुआ
 कि वह चटपट की तरफ था मग है। बोला—'एम्सिकपुत्र का मात्र मुभ

भयरायी और सुमित्रा की घाँसों में छोटी हो गई है। प्रपूर्व में कहा—
 'इतनी उम्र में इतनी बड़ी नौकरी कितनों को नसीब होती है पर यह
 सभी नहीं। खैर देस में बापस जाकर कुछ कहूँगा। बगबन से हाथ
 दूट गया है, पता नहीं कैसे भण्डा होगा कमी होया भी या नहीं',
 इत्यादि। भारती को धारचर्य हो रहा था कि अपने परम मित्र तलवारकर
 के प्रति हम के प्रति और विशेषकर डाक्टर के प्रति उसने कितना बड़ा
 भयराय किया था इसकी उसे मानो चिन्ता ही नहीं थी नौकरी गई,
 हाथ दूट गया बस यही उसका सारा रोना था। भारती सोचती रही।
 प्रमात की प्रथम रक्ति के साथ ही वह उस अवस्था से भाग निकली जैसे
 घरायी का नष्टा झूठे ही बस वह देखता है कि कितनी बन्दे स्वान में
 पड़ा है तो वहाँ से भाग निकलता है।

प्राग्ने दिन डाक्टर और भारती में बात हो रही थी। डाक्टर कह
 रहे थे—'देस का धर्म नर नरी पहाड़ नहीं है। एक प्रपूर्व से ही तुम
 को जीवन से पुना हो गयी वैराग्य जेना चाहती हो और देस में एकाव
 प्रपूर्व नहीं संकड़ों प्रपूर्व हैं। घरे पराबीन देस का सबसे बड़ा प्रमियाप
 ता कृत्यता और विदबासपात है। मर्या नहीं सहानुभूति नहीं
 कोई पास न बुसायेया कोई सहायता न करेया विपन्न साप समझकर
 लोग तुमसे दूर हट जायेंगे। देशप्रेम के लिए हमें मिलनेवाला यही पुर
 स्कार है इससे अधिक बाबा करना चाहो तो परलोक में करना। इतनी
 बड़ी परीक्षा तुम क्योंकर देने सगीं? बन्धि मेरा घासीबीर है प्रपूर्व को
 लेकर तुम सुखी होयो। मैं जानता हूँ एक न एक दिन वह अपनी सारी
 भारती की दोनों घाँसों घाँसु से भर गई, वह पूछ बैठी—'तुम हमारा विरबाम
 नहीं कर पाते हो तनी हमें समिति से चलना कर देना चाहते हो दादा।
 डाक्टर ने हँसकर कहा—'क्या कोई ऐसी लक्ष्मी की माया काट सकता है?
 पर तुम्हने तो देगा इसमें कितना बीया कितनी हिंसा तथा कितना प्रयत्न
 शीघ्र संतान्य है। मामुम होता है इन सबके लिए तुम नहीं हो। भारती की

श्रीशों में फिर श्रांसू आ गये, वह बोली—‘तुम भी अब इनमें न रहो । डाक्टर हह्यकर हैंसते हुए बोले—‘अब की तुमने बड़ी बेबकूफी की बात कही भारती । भारती बोली—‘यह तो है पर ये तो सभी बड़े निर्वयी है । इस प्रकार बातचीत करते हुए काफी समय हो गया तो डाक्टर चले गये ।

अपूर्व भारत जसा गया । चाते समय उसन भारती को खबर भी नहीं दी । भारती दुखी थी । डाक्टर एक बार और उसे तसस्ती देने के लिए पहुँचे । सुमित्रा पर बात चला पड़ी । भारती पूछ बैठी—‘सुमित्रा तुम्हारी कौन है उसे तुम कहीं से न आये ? —असन सुनकर डाक्टर चुप हो रहे, फिर मृदु हँसी हँसकर बोले—‘वह स्वयं इसका उत्तर है तमी मामूम हो सकता है कि वह कौन है, पर अब मैं उसे करीब-करीब पहचानता नहीं था उस समय मैंने एक मौके पर उसे अपनी स्त्री बताकर परिचय दिया था । सुमित्रा नाम मेरा ही दिया हुआ है । सुना है उसकी माँ यहूदिस थी पर बाप बङ्गाली ब्राह्मण था । वे पहलें सर्वस पार्टी के साथ आबा बने थे फिर सुरबाया के रस स्टेसन में लीकर थे । अब तक वे बीबित थे सुमित्रा मिशनरियों के स्कूल में शिक्षा प्राप्त करती थी । उनके मरने के बाद पाँच-छ वर्ष का इतिहास सुनने की तुम्हें जरूरत नहीं ! मैं भी सब नहीं जानता, केवल इतना ही जानता हूँ कि माँ को मामा, सड़की एक चीनी तथा दो मद्रासी मुसलमान मिलकर आबा में बोरी से अफीम पाँजा मँगाने का काम करते थे अचर सुरबाया और बँटिया के रास्त में सुमित्रा को बेसता था पर सब यह नहीं जानता था कि वह किस सूत में घूमती है । अत्यन्त सुन्दर होने के कारण उसको मैंने लक्ष्य किया था । एक दिन अकस्मात् तम स्टेसन के बेटिङ्ग कम में परिचय हो गया । बङ्गाली की लड़की है यह मुझे जमी ज्ञात हुआ । पर तब भी कुछ अनिच्छा नहीं हुई । एक दिन बेकुमान सहर की बेटी में अकस्मात् भेंट हो गई । एक बस अफीम चारों तरफ पुसिध और बीच में सुमित्रा थी । मुझ बेलकर वह अर-अर रोने लगी यह समझे नहीं रहा कि मुझे ही उसे

यदि हम कभी प्रपूब को पा जायें तो मैं उसका सम्पूर्ण करते हुए कहा—'उसे खतम करोने में सब हमसे सहमत हो ? सुमित्रा ने झल्ले लीं कर लीं सब चुप रहे। डाक्टर ने कहा—'मका धर्म है इनक पहले प्रालोचना ही हो चुकी है ? याद होया एक मीके पर यह तय हुआ या कि मेरे पीछे मेरे किसी काय की प्रालोचना नहीं बनगी हुआ यह कि मर बिच्छु विद्रोह की सृष्टि करना महान् अपराध है। इन सुर्मा की सजा मीत है।—डाक्टर ने भ्रष्ट विस्तार तान ली। सुमित्रा के होठ काँप रहे थे बोली—'घापस में यह क्या ?—तमबरकर ने मीत भंग करत हुए कहा—'प्रपूब जीवित है इससे मैं सुजी हूँ पर घापत इसम घग्याय किया। कृष्ण ऐयर ने कज्रा हिलाकर इन बात का समर्थन किया। ब्रजेन्द्र ने इस सहायुक्ति से ठाकर पाकर कहा—'जब एक का प्राण जाना ही है तो मेरा ही आप। मैं तैयार हूँ। सुमित्रा बोली—'एक ट्रेटर क बरले जब घापको एक ट्रायड कामरेड की जान की बकरत है डाक्टर, ता मैं भी प्राण दे सकती हूँ। डाक्टर इससे बिचलित नहीं हुए, बल्कि—'तुम्हें मैं धर्म का भय नहीं दिखाता ब्रजेन्द्र ! सुमित्रा तुम्हारे बल में रहे ता रहने को 'घाई बिघ सू पूब तक' पर मेरा रास्ता तुम छोड़ दो।—इसके बाद डाक्टर भारती का हाथ पकड़कर उठ गये। जाने समय बचि से दो-बार बात करते गये। रास्त में ठाक पर भारती बोली—'हमें तो मजदूरों की मलाई घिटा घादि से मतलब है इस रतपाठ से क्या बास्ता ? डाक्टर बोले—'बस कुछ कुली मजदूरों की मसाई के लिए मैंने 'पप के दावेबादों' की सृष्टि नहीं की इसका लक्ष्य बहुत बड़ा है। इस लक्ष्य के सामने जापद इनको भेड़ बकरी की तरह बलिदान करना पड़ेगा। बिम्बक घान्ति नहीं है। महा मानव क मुक्ति-सागर में मनुष्य की रक्तचारा सहूँ मारकर दौड़ चलपी बही मेरा स्वप्न है। नहीं तो इतन युव का पर्यंत-प्रमाण पाप घुसेपा कैसे ? घघान्ति पैदा करने का धर्म ब्रह्माचर पैदा करना नहीं है। घान्ति ! घान्ति ! घान्ति ! मुलने-गुलने काज परेपान हो गये। इस मिथ्यामत्र के

अपि वे ही लोग हैं जो दूसरों का घोप्य कर हबेसियों में रहते हैं। नहीं भारती। यह सत्वा जितनी भी पुरानी तथा पबिष हो उसे बहा देना ही पड़ेगा। हड़ताम जरूर एक तरीका है पर निर्यद्रव हड़ताम वा कोई धर्म नहीं होता। उसने साथ उपद्रव तो मया ही है। कोई भी हड़ताम तक तक नहीं होगी जब तक उसके पीछे बाहुबल नहीं है। अन्तिम परीक्षा उसी में हाती है। भारती ने कहा—'तो क्या मैं किसी काम नहीं प्रा सकती? डाक्टर ने सोचकर कहा—'बयों नहीं घातों की रोगघस्तों की बाढ़ गाबितों की सेवा को उपसध्य कर संस्थाएँ बन रही है पर इन सब कामों को मैं बच्चों का खेल समझता हूँ। भारत की स्वतन्त्रता ही मेरा एकमात्र सध्य है मुझे तुम घौर न लींओ भारती।

इसके कुछ दिन बाद कबि और नबतारा की घापी हो रही थी। कबि की यह साजुरोप प्रार्थना थी कि किसी समय डाक्टर भारती के साथ घाकर घापीबदि दे जायें। डाक्टर और भारती रवाना हुए पर भारती को कोई उत्साह न था बोली—'कितना गंवा मामला है? डाक्टर कुछ देर तक चुप रहे फिर बोले—'घापी और नबतारा की घापी घामब बहुत मे सोगों के संस्कार को बाधा पहुँचाये पर यह दोष घदी वा नहीं है। यह दोष उनका है जो कानून बनात हैं। मेरा एकमात्र शोभ यह है कि घापी मे नबतारा को प्यार किया।

फिर अन्ति पर बात थीत बसी डाक्टर बोले—'जान्ति माने मारकाट नहीं है जान्ति माने प्रत्यन्त इत घामूस परिवर्तन है। घञु का सग्य बन तथा बिराट मुडोपकरण बैलकर हम पबड़ात नहीं। घाज जो उनका घादमी है बस वह हमारा घादमी मो ता हो सकता है। नीमकान्त घञु को मित्र बनाने के लिए ही छाबनी में गया था। हाय नीमकान्त! कौन उसका नाम जानता है? घाय को एक चितपारी पूरे घूमाग को इतलिए जना सकती है कि वह जलती जाती है घौर साथ ही घपना ईबन घाप ही नंपह करती जाती है। नहीं मैं घानिकाइ से पबड़ाता नहीं। क्या प्रायचित्त केबल मुँह की बात है? पूर्वपुरवों के दुगाम्त-सचिठ पाप का

य परिवेय स्तूप घासिर लतम कैसे होगा ? करणा से ग्याय का बम कहीं बढ़कर है भारती ! अजबानीत मण्य स्वार्थे धीर पशुघाति ही इस यूरोप की ईसाई सम्मता का घसनी स्वक्य है जो हमारे ऊपर मदी है । ही सदी-बाहू बगरहू का बिसोर हुषा इतिहास में तो धीर बहुत कुछ कहा जाता है । एहू इबिस इतिहास लड़कों को बोलना पड़ता है धीर उदराम्न के लिए मास्टर्से को इसे पढ़ाना पड़ता है । कम्य राजतन्त्र की यही नीति है । रहा मैं सो मैंने बेघ की मसाई करन का बीड़ा नहीं बन्कि उनको स्वतंत्र करमे का बीड़ा उठाया है । यों जो माल घनापाभम बिपबाधम घादि लोलकर उसकी मसाई कर रहे हैं उनको मैं महान् मानता हूँ । मेरे हृदय की मलि ठी ठमी कुम्भी अब तुम्हें कि यूरोप की बौनी सम्मता नीति घर्म समुद्र के घसत गर्भ में डूब गया है । इस बिप कुम्भ को रोकर यूरोप अब सीदा करन बला भा तो उसको कैबम बापाम ने पढ़ाना पा ठमी ठी बह घाज यूरोप के समक्य हो रहा है

इस तरह बात करते हुए वे कवि के घर पर पहुँचे पर वहाँ मबतारा नहीं थी । कवि ने कहा—'नहीं घादी मेरे माय नहीं हुई, बह जो घइम' है गौरा-ना कूट साहूब की मिस बा टाइमकीपर है घाज कुपहर को उठी के माय मबतारा की घादी हुई । समी पहले से ठीक-ठाक बा मुम्ब नहीं बठाया पा । —घणी ने डाक्टर को घसम भि डाकर बठाया कि घपूर्व सीट घाया है । बात-बात में डाक्टर ने घणी ने कहा—'घब तुम्हारी मबतारा घर् पर कबिता ले उठी थी साधना करो, पर मबदुरों का कवि बनन की ब्यर्थे बेष्टा न करो । तुम बगानी मडगिधित एमात्र के कवि यो । फिर इसी प्रकार बातों के मिलमिने में डाक्टर ने कहा—'पुराना माने ही पबिब नहीं है भारती । मनुष्य सतर मान का हो चुका है इसी लिए बह एम बर्ष के गिग से पबिब नहीं हो जाता । × × × गिग संस्कार के मोह मे घपूर्व तुम्हें घसम हूग सकता है क्या बह प्राचीन होने पर भी पबिब हो सजना है ? तुम्हारा ईसाई घर्म भी घाज उनी प्रकार घसरय हो गया है एसा प्राचीन मोह तुम्हें त्यागना ही पड़ेगा क्याकि गमी घर्म

मिथ्या है धार्मिक कुसंस्कार है। विश्व-मानवता का इतना बड़ा घनु घोर कोई नहीं है।

भारती का बेहूरा फक पढ़ गया उसने कहा—‘तुम्हारा पय घोर हुमाय पय भाब सं भलग है मेरा स्नेह का पय है करुणा का पय है धर्म-विश्वास का पय है, यही पय मेरे लिए श्रेय है, यही पय मेरे लिए सत्य है।

भारती जब पर लौट गई तो उसको डाक्टर की बहु बात बार-बार याद आने लगी कि इस परिवर्तनशील जगत में सत्योपसर्गि नामक कोई वस्तु नहीं है उसका जन्म है मृत्यु है—युग-युग में काल-काल में मानव के प्रयोजन में उसे नया होकर आना पड़ता है। अतीत के सत्य को वर्तमान में नया समझना पड़ेगा यह आत्म-विश्वास है यह धारणा कुसंस्कार है। फिर सम्प्रसाधी ने यह भी कहा था—‘पराधीन देग में दासक घौर शान्ति की नैतिक बुद्धि जब एक हा जाती है तो उसस बढ़कर देघ का घौर दुर्भाव्य नहीं है, भारती! उस दिन इसका तात्पय समझ म नहीं आया था भाब जैसे बहु धर्म भारती के निरन्तर परिष्कृत हो गया।

सबैरे ही होटल के सरकार ठाकुर ने धाकर लबर बी बी प्रभुव बाबू कल राग से ही भारती का खोज रहे हैं। भारती का मुँह एक मुहूर्त क लिए मूल गया बोली ‘उनको मेरी क्या जरूरत पड़ी? सरकार ने कहा—‘गायब अपनी माँ की बीमारी के सम्बन्ध में कुछ कहें। भारती ने कहा—‘मुझे कुनंत नहीं। बपटने को तो बपट दिया पर बहु बराबर यह सोचती रही कि प्रभुव क्यों मिलना चाहता है। शान को घसी सामान महित था घमके। भारती ने उनको घर में नहीं लिया पर हँसकर होटल के डाक्टर बाम कमरे में ठहरा दिया।

घबग्मात् भारती को यह खबर मिली कि प्रभुव की माँ जो बर्मा घाई दी मर गई। फिर भारती सं म रका गया। बहु जिस धर्मघाम में प्रभुव टिबा था वहाँ पहुँची। बेला तो घनी-घनी कमरा पानी से घुला है। प्रभुव बीटा है उसके मुँह पर सघ माणुषियोप की छाया है। भारती

की धींकों में घाँसू धा मये । भारती ने कहा—‘समय हुआ था मैं स्वर्ग में बसी थी, पर तुम्हें ऐसे रहने न दूँगी बल्कि हमारे यहाँ । वह फिर गीने लयी । बोली—‘तभी मैं नहीं सुनती शनिवार के अहाज से बेश सीट जामा पर एक एक ता मेरी धींकों के सामने रही नहीं तो मैं पहर जाकर नक़्की । अपूर्व राजी हो गया ।

फिर एक दिन उसी मकान में जहाँ अपूर्व का मुक़रमा हुआ था पक्ष के शिकारियों की सभा हो रही थी । उसबदकर अत्यन्त आनन्द प्राप्त में विरफ्तार हुआ था सभाजना यह भी कि यदि भी जाय तो कम्भी सबा होमी । भारती ने पूछा—‘उमके असहाय परिवार का क्या होगा ? डाक्टर ने कहा—‘क्या होगा ? अकस्मात् अमुष्य मर जाने पर उसके परिवार का क्या होगा बही उमका होगा । बिदेसी कातून के अनुसार अपनी अग्नभूमि में भी हमारा कोई इक नही है । जंगली पशुओं की तरह हम मुद ही जान मिय मारे-मारे फिरते हैं । पुहस्य का दुःखमोचन कर सकें हमकी कोई सामर्थ्य नहीं है । पर उसबदकर शिकार्यत करनेवाला बीच नहीं है । जातिकारी की यही तो परम शिक्षा है । मैं अमर्बक कष्टमोच या रक्तपात में विरबाम नहीं करता पर यह भी नहीं मानता कि दूर से आकर जिन्होंने हमारी अग्नभूमि पर अधिकार बना लिया भूष का अल तृप्ता का आरि बुग लिया जहाँ की हत्या करने का मुझे अधिकार है मरे लिए और कुछ भी नहीं रहा । यह यमदुखि लूब रही । यूरोप की ईसाई सम्प्रदाय ने बढ़कर, कहते हैं कोई सम्प्रदाय नहीं है पर इससे बढ़कर मूठ भी कुछ नहीं है । बकनर बिदोह में इसी मुसम्म यूरोपीय सेना न की धार्याचार निव्या था उनके आनन्द अनेक तौ यीका नर जाता है । सूर्य के निजद दीपक की तरह वह मुफ़्ज है । उद्देस्य-सिद्धि के लिए अमके लिए तो सब जायज है नीति की बाधा केवल हमारे ही लिए है क्यों ? बात बढ़ गई पर बीच में मुमिजा ने टोक लिया । ऐपर ने कहा—‘समा का कार्या-रम होना चाहिये । डाक्टर ने मुमिजा से पूछा—‘तो तुमने पक्ष के शिकारियों का धरपट्टी छोड़ दिया ? मुमिजा बोली—‘हाँ मैं जाया सीट

जाड़ीगी। इतने में डाक्टर के सामने एक तार पेश हुआ जिसमें खबर थी कि कई जगह के बम पुमिस के द्वारा तोड़ दिये गये हैं। डाक्टर का सम्बन्ध ब्रेम्स पर था।

इसके कई दिन बाद की बात है। प्रपूर्व न तय किया था कि घब पाँच में रहकर गाँवबासों की सेवा करेगा। डाक्टर ने इस पर कोई उस्ताह नहीं दिखसाया। उन्होंने कहा—'किसाम की भलाई करना चाहते हो करो पर यह न समझे कि इस प्रकार मेरी सहायता कर रहे हो।' इस पर भारती बोली—'पाँच के प्रति तुम्हारी सहानुभूति कुछ कम है तुम्हारी दोनों पार्सों केवल सहर के कमी-मजदूरों पर हैं। तुम यहीं इन्हीं के बीच पाँच के दाबेदार सोलना चाहते थे। डाक्टर ने कहा—'ओ भी हो यही मेरा क्य है। डाक्टर के सामने घब दो काम थे एक जामीका बसब का जो ग्रंथ सिगापुर में है उसे बचाना और ब्रेम्स को खोज निकालना। डाक्टर सिगापुर के लिए रवाना हो गया। सुमिता बोले पड़ी—'तुम्हें तो यहाँ सभी पहचानत हैं। वहाँ न जाओ। भारती तो रो पड़ी बोली—'तुम तो हमें बचाना चाहते हो। सीढ़ी से नीचे उतरते-उतरते भारती बोली—'ओ घंटे-रंग मित्र थे वे सब फूट गये घब तुम एकलम धकेले हो। डाक्टर ने कहा—'बिलकुल वही पर धकेले ही शुरू किया था भारती। बाहर जारा की बर्षा हो रही थी फिर भी डाक्टर निकल पड़े। प्रपूर्व ने कहा—'एक दिन मुझे प्राणवान मिला था यह मैं हमेशा याद रखूँगा' प्रंचेर से जबाब आया—'तुम्हें पाना ही आपको याद रहा जिसने दिया उसे धापने याद न रखा। प्रपूर्व बाबू ने कहा—'इस बीबन में कमी भुनूँगा नहीं यह खूब मृत्यु तक मैं भूल नहीं सकता। दूर प्रंचेरे से प्रत्युत्तर आया—'यही हो प्रार्थना करता हूँ। वास्तविक बाता जो तुम एक दिन पहचान सको प्रपूर्व बाबू उसी दिन मध्यसाथी के खूज से मुक्त होगे' बात खतम न हो पाई। प्रस्तुट स्वर बापु में बिमीन हा गया। सब ने हाथ उठाकर इस बिलीयमान 'पाँच के दाबेदार' को नमस्कार किया। भारती सभी प्रकार पापाप मूर्ति की तरह प्रंचेकार में ताकती

की घाँसों में घाँसु था वषे । भारती ने कहा—'समय हुआ था मैं स्वयं में बसी गई पर तुम्हें ऐसे रहने न देती, बसा हमारे यहाँ । वह फिर रोने लगी । बोली—'नहीं मैं नहीं सुनती धर्मिकार के जहाँ से बेश सीट जाना पर लक्ष तक तो मरी घाँसों के सामने रहो नहीं तो मैं पहर जाकर नस्यैगी । अपूर्व राजी हो गया ।

फिर एक दिन उसी भक्तान में बहाँ अपूर्व का मुकदमा हुआ था पथ के बावेदारों की समा हो रही थी । तत्कालकर अत्यन्त भायस हासत में फिरफार हुआ था संभावना यह थी कि यदि भी आय तो लम्बी उबा होगी । भारती ने पूछा—'उनके असहाय परिवार का क्या होगा ? डाक्टर ने कहा—'क्या होगा ? एकस्मात् मनुष्य भर जाने पर उसक परिवार का जो होगा वही उनका होगा । विदेशी कानून के अनुसार अपनी जन्मभूमि में भी इमारत कोई हक नहीं है । जयसी पशुओं की तरह इन कुछ ही जान लिये मारे-मारे फिरते हैं । गृहस्थ का दुःखमोचन कर सकें इसकी कोई सामर्थ्य नहीं है । पर तत्कालकर शिकायत करनेवाला भीष नहीं है । नास्तिकारी की पक्षी तो परम पिशाच है । ये धर्मपंक कष्टमोचन वा रक्षण में विश्वास नहीं करता पर यह भी नहीं मानता कि दूर से घाँवर जिन्होंने हमारी जन्मभूमि पर अधिकार बना लिया भूष वा अन्न तुष्णा का बारि बुरा सिधा जहाँ की हत्या करने का मुझे अधिकार है मरे लिए और कुछ भी नहीं रहा । यह धर्मबुद्धि लुप्त रही । यूरोप की ईसाई नम्यता से बढ़कर बढ़ते हैं कोई सम्यता नहीं है, पर हमसे बढ़कर भूँष भी कुछ नहीं है । बकवर विद्रोह में इसी सुमन्य यूरोपीय सत्ता ने जो अत्याचार किया था उनके सामने बनेज ही प्येका पक्ष जाता है । मूर्ख के निष्कट बीचक की तरह वह तुच्छ है । उदरेप-सिद्धि के लिए उनक लिए तो सब आयक है नीति की बाधा कैवम हमारे ही लिए है क्यों ? बात बढ़ गई पर बीच में भूमिवा ने टोक दिया । ऐवर ने कहा—'समा का कार्या-रम होना चाहिए । डाक्टर ने सुधिया ठे पूछा—'तो तुमने पथ के बावेदारों का संस्पर्ष छोड़ दिया ? भूमिवा बोली—'हाँ मैं बाबा सीट

जाईंभी । इतने में डाक्टर के सामने एक तार पेस हुआ जिसमें लखर भी लि कई जगह के दस पुसिस क द्वारा तोड़ दिये गये हैं । डाक्टर का सम्बेह ब्रजेन्द्र पर था ।

इसके कई दिन बाद की बात है अपूर्व न तय किया था कि अब गाँव में रहकर याँववालों की सेवा करनेवा । डाक्टर ने इस पर कोई उपाह नहीं दिखलाया । उन्होंने कहा—'किसान की भलाई करना चाहते हो करो पर यह न समझे कि इस प्रकार मेरी सहायता कर रहे हो । इस पर भारती बोली—'याँव के प्रति तुम्हारी सहानुभूति कुछ कम है, तुम्हारी दोनों धाँसे केवल सहर क कुमी-मजदूरों पर है । तुम यहीं इन्हीं क बीच पप के दारदार कोसना चाहते थे । डाक्टर ने कहा—'जो भी हो यही मेरा रूप है । डाक्टर के सामने अब जो काम थे एक जर्मका कसब का जो अब सिगापुर में है उन बचाना और ब्रजेन्द्र को सोच निकालना । डाक्टर सिगापुर क सिण रवाना हो गये । सुमित्रा बोम पड़ी—'तुम्हें ठा वहाँ मुमी पहचानत है । वहाँ न जाओ । भारती ठा रो पड़ी बोली—'तुम तो हमें बचाना चाहते हो । सीड़ी से नीचे उतरत उतरत भारती बोली—'जो अंतरण मित्र थे व सब छुट गये अब तुम एकदम अकेले हो । डाक्टर ने कहा—'बिसकुल बही पर अकेले ही शुरू किया था भारती ! बाहर आरों की बर्पा हो रही थी फिर भी डाक्टर निकल पड़े । अपूर्व न कहा—'एक दिन मुझे प्राणदान मिला था यह मैं हमेशा याद रखूँगा' पंचेर स बचाने आया—'तुम्हें पाना ही धापको याद रहा जिसने दिया उसे प्राणन पाव न रखा । अपूर्व न कहा—'इस जीवन में कमी मुमूँगा नहीं यह अथ मृत्यु तक मैं मूस नहीं सकता । दूर अँबेने म प्रत्यु सर आया—'यही हो प्रार्थना करता है । वास्तविक दाता का तुम एक दिन पहचान सको अपूर्व न बाबू उसी दिन मध्यसाथी के अथ से मुक्त होय बात खतम न हो पाई । अस्तु स्वर वायु में बिनीन हो गया । अब मे हाथ उठाकर इस बिनीममान पप के दारदार को नमस्कार किया । भारती उमी प्रकार पापाव मूर्ति की तरह अंधकार में ताकती

हुई लड़ी रही। किसी की बात उसे सुनाई नहीं पड़ी वह यह भी नहीं जान सकी कि उसी की तरह एक और नारी की बोनों धाँसे धाँसू स भर उठी थी।

संक्षिप्त समालोचना

संक्षेप में यही 'पपेर दाबी' की कहानी है। ४०० से अधिक पृष्ठों पर विस्तृत सामग्री का इतने बड़े से पृष्ठों में संकलन करने से स्पष्ट है कि उसके बहुत से धब्बे भस पड़ी नहीं जा सके। फिर भी कहानी के सम्बन्ध में पाठक को एक प्रच्छा घन्बान हो गया। डाक्टर या सम्पसाची इस पुस्तक का नामक है। वह सीधे स्नायु का व्यक्ति है। वह न तो कभी बकना है न पबड़ाता है न पीछे हटता है इसके लिए उसे बरा भी ठग नहीं पाता। साथ ही वह मारती के लिए अपूर्व जैसे विस्वातपाती व्यक्ति को (जिन्हने दल की सारी लबर पुत्तिस को दे दी) बचा लेता है और किसी भी प्रकार उस जाशिकारी प्रतिहिता का शिकार नहीं होना देता। यह स्पष्ट है कि मुमिना डाक्टर को प्यार करती है केबल एक जिव्या की तरह नहीं प्रेमिका की तरह पर डाक्टर उसके प्रेम का प्रतिदान नहीं देता। इसका धप यह नहीं कि डाक्टर प्यार ही नहीं करता बल्कि स्पष्ट है कि वह अपने को संयत मान करता है। मुमिना अस्यन्त रुपबती रही है साथ ही उसकी बुद्धि भी बड़ी प्रचर है इस कारण उसके प्यार का प्रतिरोध करना डाक्टर की प्रबल शक्ति का परिचायक है। मुमिना पपेर दाबी का काम करती है बड़े खोर्टे से करती है उन पपेर दाबी की सम्पसाता फबती भी है पर तिस प्रकार वह एकाएक अपने उठाये हुए इस काम को परिवान कर जाबा बस देती है बा जाबा जाने का कसमा करती है उससे जाठ होठा है कि वह केबल डाक्टर के प्रेम में बत में भाई थी या अधिक से अधिक उसके साथ रोमाँ बिलता का लाभ भी था। उपोक्त बात के सम्बन्ध में यह दाब रहे कि मुमिना पहले खोरी से धधीस-गाँवा बेबने वालों के दल में थी। अपूर्व

एक मुद्रित पर दुर्बलचित्त व्यक्त है, उच्च शिक्षा पान पर भी धार्मिक कुर्मस्कारों से उसका छुटकारा नहीं हुआ। यह हमारी शिक्षा की पोस है। अपूर्ण बंगाल का ही क्यों ग्राम निम्नमध्यम वर्ग का हुबहु चित्र है। अरु सी बात में वह सब साधियों को पुनिस के हवास कर देता है। फिर अब डाक्टर की दया से उसका प्राण बचता है, तो वह एक तरह से बेचम्य मकर मीन में काम करने क बहुते अपन निम्नमध्यम वर्गीय धातमस्ताथा को कृप्य करके बैठ जाता है। भारती एक अच्छी लड़की है वह बिदवास-घात नहीं करती पर अपनी प्रयत्न पर अपूर्ण की तरह अपने वर्ग की प्रतिनिधि है। उसकी उच्छ्वासमयी भावुकता जिसका आधार अक्षर हुआ में रहता है उसे किसी अन्तिकारी दम क प्रयास बनाती है। अपूर्ण स उसका दर्जा केवल इनता ही ज्ञेया है कि वह बिदवासघात नहीं करती बस। पथर दाबी में यही पार मुख्य पात्र है इन्हीं क चरित्रों का परिस्फुटित करण क लिए अन्य पात्र-यात्रियों की अवधारणा होती है।

यह बताया जा चुका है कि पथर दाबी पुस्तक बहुत दिनों तक अल्य थी। इससे यह स्पष्ट है कि इस पुस्तक को सरकार ने राजनतिक महत्व दिया। जनता ने भी इसकी हजारों कापियाँ इस पुस्तक का राजनतिक ममभकर ही करीनी। सन्देह नहीं कि शरन् बाबू की इस पुस्तकों में यह अधिक राजनतिक है। डाक्टर या सम्बसाथी का चरित्र ठीक बसा ही है जैसा माधारण कापों के मन में कान्तिकारियों का चित्र है। यही कारण है कि इस पुस्तक की जनप्रियता इतनी अधिक हुई। इस पुस्तक में शरन् बाबू ने मानो जनमन के उसी चित्र को साकर रच लिया। मीन विमान क लिए इस पुस्तक क चार पात्र गिना तो पिय पर यदि किसी उपन्यास को एकपात्र का उपन्यास कहा जा सकता है तो यही है। डाक्टर या सम्बसाथी ही यह पात्र है। मिन लोगों ने शरन् बाबू क अन्य उपन्यासों को पढ़ा है वे जानते हैं कि सम्बसाथी का चरित्र शरन् बाबू के पाठकों के लिए अपरिचित नहीं है। 'चरित्रहीन' क सतीश तथा 'भीमान्त' के भीमान्त स इसकी विशेष समता है सब बात तो यह है कि राजनतिक रच क

समाज कोई आचारगत प्रभेद नहीं है। हाँ साथ में यह भी है कि सभ्य
 साक्षी मारी के प्रेम के प्रति उदासीन है। रोमांचिकता में सभ्यसाक्षी
 भीकान्त से कुछ पीछे ही रहते। यीकान्त तो निश्चित मृत्यु के मुँह में
 बार-बार जाता है और उसके निकसता है। यद्यपि सभ्यसाक्षी जिन विप
 त्तियों में बार-बार पड़ते हैं उनका वायरा बिस्तृततर तथा राजनैतिक है।
 सुमित्रा का बचान वाली घटना को राजनैतिक नहीं तक माना जाय इसक
 सम्बन्ध म तक उठ सकता है। प्रेम के प्रति उदासीनता यानी प्रेम होत
 हुए भी उदासीनता पर्यु बाबू के पाठकों के लिए कोई नई चीज नहीं है।
 'विरिहीत' की साक्षिणी में भी हम यही चीज पाते हैं। यदि केवल इसी
 कारण भया करनी हो तो साक्षिणी सभ्यसाक्षी के मुकाबले म कम भयना
 नहीं समझी जायगी। पर हाँ ऐसी दुमना म अस्तर गलती हो जाती है।
 इस क्षेत्र म एक प्रमेद यह है कि साक्षिणी के लिए सही सामाजिक बप
 से अप्राप्य या और कम से कम साक्षिणी उस बन्धन को तोड़ने के लिए
 तैयार न थी पर सुमित्रा लोग सभ्यसाक्षी के बमिमान ऐसी कोई बाया थी
 तो सभ्यसाक्षी के मन म यानी उसकी इस भावना में कि मारी का प्रेम
 एक नास्तिकारी क लिए वजित है। नास्तिकारित्व की यह धारणा भी
 एक धाम भावना थी यानी उस समय जब यह पुस्तक लिखी गई थी।
 जब इस पुस्तक के सम्बन्ध म एक प्रश्न यह है कि क्या हममें भारत
 के विशेषकर बङ्गाल क प्रातःकवावी नास्तिकारी धामोसन का सही चित्र
 था जाता है। सभ्यसाक्षी का चरित्र एक नास्तिकारी धामोसन का सही चित्र
 पर पुस्तक इतनी बढ़ी होने हुए भी नास्तिकारी धामोसन का सही चित्र है
 या समग्र चित्र हमारे सामने नहीं था।
 'पय के बाबबार' में नास्तिकारी चरित्र का जो उद्घाटन किया गया
 है वह नितास्त अपूर्ण है और वह बहुत कुछ रोमांचिकता में ही पर्यवसित
 होकर रह गया है। इस बात की और धमाधमिकारी धामोसकों का ध्यान
 भी धारुप्त हुआ है। थी सुबोध सेमपुप्त कहने हैं—
 'सभ्यसाक्षी का चरित्र विम्वयवमक है और उसकी भावनाधा तथा

बिचारों का चित्र बड़ी निपुणता के साथ प्रकृत किया गया है। फिर भी उपन्यासकार उसके जीवन के रहस्य को पूरा रूप से उद्घाटित नहीं कर पाये। सम्भव तो हम देखते हैं कि वे कभी भी अपनी कर्म-पद्धति की पूरी व्याख्या नहीं करते। वे बर्मा में कुछ दिनों के लिए धाये के और उन्होंने वहीं पर सुमित्रा की सहायता से एक समिति बनाई थी पर उनकी असली कर्म-पद्धति क्या थी इसे जानने का कोई उपाय नहीं है। एक हीरासिंह इस कमधारा से परिचित है पर हीरासिंह भी केवल समाचार देता है असली तथ्य कोसता नहीं है। पब के बाबेवार के सवस्वों में कृष्ण ऐम्बर और सुमित्रा डाक्टर के पुरान मित्र हैं। वे कुछ कुछ जानते हैं। पर मामूम होता है कि उनका ज्ञान भी उमरी है। एक उबाहरन से ही बात स्पष्ट हो जायगी। डाक्टर ने एक बार कहा था—‘मामो के कुछ उत्तर में इस समय रास्ता खानू है। पर सफेद जमीन का मान है सिपाहियों के पास अश्वे दामों पर बिकेगा।

उन्होंने नीलकान्त बोधी के प्रसंग में बताया है कि यदि पलटन के सिपाहियों के नाम बता दिये जाते तो उसे प्यंसी नहीं होती और वह उनसे मित्रता करने गया था। उन्हें गणित-परीक्षा नहीं थी। डाक्टर मारती को यह कहकर तसस्ती देते हैं कि भाज जो जानू हैं कम क मित्र भी हो सकते हैं। सम्भव हम देखते हैं कि उनके शिष्य महात्तप और मूय सिंह रेजिमेंट में थे और वहाँ से जाकर सभार्द में पकड़े गये थे। इन आभासों तथा इंगितों से यह पता लगता है कि मध्यरात्री के काय का प्रथम सद्य है भारतीय सेना में बिद्राह का प्रचार करके उन्हें पडयम्भ में भीषता पर इस कमजाम का कोई चित्र नहीं है। जो आभास तथा इमित है वे भी अस्पष्ट है।

वी सेतगुप्त ने जो बातें कही हैं उनमें सही होते हुये भी माप हा यह मानत ह्य कि ‘पब के बाबेवार’ में पाठिकारी दल की योजना की कोई स्पष्ट कपरेगा सामन नहीं आती। हम यह भी कह्ये कि उपन्यास का उपन्यास होन के नाते ही यह सद्य नहीं हो सकता था कि उसमें उक्त सारी बातें

मा कार्य । घासोबक ने जो बानें पय के बाबेदार के बिरद नही हूँ वे ही बातें नातिकारी कलाकार वोर्की की पुस्तकों के संबंध में भी कही जा सकती हैं । वोर्की का ता सरा साहित्य ही विशेषकर 'मा' तो नातिकारी घासोबक को उपजीव्य बनाकर चलता है । पर इसमें भी नातिकारियों के कार्यों का इतिहास ही घासोबक ने ही बर्नत है ।

बंगाल का घासोबकी नातिकारी घासोबक अनिबाय रूप से नौजवानों का एक घासोबक या पर इसमें के मुख्य पाम या पानी कोई भी नौजवान नहीं है । भारती एक मजदूरी बरूर है पर पता नहीं वह 'पयेर दाबी' समिति के साथ कैसे समुक्त हो गई है । वह एक विद्यालय बनाती है पर इतने ही से वह केन्द्र की घासोबक कम्पनी में कैसे बैठती है यह समझ म नहीं आता । ऐय्यर बैरिस्टर है तबकरकर मुन्नी है मुमिना की जीविका क्या है न तो यही मामूम है और न यही पता चलता है कि वता म असल क्या काम किया ? हाँ जब भी बल की घासोबक कमेटी की ममा होनी है वह मध्यमता के रूप में मजर घाती है । इस प्रकार का बिना नौजवान घासोबक का कर्तव्य नहीं है । घासोबक को हम इस सम्बन्ध में नही आता । पयेर दाबी के काम देगिये तो भी कुछ समझ न जतना परम्परा करते हैं बोर्ड बर्नती नहीं करते न मामूम उनको बन कहीं से मिलता है कोई नातिकारी पचा नहीं बैठवाते । इस प्रकार के जन कामा में से एक भी नहीं करत जो नातिकारी घासोबक की विधिपतायें की । समिति के नेतृत्व में मजदूरों की एव ममा होती है पर वह साठी बाज करके मंग कर ही जाती है फिर प्राये क्या होता है इसका कुछ पता नहीं मपना । फिर मजदूरों की ममा में दम के घाम बायबम में क्या सम्बन्ध है यह भी पता नहीं लगता । घासोबक बाबू हम चीज का नहीं समझे हमनिय हम उन्हें दोष नहीं दे सकते क्योंकि उन जमान के नातिकारी ही हम न की नहीं समझत थ ।

भारती एक ईमानवान होने लिये भी सम्पूर्ण रूप में मध्यम क्षेत्री की

बङ्गासी सड़की है। वह बड़ी मानक है पर उसकी मानकता का प्रसार व्यक्तिगत के अलावा कोई गम्भीर धर्म नहीं होता। अपूर्व क मुखबिर हो जान के बावजूद वह उसके प्रति मन ही मन बितनी घासक्त रहती है वह एक ऐसी बात है जो समझ में नहीं आती और यह तब जबकि वह अनुभव कर सकती है कि वह कितने कुछ व्यक्ति के साथ प्रेम में पड़ी है और वह कितना स्वार्थपर है कि उसे केवल मौकरी की ही फिक है किसी और बात की नहीं जैसे उसकी मुखबिरी से कितने सोम कंठ रहे हैं इसकी उसे कुछ परवाह नहीं है। ऐसी हानत में भी उसके लिए भारती का धांसू बहावे रहना समझ में नहीं आता बिशेषकर जब अपूर्व बराबर उसे प्रसूदया समझता है और मूसकर भी उसका सुमा हुआ नहीं आता है। ऐसी हानत में प्रेम का होना एक मोह के रूप में ही है। इससे अधिक और क्या कहा जा सकता है। इसके लिए भारती के प्रति यत्ना बटती ही है बढ़ती नहीं। फिर भी देना जाय तो सारी पुस्तक में अपूर्व के प्रति उसके प्रेम को ही हम उसके बिचारों के केन्द्रस्वम के रूप में पाते हैं। इससे न तो नातिकारिणी के रूप में उसके प्रति भ्रष्टा बढ़ती है न नारी के रूप में ही। एक दृष्टि से देना जाय तो अपूर्व के प्रति भारती का प्रेम न कबल भारती क जीवन की बल्कि इस पुस्तक की ही केन्द्रीय बटना है। यदि यह प्रेम न होता तो इस पुस्तक की कई बड़ी-बड़ी घटनायें नहीं होतीं। उस हानत में न तो अपूर्व की जान ही बचती न ब्रजेन्द्र ही बहककर मुखबिर हो जाता न रामब मुभिजा ही जाया आती न इस के कई केन्द्र पुनिस के विचार होत, न बाबुटर अन्तिम क्षण में अज्ञात पय की घोर रबाना होन। इस प्रकार यह प्रेम अपनी जगह पर बहुत ही बड़ा है। इस सम्बन्ध में एक बात का पता पुस्तक के अन्त तक नहीं लगता कि इस प्रेम का हृय क्या होता है नमाज का धृषाष्ट का व्यवधान तो इनक बीच से नहीं हटता। ऐसी अवस्था में अपनी जयह पर यह भी एक दुःखान्त बटना ही है। इस प्रेम से पपेर दाबी की हानि ही होती है।

धरत बाबू की पुस्तकों में पपेर दाबी की बिघपता यही है कि यह

राजनैतिक रङ्ग में रंगी हुई है और भारतीय पाठकवारी क्षमिकाारी धाम्दोमत का एक सही या समत पर सजीव चित्र है। कला की दृष्टि से धरत् बाबू की पुस्तकों में इसका स्थान कोई उच्च नहीं है। मनोबोगों के जिस बातप्रतिपात के कारण उनके उपन्यास उच्चकोटि के क्यात हो चुके हैं इस पुस्तक में यदि सर्वथा नहीं तो तुलनात्मक रूप से उसका प्रभाव पाठक जिस तादात्म्यता का अनुभव करता है पर उसके मनोबोगों के साथ भारतीय के साथ नहीं अनुभव कर सकता। इस कारण इस उपन्यास का वह बिरबजनीन आबेधन नहीं है जो उनकी दूसरी पुस्तकों को प्राप्त है। किसी न किसी समय प्रत्येक मनुष्य अपने को देवदास की धरना में पाता है पर धूर्त या सम्पसाधी के विषय में यह बात नहीं कही जा सकती। धारमवत् समझकर नहीं करेगा। इस कारण वह प्रपंचा कितनी भी उच्छ्वसित हा उतनी धम्नीर नहीं हो सकती।

इस उपन्यास की पात्रियों की धोर देखा जाय तो वे भी धरत् बाबू की दूसरी पुस्तकों के मुकाबले में कम दिसवत्स हैं। सुमित्रा की तुलना परिबहीन की साबित्री से की जा सकती है पर वीसा कि मीने पहल ही कह दिया लोगों में बहुत चर्चा है। साबित्री से सुमित्रा को हर हामत में अधिक उज्ज्वल होना चाहिय पर क्या वह एसी है? सुमित्रा हर समय अपने प्रेम को प्रकट करने के लिए सातापित रहती है उसकी तरफ से कोई बाधा नहीं है पर साबित्री का समय कितना भीम्य है। यह हम मानते हैं कि साबित्री का समय एक कुमत्कारपूर्ण धामिक विचार की नीव पर स्थित है पर इसमें क्या उगमें उसके चरित्र की मीम्यता बिगर जाती है? यदि इस समय में जेरेर दाधी का कोई पात्र साबित्री का मुधा-बला कर सक्ता है ता वह डाक्टर है। बल्लि डाक्टर का समय साबित्री से मीम्यतर है पर उसकी भी नीव बयान के धारकवारी पात्रधारियों में प्रशंसित म धाम संरका पर है कि कानिकायी का नारी के प्रेम से

परहेज करना चाहिये। फिर भी इस संस्कार का प्रभाव केवल परम्परा न होने का कारण इसको हम एक बीबागनी के रूप में देख सकते हैं। सुमित्रा को जिस घासन पर उपवास में बार-बार बैठाया गया है यानी 'पवेर दाबी' की प्रशिक्षा के घासन पर वहाँ से उसे ज्यादा उम्बस होकर हमारे सामने घान का मौका है फिर भी बौद्धिक रूप से वह 'चरित्रहीन' की किण्वमयी से कही पीछे है। उसके अनिकारित्व पर घटा होती है पर जब यह मायूम हो जाता है कि वह किनी भी कारण से हो बार को दस छाड़कर आबा खली आयगी ता हम कातिकारी जीवन की भी कसई लूस जाती है। तब यह स्पष्ट हा जाता है कि यह तो केवस डाक्टर के प्रति घात्मनिवेदन करन का एक तरीका मात्र था। यदि डाक्टर कातिकारी होने के बजाय चाही से घफीम की घामदनी और रफ्तगी करनबाय होत तो सुमित्रा भी उसी में हो जाती। यह तो एक घाकस्मिक बात थी कि डाक्टर कातिकारी निवसा। कहीं भी यह बाहिर नहीं होत कि सुमित्रा देघामकितवस या किसी और उच्चतर उद्देश्य से 'पवेर दाबी' में घाई है। उस रोमांच में प्रेम भी है और बिपत्तियों को कनपटी के पास से सौय-सौय करके निकलती हुई दलकर उसे लुगी ही हाती है पर इससे मेरी कही हुई बात कटती नहीं पुट ही होती है।

इस पुस्तक की दूसरी पात्री भागती है पर जैसा कि मैं पहले ही कह चुका है शरद बाबू की पात्रियों में उसका कोई भी उच्च स्थान नहीं हो सकता। वह तो सौंड़ के मोबर की तरह न दबाय है न बर्माय है। उसकी मायुकता बहुत ही निम्नकोटि की है। वह तो मानो हवा में उड़ती है पर यह कोई बिरोपता नहीं है। यह नारीमात्र का एक घकिनाम्य पुष है।

फिर भी इसमें कोई मन्वेह नहीं कि कसा की दृष्टि से न सही भारत वर्ष के रात्रनैतिक जीवन के एक महत्वपूर्ण घष्याय को सजीव रूप में पेश करन की एक अवदंस्त बेघटा के रूप में इस पुस्तक को एक घपनी ही बिघ पता प्राप्त है। इस दृष्टि से यह बराबर पढ़ी आयगी पर घन्त में मैं फिर एक बार कह दूँ कि चरित्र-दृष्टि तथा कसा की दृष्टि से यह

पुस्तक शरत् बाबू की सर्वोत्तम कृतियों में नहीं है। हाँ एक बात तो मैं कहना ही मूल गया कि चरित्र-सृष्टि तथा कला की दृष्टि से इसी पुस्तक के तैयारी अपूर्व की माँ हीरासिंह चावि गौन पात्र बस्तिक अधिक परिष्कृत हुए हैं। हाँ वैसे कि मैं कह चुका हूँ सम्बन्धी का चरित्र वड़े ही उज्ज्वल तरीके से लोभा गया है धीर बहू शरत् के चरित्रों में एक मौलिक चरित्र भी है।

श्रीकान्त

श्रीकान्त शरत्चन्द्र का बहुत ही बड़ा उपन्यास है। उसे पूरा पढ़ना चाहिये। इसलिये हम उसका संक्षिप्त सार न देकर इस सम्बन्ध में शरत्चन्द्र के विचार ही देते हैं। यों तो श्रीकान्त की धारणा यथार्थ हमारी सारी पुस्तक में ही पा गई है।

१२ ११ १२ को प्रकाशक हरिबाबू चट्टोपाध्याय को पत्र लिखत हुए शरत् बाबू न श्रीकान्त के सम्बन्ध में लिखा था— 'श्रीकान्त की भ्रमण कहानी सचमुच 'भारतवर्ष' पत्रिका में छपने योग्य है ऐसा मैं नहीं समझता था धीर अब भी नहीं समझता पर कोई कहीं छापे इसी पर मैं सोच रहा था। इसमें प्रारम्भ में ही जो रूप है उनके कारण इसका स्थान आपके पत्र में नहीं हो सकता यह तो जानी हुई बात है पर दूधरी तरह के किसी पत्र को धारण इस पर कोई प्राप्ति न हो यही भ्रमण का इसीलिये आपके मार्फत इसे भेजा था। यह धारण करें तो धीर भी लिखूँ। बहुत-सी बातें कहने की हैं पर वैयक्तिक रूप धीर विद्वान् नहीं तक है पर धन्त तक सभी बातें सच रूप में ही लिखी जाएँगी। पर मेरा नाम किसी तरह मामूली न हो' यहाँ तक कि आप धीर उपेक्ष बाबू क घसावा धीर जिन्ही को पता न गये। 'श्रीकान्त' की प्रामाण्य के साथ कुछ सम्बन्ध तो रहेगा ही इनके घसावा वह भ्रमण कुलात्त है पर इसका

१ रमण दे कि शरत्चन्द्र का श्रीकान्त पहिले-बहाने उनर नाम न गरी बचक।

‘मैं’ माने मैं नहीं। धमुक व साय शकहृष्ट किया धमुक के साय सटकर बैठा यह सब इनमें नहीं है।’ × × × जो कुछ भी हा ‘धीकान्त’ पढ़कर भोग किस तरह छी-छी करते हैं, यह रूपया मुझे सूचित कीजिये तब तक ‘धीकान्त’ में प्राप्त एक भी पत्रित नहीं लिखूंगा।”

३ अप्ट १३४० का उन्होंने विभीषणुमार राय को लिखा— ‘पञ्चम पत्र लिखकर ‘धीकान्त’ खत्म कर दूँगा जो मनसा प्रादि के सम्बन्ध में होमा और यदि तुम भोग कहो कि अनुर्य पत्र प्रच्छा नहीं रहा तो बस यही कपासमापन होती है।’

१० मात्र १३४ को श्री विभीषणुमार राय को ही उन्होंने लिखा— ‘तुम्हें ‘धीकान्त’ का बीया पत्र इतना प्रच्छा मगा जानकर किठनी नुमी हुई मैं नहीं बता सकता क्योंकि मैंने इस पुस्तक को सबमुप मन दकर सहाय पाठकों का प्रच्छा मगने के लिए लिखा था। धीकान्त के भाष्य में तुम्हारी तरह का एक भी पाठक जुटा यह मर लिए परम धानन्द की बात है। दूसरे पाठक को मुझे प्रच्छा नहीं है। कम से कम न हो ना मुझे कोई दुल नहीं है।’

इसके बाद ७ मंत्र १३४१ को उन्होंने लिखा— ‘यब तुम धीकान्त का अनुवाद शुरू करा। पीठ हुए इसका अनुवाद देख जाई।’

बाद को बनकर उन्होंने धीकान्त का किस प्रकार अपनी मर्भधष्ठ रचना मान लिया और वे यह चाहत व कि इनका सबधेष्ठ अनुवाद पग हो यह अन्य प्रमग में बताया गया है।

द्वेष प्रश्न

दरगुपत्र के उपस्थाओं में ‘द्वेष प्रश्न’ अपन हग की निरामी इति है। सभी मर्तो के अनुमार दरगुपत्र हम उपस्था में अपन किमी प्राय उपस्था में अधिक प्रचारक बन मैं इष्टियोवर होत हैं रहा यह कि बता

१/ द्वा ररर वान उन दिनों करने बन अनय गुपत्रों पर ह- दीधच्छी
१।६।

कार सरलचन्द्र इससे दुष्प्र तथा कुच्छिन्न हुए हैं या नहीं यह दूसरी बात है। कुछ समासोचकों का कथन है कि प्रचारक सरलचन्द्र के स्वार्थ के मारे इसमें कलाकार सरलचन्द्र का कहीं पता ही नहीं मिलता है कुछ लोगों का मत है कि इस उपन्यास में दोनों का कलात्मक समन्वय है।

सरलचन्द्र ने यद्यत् 'सोप प्रदन' पर कुछ लिखा है, जिसे पता चलता है कि वे यह समझ के कि 'सोप प्रदन' सोपों को धान्य देन के लिए नहीं बल्कि चायुज समाने के लिए लिखा गया है। २३ मार्च १९३४ में श्रीमती खपारानी दबी को उन्होंने लिखा था— 'घन्ट तक पसकर 'सोप प्रदन' में चायब में बहुतों को व्यर्थ कस्यो फिर भी जो कुछ ठीक है उसे कहना जरूरी है। इसके बाद जो होगा सो देखा जाएगा।

इसके चार साल बाद ३० अगस्त १९३८ को उन्होंने उक्त दबीजी को लिखा— "मुझे यह जानकर बहुत खुशी हुई कि 'सोप प्रदन' तुम्हें प्यारा लगा। मैंने सोचा था कि चायब छारे बंगाल में यह पुस्तक किसी को प्यारी न लग। मैंने सोचा था कि सिर्फ यात्रियों ही मिसेयी पर देवता हूँ मय का कोई विशेष कारण नहीं है। मरूमि के बीच-बीच में गन्धमिस्तान भी मिल रहे हैं। कई चिट्ठियाँ आई हैं। एक महिला ने लिखा है कि उनके पास यथेष्ट रुपय होते तो इस पुस्तक को छापकर बिना मूल्य बाइबल की तरह बितरित करती। यह एक दिया है दूसरी दिया अभी प्रकट नहीं हुई है यह धीपी बस निकसेगी तभी उसका परिचय दियेगा।

"अति प्रापुनिक साहित्य क्या हुआ पाहिए हममें उसी का थोड़ा सा दमित दिया गया है। कुछ होता जा रहा है। धीरे यह धनुभव कर रहा है कि अस्थायमान हूँ दमिये जो सोप हम समय अक्षितमान तबीन साहित्यिक हूँ उनके मामले में जल्दतापूर्वक यह रचना रचे जा रहा है। घाने उनका काम है कि उसे पुष्पित-वस्त्रबित करें और उनमें चार बाँध सगा उसे समृद्ध करें। हमेशा से माया पर मेरा अधिकार बहुत कम रहा है। मेरा शब्द-मन्थार बहुत छोटा है यह सम्वाद धीरे जाहे बिगी न टिपा

हो पर तुम लोगों से छिपा नहीं है। साम ही कहने को बहुत-कुछ रह गया वे जाने का समय नहीं रहा उसी को थोड़ा सा अभिव्यक्त करने की चप्टा 'श्रेय प्रदान' में की गई है।"

इसके लगभग एक सप्ताह के अन्दर ४ अप्रेल १९३८ को उन्होंने उस समय जेलवासी एक अन्तिकारी को लिखा— 'श्रेय प्रदान' उपन्यास तुम्हें इतना अच्छा मया इससे मुझे बहुत खुशी हुई, इसमें बहुत से सामाजिक प्रश्नों पर विचार किया गया है, पर समाधान का भार तुम लोगों पर है। शायद भविष्य की इस कठिन जिम्मेदारी की सम्भावना ही तुम लोगों को इतना ध्यान दे सकी है। दूसरी तरफ मेरी यह धारणा है कि इस पुस्तक से लोग बहुत निरास होंगे और उन्हें आनन्द नहीं मिलेगा। एक तो गत्यांश बहुत कम है। ठीक पर सोच-सोचकर पढ़ना पड़ता है, पढ़कर समय काटना या नींद की कुरूपक के रूप में निश्चित होकर धारण से शीर्षे प्राधी बन्द करके उपयोग करने की वस्तु यह नहीं है। ऐसी बात अच्छी नहीं मगती फिर भी मैंने यह समझकर लिखा था कि शायद किसी-किसी को पसन्द आये तो उतने ही से मेरा काम बनेगा। सब के लिए सब तरह का रस उपयुक्त नहीं है। मैं इस सम्बन्ध में अधिकार मेव मानता हूँ।"

इसके बाद उन्होंने पूर्व पत्र की बातों की पुनरावृत्ति सी करते हुए लिखा कि यह पुस्तक अति प्राबुनिक साहित्य के लिए इमिठ है उन्होंने लिखा— "इससे शायद तुम लोगों को यह आभास मिले कि गम्भीर के बिना भी अतिप्राबुनिक साहित्य का सुजन हो सकता है। केवल कीमत यद्दुर रचानुभूति ही नहीं प्राबुनिक काल के रस-साहित्य का यह भी एक कार्य है कि इष्टलेख के लिए बसकारक रसव पहुँचाई जाय। इसके बाद जब तुम लिखोगे तो तुम लोगों को भी बहुत कुछ पढ़ना पड़ेगा बहुत कुछ चिन्तन करना पड़ेगा। जबल चित्तविनोद की जिम्मेदारी निमाने से ही साहित्यकार की छुटी नहीं होगी।"

'श्रेय प्रदान' एक नाबिक-प्रमान उप-यास है। सब बात तो यह है कि

इस उपन्यास की नायिका कमल ही इस उपन्यास की एकमात्र पात्र या पात्री है। अन्य पात्र-नायिका भी इस उपन्यास में हैं पर वे न केवल यौथ हैं बल्कि ऐसा ज्ञात होता है जैसे कमल के चरित्र को स्पष्टतर करन के लिए ही उनकी सृष्टि हुई है। मानो इसी स्पष्टीकरण रूपी कर्तव्य को निमाने में उनकी चरम सार्पकता है। हमने सरज् बाबू के अन्य उपन्यासों की समालोचना में जिस पद्धति का प्रयोजन किया है कि पहले पाठक को सम्पूर्ण उपन्यास के कथानक को सविष्ट रूप से पेश कर दिया और फिर उसकी समालोचना की जाए, 'शेष प्रश्न' की समालोचना में हम उस का अनुसरण नहीं करेंगे। 'शेष प्रश्न' का कथानक अपेक्षाकृत इतना कम है कि हमें इस उपन्यास के विषय में इस पद्धति का प्रयोग समीचीन ज्ञात नहीं होता। पात्र-नायिकों के कथोपकथन के ही जरिये यह उपन्यास प्राये की ओर बढ़ता गया है फिर भी कथानक हो ही नहीं ऐसी बात नहीं।

डाक्टर सुबोध सैन का कहना है कि "कमल में बहुत बातचीत की है तथा राजन्म के अतिरिक्त वह और सब पर जाबू की सफ़ाई फेर देती है। तर्कबहुल प्रचारमूलक उपन्यास का मानव्य या मूर्खी उपन्यास और प्रेरणामूल की कहानियों के मानव्य से भिन्न है। प्रचारमूलक साहित्य के कथानक का पुक्ति-तर्क से विच्छिन्न करके नहीं देखा जा सकता और उसमें भाव हुए पुक्ति-तर्कों का घटना के बिना से घुसक करने पर न प्राणहीन हो जाते हैं। किसी भी प्रचारपरी सख्त उपन्यास या नाटक की समालोचना करने पर यह ज्ञात होगा कि इस धरी के साहित्य में तर्क और कथानक का सम्बन्ध अत्यन्त होता है। जब बात तो यह है कि इस तरह के साहित्य का उद्देश्य है कुछ घटनाओं के पाठप्रतिपाद के बीच से होकर किसी विविष्ट विचारधारा की परिभाषा को चिह्नित करना। इस दृष्टिकोण से विचार करने पर 'शेष प्रश्न' उपन्यास में कथानक की कमी या अभाव नहीं है। सामंती पर इस प्रकार के उपन्यास-नाटकों में जितना कहा गया होता है 'शेष प्रश्न' में उतने कम कथानक नहीं है बल्कि हममें जैसा

मठिठ धीर बुजिग्यस्त कथानक है बंसा कथानक बहुत कम उपग्यास नाटकों में होता है। कयोपकरण में भी कमल की बातचीत की प्रधानता है धीर हममें सम्येह नही कि कमल की बातचीत बहुत ही विद्वत्तापूर्ण बुमती हुई धीर प्रति पग पर नवनव उमेपशाक्तिनी है। प्रिहित बंगासी मध्यवित्त बर्ग के लिए कमल की बातें केवल तबीन ही नहीं तिलमिसा वेनेबानी हैं। यों तो घरत् बाबू के धर्म उपग्यासों से भी हिन्दू समाज पर जोड़ों की गई हैं 'ब्राह्मण की बेटी' में यह जोट सायद सबसे नयकर कूरता धीर अपरिहार्यता धारण करती है पर 'शिव प्रश्न' से मारतीय समाज समाज पर जो जोट पहुँचती है, वह बिसकुल दूसरी ही तरह की है। 'शिव प्रश्न' में जो जोट पहुँचती है वह पटनाओं की या तर्षों की जोट उतनी नहीं है जितनी कमल की बातों की है। 'ब्राह्मण की बेटी' में कुलीन ब्राह्मण कम्पा को मारि की सड़की प्रभावित कर घरत्पत्र ने समाज समाज को जो मर्मभेदी जोट पहुँचायी है उसके महत्व को हम कम करना नहीं चाहते वह जोट इतनी प्रबंड है कि उससे यह सारा हिन्दू समाज उसकी बर्न-व्यवस्था धाधार तथा निष्ठा एकदम बर्मीबोड हो जाती है 'ब्राह्मण की बेटी' पढ़ने के बाद ऐसा सात होता है मानो हिन्दू-समाज का यह सारा तानाबाना एक ऐग्नजातिक मृष्टिमात्र है उसकी तरह में कुछ तत्व नहीं है। जिसे हम हजारों बपों से एक मुख्य मुम्बर कृति समझे बैठे थे वह एक कंकाल मात्र है धीर जिसको हम मुनसित गुरुर-विजन समझकर छूने नहीं समाते थे वह कंकाल के धम्बर से प्रवाहित सू का झाहाकारमात्र है पर 'शिव प्रश्न' की जोट दूसरी ही तरह की है। 'ब्राह्मण की बेटी' में जो जोट है उसको समझने के लिए हमें अपने धारों धीर की नित्यप्रति की सड़कों बपों से बनी घाती हुई पटनाओं की धीर देखने मर की धाबदयकता पड़ती है पर 'शिव प्रश्न' की जोट मुख्यतः विचारों तथा तर्कों की जोट है, इसलिय उसको समझने के लिए हमें सोचने की अपने धारतर्कों में बैठकर अपने की टटोलने की जरूरत पड़ती है यही 'शिव प्रश्न' की विशेषता है, इसी में

उसका सुमनारमक उत्कर्ष तथा अपकर्ष सफलता तथा विफलता है। उत्कर्ष अपकर्ष सफलता विफलता शब्दों को हमने कोई भावकारित्व प्रसर पैदा करने के लिए ही एक साथ इस्तेमाल नहीं किया है। 'ब्राह्मण की बेटी' को ही मिया जाय कोई सोचने का कष्ट गबारा करे या न करे, केवल घाँस खोजकर देखे तो वह 'ब्राह्मण की बेटी' का धर्म समझ जायगा पर 'शेष प्रश्न' की विषयवस्तु को हृदयगत करने के लिए सोचन की जरूरत है या धीरे स्पष्टता के साथ कहें तो देखने के अनिश्चित सोचने की कहीं प्रतिक जरूरत है। प्रत्यक्ष व्यक्ति सोच नहीं सकता है इसी में 'शेष प्रश्न' की विफलता है सफलता यह है कि इसकी समालोचना 'ब्राह्मण की बेटी' से कहीं विस्तृत महाराई तक पंठी हुई थीर तीव्रण है। 'ब्राह्मण की बेटी' केवल 'ब्राह्मण-प्रधान मनाशन धर्म की एक हिमाकर उसकी नैतिक वर्णव्यवस्था को बरादायी कर देता है, पर 'शेष प्रश्न' ने पूंजीवादी पद्धति की सबसे काम्य वस्तु प्रेम पर ही हमसा बोम बिबा यानी नर-नारी का वह प्रेम जिसके लिए यह कहा जाता है कि वह चिर स्थायी है।"

प्रेम पर प्रहार, शरत् साहित्य के लिए कोई नई बात नहीं थी 'अरिज हीन' में किरणमयी और बिबाकर की स्मरणीय बातचीत में यत्र-तत्र प्रेम पर बौछारें हैं पर 'शेष प्रश्न' में घाकर यह आक्रमण धीरे भी प्रत्यक्ष तथा स्पष्ट हो जाता है। यों तो शरत् बाबु की प्रत्येक पुस्तक की पृष्ठभूमि में नारी का बिद्रोह है कहीं यह बिद्रोह की बात बहुत ही सूक्ष्म रूप में पन्नु की तरह अन्त-ममिक्ता होकर बहती है जैसे 'बेबदास' धीरे 'बड़ी बीरी' में धीरे कहीं यह शरस्वती की तरह कुछ दूर तक बहकर फिर सुप्त हो जाती है जैसे 'गृहदाह' की घबला में। पर 'शेष प्रश्न' में घाकर यह बिद्रोहबात बंगाल की पद्मा की तरह तुमुन पर्वत करती हुई अपने दमन के घाय उचित-अनुचित किसी की न सुनती हुई अपने दक्षिण धीरे बाम बानों तनों की बाहती किमकारियाँ करती सब बुतों की तोड़ती हुई आत्मभैरवा-सम्पन्न होकर बहती है। 'शेष प्रश्न' में नारी

का यह बिद्रोह स्त्री-विरोध या व्यवस्था-विरोध के बिल्कुल नहीं है बल्कि इसकी लपटें सर्वव्यवहनमुक्त होकर बसों विद्यार्थों में दौड़ पड़ती हैं। हम किरणमयी को उसका बिद्रोह के बावजूद तथा प्रेम के बिल्कुल उसके कटाक्षों के बावजूद अन्त में जिस समय 'अरिजहीन' उपन्यास का पर्चा पिरखा है उपग्र के प्रेम में तन्मग्न पाते हैं। उपेन्द्र तो मर जाता है, पर किरणमयी की प्रेमतन्मगीता एकलक्ष्य जैसी है। विवाह से उसका पति हाराग है, किरणमयी उसका प्रेम से हट जाती है। सब बात तो यह है कि वह कभी उससे प्रेम करती ही नहीं थी वह उसकी शिष्या ही रही कभी प्रेयसी नहीं हो पाई। फिर किरणमयी ने डाक्टर से कुप्य प्रेम किया पर वह स्वयं ही उसको प्रेम नहीं समझती थी बाद को उसे धारमन्मानी हुई इसका बाद बिबाह कर लेकर वह बर्मा भाग गई पर अन्त में वह उपेन्द्र के प्रेम में धड़ गई। इस प्रकार बिद्रोह की जो चारा सबव्यवहनविमुक्ति का प्रवाह सागर की घोर दौड़ पड़ी थी वह घूम-भ्रामकर फिर अपने उन्मत्तस्वप्न की घोर सींग धाई। फिर धारु बाबू ने इस उपन्यास में किरणमयी के लिए पापिप्लर शब्द का व्यवहार करके समाज को यह इतना मीठाग दिलाया कि इस बिद्रोह में उनकी सहानुभूति नहीं है। 'दोष प्रदन' की कमल के सम्बन्ध में यह बात नहीं है उसका बिद्रोह न केवल धारम अठना-सम्पन्न है, बल्कि वह अन्त तक उन पर डटी रहती है। फिर भी एक बात साफ कर देनी चाहिये कमल का अरिज में मारी का बिद्रोह सर्वाङ्गमुन्दर परिपक्वता तक नहीं पहुँच सका। इसका एकमात्र कारण यह है कि धारु बाबू अन्त तक मध्यवर्ति समाज के बिद्रोही रह गये वे नर-मारी के सामाजिक सम्बन्ध के पीछे समाज की उत्पादन पद्धति में उनका जो स्थान छिपा हाता है उसका कभी न समझ पाये। इसलिए धारु बाबू की कमल बहुत कुछ बीच रास्ते में बिचकू की तरह लटककर रह गई। धारु बाबू न कमल की जो पूज्यभूमि बनाई है उससे कमल के प्रति रुझिवापी पाठक के मन में महानुभूति पैदा न होकर, उसको यह कहने का प्रबल मिसना है कि कमल जैसी स्त्री के लिए ऐसा बहुत

स्वाभाविक है। कमल के पूर्वतिहास से कमल की बातों का बज्रम साधारण पाठकों के निरुद्ध घटेया ही बड़ीया नहीं। इस बात को शरत् के किसी समालोचक ने समझ नहीं है, इसलिये इसक और भी स्पष्टीकरण की जरूरत है।

संक्षेप में कमल का परिचय यह है कमल की माँ कपवती थी। कमल ने राखी में 'उनमें कप या पर रवि नहीं थी। ब्याह के बाद कोई बदनामी हुआ जाने क कारण उनके पति उन्हें लेकर घासाम के पास बापान में भाम नये पर वहाँ वे जिय नहीं—कुछ ही नहींों में बुतार से मर गये। इसके तीन साल बाद मरा जन्म भाय-बागान के बड़े साहब के घर हुआ। यह तो कमल के जन्म की बात हुई। यह हम मानते हैं कि इस जन्म में कमल का न तो दोष है और न कोई जिम्मेदारी है (यदि यह सारा भी ही तो) कर्म की तरह यह कह सकती है 'ईशान्त कुले जन्म ममावर्तं तु पीर्यम्। फिर भी शरत् बाबू ने जिस बंदासी मध्यवित्त समाज के लिए यह उपन्यास लिखा है उस पर इस जन्म का क्या प्रभाव होगा यह अनुमेय है। फिर कमल का पूर्वतिहास यही उत्तम नहीं होता। कमल जित्त समय उपन्यास में पचापंच करती है उस समय तक उनका एक क बाद एक दो पुरवों से विवाह हो चुका है। पहला पति एक घासामी ईसाई वा मामूम होता है उसके पिता बड़े साहब न उसकी यह छाडी कराई थी। प्रथम पति मर गये। 'उनके मरने के बाद ही मर पिता भी अकस्मात् छोड़े से गिरकर मर गये। उस समय विवनाथ के एक चाचा चाय-बापान के हैंड कर्मकं ये। उसकी स्त्री नहीं थी माँ को उन्होंने अपने यहाँ आश्रय दिया।" जरा हम अन्तिम वाक्य को देखिये स्त्री नहीं थी माँ को आश्रय दिया था। कमल अपनी माँ के साथ उनक घर आई थी।

यही पर विवनाथ के साथ कमल का परिचय हुआ। कमल कपवती थी विवनाथ के साथ उनका कैसे विवाह हुआ हुआ या नहीं इस पर जहाँ की बात मुनिये "विमकुस कोई विवाह हुआ ही नहीं ऐसी बात

नहीं। बिबाह जैसी कोई बात हुई जरूर थी। जो लोग देखने घामे वे ब सये हैंसमे। बोले—'यह ब्याह ब्याह ही नहीं बोका है। इनसे (शिवनाथ से) पूछने पर इन्होंने कहा 'शैबमत से बिबाह हुआ है। मैंने कहा 'यही ठीक है, शिव के साथ पगर शैबमत से बिबाह हुआ था इसमें चिन्ता की कौन-सी बात है ? ”

शब शिवनाथ कौन था यह मुन जीजिये। शिवनाथ की पहली स्त्री प्रमी मौजूद है। वह रोगिणी है। शिवनाथ कहता है कि इसीलिये उसन पत्नी को त्याग लिया। एक महालय उसकी तरफ से ब्रमासत करते हुए शिवनाथ से कहते हैं—'बीमार रहना तो कोई अपराध नहीं शिवनाथ बाबू बिना किसी अपराध के’ ।

शिवनाथ— बिना किसी अपराध के भसा मैं ही क्यों दुःख सहता रहूँ ? मेरा ऐसा विश्वास नहीं है कि एक का दुःख और किसी के सिर पर भार देने से ब्याप हाता है।

इस पर जिन्होंने यह प्रश्न पूछा था वे चुप हो गए पर एक समाज क स्तंभ महालय प्रश्न कर बैठे—'यह ब्याह हुआ कहाँ था ?

—'शैब ही में।

—'शैब के होते हुए लड़की दे बी। धायर इस लड़की का कोई है नहीं।

—'नहीं हमारे यहाँ की बिबवा महरी को बिबवा लड़की है।

—'पर की लौकरानी की लड़की है। बहुत लूब। जात क्या है ?

—'ठीक नहीं मानूम। बुसाहिन-उसाहिन होनी।’

प्रदाय बहुत बेर से बामा नहीं था शब पूछ सठ—'उसको प्रदाय-बोध भी न हो धायर ?

शिवनाथ ने कहा—'प्रदाय-बाप के लोभ स तो ब्याह नहीं किया था किया है रूप के लिए, सो इस प्रदाय का धायर उसमें प्रभाव नहीं है।

हरद्व ने कहा—'ठा यह धायर निबिस ब्याह ही हुआ था ?

सिबनाथ ने गर्दन धीरे से हिलाकर जवाब दिया—'धीमठ से ब्याह हुआ था।'

धविनाथ ने कहा—'यानी बोलना देने का रास्ता दसों दिशाओं से खुला रखा, क्यों न सिबनाथ जी ?'

सिबनाथ ने हँसकर कहा—'मह तो बोध का उद्गार है धविनाथ बाबू ! नहीं तो, पिताजी खुद अपनी मौजूदगी में मेरा था ब्याह कर गये हैं उसमें तो बोध की संभावना पुम्नाइस नहीं थी फिर भी तो बाबा रह ही गया था। उसे कुछ निकामने की आँखें भर चाहिये।'

सिबनाथ के साथ कमल की छाती कँठे हुई, इसके तुरन्त बाद ही सरस्वती बाबू यह दिखभाते हैं कि कँठे सिबनाथ ने अभी हाथ ही में अपने स्वर्गीय मित्र योगीश्वर बाबू के सड़कों की गाबासिपी का फायदा उठाकर उनके सारे कारोबार को ही हड़प कर लिया।

धविनाथ ने कहा—'सैर जो कुछ भी हो। सिबनाथ अब अपनेसे जब तुम्हीं को साथ कारोबार नमासता पड़ेगा तो उसमें अपना कुछ हिस्सा रखने का क्यों बाबा फटते हो ? बतौर मानिक के कुछ बँचवा लो ।'

सिबनाथ ने बाठ को बीच में ही काट कर कहा—'हिस्सा काहे का ? कारोबार मेरा अपनेसे का है।'

धविनाथों का दल मानो धानमाम से विरा। धरम ने पूछा—'पत्थर का कारोबार धवानक धापका कँठे हो गया सिबनाथ बाबू ?'

सिबनाथ ने गम्भीर होकर जवाब दिया—'मेरा तो है ही।'

धरम ने कहा—'किसी तरह नहीं इस सभी जानते हैं योगीश्वर बाबू का है।'

सिबनाथ ने जवाब दिया—'जानते हैं तो धरमन न जाकर गवाही क्यों नहीं दे पाये ? कोई दस्तावेज का या मुना भर का ?'

धविनाथ ने चौंकर प्रश्न किया—'नहीं गुना तो कुछ भी नहीं पर मामला क्या धरमन तक पहुँच गया था ?'

शिबनाथ ने कहा—'हाँ योगीन्द्र के साल ने भासिञ्ज की भी डिप्री मेरे ही पक्ष में हुई है।

शिबनाथ का परिचय यह है इसके प्रतिरिक्त वह धरती भी है, मगधी हाने के कारण ही वह धामरु कामेज की प्रोफेसरी से निकाला गया है और कमी-कमी छायाव बस्यागमन भी करता है। हाँ वह गरीबा बहुत ठीके बनें का है इस लिए इन तमाम कारणों के बावजूब वह मज लिचों में धाबर के साथ बुसाया जाता है।

इस उपन्यास में शिबनाथ धीर कमल य ही वा मुख्य पात्र-पात्री है धरतू बाबू न इनकी ओ पृष्ठभूमि बनाई है उसको भी हम बख चुके हैं।

कमल—'शेष प्रश्न' की कमल को धरतू बाबू न गारी-बिब्रोह की प्रप्रहृषी बनाया है यह बात बहुत धारधम की है। रबीन्द्रनाथ ने अपने 'धोर' नामक उपन्यास में बमाली मैप्टिक परिवार में प्रतिपासित एक जग्मना धंभज का मनाठन धर्म का परिपोपक बनाया है। धोर क जग्म की यह पृष्ठभूमि उस उपन्यास क रम के परिपाक मं सहायक हुई न कि बाबक पर कमल को यह गारी पृष्ठभूमि 'शेष प्रश्न' के बाछित उस के परिपाक में बाबक होती है। पता नहीं धरतू बाबू न कमल को जान-बूझकर ऐसा बनाया या नहीं—धरतू बाबू की तरह धाम्भकेतना-सम्पन्न कसाकार के लिए तो यही समझना बाछिये कि उन्होंने जान-बूझकर ऐसा किया—इस हामत में यही कहना पड़ेगा कि उन्होंने कमल की बातों का मुख्य पढाने के लिए ही ऐसा किया।

धीर धाये बसिय। शिबनाथ की पुकार धक्कर धामु बाबू क धर गाने की मजलिच में होती है। धामु बाबू एक गतयीबन बिबुर है स्वास्थ्य सुभारने के लिए पन्चिम में धाकर धामरे में धपनी एकमात्र सन्तान कुमारी मनोरमा के साथ रहते हैं। धपये-मसे का उन्हें धभाव नहीं धर में नौकर-बाकर, दरबान धोकर ममी हैं। धम्य धनियों की तरह वे गबित नहीं हैं धामरे के बंमाली परिवारों क साथ उन्होंने जान-बूझकर कोगिध करके परिचय प्राप्त किया है। मनोरमा की धाबी बिसायत से

विबनाय ने गर्व से धीरे से हिमाकर जवाब दिया—'सौभाग्य से ब्याह हुआ था ।'

प्रबिनाय ने कहा—'यानी योग देने का राज्या हमों विगाओं से गुना रगा क्यों न विबनाय जी ?'

विबनाय ने हँसकर कहा—'यह तो योग का उद्गार है प्रबिनाय बाबू । नहीं तो पिताजी गुद घपनी मीठुनी म मग जा ब्याह कर गये हैं उसमें तो योग की संभावना शून्यकारण नहीं थी फिर भी तो योगा यह ही गया था । उसे कुछ निधानने भी पागों कर बाहिय ।'

विबनाय के साथ कमल की पारी बँसे हुई इमक सुरमा बार ही गालू बाबू यह विगमाने है कि कसे विबनाय ने अभी हाथ ही में घपने स्वर्गीय मित्र योगीन्द्र बाबू के मङ्गलों की नाबानिमी का फायदा उठाकर उनके मारे कारोबार को ही हड़प कर लिया ।

'प्रबिनाय ने कहा—'तैर जा कुछ भी हो । विबनाय सब घरेने पर तुम्हों को मारु कारोबार संमानना पड़ेगा तो उनमें घपना कुछ हिस्सा रखने का क्यों शबा करने हो ? बनौर मायिक के कुछ बँबका लो ।'

विबनाय ने बाग को बीच में ही बाट कर कहा—'हिस्सा बाहे का ? कारोबार तैर घरेने का है ।'

प्रध्यापकों का दम मानो घातमान से विरु । प्रधाय ने पुछा—'पन्पर का कारोबार प्रधानक थापका कैसे हो गया विबनाय बाबू ?'

विबनाय ने मन्मीर होकर जवाब दिया—'येण तो है ही ।'

प्रधाय ने कहा—'किसी तरह नहीं हम सभी जानने हैं, योगीन्द्र बाबू का है ।'

विबनाय ने जवाब दिया—'जानने हैं तो प्रदागत मं जाकर गवाही क्यों नहीं से घायें ? कोई दन्नावेज था या मुना भर का ?'

प्रबिनाय ने चौंकर प्रश्न किया—'नहीं मुना तो कुछ भी नहीं पर मामला क्या प्रदागत तक पहुँच गया था ?'

शिवनाथ ने कहा—'हाँ योगीन्द्र के सामने नेनालिंग की पी छिपी मेरे ही पक्ष में हुई है।

शिवनाथ का परिचय यह है इनके प्रतिरिक्त वह शराबी नहीं है शराबी होने के कारण ही वह आगरा काषत्र की प्रोफेसरी से निफाला गया है और कनी-कनी भावसे बलवानमन भी करता है। हाँ वह पैसेवा बहुत ठीके पैसे का है इस लिए इन तमाम कारणों से बाबजूव वह मज निसों में आकर के माय बुताया जाता है।

इस उपन्यास में शिवनाथ और कमल यही वा मुख्य पात्र-पात्री हैं शरत् बाबू ने इनकी ओ पृष्ठभूमि बनाई है उसको भी हम सब चुके हैं।

कमल—'पंच प्रश्न' की कमल को शरत् बाबू न गारी-बिग्राह की प्रकृती बनाया है यह बात बहुत प्रारब्ध को है। रवीन्द्रनाथ ने अपने 'गोरा' नामक उपन्यास में बंगाली नैटिक परिवार में प्रतिपासित एक जगता धंधक मनातन कम का परिपोषक बनाया है। शरत् क जग की यह पृष्ठभूमि उस उपन्यास क रम के परिपाक में सहायक हुई न कि बाधक पर कमल की यह गारी पृष्ठभूमि 'पंच प्रश्न' के बाधित रस के परिपाक में बाधक जाती है। पना नहीं शरत् बाबू न कमल का जान-बूझकर ऐसा बनाया या नहीं—शरत् बाबू की तरफ आत्मचेतना-अभ्यन्त-कसाकार के लिए तो यही मयभला चाहिये कि उन्होंने जान-बूझकर ऐसा किया—इस शकत में यही कहना पड़ेगा कि उन्होंने कमल की बातों का मुख्य घटाने क लिए ही ऐसा किया।

और आने बसिये। शिवनाथ की पुकार बसुवर धायु बाबू के घर गाने की मजलिस में होती है। धायु बाबू एक गतयौवन विधुर हैं स्वास्थ्य पुषारत के लिए पश्चिम में आकर आगरे में अपनी एकमात्र सन्तान कुमारी मनोरमा के साथ रहने हैं। रुपये-पैसे का उन्हें धमाक नहीं घर में मौकर-बाकर, दरवान दोकर मनी हैं। धम्य बसियों की तरफ वे पक्षित नहीं हैं, आगरे के बंगाली परिवारों क साथ उन्होंने जान-बूझकर अयोगित करके परिचय प्राप्त किया है। मनोरमा की घायी बिभावत से

सीटे हुए अजित नामक एक युवक के साथ एक छत्र से तप भी है। मधु कहिये तो अजित के विनायक जाने के पहले मे ही यह छापी तपनी है पर विनायक रहने समय अजित ने बहुत दिनों तक कोई पत्रादि नहीं भेजा तो धामु बाबू ने धन्य कर छूटना प्रारम्भ किया। पर मनामा ने इसारे मे मना कर दिया। पिता मुनिशिता कन्या की बात समझ गये पर चुप हो रहे। अजित बाबू विनायक से सीटे अब कुछ दिनों से वे धामरे में धामर धामु बाबू के यही टिके हुए हैं। घटनाओं का रंग स्पष्ट है। विनायक ने मकोरमा के साथ सम्बन्ध बढ़ाया है। उमर अजित कमल के यही जाना पुरु करता है। एक दिन वह मोटर लेकर कमल के यही पहुँचा तो कमल ने प्रस्ताव किया कि मोटर में सैर की जाय। वह खुश गाड़ी में बैठ गई और बोली—'घामरे में बहुत दिनों से मोटर पर नहीं चढ़ी लेकिन आज मुझे बहुत बुरा भुना माना होना।

अजित को कुछ सूझ नहीं कि क्या करना चाहिये। उसको एक साथ बासा—'ज्यादा दूर जाने से रात बहुत हा जावनी। विनायक बाबू पर सीटकर आपको न देखे तो शायद कुछ बुरा मारें।

कमल ने कहा—'नहीं कुछ मानस की कोई बात नहीं।'

धमल में बात यह भी कि कई दिन से विनायक रात को घर नहीं आ रहा था शायद शेषकत से विवाहित पत्नी कमल के प्रति उसका मोह दूर हो चुका था। रूप ही का उसका मछा था वह शायद उतर चुका था अब उसके लगे को कायम रखने के लिए दूसरे ईश्वर की जरूरत थी। जो कुछ भी हो कमल और अजित मोटर में उस दिन बहुत दूर तक निकस गये और बहुत रात बीत सीटे। विनायक जो कई दिन से घर नहीं आता था इसका कारण कमल को यह मामूम था कि वह जयपुर में पत्थर खरीदने गया है पर अजित से ही कमल को मामूम हो गया कि वह जयपुर-जयपुर करी नहीं गया है, इसी शहर में है, और शेष धामु बाबू की छात्रवृत्त मजमिस में उपस्थित रहता है।

अब अजित पर लीटा तो रात महरी हो गई थी बहुत मुनसाज भी

सन्नाटा छाया हुआ था दुकानें बन्द हो चुकी थीं। यह देखने के लिए कि सब तक मनोरमा के कमरे में बर्ती क्यों जम रही है अज्ञित उस तरह से घूमकर घाघु बाबू के पास जा रहा था। इतने में अज्ञी से आदमी की आवाज सुनाई दी। अज्ञित परिचित कठ का स्वर था। बाठ हो रही थी किमी एक घाम के मुर के विषय में। कोई बात नहीं थी—फिर भी उसक लिए पक्षोंक झुरमुट में इतनी रात गये बैठना जाने कैसा खैसा। कपमर के लिए अज्ञित क दामों वर निर्भीक-से हो गया। मनोरमा और सिबनाथ में बातें हो रही थीं। अज्ञित जैसे दब पाक आया था जैसे ही खीट गया। उन बातों में स किमी ने नहीं जाना कि अज्ञित उनको इस प्रकार बातें करता देख गया है।

अन्त में सिबनाथ और मनोरमा में इतनी अनिच्छता बढ़ती है कि घाघु बाबू मनोरमा को कानी धक देता है पर सिबनाथ के वरों में कोई खैर कोई ही खैरी है। उनका सम्बन्ध कायम रहता है। मनोरमा ने अन्त में सिबनाथ से शादी करने की अनुमति मांगत हुए अपने पिता को एक पत्र लिखा। उक्त अज्ञित एक दृष्टपूर्विका मामल में जाकर बैठ गया पर अन्त में कपमर और उसमें एक तरह का बिना बिवाह क्रिय साध रहने (companionship-marriage) की बात तय होती है। अज्ञित में बाबायश शादी करनी चाही पर कपमर ने आस्वीकार कर दिया।

तो इस प्रकार लगभग तीन नौ पृष्ठ की पुस्तक के दौरान कपमर एक आत्मी ईसाई की परिधीता पाली थी फिर सिबनाथ की 'सौमत्र मे विवाहिता' पाली हुई, अन्त में अज्ञित की साधिन (companion) हुई। आत्मी ईसाई पति के मर जान के बाद उसने सिबनाथ से सौमत्र मे विवाह किया यह तो समझ में आता ही है पर तीवरे दबावर पर कपमर ने सिबनाथ के मौजूद रहते ही अज्ञित से जो साधिन का सम्बन्ध स्थापित किया यह समझ में न आता हो ऐसी बात नहीं क्योंकि जब सिबनाथ मनोरमा के साथ गया तो वह भी स्वतन्त्र हो गई। फिर भी इन सम्बन्ध में एकदम बात बिलकुल समझ में नहीं आती [६, और उन बातों

के समय में न घाने से समय का मारा चरित्र ही घटबाभाविक और कायर निक हो गया है ऐसा हाने से उसकी बातें भी बहुत कास्फनिक हो जाती हैं। सरस्वती ने समय को एक तरफ़ ता प्रबंध नातिरारिभी बनाया है उसक मुँह की प्रत्येक बात से समाज का कोई न कोई कुछ टूटता है पर सरस्वती ने यह दिखलाया है कि समय घासामी पति के मरने के बाद से सिखा हबिप्याम्न क कुछ लाती नहीं और एकाहारिणी है। हम कर्तव्य (घरिठ के घर्यों से वृष्ण) का बहु इतनी कट्टरता से पासन करती है कि घासकर्म होता है। दूधरा पति कर सिखा तीसरे की लैयारी है (जैसा कि मैं मिन पना कमल की परिस्तिपतियों में हमे गहित नहीं कहा या मक़ता) पर यह वृष्ण शारी रहता है। यह क्या समाया है? फिर चायबागान के बड़े साहब की रत्नली में पल्पन कमल में यह सरकार जहाँ से पदा हुआ कि पति के मरने (और वो भी ईसाई पति) के बाद एकाहार करना चाहिये। वह यदि उपन्यास की कोई तुच्छ घटना होती तो हम हम पर क्यास न करने पर कई बार इस घटना की घार पाठक की दुष्टि घाकपित की जाती है इनलिए यहाँ पर इसका उल्लेख करना जरूरी था।

घमी-घनी हमारे देलने म घाया कि नातिकारी बिद्वान् ए० ए० राय ने जेम से पत्र मितलत हुए १९११ में लिखा था—“दोप प्रसन की तुमना इत पुव के सिक्नेघर मिबित की पुस्तकों से नहीं हा सक्ती किन्तु घना तोस प्रंस बोला और इस्सन से उसकी तुमना सक्ती तरह हो सक्ती है। घमी तक किसी भी बिदेसी भावा में इसका अनुबाद नहीं हुआ। इत पुस्तक का मध्यबिन्दु एक लड़की है जो लपमुब एक बायोनिचस है। फिल प्रकार बहु पुनपुसांतर से घावृत्त सारे दुर्तों रिबाजों तथा परम्पराघीं को टुकरा देती है तथा रबीग्रनाम और बांभी को बासिक रूप से अनुसरन करनेबाल मोबबाल भारत को सबक देती है। जो कुछ भी हो जो कोई भी सरस्वती की बायोनिशीय लड़की को परिचन में परिचित कर देया बहु एक भारतीय को फिर से मोबल पुरस्कार बिलाने का भार्य प्रसस्त कर देया। मेरा बिदवास करो रवि बाबू से सरस्वती मोबल पुरस्कार क मिए

रूप हृदयदार नहीं हैं। वैयक्तिक रूप से मैं 'पद्य प्रश्न' को गीतांजलि से बढ़कर समझता हूँ। हो सकता है उच्च साहित्य का कठन की मेरी योग्यता संदिग्ध हो। पर यह रचि की बात है। पद्य प्रश्न भारतीय पुनरुज्जीवन (Renaissance) की एक प्रेरणादायक शक्ति है। इसका बनावटी रोमांसवाद तथा राष्ट्रवादको भावविह्वलता के रोमो तथा स्विट्जरलैंड की दूर कर दिया। धरतू बाबू की प्रथम रचनाओं की पात्रियाँ कुलमुगार्थी थीं यहाँ तक कि बिद्रोह भी कर बैठती थीं पर अन्त में वे 'बुद्धि से' फिर मुका देती थीं। धरतू बाबू के लिए दो रास्तें थे एक तो यह कि वे निष्पूर प्रतिश्रिया की धीर जाकर अपनी पहला कृतियों का गला चोट बस पर नहीं उम्होंने दूसरे मार्ग को अपनाया वे क्रमशः धीरे धीरे धीरे अन्त में चलकर उम्होंने इस आधुनिक कल्या की सृष्टि की जिसके हाथों में बिद्रोह का नहीं बल्कि आत्मिक का अंश है। हाँ यह कृति भी धारणवादी (idealistic) है। पद्य की वर्तमान अवस्था में ऐसा हाता अनिर्वाण है। पर यह धारणवादिता 'कला कला के लिए' दृष्टिकोण से ही है और यह दृष्टिकोण धारणवाद का निष्कटतम रूप है।¹

कामरेड राज एक साहित्यममज्ञ का नाउ मसहूर नहीं हैं। उनके इस पत्र में हा कम से कम एक प्रमाण ऐसा है जिससे सात हाता है कि उनकी साहित्य समालोचना हर समय विरवसनीय नहीं है। उम्होंने इबसेन जोसा धीर अनातोस फ्रांस की सिक्नेयर लिबिस से कम दर्जे का ललक बतलाया है पर विरव-साहित्य का कोई भी आता कम से कम इबसेन धीर अनातोस को सिक्नेयर से कम दर्जे का न समझेगा न ऐसा किसी ने लिखा है। इबसेन तो आधुनिक यूरोपीय नाटकक जनक हैं। हा धीर यैस्सबर्गी इबसेन-बागी हैं। मानूम हाता है कामरेड राज ने हा की 'इबसेनवाद' नामक पुस्तक नहीं पढ़ी। क्या हा से भी बढ़कर कोई बुतडोड़क है? फिर अनातोस फ्रांस उनकी दया के बहरे पर ध्यस्य की हँसी ममी हुई है फ्रांस में वास्त-

1 Letters from Jail by M N Roy p 4-5-7

पर के बाद कोई ऐसा बुनतोरक तो हुआ हो नहीं और उबरी कता का क्या कहना ? चायम जिमने पड़ा है वह उनकी कता पर जैसे सम्बन्ध करेगा ? फिर कामरेड राय जिस नाति का भंडा बह रहे हैं उनके भी इन्तेन से बढ़कर प्रतिपादक निबिध घोड़े ही हैं । सब बात तो यह है कि गठ हो घटायी के मुनुका सैतकों में इन्तेन से बढ़कर कामिन्दारी कम ही हुए हाने । सड़े-गल बुनुबा समाज पर उसकी सरकार पर उसकी धामन-प्रणामी उसकी सरपाधों—एक शब्द में उसके प्रत्येक घट पर जिस तरह कस-कधरर काबुक इन्तेन तथा उनके अनुकरणकारियों में सगाये हैं वह बिबनसाहित्य के इतिहास में अत्यंतपूब ही नहीं अत्यंतपर है । अस्तु ।

कामरेड राय 'शेष प्रश्न' को पीताञ्जलि से बढ़कर मानत है यदि ऐसा इस दृष्टि से है कि पीताञ्जलि समाज को छोड़कर उसकी समस्याओं की जमोन से अचना पर बिस्कुल हटाकर सातवें घासमान के रहस्यलोक में नृत्य करती है तब तो यह बात झीक है 'शेष प्रश्न' अचपीरी धाम्या को अलौकिक सीता नहीं बल्कि उसमें वय-जम पर घड़कते हुए रगत मांसमय हृदय का स्वरुप है पर यदि यही एकमात्र मानबंध है तब तो 'शेष प्रश्न' ही क्यों कोई भी सामाजिक उपन्यास पीताञ्जलि से अच्छा है । उस हासत में हमें कुछ कहना नहीं है । इस मानबंध की कट्टर लपिके से माननेवाले पीताञ्जलि को साहित्य ही न मानें तो क्या है ?

यब हमें यह देखना है कि कमल के हाथ में जो भंडा है वह नाति का भंडा है या नहीं । राय साहब की समासोचना का यही सबसे मुख्य बिन्दु है (बाटी बाते अचनी सत्री से अबाच्छलेन मिल गय हैं) इसलिये इसी की अच्छी तरह घासोचना करनी है । राय साहब साहित्य-पर्यत्र न सही समाजमर्मबंध तो हैं ही इसलिये उनकी इस समासोचना का मुख्य धीर भी बढ़ जाता है । यह तो हम पहले ही बता चुके हैं कि जहाँ हम राज्य-नृप धाम्य नायिकाओं में जैसे पार्वती फिरजमयी अचसा अचदा बीबी रमा भादि में बिबोह को या तो बिस्कुल नृपधूमि में या बाधों में मूर्त

जाते हैं, वहाँ कमल में घाबर यह बिजोह क्रियाशील हो गया है यही नहीं उसकी बिया प्रकट है। कमल की जो पहली घासी धासामी ईसाई में हुई थी उसके लिए हम उसे जिम्मेदार नहीं कह सकते पर एक के बाद एक उसमें जो पहल सिबनाय का घोर फिर घजित को पहल किया वह सम्पूर्ण इच्छाकृत है और हम इन दोनों घटनाओं के लिए उसे जिम्मेदार समझ सकते हैं। पर कमल के हाथ में जाति का भंडा है या उच्छ्रुतता का इस बात के किसी नियम पर पहुँचने के लिए हमें कमल को घोर गहपई के माय जानने की जरूरत है।

ताजमहल की छाया में बैठकर कमल ताजमहल की धारणा बना कर रही है। प्रामु बाबु सरस प्रकृति के बूझ बैरिस्टर हैं स्त्री क मरन के बाद के गृहवासी संन्यासी के रूप में रहते हैं, कन्यागठप्राण हैं। वे उच्छ्रित होकर कह रहे हैं —“मैं देखता हूँ सम्राट् चाहतहाँ की मैं देखता हूँ उनकी प्रतीय ध्या का जो इसके प्रत्यक्ष प्रस्तरबंध के धम-धम में समाई हुई है। मैं देखता हूँ उनके एकनिष्ठ पत्नीप्रेम को जो इस मममर्मर-बाध्य की मृष्टि करके बिरकास के लिए अपनी प्रियतमा को बिरक के सामने धमर कर गया है।”

कमल ने उनक बेहुरे की तरफ देखकर पर्यन्त स्वामाबिक ढंठ से कहा—“मपर मुना है उनकी तो घोर भी बेगमें थीं। बाशपाह को मुमताब पर जैमा प्रेम था बैना घोरों पर भी तो था। हो सकता है कि उन पर कुछ प्यादा रहा हो पर एकनिष्ठ प्रेम तो उसे नहीं कहा जा सकता प्रामु बाबु उनमें यह बात नहीं थी।

इस अप्रबलित नयानक मन्तव्य से सब बौक उठे। प्रामु बाबु या घोर कीई हमका जपाब ओजकर भी न पा सका।

कमल ने कहा—“सम्राट् कबि थे। वे अपनी शक्ति ऐश्वर्य घोर-पैय से इतनी बड़ा बिटाद् सौन्दर्य की बस्तु प्रतिष्ठित कर गय हैं। मुमताब तो एक धाकस्मिक उदरतव्य मात्र थी। वह न होती तो भी ऐसे सौन्दर्य-ओब किमी भी घटना को लेकर रह जा सकते थे। धर्म के नाम पर होता

तो भी कोई मुकसान नहीं था घोर हठारों-साधों मनुष्यों की हत्या करने दिग्गिजय प्राप्ति की स्मृति के रूप में होता था भी इसी तरह बन जाता। यह एकनिष्ठ प्रेम का शान नहीं है, यह तो सम्राट् के निर्भी धानग्रसोर का घलप दास है। बस इतना ही हमारे लिए दस्य है।

प्रायु बाबू के दिन पर चोट-सी लगी। बार-बार फिर हिमाकर कहन मय—'यद्येष्ट नहीं कमल हृदि एता नहीं था। तुम्हारी बात ही यदि सत्य है यदि सम्राट् के मन में एकनिष्ठ प्रेम नहीं था तो उस विद्यालय स्मृति-मन्दिर का कोई धम हो नहीं रहे जाता।

कमल ने कहा—'यदि न रहे तो मनुष्य की मूर्खता है। मैं नहीं बहती कि निष्ठा का कोई मूल्य नहीं पर जो मूल्य सुन-सुन से जाय उसे देखे घाय है, वह उसका प्राप्य मूल्य नहीं है। एक दिन जिससे प्रेम किया है फिर किसी दिन किसी भी कारण से उसमें किसी परिवर्तन का कोई गुन्हाइय नहीं मन का यह धर्म अद्विज अक्षय न तो स्वल्प है न सुन्दर ही है।

यह स्मरण रहे कि अन्तिम वाक्य में कमल ने अपने हृदय की अन्तर-तम बात का स्पष्ट कर दिया है। कमल का जीवन माना इसी वाक्य का मूर्त रूप है। यह बात तो सही है कि एक दिन जिससे प्रेम किया है उससे हमारा प्रेम करना ही पड़ेगा ऐसी बारीकसम नहीं है, न होनी चाहिए, पर यह भी स्वाभाविक नहीं है, न उचित ही है कि जिससे प्रेम है उससे टोड़कर दूसरे से स्थापित करना फिर उससे टोड़कर तीसरे से स्थापित करना इसे परम पुरुषार्थ माना जाय। सोवियट रूस में शुरू-शुरू में विवाह-विच्छेद प्राप्ति कर दिये जाने के कारण विवाह-विच्छेद बहुत हुए—ऐसा स्वाभाविक था क्योंकि पठाण्डियों के बाव जब मुक्ति होती है तो वह अर्ध-बुरे सब बन्धनों की मुक्ति के रूप में घाती है उसमें मात्राज्ञान नहीं रहे जाता पर बाद की रूस में साम्यवादी रूस में बिना कारण विवाह-विच्छेद को बुरी दृष्टि से देखना शुरू किया जिसका मतीया यह हुआ कि कानून नहीं का वहाँ रहे हुए भी लोगों में विवाह-विच्छेद कम

हो गए। विवाह-बिच्छेद एक अपराध तथा सेपनी-बैल के रूप में रूढ़ि सञ्चालित है। हाँ यदि विवाह प्रथा का ही अस्वीकार कर दिया जाय और बिसम्बन्ध यौन घनाचार (sexual promiscuity) के युग में मौजूदा है तो बात ही दूसरी है।

हम विवाह-प्रथा तथा विवाह-बिच्छेद पर तात्त्विक तर्क से एक बार फिर ताजमहल पर मौजूगी। रबी इ. साहित्य के किसी भी क. क. ग. क. जानतेवाले को कमल की यह समालोचना पढ़कर यह पहचानन में डेर नहीं लगेगी कि चार्ल्स ब्राडू ने इस प्रकार कमल के मुँह से रबीन्द्रनाथ की 'ताजमहल' नामक कविता की समालोचना की है। रबीन्द्रनाथ ने ताजमहल पर जो कविता लिखी है वह भी एक ताजमहल ही है—घण्टों का ताजमहल। कई सताष्टी बार मानो इस मन्दिर की धारणा को कविचर ने एक कविता में उबेर दिया इस कविता से ताजमहल का जैसे द्वितीय जन्म हो गया था। रबीन्द्रनाथ के वे शब्द—

प्योत्सना-पुते गिभूत मन्दिरे
 प्रियसीरे
 जे माने बाकिजे धीर धीर
 सेह काने काने डाका रेहे म्येले उदकाने
 घनम्येर बाने
 प्रियेर करवा कोमलता
 फुदिसो ता
 सौन्दर्येर पूजिपूजे प्रथाम्ठ पापारो ।
 हे सम्राट कवि
 एई तब हृदयर छवि
 इत्यादि

—कितने शब्दों में ताजमहल के प्रस्तरमय शरीर में मानो ये एक नवीन धारणा का उच्चार करते हैं पर कमल के शब्द—'मगर उनही तो धीर भी बेगमें दीं'—कितने मर्मभेदी हैं शाहजहाँ का ताजमहल मने ही इसके

का" कायम रहे, पर एबीग्रनाय के पात्रमहल का इनके बाद कहीं पता नहीं रहता ।

कमल अपनी इसी समातापना को विधुर धामु बाबू पर सागू करके कहती है— एक दिन धामु बाबू अपनी स्त्री से प्रेम करते थे, जो इन समय जीवित नहीं है पर अब उन्हें म तो कुछ दिया हो या सखता है और न उनमें कुछ पाया हो या सखता है । उन्हें न तो सुनी दिया या सखता है म बुग ही दिया या सखता है । वे ही ही नहीं प्रेम-नाश का चिह्न तक जाता रहा है । किसी दिन प्रेम किया या मन में केषम यह पटना मात्र यह गर् है । मनुष्य नहीं है उसकी केषम स्मृति मात्र है । उसी का महोत्सव मन म पामने रहकर वर्तमान की संज्ञा प्रतीत को ही मूक नामकर जीवन बिताने म कौन-सा बड़ा भारी आदर्श है ? भरी समझ म तो कुछ नहीं जाता ।

निरीह धामु बाबू इस पर प्रतिवाद करके कहते हैं—'माना अब मैं बूढ़ा हो गया है पर तिम सधम मेरी स्त्री का वैद्वान्त हुआ का उस समय तो मैं बूढ़ा नहीं था फिर भी किसी और का उनकी अपह पर मा बिलाने की बात सोच नहीं सकता था ।

इस पर कमल तिमनिमाकर कहती है—'नहीं उस बिल भी धाप ऐसे हो बूढ़े थे । कोई-कोई धापभी ऐसे होते हैं जो बूढ़ा मन लिए पैदा ही होत हैं । उस बूढ़े के घासन के नीचे उनका जीर्ण-शीघ्र विकृत जीवन हमेशा लज्जा से सिर नीका किमे रहता है । बूढ़ा मन सुन होकर कहता है—'महा यही तो घबछा है कोई हुंतामा नहीं जगार नहीं—यही तो पान्ति है यही तो मनुष्य के लिए अरम-तत्व की बात है । उसके लिए कितने प्रकार के धम्के-धम्के विद्येय्य हैं, कितनी बाह्बाही का घाडम्बर है । ऊँचे स्वर से उसकी स्माति का डोल मजता है पर इस बात को वह जान भी नहीं पाता कि वह उसके जीवन का अवबाध नहीं घानम्-लोक के विघर्जन का बाजा है । 'मन का बुझापा मैं उसी को कहती हूँ जो अपने सामने की घोर नहीं बैकता तिसका हारा-बका अराधन्त मन भविष्य की

समस्त घाघाघों को समात्म्यसि रकर सिर्फ अतीत के ही घन्वर जीवित रहना चाहता है। वह अतीत को भुना-भुनाकर उसी से पुनर करके जीवन के बाकी दिन बिता देना चाहता है।

कमल न इस प्रकार बराबर बहुत ही बुतलोकक बातें कहती हैं। बिपु वात को वह सेती है उसी पर एक बहुत ही ठिलमिला बनबाता अभिमत दृष्टिकोण पैदा करती है। हर मौक पर ऐसी बात कहती है जिसके विरुद्ध कठिपों की तुहाई देकर ही कुछ कहा जा सकता है। समय सन्नेह नहीं 'मंमम जहाँ घर्मेहीन है जहाँ वह निष्कम घातपपीडन माध है उसी का मकर घपन का बड़ा मानना म केवल घपने को टपना बल्कि दुनिया का भी टपना है' पर कमल न तो एक प्रकार से सभी संघर्षों की निन्दा कर टानी यह वहाँ तक उचित है यह विचार्य है।

कमल की विद्वत्तायुध बातचीत में सबसे अधिक जो बात लटकती है घोर मूलमन तरीके से प्रापतिजमक है वह यह है कि प्रत्येक वात को वह मामलों घान ब्यक्तिक कुंठा सं रकती है। घाम्पाहीन साहित्य क इस रूब से बड़ दुर्गुण क कारण म दारत् वादू जाम्तिकारी हो सके न कमल जाम्ति कारिणी। कमल की बातें बड़ी चुमती हुई हैं घमिपर्म हैं घापद घपिरांस लभ में नहीं भी हैं अधिक से अधिक उसमें कुछ तरमीम की घावस्यकता है पर उसमें सब से बड़ा दोष यह है कि वह हर बर्ष की ब्यक्तिक कंटाघों को ही ब्यक्त करती है। ताजमहल पर उसकी आ घालोचना है, घौर घागु बादू के बिपलीक जीवल पर उसकी जो तमा लोचना है, इन दोनों में यही बुटि दृष्टिकोषर होती है। घाहबही की एकनिष्ठा की ममाल-चना का घाघार घम्य बेघर्मों के साथ सज्ञानभूति नहीं है। मभ्राट की एकनिष्ठा की ब्याति पर हमला करने के लिए घपर्मों का तक केवल एक घस्त्र है। बिपुर् घागु बादू के जीवन की समालोचना जो इसी प्रकार है उसमें घागु बादू बया है घौर क्या नहीं यही है। घागु बादू को स्त्री एव मइकी छोड़ गई थी जम मइकी को दृष्टि के घागु बादू के पुनरिवाह करने के घोबित्य-अनीबित्य पर एक इरक भी नहीं नहीं

मिमता । कहीं गलतफहमी न हो जाय इसलिये हम पीरन यह हैं कि इससे हमारा मत यह न समझ जाय कि पहले न प्रेम या विवाह की सम्मान हो तो दूसरा विवाह न किया जाय । हमारा कहना केवल इतना है कि मियाँ बीबी के प्रतिरिक्त समाजमान की एक वस्तु है बच्चे होते ही हैं इनके दृष्टिकोण में इस प्रश्न पर विचार होना चाहिये ।

प्रत्येक बात पर केवल व्यक्ति और उसकी कृपाओं के दृष्टिकोण से विचार करने का तरीका समत है उभी पर मरी आपत्ति है । यह तरीका नास्तिकारी मते ही जैसे पर है यह हमके बिलकुल विपरीत । जिस युग में एक छोटे से बर्ष की धोर से समाज का घोषण हो रहा है उस युग में घोषितों की धोर से व्यक्तिवाद का नारा नास्तिकारी है । पूँजीवाद ने इसी नारे के सहारे सामन्तवाद को मटियामेट किया । सम्भव है धरतर व्यक्तिवाद के दृष्टिकोण से पहुँचा हुआ नतीजा बही हो जो सामाजिक दृष्टिकोण का नतीजा हो पर ऐसा नहीं भी हो सकता है । व्यक्ति-स्वातन्त्र्य एक बहुत बड़ी चीज है पर एक व्यक्ति की विद्युत् 'स्वतन्त्रता' नहीं पर सतम हो जाती है जहाँ पर दूसरे की शुरू होती है यानी उन दोनों की स्वतन्त्रता में एक सामन्तस्यविभाग की भाव स्पष्टता नहीं होती है । आदिम समाजवाद तथा १९१७ के बाद के कस के प्रतिरिक्त (यों तो १८७१ के पैरिस का कम्यून भी है) सभी समाजों में जब दो व्यक्तिप्रा के हितों में संघर्ष होता था तो उसका निर्णय धरतसंख्या आधारित राष्ट्र अपने बर्षहित को देखकर करता रहा है न कि लिप्यक्ष होकर जैसा कि सोय समझते हैं । इस प्रश्न के तात्त्विक विवेचन का मही धरतर नहीं है पर इतना तो स्पष्ट है कि सर्वबन्धन-विमुक्ति का नारा सभी हासतों में मही तक कि बर्षहीन राष्ट्रहीन वसहीन समाज में भी बनता है । समाज में मनुष्य विद्युत् 'स्वतन्त्रता' का उपयोग नहीं कर सकता बही तो सामाजिक स्वतन्त्रता ही हो सकती है ।

कमस चरित्र में बिल चीज का प्रचार किया गया है, वह सर्वबन्धन विमुक्ति है, नास्तिक नहीं । साथ ही हम यह भी मानने के लिए बाध्य हैं

कि बिधर देखो उधर बगधन ही बगधन है उस हानत में उसकी प्रतिबिम्बा के पलस्वरूप सर्वबगधन विमुक्ति के लिए प्रयास करता है इस दृष्टि से यह प्रकृति भस्मे ही असामाजिक तथा धर्म्यावहारिक हो है यह एक स्वामाजिक प्रकृति ही। अब बिद्रोह की बुन किसी पर सवार हो जाती है, और यह बर्षों की सब बर्षों को तोड़कर धसग करन लवता है उस समय उसको मात्राज्ञान नहीं रहता। तात्विक बातों को अन्तिम कस्यान-धकस्यान की बातों को जाने दिया जाय व्यक्ति-वातन्म्य के एकमात्र दृष्टि कोण से देखा जाय तो भी कयस पूरी नहीं उतरती है। बिबनाय की धकारण परित्यक्ता स्त्री के दृष्टिकोण से क्या कमस कमी सोचती है? हम यह नहीं कहते कि वह इस कारण बिबनाय को ग्रहण न करती पर मेरा कहन का मतलब है वह इस दृष्टिकोण से सोचने में असमर्थ-सी है। वह प्रत्येक बीज को धपने ही दृष्टिकोण से सोचती है। वह अब भजिठ को पाल-बुझकर पीरे-बीर सोचती है उस समय सिबा धारम-मुझ के कौन से धारण का धनुसरण करती है। बिबनाय भी ममोरमा का इसी प्रकार सोचता है इन दोनों में फर्क क्या है?

यह सारत् बाबू की लेकनी की महिमा है कि बिबनाय कम बँधता है और कमस बिद्रोहिणी—बस्कि मूर्तिमती मारी-बिद्रोह पर एक गोमेन्द्र की बिबना का घोसा देने के धतिरिक्त उसमें कोई ऐसी बड़ी बूटि नहीं है जिसे हम कमस में भी नहीं पाते। बिबनाय ने धपनी पहनी स्त्री को रोम के कारण हयाग दिया यह कमस के दृष्टिकोण से उचित ही है। इस कुरम का ममजन करत हुए बिबनाय ने कहा या—'बे हमेसा बीमार रहती है, उम्र भी तीस हो बभी। धौरतों के लिए इतना ही काफी है। उस पर मना-धार बिभिन्न रोगों के कारण दौंठ निर गये बाल पक गये बिसबुन ही बुड़ी हो गई है इसीलिए उन्हें छोड़कर धुमरा ब्याह करना पड़ा — कमस इनका धनुसाधन करने के सिबा क्या कर सकती है? हम सम्बन्ध में उसकी बात स्मरण कीजिय—'एक दिन जिसने प्रेम किया है फिर किसी निज किसी भी कारण से उसमें परिवर्तन की कोई संज्ञा नहीं,

मन का वह अचल अदिग अक्षय्य न तो स्वल्प है न सुन्दर ही—फिर—
मन का बुढ़ापा मैं उनी को कहती हूँ जो अपने सामने की धोर नहीं देख
सकता, जिनका हारा-बरा बराइस्त मन भविष्य की समस्त घागाओं को
अनांजित देखकर सिर्फ घटील के ही अन्दर जीवित रहना चाहता है।
इत्यादि।

सिबनाब ने स्वयं कमल को छोड़ दिया उम पर कमल क्या कह
सकती है? सिबनाब पत्थर टारीदने के लिए अजपुर जाने का बहाना कर
अमा गया पर अमल में यह घायरे में ही अमल में अमल रह रहा था
इसकी अवर जब कमल को अजित से लगी था अमल को प्रतिक्रिया होती
है वह इच्छा है—

रात अजित हो रही थी। कमल के घर बँटा हुआ अजित डर रहा
था कि कहीं सिबनाब आ जाय तो क्या समझे। कमल बोली—
अजित बाबू अजित डरने की कोई बात नहीं। वे अब यहाँ नहीं आने।
शैव-विवाह की सिबनाबी (सिबनाब का दिया हुआ कमल का प्यार का
नाम) का मोह घायर अब दूर हो चुका है।

अजित ने पूछा—'इसका अर्थ? क्या आप पुस्ती में कह रही हैं?

—'नहीं पुस्ती करने लायक अब धोर भी अजित मुझमें नहीं रहा।
मैं समझती थी पत्थर टारीदने के लिए वे अजपुर गये हैं पहल-पहल आप
से ही यह अजित किसी कि वे अब तक अजित छोड़कर नहीं नहीं गये हैं।
अजित उठ अमरे में बैठे

कमल के अ अक्षय्य का अमल करने से ही अजित होमा कि अब सिबनाब
का मन अमल से हट गया तो अजित उसे अजित कर ही किया पर अजित
बाबू के अजित-अजित से ऐसा अजित है मानो सिबनाब ने अमल को अजित
दिया ही। पर अमल के अजित-अजित यह अजित नहीं हो सकता। 'एक अजित
अजित अजित किया है अजित अजित समय, अजित भी अजित से अजित अजित
की कोई अजित नहीं मन का यह अचल अदिग अक्षय्य न तो स्वल्प है
न सुन्दर ही।

एक बात यह तो माननी ही पड़ेगी कि सिबनाय उसे स्थापक बना गया और धागरे में ही रहता है इस सब को कमल ने करीब-करीब निश्चयपूर्वक की तरह ग्रहण किया। वह न तो इस पर शोक लिखाती है न दुःख। अतिस ने पूछा—'क्या आप सब धागरे में ही रहोगी ?

—'क्यों ?

—'मान लीजिये सिबनाय बाबू यमर चाहता नहीं था। उन पर तो आपका भार है नहीं ?

कमल ने कहा—'नहीं'—फिर जब चुप रहकर कहा—'आप लोगों को यहाँ तो वै रोक जाते हैं क्या पुष्ट रूप से आप जानकर मुझे बता नहीं सकते ?

—'उससे क्या होया ?

—'होगा और क्या कर या कियाया इस महीने का विषय ही ठूपा है फिर मैं पाप परमों तक अभी जा सकती हूँ। इत्यादि।

क्या यह रूप स्वाभाविक है ? यह माना कि एक प्रेम को लेकर उसी की लकीर की कृत्री प्रारम्भिकता की हृद तक करते रहना न तो स्वस्थ है न सुन्दर हृद पर एक प्रेम जब बसा जाता है, उन समय कुछ शिनों के लिए ही सही एक पुष्पता छाड़ ही जाता है सामयिक रूप से ही सही एक प्रकार का बराग्य उत्पन्न होता है जिस समझान बराग्य कहते हैं, पर हृद कथम में इन प्रकार की कोई बात नहीं देखत। यह तो 'सुखदुःखे समहृन्वा मानासामौ जयाजयौ' वाक्य का पपराया रूप है। एकत्रमांममुमन दुःख छोड़ उमे जैसे स्पर्श ही नहीं करत। बाबुनर श्रीगुमार बनर्जी के घरत बाबू की धर्म पाशियों के साथ कमल को चुलना करते हुए लिखा है—'बह (कमल) सावित्री धर्मदा राजसदमी की सहायता धर्मदा स्वजातीय नहीं है—सावित्री धर्मदा राजसदमी प्रादि मारियाँ भारतीय हैं इनका विद्रोह जितके विद्रोह मुद्र करते हुए बाहर धा रहा है बह है समस्त ब्रमाय और दुःख-मुगान्तर-धर्मापी धर्मविधि की सम्मिलित शक्ति । कमल का जैसे किसी के साथ बाड़ी का कोई सम्बन्ध नहीं है, छोटा-बड़ा

सामग्री का प्रचलन हुआ। सहस्रों वर्षों तक विवाह (यौन-सम्बन्ध) से प्रेम का कोई सम्बन्ध नहीं होता था। इतिहास की बहुत ही प्रारम्भिक संज्ञिकों में (उससे भी पहले तो ऐसा था कि जो बिनको पा गया वह उसका होता था बाप और बेटी में भी शब्दा-सम्बन्ध होता था) स्त्रियों के एक निरिष्ट बयवर्ग का पुरुषों के एक निरिष्ट बयवर्ग के साथ पैदा होते ही विवाह हो जाता था। इसमें प्रेम के वर्तमान रूप (बिछकी सासस्ताय ने Kreutzer Sonata में यों परिभाषा की है—घोर सब व्यक्तियों पर एक व्यक्ति को सबतोभावेन तरबीह देना) का कोई संबंध ही नहीं उठता है। बाद के युग में जब हम इस प्रकार घोर सब व्यक्तियों पर एक व्यक्ति का तरबीहयुक्त प्रेम पाते हैं तो उस सामाजिक रूप से नहीं बल्कि सामाजिक रूप से (व्यभिचार आदि में) पाते हैं। सभी एन युग में परकीय-प्रेम सारे साहित्य का आधार ही हो गया। जो कुछ भी हा यह तो साबित है कि प्रेम और विवाह का सम्बन्ध घाबिम नहीं। जब भी सब समाजों में प्रेम स्थापित नहीं हो सका है। स्वयं धर्म याज्ञिक उपवास (मध्यवित्त धर्म के सामाजिक प्रतिफलन के रूप में) इसके सबसे बड़े प्रमाण हैं। यदि यही बात है तो जब वह प्रथम घाबिक आर पकणता है नि क्या कमल के लिए (इसलिये किसी भी स्त्री या पुरुष के लिए) प्रेम करना जरूरी है? क्या यौन-सम्बन्ध के साथ एक बुद्धिसम्पन्न सम्बन्ध मात्र ही मनेष्ट नहीं है?

'सोप-प्रथम' की कल्पना का उत्तर है—“यौ मानना चाहती हूँ कि जब जितना पाठ उसी को सच्चा समझकर मान सकूँ। मुझ का बहम मेर विगत सुर की शोम की बूँदों को मुझ न जाने। यह (आया हुआ मुष) कितना भी कम वर्षों न हो और उसका परिचाम ससार की दृष्टि में जाइ जितना कुछ वर्षों न गिना जाय फिर भी न उस घस्वीकार न करूँ। एक दिन का मानन्द दूसरे दिन के निरानन्द के सामने भेजे नहीं। इस जीवन में मुझ-दुःख दोनों में मे कोई भी मरण नहीं मरण है सिफ उनके बीचम अन्त मरण है सिफ उनके बने जाने का एम्प। बुद्धि और हृदय से उनको

ठाव नारी के चारों घोर रुढ़ि ही रुढ़ि है जब परम्पराओं ने उसक प्रत्येक धम को बीस-बीस सपेटों में बाँध रक्खा है ताकि वह हिंस्रुण भी न पाय जब हजारों बपों से उसकी धात्मा को कुञ्जता मया है तो उसके लिए सर्वबन्धनमुक्ति की इच्छा ही स्वाभाविक है। जब वह अपने बन्धनों को तोड़ती तो सम्भव है वह अपने बस्त्र की कमरबासी गाँठ भी खोलकर भ्रमण हो जाय और दिगम्बरी हो जाय। कमल एसी ही एक नारी है उसको सामाजिक स्वतन्त्र नारी का धारण मानना उचित है पर यह स्मरण रहे उसकी तरह मात्राज्ञानहीन विद्रोह विद्राह और विद्रोह फिर विद्रोह करने से ही नारी की मुक्ति सिद्ध होगी। यों ता शरत् बाबू के सार उपन्यास मध्यवित्त अमी की नारियों के विद्रोह के उपन्यास है किन्ती उपन्यास में यह विद्रोह बिस्फोट की मात्रा को पहुँचता है किन्ती म नहीं पर 'मय प्रश्न' में धाकर यह विद्रोह धक्काह अग्नि सामर के साथ एकाकार हो गया है और वह सब कुछ प्रस नना चाह रहा है।

कमल केवल रुढ़ि परम्परा कल्प के विरुद्ध विद्रोहिनी नहीं है वह स्वयं प्रेम के विरुद्ध विद्रोहिनी है। वह प्रेम की चिरन्तनता का कायल नहीं। यदि देखा जाय कि प्रेम की चिरन्तनता के नाम पर किस प्रकार पुरण जाति ने स्त्रियों को बन्धक बनाया है बिचका स्त्रियों से ब्रह्मचर्य का पालन कराया यहाँ तक कि पति के साथ उस बिठा में भेज दिया ता हम समझ सकते हैं कि यह प्रेम केवल बूटससोट का एक धारण रहा है पुरण की पोषण-प्रवृत्ति पर एक फूलरपण (fig-leaf) का काम बठा रहा है तो प्रेम के प्रति कमल की यह धास्वाहीनता समझ में आती है। ताल स्वाभूत प्रेम की जिस परिभाषा का मैंने उद्धृत किया है उसमें सब पर एक को तरजीह देने की ही प्रम बताया गया है पर क्या यह तरजीह केवल नारी की घोर से ही हो? कानकपुत्रियस ने तो स्त्रियों का यह उल्टी ही है कि बुद्धिमत्ता स्त्री को बजाय पुरुषों के कभी-कभी इतर-उपर हाथ मारने से बचाना नहीं चाहिये यह तो पुरण का स्वभाव है वह तो सौट ही धारणा इत्यादि। कमल ने इसी कारण प्रेम का नता-भुरा कहा।

रिपयप्रता रिपयान व ब्रह्मण मह भी तो रिपयान मह-य कि रिपयान
के विष्णुमयान न उमव। बहूण चोट लयी बहू रिपयिणा बई बई रिपों
तद उमव। ई-गि-नी गी पर बहू पीरे पीरे मीमनी उटी पर्वत एक
बहम उटावा रिप दूमरा घनता रोसमरे वा वाम करने मयो दग बीन
म घत्रिण घावा । पीरे पीरे उमके गाव पनियता बरी इबर्ता ।
रिपयमदी उमेर के प्रेम मे दीबानी हा गई थी दम बान मे उमके बरिष
पर गणघरण भार रिपुलना वा रोग भन ही गमाया जा नके बर हममे
उमकी घनुवृति वो मन्मोगना ता जाहिर होती है । हमने विपरीत लेगा
घागुम होना है कि बान भी बान वमण के घमरतम प्रदेम लव वीणा ही
मही लभी घनमाये उमे उमकी मन्त्र मे टवगाकर गी घानी है घोर
दग टवराव व घनघरण जा घावात्र होती है बहू रिपि रवामागममी
नारी की बान मनी बानि की घनोर्मदन की घावाव मानुव होती है ।
यह बानि का रोग नहीं शरद्व बावू का ही रोग है कि ये बानि को
टीन तरह मे पचाकर (देना घनताव उमे dilute करने मे बरी है) उमको
रवामागमव बन मने हे मके । बान पद है शरद्व बावू मध्यवित्त भेपी के
ही वमाताव है उगी में उमकी नार्यकता तथा वानि है वीप प्रदन म के
घरनी वमा मे बाहू बानि काव निवय मव लभी यह पड़बड़ी हुई है ।

रिप भी वमल के वप मे शरद्व बावू मे वित्त बरिष की लुटि की
है बहू निराता है । कावुर मुबोध सेन निराते है— घमल दीरी मे
घमला एक शरद्व बावू मे वितनी भी नारिया के विष लीव है उम लव
की घभिजताघों का गंभित करन पर वो घदन वा बिदोह घनिवार्य हो
वायगा वमल केवल उसी की घमिष्यलि है । वमल के बरिष मे शरद्व
माहित्य की पूषता प्रदान की है । हममें शरद्व नहीं पर हम इनको
उम घर्ष में वही निठे त्रिमये यह निराता घया है । वमल में घाकर नारी
बिदोह सक्रिय रूप घहक करता है वरुव, घमव बिदोहों में तो बिदोहिनी
बिग बई के बिदव बिदोह वा अंदा बुर्द करती है उसी के वापरे मे
बलि उगी की घावकनर्षव कर बीवन भ्यतीठ करती है वर वमल तो

अधिकाधिक है। फिर भी कमल का चरित्र असम्युक्त है। यह किस समय में इस हम साफ कर चुके हैं। इसका धीरे धीरे स्पष्टीकरण यहाँ कर दिया जाय। कमल को धरतू बाबू ने जिस प्रकार रायबेपदस्य प्रति-बन्धुवारिणी (इसमिय अबास्तविक) बनाया है क्या वही आदर्श समाज की (समाजवादी) नारी का चित्र है? हम तो नहीं समझते। यहाँ पर धरतू बाबू की कृताभरी कला कैसे हो जाती है। यह समाजवादी समाज की स्वतन्त्र नारी का चित्र पीचने में असमर्थ रहती है। समाजवादी समाज की नारी मायामाहस्य स्थितप्रज्ञा रखत नहीं होगी। उसमें कल्प दिमाग ही नहीं मिलेगी ही होगा।

शेय प्रश्न' में सब कृताभरी सभी ५ उपन्यासों की तरह यह वृत्ति है कि उसमें यौन-समस्या पर ही जोर दिया गया है मानो दुनिया में स्त्री-मुक्त के सम्बन्ध के अतिरिक्त कोई समस्या ही न हो। यों तो कमल की बातचीत के दौरान कितनी ही समस्याओं पर रायबेपद की गई है पर वे समस्याएँ कहीं भी अतिरिक्त रूप में नहीं आतीं। वे तर्कों की समस्याएँ ही जीवन की नहीं। अनागत काम का यह कौन कलाकार होना जो कृता के इस पक्ष से भारतीय साहित्य का उधार कर उसे जीवन की संकष्टों समस्याओं के चरणों में बढ़ावेगा।

धरतू बाबू ने कमल के विषय में एक सबसे अजीब बात जो दिखाई है वह यह है कि कमल आर्थिक रूप से स्वायत्तव्यवहारी है। अर्थात् धरतू बाबू ने इस तथ्य को उतना महत्व नहीं दिया जितना इसे प्राप्त होना चाहिये फिर भी इतना तो हम जानते ही हैं वह मिर्साई का रोजगार करती है। कमल की स्वतन्त्रता का यही आधार है। यह न तो सिबनाथ की मुहताब है न अजित की। इस दृष्टि से देखा जाय तो धरतू बाबू ने पहली बार एक ऐसी स्त्री को अपने कथानक की नायिका बनाया है (अतिरिक्त की साक्षिणी को हम नहीं भूते हैं, पर उसे उस उपन्यास की नायिका होने की मर्यादा नहीं प्राप्त हुई) जो सर्वहारा तो नहीं बल्कि सर्वहाराभूता (proletarianised) है। यह बहुत सूची की बात

है कि सरत् बाबू अन्तिम दिनों में यह समझ गये थे कि बिना आर्थिक रूप से स्वतंत्र हुए स्त्रियों स्वतन्त्र नहीं हो सकती। मध्यवर्ति तथ्या विहित स्त्रियों में स्त्री-स्वाधीनता पर सिद्धता और बोधभा एव फँसल हो गया है। इनके लिए कई संस्थाएँ हैं एक अखिल भारतीय संस्था भी है। पर इन संस्थाओं की स्त्रियों को पोस यह है कि ये सब की सब स्त्रियों अपने पतियों और पितामों के पैसों पर चल कर रोगुरी बनाने वाली हैं। इससे उनके सारे आन्दोलन को ही ऐसी अवास्तविकता प्राप्त है जो अक्षयनीय है। यह ऐतिहासिक तथ्य भी है कि स्त्रियों तभी तक समाज में स्वतंत्र रहें जब तक वे आर्थिक रूप से परावसम्भिनी नहीं हुईं। जिस दिन से स्त्रियाँ रोटी की फिक से यहीं उठीं दिन से वे परतंत्र भी हो गईं पुरुष के हाथ के तिमोने पात्र हो गईं कुछ भी नहीं रहीं। सरत् बाबू ने कमल के चरित्र में यह बात बिल्लता की इसलिये उस चरित्र को एक वास्तविकता प्राप्त हो गई है जो किरणमयी या और किसी नायिका का नहीं प्राप्त हो सकी। यदि सरत् बाबू कमल को इस प्रकार स्वावसम्भिनी नहीं दिखलाते तो कमल की सारी अकृतताओं पर पानी फिर आता। कठुआबारी मेसकों की एकमात्र समस्या यौन-समस्या है, उनके किसी नायक-नायिका को आसब ही रोटी की फिक हो उनका भीसत बर्ष ५००) इ० महीना समझना चाहिये। 'अरिजहीन' के सतीश उपेन्द्र बड़ी बीबी के सुरेश से लेकर सरत् बाबू के सभी उपग्याधो में यही ज्ञान है। देवदास को अन्नमुची के सामने रोटी की समस्या आती है पर ऐसा उसकी परिचित को एक समस्या के रूप में दिखाया गया है। 'अरिजहीन' की सावित्री मेस की नौकरानी है पर उसके चरित्र का अनुसरण कीविय तो जात होना वह महज हृत्पापूर्वक ऐसी है वह मेस की नौकरानी होती हुई की बिलकुल नासकिन है। फिर मेस की नौकरानी न होती तो उसके साथ सतीश की जान-महजान न हो सकती अत स्पष्ट है कि उसका नौकरानी होना एक गौण तथ्य है।

स्वयं 'दिव प्रसन्न' में भी बाबू बाबू को स्त्रियों-पैसों की कोई फिक नहीं

है शिवनाथ और धर्मित का भी यही हाल है। सब निठले से हैं। कमल के सम्बन्ध में हम पहले ही बता चुके।

कमल के मुँह से सरस्वातू ने नाना विषयों की बातचीत कराई है। यह बातचीत भारतीय साहित्य में एक अद्भुत वस्तु है। स्वयं सरस्वातू-साहित्य में एक किरणमयी की बातचीत के अतिरिक्त और कहीं इतनी कमलमय भाषा ही प्रतिभापन्न बातचीत नहीं मिलती। हम इसके कुछ नमूने उद्धृत कर हम आलोचना को समाप्त करेंगे।

कमल कह रही है—'कोई भी आदमी सिर्फ इसलिये कि वह बहुकाम स्थायी है और अत्यन्त प्राचीन काल से प्रचलित है चिरन्तन नहीं हो जाता। उसे बदल देने में कोई मज्जा की बात नहीं। उस परिवर्तन से यदि जाति की वधित विभिन्नता बनी जाती हो तो जाय कोई बात नहीं। एक उदाहरण लीजिये। अतिविज्ञान हमारा एक बड़ा धारण है। जितने पण्डित काव्य कथानक धर्म-कथामें इस विषय का ताना-बाना बनाकर गयी गई हैं। अतिवि की प्रीति के लिए बाता कर्म में अपने पुत्र तक की हत्या कर दी। इस घटना पर मैं जान कितने व्यक्तियों ने धामू बहाय हैं। फिर भी आज यह काय न केवल कुत्सित बल्कि भीमत्स माना जायगा। एक सही स्त्री में अपने काँकी पति को कर्मे पर रखाकर मणि-कामय पहुँचा दिया था—मतीत्व के इन धारण के सामने एक दिन और सब उदाहरण पीके पड़े जाते थे पर आज एसी घटना नहीं हो जाय तो वह मनुष्य के हृदय में सिर्फ गुणा ही उत्पन्न करेगी ।'

धारणों की परिवर्तनशीलता तथा उनकी निरन्तर जाँच करते रहने के लिए यह एक सुन्दर कथन है।

हरेन्द्र ने भक्ति और यज्ञ में विभक्ति होकर एक विषय के सम्बन्ध में कहा—'इस घर की यह गृहिणी है यह माई साहब की मातृहीन सन्तानों की जन्मी क समान है। इस घर की सारी जिम्मेदारी इन्हीं पर है। यह सब होने हुए भी इनका कोई स्वाय नहीं कोई सम्भन नहीं। बशाह्ये न किरी हेत की विषयमें अपने को इस तरह में रखा मरती है ?'

कमल का चेहरा तिक गया वह बोली—“इसमें कौन-सी प्रसार्द की बात है हरेण बाबू ! हो सकता है पराये घर की निस्वार्थ बृहिनी और पराये बच्चों की निस्वार्थ अनती होने का कृत्यान्त संसार में और कहीं न हो। नहीं होने के कारण यह सम्भव हो सकता है, पर सम्भव होने के कारण घबडा हो जायगा किस तरह ? बाच्चों की छटा स विधेयों के चातुर्य से मोग इसे चाहे जितना पीरबाग्निन क्यों न कर बालें दूसरे की गृहस्वी के मासकिमपने के इस प्रभिनय में सम्मान नहीं है। हमारे यहाँ चायनामान के हरीश बाबू की बात याद आ गई। जब उनकी सोसह सास कीछोटी बहिन का पति मर गया तब उसे घर लाकर वे अपने मुँह के मुँह बाम-बच्चे बिसाकर रोठ हुए बोले—‘लक्ष्मी बटन मेरी अब ये ही तेरे बाल-बच्चे हैं। मुझे फिच किस बात की बहिन इन्हें पासपोसकर घासमी बनायो इस घर की सर्वेसर्वा बनकर धाव से तू सार्बक हो यही मेरा प्राधीबाँह है। हरीश बाबू बड़े भले घासमी हैं बपीबे घर में सब राग धम्य-धम्य कर उठे। सभी ने कहा—‘लक्ष्मी के माय घच्छ है ! घच्छे तो है ही। सिर्फ स्त्रिमी ही समझ सकठी है कि इतना बड़ा दुर्भाग्य इतनी बड़ी मोखेशाजी और कुण हो ही नहीं सकठी। पर एक दिन जब यह बिइम्बना पकड़ी जाती है, तब प्रतिकार का समय निकल जाता है।

घासमों और बुइकूनों पर कमल के मन्तव्य सुन सीजिये—“ इसकी पिछा क्या है ? बहन पर डंग के कपड़े नहीं पाँवों में जूते नहीं फिर फटे-पुराने कपड़े पहिन रहे हैं कसे बात है। एक जून घासा पेट बाकर जो मइके घम्पीकार के बीच में बइ रहे हैं प्राणिक के धानव्य का जिनके भीठर चिङ्ग ठक मही है बैठ की लक्ष्मी क्या सगुँई के हाय घपने जाँडार की चापी सीप देवी ? संसार की और एक बार सिर उट्यकर देखिये तो सही। जिगुँई बहुत मिसा है, जगुँनि ही घासामी से विवा है। उन मोगों को ऐसी घकिचनता का स्कूल सोसकर त्याग का स्नातक नहीं बनाया गया पा।

मन के मेस से व्यावहारिक क्षेत्र का मेस बड़ा है। राजेन्द्र कहता है—
 'कर्म के जगत में धारमी के व्यवहार का मेस ही बड़ा मेस है मन का नहीं। मन हो तो बना रहे, अन्तःकाम का विचार अंतर्दामी करने में हमारा काम व्यावहारिक एकता के बिना नहीं चल सकता। यही हमारी कसौटी है—इसी से हम जाँच करते हैं। बाहर से स्वर में मेस न हो तो केवल दो जगों के मन के मेस से संगीत की सृष्टि नहीं होती वह तो सिर्फ कोसा हम ही कहसायेगा। राजा की सेनामें युद्ध करती हैं उनकी बाहर की एकता ही राजा की शक्ति है, मन से उसे कोई मतसब नहीं।'

धीरे एक बार सरद् बाबू ने कमल की सुन्दर बातचीतवासी मोनो पानी (एकाधिकार) तो छोड़ दी।

विवाह के सम्बन्ध में कमल के विचार सुन लीजिये। वह ध्वजित से कह रही है— 'असली फूल पत्नी सूख जाते हैं इस डर से जो लोग देर तक रहनेवासे नकसी फूलों का गुच्छा बनाते हैं और गुलाम में सजाकर रकत हैं, उनके साथ मेरे मत का मेस नहीं खाता। पहले भी मैंने एक बार आपसे ठीक यही बात कही थी कि किसी भी ध्यान में स्थायित्व नहीं है। स्थायी हैं सिर्फ उस ध्यान के क्षणस्थायी दिन और वे दिन ही तो मानवजीवन के चरम संभव हैं। उस ध्यान को बाँधने जैसे कि वह मरता। हमी से ब्याह में स्थायित्व तो है पर उसका ध्यान नहीं। बुद्ध स्थायित्व की मोटी रस्ती पस में बाँधकर वह ध्यान धारमहत्या करके मर मिटता है।'

ध्वजित ने इस पर कहा— 'जो इतना क्षणस्थायी है उसे मनुष्य ध्वजित सम्मान क्यों देने मया ?'

कमल बोली— 'यह मैं जानती हूँ 'हमारे ध्यान के दिनारे जो फल मिलते हैं उनका जीवन एक जून से ज्यादा नहीं रहता। उसमें बल्कि हमारा यह मसाला पीसने का सिम-भाड़ा कहीं ज्यादा टिकाऊ ध्यान स्थायी है। ध्यान की जाँच का इससे अधिक मजबूत मापदण्ड और पाही कहाँ सकते हैं ? जो फूल को नहीं जानता उसके लिए सिम-भाड़ा ही सबसे बड़ा

सत्य है क्योंकि वह सिल-सोड़ा के झूठकर भड़वाने की कोई धारणा नहीं है। फूल की धातु सिर्फ एक बूट की है और सिल-सोड़ा हमेशा के लिए है। रसोईपर की जख्म के मुताबिक वह हमेशा रयड़ रयड़कर बसाला पीठ दिया करेगा—रोगी निपलने के लिए तरकारी के उपकरण मसाले का सामन जो ट्यूरा वह उस पर बरोसा क्रिया या करता है। उसके न होने से सतार बिस्वार जो हो जायगा।

अजित ने कहा— 'मैं तुम्हें समझ नहीं पा रहा हूँ कि तुम हो क्या। मुझे क्या लगता है जानती हो? लगता है कि तुम्हें पता बितना घासान है तुम्हें लैना देना भी उतना ही घासान है।'

कमल ने कहा— 'यह भी मुझे मामूम है।'

अजित ने फिर हिनाते हुए कहा— 'यही तो मुश्किल है। तुम्हें घाब पा लेना ही तो सब कुछ नहीं है। एक दिन यदि इसी तरह पैना देना पडा तो क्या होगा?'

कमल ने साफ़ स्वर में कहा— 'कह भी न होया उस दिन गैबाना भी उतना ही घासान हा जायगा। जितने दिन तक पास रहूँगी उतने दिन घापको बही बिधा सिकाया करूँगी।'

अजित मीठर से शोक बड़ा बोला— 'बितापत में रहते हुए मैंने देखा है कि वहाँ वाले कितनी घासाना से—कितने मामूमली कारणों से हमेशा के लिए बिच्छिन हो जाया करते हैं। मन में सोचता हूँ क्या उन्हें जरा भी बोट नहीं लगती? और वही यदि उनके प्रेम का परिचय है तो वे सम्मता का बर्ष कैसे क्रिया करते हैं?'

कमल ने कहा— 'बाहर से घसवारों में वह बितना सहज शीबता है, घसम में उतना सहज नहीं है। मगर फिर जी में तो यही कामना करती हूँ कि नरनारी का वह परिचय ही किसी दिन जगठ में प्रकास और हवा की तरह सहज-स्वाभाविक बन जाय।'

अजित बुपचाप उसके मुँह की तरफ़ ताकता रह गया कुछ बोला नहीं उसके बाद बाहिस्ता से बूसरी तरफ़ मुँह फेरकर बैठे ही मामूम

नहीं क्यों उसकी धाँसों में धाँसू भर घामे । धायर कमल ताड़ गई । उठ-
कर वह पसंय के सिरहाने के पास बा बँठी घीर माघे पर हाथ फेरने
लगी पर सारबना का एक वाक्य भी उसके मूँह से नहीं निकला ।

कमल के बारे में जो कुछ घस्पष्टता हमारी धालोचना में रह गई
वह इस कबोपकथन से स्पष्ट हो गई । वह समझती है बाय के फूलों की
तरह प्रेम मस्तर है ऐसा वह धपबाद रूप में नहीं यन्त्रि प्रकृति के एक
धपरिहार्य नियम के रूप में समझती है । उसका यह नियम एक घदृष्ट
वारी (Fatalistic) हृद तक पहुँच गया है, बकर ऐसा होगा ही । धौरियत
है कि वह मानती है कि एक प्रेम से दूसरे प्रेम में जाग के परिवर्तनकाल में
कुछ बुद्ध होना है उसकी भाषा में नितना घसवारों से मामूम पड़ता
है यह उतना सहज नहीं है ।

वह एक वास्तविकता है कि प्रत्येक प्रेम स्वामी नहीं हो सकता इसको
मानकर जो नीति सवाचार, कानून बनवा वही स्वस्म घीर सुन्दर बनेया
पर इसको धतिरचित करके दूसरी धति पर पहुँच जाना कि प्रेम स्वामी
किसी हालत में नहीं हो सकता हम समझते हैं मस्वस्व है घीर इस
मघबाद पर मबमन्वित सवाचार तथा कानून की पद्धति पसत होती ।
फिर स्त्री-पुरष के सम्बन्ध में स्त्री, पुरुष के धतिरिक्त संतान भी तो एक
वस्तु है । कमल का किसी धति से मड़का नहीं हुआ, इसधिय उसके लिए
वह समस्या नहीं धाई पर कमल को धति की धप्रदूती करार देनेवाले
किसी समामोचक के लिए इस बात को भूल न जाना चाहिये बा । फिर
यह मनोविज्ञान की दृष्टि से विचार है कि यदि एक व्यक्ति के रिमाण में यह
बात धच्छी तरह धंस जाय (जैसे कमल के रिमाण में धंस गई है) कि जिस
स्त्री का वह इस समय गले लगा रहा है वह बकर ही धीघ किसी दूसरे की
प्रेमिका होती तो क्या वह ठीक-ठीक प्रय कर लकेपा ? क्या उस हालत
में उनके प्रेम में एक घवास्तविकता घीर बिटम्बना की धारणा नहीं धा
जायगी ? धमत् में उरुत दूर्य को ही सीजिये धचित के तो यह सोचकर
धाँसू धा जाने हैं कि कमल से वह कभी धमग हो भी सकता है, पर धचित

के धाम्नी देखकर भी कमल की धातों में धाम्नी नहीं आते । वह स्थितप्रज्ञ ही हो चुकी है । सरस्वती ने जिस धातों से उसके चरित्र को यहाँ स्पष्ट किया है वह उन्हीं की निपुण लेखनी के उपयुक्त है । इतना कह देने के बाद भी यह सवाल तो रह ही जाता है कि इतना अधिक ज्ञानी हो जाना क्या केवल बुद्धि से ही नहीं सुल से भी परे हो जाना नहीं है ? यदि ऐसा है तो क्या इस निष्कल चरित्रज्ञान के बजाय थोड़ी सज्जनात्मक भाँति बरणीय नहीं है ? क्या कमल के प्रेम में वह उद्दाम भावेन आ सकता है जो अज्ञित के प्रेम में आवेगा ? यदि नहीं तो कमल का चरित्र ज्ञान साम ह्युमा या हानि ?

इन सब प्रश्नों का उत्तर दिया नहीं जा सकता क्योंकि इन प्रश्नों का पूरा-पूरा उत्तर देने के लिए सम्पूर्ण मनोविज्ञान और समाजशास्त्र की अवधारणा करनी पड़ेगी । मान लीजिए कि इन प्रश्नों का उत्तर इस प्रकार दिया जाय कि दाम्पत्य-जीवन को चलाने के लिए एक बुद्धिसम्पन्न सम्बन्ध भर की जरूरत है, प्रेम की भाँति की जरूरत नहीं है तो भी 'श्रेय प्रश्न' की कमल के विरुद्ध यह समालोचना तो रह ही जाती है कि वह प्रत्येक प्रश्न पर, विशेषकर इन श्रेय प्रश्नों पर, केवल वैयक्तिक दृष्टिकोण से विचार करती है इसी बुद्धि के कारण कलामय वैयक्तिक प्रतिमाशापी कथोपकथन तथा पक्षे-पक्षे सूचिभोजक चर्चात्ताप के बावजूद वह पुस्तक पठानुगतिक कला से बचन तुड़वाकर भी नहीं तुड़वा पाती । सरस्वती की कला इस पुस्तक में सर्वव्ययनमुक्त होकर दौड़ने की कैप्टा करती है पर उसके पैरों में बचपन से बुर्जुवा कला का जो बीनी जूता पड़ा है उसके कारण वह दौड़ नहीं पाती । इस पुस्तक की दूसरी बुद्धि यह है कि प्रेम के विरुद्ध भारतीय साहित्य में सबसे प्रथम भीयन धातयन होते हुए भी सरस्वती इसमें भी प्रेम के ही आवारे में रह गयी है । मानो वही जीवन की एक समस्या हो मानो उन्हीं के Adjustments को दृष्टिगत कला साहित्य विद्या का एकमात्र उद्देश्य हो मानो जीवन की और सब समस्याएँ सुलभ चुकी हो और एक वही समस्या धन मानवता के लिए रह गई हो ।

कथानक की दृष्टि से शीघ्र प्रदत्त 'श्रीकान्त' 'चरित्रहीन' के सामने तो क्या 'बाबूबाबू की बेटी' 'दत्ता' 'पत्नी-समाज' आदि उपन्यासों के सामने भी टिक नहीं सकता। उस के परिपाक की दृष्टि से तथा भावुकता की दृष्टि से 'देवदास' 'चरित्रहीन' 'श्रीकान्त' 'घन्टनाथ' इससे कहीं प्रशस्त हैं। फिर भी इस उपन्यास में सरल बाबू एक महीन रूप में दृष्टिगोचर होते हैं। इस उपन्यास के प्रथम अध्याय से ही ज्ञात होता है कि हम एक नई दुनिया में प्रवेश कर रहे हैं, मानो 'चरित्रहीन' 'देवदास' 'श्रीकान्त' की पुरानी दुनिया को छोड़कर हम एक नये जगत में आ गये हैं। आघात दृष्टि से कमल सरल-साहित्य की किसी धर्म मायिका से अभिन्न भावूम पड़ती है पर नहीं कमल उनमें से किरणमयी से बहुत मिसती हुई ज्ञान पढ़ने पर भी जरा पहचान से सोचन पर एक नया चरित्र जान पड़ेगी। 'देवदास' की 'अन्न मुक्ती' और 'श्रीकान्त' की राजलक्ष्मी भी उसके करीब भावूम पड़ती है पर उनमें और कमल में मौलिक प्रभेद यह है कि वे ब्रह्मावृत्ती होती हुई भी जगत् एक-एक लुट स यानी कमल देवदास और श्रीकान्त से सामाजिक रूप से नहीं पर मानसिक रूप से बंधी है पर कमल तो स्वबन्धन मुक्ता है। वह किसी पुरुष का नहीं है। वह अपने आत्मीय ईसाई पति की नहीं है। वह धिवनाथ की नहीं है। वह धर्म की भी नहीं है। वह अपनी है सम्पूर्ण रूप से अपनी। वह निर्मल है मन से और धरीर स। वह वर्तमान युग की मारी का—सब बन्धनमुक्त मारी का प्रतीक है यदि उसका कमल का पुरुष के बिना ही सारी सृष्टि को अभाव्य एमा हो नहीं सकता इसलिये उसकी सृष्टि में पुरुष का एक गौण स्थान है। वह प्रतिक की भावुकता पर मन ही मन हँसती है। शायद कुछ शृणा भी करती है। जिस अनागत समाज में पुरुष और स्त्री में सम्पूर्ण समता होगी जिसमें स्त्री को अपने गामी के अर्थ में या आश्चर्यकता पढ़ने पर उसका निष्कामन में किसी धार्मिक या सामाजिक कारण से बाधा न होनी निर्मोही तथा निर्मल कमल शायद उस समाज का आदर्श न हो सके पर परिवर्तनकाल में कदा प्रति होती ही है। कमल उमी धनविद्रोह का मूर्त प्रतीक है। उसके

के घाँसू बेसकर भी कमल की घाँसों में घाँसू नहीं घाते । वह स्थितप्रज्ञ ही हो चुकी है । शरद्वन्धु ने जिस बारीकी से उसके परिण को नहीं स्पष्ट किया है यह उन्हीं की निपुण लक्ष्मी के उपयुक्त है । इतना वह सेने के बाद भी यह समाल तो रह ही जाता है कि इतना अधिक बानी हो जाना क्या केवल बुल से ही नहीं बुल से भी परे हो जाना नहीं है ? यदि ऐसा है तो क्या इस निष्कल प्रतिबान के बचाप छोड़ी सृजनारम्भक प्रति बर्गीय नहीं है ? क्या कमल के प्रेम में वह उद्दाम भावेण घा सकता है जो अजित के प्रेम में घायेगा ? यदि नहीं तो कमल का प्रति भान नाम हुआ या हानि ?

इन सब प्रश्नों का उत्तर दिया नहीं जा सकता क्योंकि इन प्रश्नों का पुरा-पुरा उत्तर देने के लिए सम्पूर्ण मनोविज्ञान धीर समाजशास्त्र की सहायता करनी पड़ेगी । मान लीजिए कि इन प्रश्नों का उत्तर इस प्रकार दिया जाय कि साम्याय-जीवन की चलाने के लिए एक बुधिसम्पन्न सम्बन्ध भर की जरूरत है प्रेम की प्रति की जरूरत नहीं है तो भी 'येप प्रस्त' की कमल के विरुद्ध यह समालोचना तो रह ही जाती है कि वह प्रत्येक प्रश्न पर, विशेषकर इन येप प्रश्नों पर, केवल वैयक्तिक दृष्टिकोण से विचार करती है । इसी त्रुटि के कारण कलामय बौद्धिक प्रतिभावासी कथोपकथन तथा पट्टे-पट्टे मूर्तिमंजक मार्तण्डास के बाबजूब यह पुस्तक गतानुमतिक कला से बगल तुड़काकर भी नहीं तुड़का पाती । शरद्वन्धु की कला इस पुस्तक में सर्वव्यननमुक्त होकर बौद्धिक की चोखा करती है पर उसके पैरों में बन्धन से जुड़ना कला का जो बीनी जुटा पड़ा है उसके कारण वह खीड़ नहीं पाती । इस पुस्तक की दूसरी त्रुटि यह है कि प्रेम के विरुद्ध भारतीय साहित्य में सबसे प्रबल भीषण आक्रमण होते हुए भी शरद्वन्धु इन्हें भी प्रेम के ही आवरे में रह गये है । मानो वही जीवन की एक समस्या हो मानो उन्हीं के Adjustments को बुझना कला साहित्य विद्या का एकमात्र अर्थ हो मानो जीवन की धीर सब समस्याएँ सुलभ चुकी हों धीर एक यही समस्या सब मानवता के लिए रह गई हो ।

कथानक की दृष्टि से अप्य-अस्त 'श्रीकान्त' 'चरित्रहीन' के सामन तो क्या 'बाहुष की बेटी' 'दत्ता' 'पस्सी-समाज' भावि उपन्यासों के सामन भी टिक नहीं सकता। उस के परिपाक की दृष्टि से तथा माबुकता की दृष्टि से 'देवदास' 'चरित्रहीन' 'श्रीकान्त' 'अश्रमाय' इससे कहीं अच्छे हैं। फिर भी इन उपन्यास में अरन् बाबू एक नवीन रूप में दृष्टिगोचर होते हैं। इन उपन्यास के प्रथम अध्याय से ही ज्ञात होता है कि हम एक नई बुनियाद पर प्रवेश कर रहे हैं, माना 'चरित्रहीन' 'देवदास' 'श्रीकान्त' की पुरानी बुनियाद को छोड़कर हम एक नये अर्थ में आ गये हैं। आयात दृष्टि से कमसे अरन्-साहित्य की किसी अन्य भाविका से अतिशय मासूम पड़ती है पर नहीं कमसे अर्थ में से फिरगमनी में बहुत मिलती हुई जान पड़ने पर भी अरन् पहलू में मोहन पर एक नया चरित्र जान पड़ेगी। 'देवदास' की 'अश्रमाय' मुर्खी और 'श्रीकान्त' की राजसखी भी उसके करीब मासूम पड़ती है पर उनमें और कमसे में मौलिक प्रवेश यह है कि वे बेवबावद होती हुई भी कमसे एक-एक कूट से यानी कमसे देवदास और श्रीकान्त से सामाजिक रूप में नहीं पर मानसिक रूप से बंधी है पर कमसे तो सर्वव्यथन मुक्त है। वह किसी पुरुष का नहीं है। वह अपने आसामी ईसाई पति की नहीं है वह विवनाथ की नहीं है वह अज्ञान की भी नहीं है। वह अपनी है सम्पूर्ण रूप में अपनी। वह निर्मय है मन से और अरीर से। वह वर्तमान युग की नारी का—सर्वव्यथनमुक्त नारी का प्रतीक है यदि अर्थवाचक अर्थ ता पुरुष के बिना ही सारी सृष्टि को अर्थवाचक एसा हो नहीं सकती हमसिये अर्थकी सृष्टि में पुरुष का एक यौग स्थान है। वह प्रेमिक की भावकता पर मन ही मन हँसती है भावक कुछ कृपा भी करती है। अर्थवाचक समाज में पुरुष और स्त्री में सम्पूर्ण समता हावी जिसमें स्त्री को अर्थवाचक के अर्थ में या भावकता पड़ने पर उसका निष्कासन में किसी आर्थिक या सामाजिक कारण से बाधा न होनी निर्मोही तथा निर्मल कमसे अर्थवाचक समाज का आदर्श न हो सके पर परिवर्तनकास में कुछ अर्थवाचक ही है। कमसे उनी अर्थवाचक का मूर्त प्रतीक है। उसके

कं धीसू बेसकर भी कमल की धीसों में धीसू नहीं घात । वह स्थितप्रज्ञ ही हो चुकी है । धरत् बानू ने जिस बारीकी से उसके चरित्र को यहाँ स्पष्ट किया है यह उन्हीं की मिथुन भक्तनी के उपयुक्त है । इतना वह लेने के बाद भी यह सवाल तो रह ही जाता है कि इतना घबिह जानी हो जाना क्या केवल दुःख से ही नहीं सुख से भी परे हो जाना नहीं है ? यदि ऐसा है तो क्या इस निष्कल घतिज्ञान के बजाय थोड़ी सुन्नारमक भाति बरनीय नहीं है ? क्या कमल के प्रेम में वह उद्दाम भावेण घा सकता है जो अजित के प्रेम में घायेगा ? यदि नहीं तो कमल का घति ज्ञान माम हूभा या हानि ?

इन सब प्रश्नों का उत्तर दिया नहीं जा सकता क्योंकि इन प्रश्नों का पूरा-पूरा उत्तर देने के लिए सम्पूर्ण मनोविज्ञान और समाजशास्त्र की अवधारणा करनी पड़ेगी । मान लीजिए कि इन प्रश्नों का उत्तर इस प्रकार दिया जाय कि साम्प्रत्य-जीवन को बसाने के लिए एक बुद्धिउत्पन्न सम्बन्ध मर की जरूरत है प्रेम की भाति की जरूरत नहीं है तो भी 'शेष प्रश्न' की कमल क विरुद्ध यह समासाचना तो रह ही जाती है कि वह प्रत्येक प्रश्न पर, विशेषकर इन शेष प्रश्नों पर, केवल वैयक्तिक दृष्टिकोण से विचार करती है इसी त्रुटि के कारण कसामय बौद्धिक प्रतिभावाली कथोपकथन तथा परे-परे मूर्तिमयक बार्तालाप के बावजूद यह पुस्तक यतानुगतिक कसा से बचन तुड़बाकर भी नहीं तुड़बा पाती । धरत् बानू की कसा इस पुस्तक में सर्वबन्धनमुक्त होकर बौद्धिक की चेष्टा करती है पर उसके पैरा में बचपन से कुर्बुबा कसा का जो चीनी जूता पड़ा है उसके कारण वह बौद्ध नहीं पाती । इस पुस्तक की दूसरी त्रुटि यह है कि प्रेम के विरुद्ध भारतीय साहित्य में सबसे प्रथम मीयम भाकमन होठ हुए भी धरत् बानू इसमें भी प्रेम के ही बायरे में रह गये हैं मानो बही जीवन की एक समस्या हो मानो उन्हीं के Adjustments को बूडना कसा साहित्य बिधा का एकमात्र अहेस्य हो मानो जीवन की और सब समस्याएँ सुन्नरु चुकी हों और एक मही समस्या अथ मानवता के लिए रह गई हो ।

कथामक की दृष्टि में शेष प्रश्न 'श्रीकान्त' 'अरिभहीन' के सामने तो क्या 'बाह्यण की बेटों' 'बला' 'पस्मी-भमा' भादि उपन्यासों के सामने भी टिक नहीं सकता। उस के परिष्कार की दृष्टि से भया माबुकरा की दृष्टि से 'दिवदाम' 'अरिभहीन' 'श्रीकान्त', 'अन्द्रमा' हमसे कहीं श्रेष्ठ हैं। फिर भी इस उपन्यास में अरुण बाबू एक नवीन रूप में दृष्टिमोचर होते हैं। इस उपन्यास के प्रथम अध्याय में ही भात हाता है कि हम एक भई बुनियाद में प्रवेश कर रहे हैं मानो 'अरिभहीन' 'दिवदाम' 'श्रीकान्त' की पुणनी रनिया को छोड़कर हम एक नये जगत में आ गये हैं। प्रापण दृष्टि में कम

विवाह का काम धर्मात्मक धार्मिक और मूजनात्मक काम है। जिस समय पुराने समाज की इत से इंट बजाई जा रही है उस समय यह स्वाभाविक है कि इन बात का बतई रखा न गया जाय कि इनकी कुछ इंटों से नये लोभ को बनाने में शायद मदद मिल सकती है। पर उस समय यह कौन देखता है ? उस समय तो लोभो और मोहो फिर लोभो। इमीनिसे कमस सही मान में ज्ञानि की धरपुनी हा या न हो वह परिवर्तन युग के उपन्यास की नायिका क रूप में धरनाभाविक नहीं है। यद्यपि उसे धनापठ समाज के धारण के रूप में रखने की बच्चा धारणितजनक है। धनापठ समाज का नए और मारी प्रेम के सोपन तथा एक पक्ष के लिए धारणपीठनमूमक रूप को बुर कर देगी नए प्रेम के उस रूप में जो मूह नहीं मोड़ेगी। वह धारी रिक्त मिमन को बच्चा बोधिंक सलह पर पहुँचा देया वह प्रीय का मूसव न्याय के स्वयं में प्रेम का नूपुरजिजन का मूसव बिरह के मर्मभेदी बिलाप में बुकान में म बकना पर याव ही बिरह क र्पक में वह धारणपीठन वी हर ठक राटेया यह बात भी नहीं। जब पुराने प्रेम की सम्भावनाएँ — यानी मिमन और धारणपीठनहीन बिरह की सम्भावनाएँ धरम हो जायेंगी तब नए फिर जीवन की बिराट मधुघासा से एक नया साकी बुद्ध सेया और धारण इम मबीन साकी की धारणा में वह अपनी पुरानी बोई हुई साकी का ही पुनराविचार करेया।

‘धेय प्रान्त’ एक परिवर्तन युग का भारतीय समाज की एक नई प्रवृत्ति का सचबन्धनमुक्त भारतीय नारी का सर्वबन्धनमुक्त प्रतीक है। इसलिये वह नि सन्देह बिल्कसाहित्य की एक सुन्दर कृति है। रखा यह कि धरतु बाबू यदि अपने उपन्यास में इस युग को पूर्ण रूप से लिना पाते तो वह उपन्यास कैसा हाता और अध्या होना या न हाता यह व्यर्थ का बितंडा है। धरतु बाबू अपनी धीमायो के कारण ऐसा कर ही नहीं सकते थे, वही क्या काम है कि उन्होंने उस धीरे एक सुन्दर इंगल कर दिया। अन्तिम का धनापठ कलाकार ही धरतु बाबू के इम धरतु काम को पूरा कर सकेया।

शरत्चन्द्र की अन्तिम कृति 'जागरण'

हम उनके प्रसिद्ध उपन्यास के सम्बन्ध में कुछ न कहकर पहले पाठकों के सम्मुख इसका संक्षिप्त रूप रख देंगे जिससे उनके लिए हमारी प्रशंसा के रस को पूर्ण रूप से ग्रहण कर सकना सम्भव हो। उपन्यास का बितना हिस्सा बे मिस्र गए, वह २० पृष्ठों में था है। इसलिए हम उसका बोझ में ही सारांश देंगे। सारांश यों है—

बैरिस्टर मिस्टर धार० एम० रे का प्रसन्नी नाम राधामाधव राय था। वे न तो ब्राह्मणमात्री थे कट्टर हिन्दू तो थे ही नहीं। हाँ यह कहा जा सकता है कि विभागत से लोटे हुए लोगों की विपत्तियों के थे। जब वे स्कूल का दरवाजा पार करके कासज में कदम रखते ही वास्तव में तभी पाठ दिनों के अन्दर एक-एक करके उनके पिता तथा माता की मृत्यु हुई।

जमींदारों का परिवार था। पिताजी काफ़ी धन और जमींदारी छोड़ गए थे। सबसे बड़ी बात आगे ली गई थी कि वे एक विद्वान् तथा बहुत कमचारी के हाथों में जमींदारी का काम सौंप गए थे। इसका नतीजा यह हुआ था कि ग्लिफ्लेगों के मारे गैर व्यर्थ गये थे और मिस्टर रे को कभी प्रयाग का सामना नहीं हुआ।

बैरिस्टरी पास करने के बाद जब मिस्टर रे देश में लौटे तो उन्होंने स्वामाधिक रूप से अपनी ही तरह एक गार्डन की शिक्षिता कन्या से विवाह कर लिया और वे प्रयाग प्रयाग बम्बई आदि स्थानों में प्रैक्टिस करना रहे। कहना न होना कि उन्होंने जो माहरी टाट प्रयाग वह अपनी बैरिस्टरी की कमाई की बखीनत नहीं बल्कि जमींदारी की प्रामदनी की

बसौसत कामम रहा। जमोठारी ने जो रक्त निचोड़कर भेजा जाता था उसी से उनकी साहूबी का पीया पसता रहा। इस बीच उनके परिवार की संख्या में वृद्धि हुई और एक पुत्र तथा एक कन्या पैदा हुई। पुत्र तो बचपन में ही मर गया। पत्नी भी बहुत दिनों तक बीमार रहन क बाव बस बसी। तब से मिस्टर रे ने बहाना पाकर कह भीजिए मा बराम्य के कारक बैरिस्टरी छोड़ बी। पर साहूबी ठाठ तो कामम ही रहा।

इस समय साहूब की उम्र पचास से ऊपर हो चुकी थी। वे अपनी कन्या को लेकर पछाह के एक शहर म रहते ब। इतने में महात्मा गांधी का असहयोग-आन्दोलन छिडा और यद्यपि र साहूब न तो कोई राजनीतिम वे और न कोई देश-भक्त फिर भी समाचार-पत्रों के जरिये से असहयोग की सहर उनके हृदय पर भी मयी।

रे साहूब समाचार-पत्र तथा प्राये हुए पत्रों को पढ़ने में व्यस्त वे इतने में उनकी कन्या घालेस्य बाहर जान की पोशाक म दिखलाई पड़ी। उबर से मकान के सामने मोटर के लड़े किये जाने की आवाज भी मामूम हुई। घालेस्य का रङ्ग मोरा नहीं था क्योंकि बङ्गासी साहूबों की लड़कियाँ मारी नहीं होती। हाँ साकुन और पाउडर की बसौसत बमड़ी कुछ राख के रङ्ग की मामूम होने मगती है।

यद्यपि माँ ने जबरबस्ती कन्या का नाम घालेस्य रला था और एसा नमपन क बिए ही रला था फिर भी यह नाम मिस्टर रे को पसन्द नहीं था और वे उसे आमी (शम्भार्ब रोघमी) करके पुकारते थे। यह नाम वन्धारक की वृष्टि से आसान होने के कारण बस्बी ही प्रचलित हो गया और कुछ लोगों के अलावा बाकी सब लोगों का यह पता ही नहीं रहा कि जमीदार-कन्या का एक घटपटा नाम भी है। ब सब उसे घालो ही करके जानत थे।

घालेस्य ने पिता से कहा—यदि आज लीटने में कुछ देर हो जाय तो चिन्ता न करमा। आज हनु के घर में टैनिस्-टूर्नामेंट है। मैं उसमें घरीक हूँ।

मिस्टर रे अपने पत्रों में दूबै हुए थे सिर उठाकर बोसे—आपने बेटी देखो अभी-अभी बातें हो रही हैं मैंने पहले ही कहा था कि यह सब होकर रहेगा ।

मदकी अपने पिता को पहचानती थी । उनके लिए दुनिया में जो कुछ होता है वह सब होकर रहेगा की धोबी में है और वे उसे पहले ही से जानते थे । इस कारण वह सहसा समझ नहीं पाई कि उनका किम घात से अभिप्राय है । बोली—दोन सी बात पिताजी ?

मिस्टर रे ने पहले की तरह आस म कहा—पुसिस न दो असह्यो गियों को गिरफ्तार किया और मजिस्ट्रेट न उन्हें कड़ी सजा दी है काई छ-साठ और पक्क जायेंगे देखो क्या होता है ।—कहकर उन्होंने एक सम्झी चांस ली ।

आमेक्य को इन बातों में दिखपस्वी नहीं थी । असवारों में उसे कोई रम नहीं आता था । तिम पर इस समय उप पर टूर्निमेंट का मूव सवार था फिर भी वह अपने सि-सङ्ग षोकबीज अकालतृड पिता के प्राग्रह तथा प्राग-प्रा की अकाल न कर सकी । वह अपने पिता से सचमुच प्रेम करती थी । कलाई पड़ी में अपने देखा कि अभी वह पिता को कुछ समय दे सकती है । बोली—उम व्यक्तियों न क्या किया था ?

मिस्टर रे बोले—जो किया था वह कोई मामूली बात नहीं है । वे याभीजी की तरफ से असहयोग का प्रचार कर रहे हैं । कहने में भार-काट मत करो किसी अंग्रज या भारतीय के प्रति बिद्रोह न रखो सरकार के साथ कोई सम्बन्ध न रखो न उसकी शौकरी करो और न उसकी कचहरियों में ग्याय की आशा से आओ ।

आमेक्य बोली—इयथा तो धर्य मद हुआ कि न क्या में अराबकवाद फैलाना चाहते हैं ।

मिस्टर रे कुछ चौंकर बोले—मामूम था ऐसा ही होगा है ।

आमेक्य बोली—उब तो उन्हें जैस भेजना ही चाहिए ।

यद्यपि मिस्टर रे कग्या के सब कचनों से सहमत हात चल था रहे थे

पर कन्या ने उसमें जा उपसहार निकाला उसमें वे सहमत न हो सक, बोले—यह नहीं कहा जा सकता कि ये लोभ जो कुछ कर रहे हैं वह सब या ही कर रहे हैं। सरकार की तरफ से भी धमकाव हो रहे हैं।

प्राणेश्वर सरकार के पास या बिपिन में नहीं भी पर वह यह चाहती थी कि हुनिया जीमी है बीनी रहे। बोनी—उस दिन हड़ताल में मोटर पर निकलने के कारण इन्दु के पिताजी की गाड़ी के काँच टोड़ दिये गए थे यदि वह इत काँच पार करके कहीं इन्दु के पिताजी को मरती ?

मिस्टर ने का इन्दु के पिता के साथ महानुद्बुद्धि थी पर वे बोस— जब उस दिन हड़ताल थी तो मिस्टर घोष बाहर न निकलते ता प्रकटा होता।

प्राणेश्वर न इस बात को पसन्द नहीं किया और बोनी—यसत बात न मानकर उन्होंने तो साहस का परिचय दिया था।

मिस्टर ने बोले—बात गसत थी यह तुमने कैसे जाना ? प्राणेश्वर पिता की बात न मान सकी पर इसके साथ ही उसे स्मरण ही आया कि हड़ताल के दिन मिस्टर ने को प्रसन्नता जाना था न वैदम हो गए थे। बोनी—जो लोग वैदम गए थे उन लोग न टीक किया था। पर जो लोग इस गसत घनुरोध को न मान सके उन पर डेनेबाजी का अधिकार किसी को नहीं था।

मिस्टर ने ने अधिक तर्क नहीं किया। जब तक उनकी पत्नी जीवित रहती थी तब तक वह उन्हें दबाती रही। हमेशा वह बहुत अधिक बर्ब करती थी और रोक-बाम करने पर यह कहती थी कि इसमें कम न कोई मत्ता धारणी गुजारा नहीं कर सकता। जब वे बहुत-कुछ कन्या के पत्नी के कमी उम पर अपनी राय सादने की चेष्टा नहीं करते थे। इसलिए वे बोस—बापों तुम्हें डेर हो रही है मुझे भी बिट्टी-मरी लियनी है। जल्दी जाना।

प्राणेश्वर इन्दु के घर में पहुँची तो वहाँ सब तैयार था टूनमिंट परेनू था। उसमें प्राणेश्वर बिबयी रही। इनके बार प्राण-पार्टी को शीर्ष होते

है। वह घर धामस्य बुपने से सटकर अपनी कार म जाकर सभार हो गई। उसे अपने एकाकी पिता का स्मरण हा थाया था। वह जन्दी स घर पहुँची तो बेसती क्या है कि पिताजी सामान बाँचने में व्यस्त हैं। बानी—क्या बात है पिताजी? कहीं जाने की तैयारी है क्या? मैं जब गई थी तब तो कोई बात नहीं थी।

हाँ एक पक्ष से यह मामूम हुआ कि जाना जरूरी है। मैंने तभी कहा था कि गाँधी हमारा सत्यानास करेगा। मैं समझ गया था कि य स्वदेही तुम्हें मुस्क का मिटाकर मानेगे।

कहकर उन्होंने अपनी जेब से एक बिट्टी निकालकर कप्या के हाथ में र ही बोले—यदि इनको पकड़कर जेस में बन्द नहीं किया गया तो देश का सत्यानास हो जायगा।

धामी कुछ दर पहल उन्होंने बिलकुल बुरगी ही बात कही थी। मुनीम न मिला था कि हास बुरा है कोई सगल नहीं देता सोय मार काट पर मो कमर कमकर तैयार मामूम होते हैं।

पक्ष पकड़कर धामस्य का बेहरा फर पड़ गया। बोली—पिताजी धाय स्वयं जा रहे हैं?

—जाईं नहीं तो क्या करूँ? बिना गय काम मही बनने का। तुम चिन्ता न करो। धाय साहब मे कह जाऊँगा के धाकर दोनों समय सबर से जाया करेगे।

एकाएक धामस्य बोस उठी—मैं थी धायक साथ जाऊँगी। धाय जाकर दूधर कमरे में बैठें मैं साथ सम्बोवस्त किये सती हूँ।

पिता को पुत्री की बात माननी पड़ी पिता-पुत्री दोनों अपने देहाती घर मे पहुँच गए। धामस्य पहली ही वार अपने बाप-बानों के हाथके में धाई थी। यही वह कस्यबुध था जिसे मरुमरेते ही बिनायत्र का धर्म पकड़े-मै-पकड़े माने-महनन की बीजे मोना जाती हीरा मोती सब निम जात य। उसकी माँ ने तो कमी इस तरह ध्यान ही नहीं दिया पर वह कमी-कमी देखती थी कि जब बड़ी-बड़ी पार्टियाँ होती थी और उनमें

मनमाने बंध से जख होता था तो पिताजी कुछ उगम और दुखी होते थे। कई बार तो वे ब्रेक मगाने की कोशिस भी करते थे पर उनकी बच्चा सफल नहीं होती थी। भूम बढ़ाक के बीच वे दुखी होकर एक किलारे बैठ जाते थे।

यहाँ भाये हुए कुछ ही समय हुआ था कि मामक्य को ऐसा मामूम पड़ा कि यह स्वाम बिमबुस रहने के लायक नहीं है। कमरों को फिर से बाकायदा मीच कराक पष्ट करवान की बकरत है। कुर्सी भादि में पटिया बाबा भादम के जमाने की है। चार-पाँच हजार मय ता किसी तरह निर्बाध हो सकता है। कन्या में इसी प्रस्ताव को पिता के सामने रखना चाहा। मिस्टर ने उस समय एक पश्चिमतबी के साथ बातचीत कर रहे थे परिचय करात हुए बोले—मे हमारे पुरोहित-वंस क है इन्होंने हमारे ही एक इलाके में एक पाठ्यासा खोली है। इन्हे प्रगाम करो।

मामक्य को यह भाव मच्छा नहीं मामूम हुआ क्योंकि वह बहुत निकट के दुस्वर्तों के प्रतिरिक्त और किसी की प्रगाम करने की मय्यस्त नहीं थी। एक तो अपरिचित और तिस पर पुरोहित जिनके बिच्छ वह बचपन से इतना अधिक मुनती मा रही थी। उसने किसी प्रकार पिता की भाजा का पालन किया और भामन्सुक के प्रति मबन्ना दिखाती हुई बोली—पिताजी भापने बेला है इस पर के कमरों की क्या दुर्बधा हो रही है ?

मिस्टर ने बोले—ठीक तो है।

भासेक्य बोली—इसे भाप ठीक कहते है। इन्हे फौरन मये सिरे से पेष्ट कराने की बकरत है। ये मीय इतने बिगों से कर गया रहे थे। पुराने भादमी कामचोर होत हैं। मैं इन्हीं निकामकर तमी मामूनी।

मिस्टर ने बोले—यहाँ पर रहना तो है नहीं रहना हा ठक तो बात इंसरी है।

—मैंने समझ लिया सब बिना रहे काम नहीं बनेया।

मिस्टर रे न अमरनाथ से कहा—तब ता घबछी बात है क्यों अमरनाथ ? इतने दिनों में यह समझ तो आई ।

अमरनाथ ने कुछ नहीं कहा । मिस्टर रे बोले—बा रहना ही है, ता धीरे-धीरे सुधार किया जायगा ।

—किया जायगा नहीं अभी करना पड़ेगा ।—कहकर उमन हाथ के धंधेबी उपन्यास के अन्दर से एक तार निकालकर दिखाया कि मिस्टर माय के परिवार के कई लोग अस्वी ही यहाँ आ रहे हैं ।

मिस्टर रे बोले—तो कितने पैसे चाहिए ?

—मैं कह नहीं सकती पर चार बड़े कमरों में चार ड्रेसिंग टेबिल और कम-से-कम दस आरामकुर्सियाँ चाहिए ।

सुनकर मिस्टर रे की पूंठ गरक गई, वे अमरनाथ से बोले—भई मैं बहुत कुछ के माय कहता हूँ कि शायद मैं तुम्हारी पाठशाला की कुछ सहज-बता न कर पाऊँ ।

—मालूम तो ऐसा ही होता है—कहकर अध्यापक अमरनाथ हँसे ।

आनन्द के बदन में उस घाम सज गई, उसने आगन्तुक की सम्पूर्ण रूप से अज्ञात करके यह गिनाना शुरू किया कि चार और धिरे के कितने सेट अथवा और फौरन चाहिए । बोली—बस ब धाएँगे तो आप राइट टायम इन्डियन स्ट्राइम में कम के पक्ष और सकारे नकर पक्ष नहीं कर सकते । मैं सब-कुछ ठीक कर सूँगी आप चिन्ता न करें । इतने दिनों तक बहुत बेकार लर्न होते रहे । बेकार के भोग पसन्द रहे, मैं इन सबको निकाल बाहर कर रही हूँ । नीजवान मुलाजिम नीकर नियुक्त करूँगी जिससे कि आपके पैसों पर खर्च काम मिले । मैं मालूम कितने मन्दिरे हैं इनमें कितने रुपये बेकार लर्न होने हैं । एक इसी तरह से मैं समझती हूँ सामान्य दस-बारह हजार रुपये खर्च सकते हैं ।

मिस्टर रे कुछ अश्वमनस्क हो गए थे पर यह सुनकर एकदम चौंक पड़े बोले—किस तरह में बचाओवी ? दस-से-बा में ? यह ता पुरखों के जमाने से होती बनी आ रही है, उसमें हाथ कैसे बासोवी ?

घासेण्य इस घब में उन्हें चाहे सत्य समझ लीजिये चाहे असत्य पर इतने स्वयं के घाईने तथा बिलायती मिट्टी के बरतन घादि लरीदे जायें, तो कुछ मोय ऐसे हैं जो इस पर आबाज उठायेंगे घायद जोर से ही आबाज उठायें ।

घासेण्य ने ध्यान से देखा तो यह महाशय लहरकारी बात हुए । उसने बुर कर देखा । बोली—घाय घायद घसहयोबी है !

अध्यापक ने उत्तर दिया—हां ?

—बटुकदेव किसका नाम है ?

—यह मेरा ही प्रचलित नाम है ।

घासेण्य बोली—तब तो मैं सारी बात समझ गई । घाय हमारी चीजों का लरीदना किस प्रकार बन्द करेंगे ? घायद लगानबन्दी करायें ।

—कोई असम्भव बात नहीं है । किसानों की गाड़ी कमाई के खये हैं ।

घासेण्य बोली—पर मेरी भी सुन लीजिये पिताजी निरीह व्यक्ति हैं पर मैं निरीह नहीं हूँ । पुलिस से मुझे कुछ प्रेम नहीं है, पर मेरे निजी मामलों में हस्तक्षेप किया जायगा किसानों के साथ मेरा विरोध करायो जायगा तो मैं मजबूर होकर आत्मरक्षा तो करूँगी ही ।

कहकर जाने लगी पर अमरनाथ ने कहा—पर घाय ही यदि गलती पर हों तो

घासेण्य बोली—सम्भव है कि क्या सही और क्या बलत इन सम्बन्ध में घायकी और मेरी धारणा अलग हों ।

जमींदारी के कामों में कन्या का उत्साह देखकर मिस्टर र बहुत खुश हुए । बुढ़ों और बैकारों को निकालने का कार्यक्रम जारी हुआ । घासेण्य ने ऐसे लोगों की एक सूची बनाकर मैनेजर बजमुन्दर को दी । वे उस सूची के एक-एक नाम को पढ़ते जाते थे और उतका मत्ता सूझता जाता था । एक नाम पर पहुँचकर बोलते—यह मयन पाण्डवी बड़ा ही गरीब है बड़ा ही गरीब है इनका और कोई नहीं

—परीशों के लिए भीर उपाय है।

—पर देखिये

—यै इस सम्बन्ध में तर्क करना नहीं चाहती।

इस कारण ब्रजमुन्दर बाबू ने इन लोगों को निकालन की मोटिफ दे की पर जैसा कि होता है ये लोग सभी एक-एक दरख्वास्त लेकर पहुंचे जिसमें प्रत्येक ने अपने परिवार की बम्बार्ई-बीडार्ई तथा भीर कोई उपाय न हाम का शीर्ष बर्नल किया था। पर उनका कोई असर नहीं हुआ। धानेस्य बैठकर डाइमिग-कम के पीन्य की डिजाइन पमन्द करमे म सभी हुई थी इतन में उसे ऐसा अनुभव हुआ कि कोई अपरिचित व्यक्ति उनके सामने आया है। पीक उठाकर देखा तो एक बहुत ही मुन्दर पतला पटा भीनडा पहने हुए बूडा बिनाई पड़ा। धालेस्य ने पीककर पूछा—कीम है? इसके उत्तर म वह बड़ा तुनलाकर बोला—मेरा नाम मयन गांगुली है। इस पर वह बोली—तुम यहाँ क्यों? तुम यहाँ क्यों? बूडा बोला—मेरी मइकी का नाम दुर्गा है उसने मुझे कहा बाबा तुम उनके पास जाया नीकरी दरबस्त लय जायगी।

धानेस्य समझ गई कि यह निकामे हुए व्यक्तिजों म है। बोली—साय आइए, मुम्म कुछ न होया—बहुकर उचन इंगित किया।

बहु धादमी फिर भी नहीं हिमा बोला कि इन्हीं तरह कर्यों पर उसकी मइकी का तथा नाती का गुजारा होता है, रामान धामाम में मोकरी करमे गया था तब से उसका पठा नहीं सया। बाहामी दर बुकी।

धानेस्य बिगड पड़ी उमन कह बिना कि ऐसी बातें मुजन के लिए भरे निकट अवसर नहीं है। फिर भी बहु धादमी अपने घर का बूत्तान् मूलाता गया। धाल में उयि अपराधी के द्वारा घर में निकाला गया तब छुटी मिली।

इसके कई दिन बाद धानेस्य पर सजाने म लगी हुई थी इतने में रैनजर माहब एन मइके को साय लेकर धाए, बोला—धापने कहा था कि वेर-हाजिरी के लिए मयन गांगुली के जो पीक रपयें काटे पार से उठ

पर पुनर्बिचार करेगी सो अब घाप क्या कहती हैं ? मदन गांगुली का न जाने क्या समझ घाई उसने किसी फूल के बीज को साफ़र घातम-हत्या कर ली । उसकी साथ घर में पड़ी है । पुनिस घाएगी तब कुछ होगा ।

यह सुनकर घालेस्य के पैर के नीचे से जैसे जमीन लिसक गई । माघ की व्यवस्था घादि तो हो ही गई पर घालेस्य के निकट कमरे को तबाना तबा उसकी वैटिय घादि बिसकुल धर्बहीन हो गई, घरे, यह क्या हुआ । बढई और कारीपर डाँट लाकर लौट गए । मये बंग से काम करने पर यह बिपत्ति हुई ? उस व्यक्ति ने घातम-हत्या करके इस प्रकार बदला लिया ? केवल तेरह रुपयों के लिए घातम-हत्या । उसके धसंस्य पूर्णों में से किसी का भी नाम उससे घाधिक होया ।

इस समय मिस्टर रे बाहर गये हुए थे । घाब उनके लौटने की बात थी । घालेस्य घाब किसी काम में जी न लगा सकी । घमरलाघ घाए, घालेस्य ने उन्हें हाथ सठाकर नमस्कार किया पर घमरलाघ ने प्रति नमस्कार नहीं किया । वे बोले—काम से घाया हूँ मैं जानता हूँ कि घाप को बहुत दुःख पहुँचा है पर यह घापने क्या किया कि हाट के दिन घाहर से पुनिस हुआ ली ?

घालेस्य चौंक पड़ी । यहाँ घाने के घमले दिन ही उसने बिना कुछ नमभे-भूभे पिताजी को बिना बताये हुए मबिस्ट्रेट को एक पत्र लिख दिया था । उसकी तामीन में बेर होते बेसकर वह यह धारणा बना चुकी थी कि लापर वह पत्र पहुँचा ही नहीं या उस पर ब्याल नहीं किया गया । बोनी—जाने बीभिए, क्या मुकमान है ?

घमरलाघ बोले—घाप बाहर रहती है घापको पता नहीं है पुनिस घापकी तो कुछ-न-कुछ ब्याइती करेमी मीन-मेख निकालेगी और ताजबूब नहीं कि हम लोपों में से बो-बार घपनी जानों से हाब धो बैठें ।

घालेस्य ने पूछा कि ऐसा क्यों होगा इसके उत्तर में घमरलाघ बोले कि लोप दिन बातों को पढ़न मान लेते थे घब वे उन्हें मानने के लिए तैयार नहीं है । पर घालेस्य बोली कि मभे मूठ-मूठ डरया न जाय मैं

करती नहीं हूँ।

धर्म-धर्मि सम्झा हुई थी। धर्मेश्वर परेसान बैठे हुए थी इतने में एक व्यक्ति पर्वी हटाकर सींठर घुसा और बोसने मया—'बरो मठ बेटी में सींठ मंगने नहीं धाया हूँ, ईश्वर की कृपा से मेरी हामन कछ बुरी नहीं है। मुझे पत्नी-बिनायत से सींटी हुई स्त्रियों के सम्बन्ध में बडा कौतूहल है इसलिए'

—'मैं धात्र बनी हुई हूँ इसी कारण'

उस व्यक्ति ने कहा—'मेरा नाम निमार्ई है मैंने धर्मनाथ से सारी बातें सुनी हैं। नयन माधुमी ब्रह्मावस्था में सारी बातें सह न सका इसलिए उसने धाम-हत्या कर ली। धर्मि ठक बे धमघान से नहीं सींटे। उसकी लड़की बाब मारकर रो रही है। नम्र पाप में मुक दण्ड कितन ही लोगों को हाता है। ओ दुष्ठा सो दुष्ठा। फिर मी परिष्ठाप तो होता ही है।

धर्मेश्वर एक अपरिचित के ध्यायित उपदेशों से मन-ही-मन बिगड़ रही थी बोस उठी—'यह धापको किसन कहा ?

—'धर्मनाथ ने कहा।

—'पर मैं तो धपना इसम कोई अपराध नहीं देखती। क्या बैकार धाधमी को निकामना अपराध है ?

—'धर्मनाथ ने अपराध के विषय में कुछ नहीं कहा। तुम समझती हो कि मैंने कर्तव्य किया। पर कर्तव्य की बात कहकर तुम इन बई को धुप नहीं करा सकती। वह दुनिया बूडा तुम्हारे ही धर्म से धाधीवन पलता रहा धर्म सं तुम्हारे ही धर्म से कोई रास्ता न सुझने के कारण उसने धाम-हत्या कर ली। धर्म उधकी लड़की पितृ-शोक में निदयाय होकर रो रही है भागी रेतो-रोते धमघान गया है। यहाँ कर्तव्य की बात कहकर धमघान को कैसे राका जा सकता है।

धर्म ठक धर्मेश्वर बिनी तरह बकी रही पर धर्म उसस दका नहीं गया और बहु एवधम पुककारकर रोते धपी। बूई निमार्ई में सम्बन्धाने धने को बौई बेप्टा नहीं की। बाँध-ध मिनट बाब बोले—'बेटी यह ता

मुझे माफ़ूम था । नहीं तो काहे की शिक्षक है और काहे की विद्या ?

प्राणेश्वरी बोली—मैं आपके देख में रहने के लिए आई थी पर अब तो मुँह बिलाने की भी मुँजाइश नहीं रही ।

बातचीत होती रही । प्राणेश्वरी ने बातचीत के दौरान कहा कि मदन गांगुली से सहानुभूति रखत हुए भी वह यह समझने में असमर्थ है कि उसने कोई बमती की है । इस पर निमाई बोले—मैं बूढ़ा हो चुका हूँ । शायद वह दिन देखकर न आ सकूँ पर इस बात को बैठी तुम निश्चित रूप से जान लो कि आज जिन पर अकर्मण्य और बेकार होने का फलना तुम जारी कर रही हो कस उन्हीं के बात-बच्चों के सामने तुम्हें इस बात का बचाव देना पड़ेगा कि तुम स्वयं किस सायक हो । उस दिन मानवता की रजहरी में जमींबार होन के नाते तुम्हारी धर्मी नहीं सुनी जायगी । बुनिया म बुद्धिमानों ने अब तक इन्हें अपनी बिलानकर सुना रखा था पर आज अकस्मात् मुझ की बचावा से उनकी नींद कुल गई है । यदि उनका पेट नहीं भरा तो नीति-शास्त्र के बचन और पुराने कानूनों के रौब से धाकर वे शान्त होंगे ऐसा नहीं बात होता ।

इसी प्रकार दोनों में बातचीत होती रही । दोनों अपनी-अपनी हकिंते रहे । प्राणेश्वरी एक समय बोली—असली बात तो यह है कि आप पण्डित लोग धर्मवी विद्या के विद्वान हैं । इसलिए आप जोब अपनी सब बातों को अपनी और दूसरों की सब बातों को बुरी समझ लेते हैं । जब तक आप उनकी विद्याओं तथा विज्ञान को पढ़ और समझ नहीं लेते तब तक आप लिप्यन्त होकर किसी बात पर विचार नहीं कर सकते । ऐसा स्वामाधिक ही है ।

बूढ़ पण्डित कुछ देर तक सिर झुकाकर सोचते रहे फिर बोले—प्राणेश्वरी कोपन से अपराध हो रहा है । तुम्हें यह बता देना चाहिए था कि मैं अपने बचन से कानून का नामी अध्यापक था । मेरे ही मातहत विद्या पाकर अमरनाथ ने एम ए पास किया । तुम जिस विद्या और विज्ञान की बात कर रही हो उस पर सम्पूर्ण अधिकार तो क्या होता पर विद्वान

धर्मिण्ड हैं ऐसा भी कहता गसत होया ।

सारी बात सुनकर आशेष्य चौंक पड़ी जैसे किसी ने उसको मारा । बड़े पंडित उसक चहरे की तरफ देखकर सारी परिस्थिति समझ गए, बोले—बेटी तुम बफी हुई हो चाओ यदि धर्मराम पर कोई विपत्ति म पड़ी हा तो कस धाकर दोनों तुमसे छिर मिलीये—कहकर वे चम गए ।

धर्मराम के साहब जब घर पर सीटे ग उम्ह नमन गांगुली की धारम-हरमा की बात का पता लया । कन्या से कुछ भी न पूछकर ब सीबे उसके घर गम घौर बप्टों बाब जब सीटे तब उसका चहुरा पहम से प्रसन्न बा । सीटकर भी उम्होने कम्पा से कुछ नहीं पूछा । जब उभर से कोई बात नहीं घाई तो आशेष्य ने ही पूछा—उनकी कोई ब्यवस्था कर घाये पिठाबी ?

—नहीं कोई विघेप ब्यवस्था नहीं की ।

—बयों कर क्यों नहीं घाय ?

—केरी सम्पत्ति तुम्हारी है । तुम्हारे हाथों में सब-कुछ सीपकर मैंने कृटी ग सी है । इसकी धण्डाई-बुराई सब तुम पर छोड़ी हुई है ।

आशेष्य ने कल्प कण्ठ से कहा—बदि नासमझी में मैंने कोई घसत बात कर बाली है, तो क्या उसका प्रतिकार घाप नहीं करेगे ?

—नहीं मैं ही कौन-सा बड़ा बुद्धिमान हूँ । कम-से-कम इसका प्रमान खी में घाज तक न दे सका । यदि नासमझी में तुमन कोई गलती की है तो जो बुद्धि देने क मासिक है वे ही तुम्हें बुद्धि बेंपे ।

आशेष्य भीरे से बोली—पिताजी जब तक घाप मौजूद है तब तक इनका बोझ मुझ पर मत बालिये ।

बोड़ी देर बोनों चुप रहे । छिर आशेष्य बोली—सीटने क बाब से घापने मुमये बात नहीं की । मैं खी धार मानती हूँ कि मैंने बहुत मसत काम दिव्या घर में यह स्वप्न में भी नहीं सोच पाई थी कि वे हमें इतनी बड़ी मजा दे जायेंगे ।

रे साहब नइकी को पाछ सींचकर साग्लवना बेंत रहे बोस—तुम

तो जाननी हा बटी कि बुनिया में मैं तेज करम में बल नहीं पाता इस कारण सबसे पीछे रह जाता हूँ। मुझे नुस्ती का ही रास्ता भाता है।

—मुझे वही पसन्द है।

—पसन्द है तो बसो पर यह कभी न समझो कि मेरे गाल को कबूल करने के लिए तुम मजबूर हो।

शालेख्य बोली—अब मैं आपको बेलकर यह समझ रही हूँ कि शोक कर बनना प्राये बड़ना नहीं है। आप जब पीछे रह जाते थे तो हम या समझनी थी कि आप पीछे हैं पर अब मैं समझ गई।

शालेख्य ने निर्माई पश्चित की बात कही। इस पर रे साहब बोले—
अच्छा वे जीवित हैं ? ऐसा बसती घायमी तो दुलम है। बेटी जननी किसी तरह हमारे यहाँ घमसाया तो नहीं हुई ?

शालेख्य ने कहा कि नहीं। बात-बात में फिर नयन बागुनी की बात आ गई। रे साहब बोले—पहले के जुगों में भी एक दूसरे पर निर्भर होता था पर ऐसा नहीं था कि एक बलबम्बन चाते ही आत्म-हत्या करने की नीबत घासे। उस जमान में दो मुट्ठी घान तो सबको ही अपने घर में मिलता था।

शालेख्य बोली—बुनिया में घमी और बरिख रहे तो रह, पर इस तरह से एक का दूसरे पर इतना निर्भर होना किनी भी तरह मजबूत कारक नहीं हो सकता। न तो बनी के लिए ही यह मजबूतकारक है और न बरिख के लिए ही। भाग कहते हैं कि नयन बागुनी का विमाप कुछ फिरा हुआ था हो सकता है पर मैं इस बात को भूल नहीं सकती कि मेरे एक बर्ष में उनके पाँच साल की घायु सचित है। न मातूम और कियगो की मृत्यु का इतिहास हमारे जूतों आबाजों घावि की परतों में लिखा हुआ है।

इन बातों को सुनकर रे साहब चौक गए, बोले—जाने भी द। ऐसी बातें सोचन पर घृहस्थी एक मिनट के लिए बल नहीं सकती।

शालेख्य बोली—पिताजी आप ऐसा कह रहे हैं क्योंकि आपके भाबे

पर किसी बूढ़े की मृत्यु की कमखुरेला नहीं है।

इतन में शायद हुआ कि आज ही मध्या समय इन्दुमती और कमल फिरण था रहे हैं। ठयारी तो भी ही और तेजी हो गई। दिनर बड़े व्यट से गया। इतने में सबर घाई कि काई रे साहब से फौरन मिलना चाहता है। मामूम हुआ कि अमरनाथ है। रे साहब न कहा—उसे यहीं से आया।

आमस्य अर्द्धित हुई पर न बहो बुलाय गए। अमरनाथ के गिर पर एक बँडख बँधा हुआ था। रे साहब न पूछा—मामता क्या है ?

अमरनाथ न कहा—अहीं पुमिम न नहीं मारा। मीच न कुछ लागों न ही मारा है। कुछ मी नहीं मरा था—मा एक पाठ हुआ है।

रे साहब ने कहा—हुआ ता हमारे हाट में हो न ? अचछा जी तुम कुछ खाय-पीय नहीं मामूम हात हां ? यहाँ ता मायद तुम्हार खाने की कोई अयबस्या न हो सके क्यों क्या कहत हो ?

अमरनाथ मुस्कराये खान—नहीं।

रे साहब न अमरनाथ को बिश कर दिया। अब कमलफिरण घाबि ने उम पर आनधीत शुरू कर दी। कमल ने पूछा—यही मायद आपके किमानों का नइकाता रहता है। यह हाट में ययफ क्यों था ?

—बिमायती कपड़े की बित्री रोकन।

—पानी अमहपोष का छोटा-भोग पंडा है।

—हाँ।

कमल खाना—अब इन पर मुकरमा खमाना चाहिए। कम-म-कम मरा माकँट हाता तो मैं एमा हो करता।

रे साहब कुछ तेर खुप रहकर खान—उमम जिनना साभ हाता उमसे अपिच राति होनी।

इसी प्रकार और भी आलाचना होने लगी। लगीजा यह हुआ कि रे साहब को दिनर में काई रम नहीं आया।

अमरनाथ फिर आया और अपना दृष्टिकोण समझान गया। उमने

कहा—मुझ पर जिन लोगों ने हाथ उठाया है मैं यह चाहता हूँ कि उन पर किसी तरह की बर्रवाई न की जाय।

धामेरुय बोली—यह आप हम पर छाड़ें।

कमल ने कहा—धीर क्या? जो हमारी जिम्मेवारी है हम उसे देखेंगे। क्यों मिस्टर रे?

रे साहब कुछ नहीं बोले। सबका मुँह ताकने लगे। बोले—इस पर मामल बिल से विचार हो।

धमरनाथ बोले—बमीदार धीर किसान के प्रतिरिक्त बुनिया में धीर लोग भी हैं धीर कोई उनकी बात पसन्द करे या न पसन्द करे, उनका अस्तित्व गुप्त नहीं हुआ जाता।

धामेरुय का नेहरा कड़ा पद बसा बोली—अंपची में एक सपना है बिबी बोडी' य सर्वत्र मिलते हैं। हम अपने किसानों के सम्बन्ध में क्या करेंगी यह हमारा कार्य है पर यदि कोई व्यर्थ में हस्तक्षेप करे तो उसको ठीक रास्ते पर लाने के लिए हमें अपना कर्तव्य करना पड़ेगा।

कम्या की बात सुनकर रे साहब बहुत लुब्ध हुए, बोले—बेटी तुम लोगों के कार्यों से तुम लोगों की बातचीत कहीं अधिक कड़वी हो रही है। बिलपकर जब कि धमरनाथ तुम्हारे घर पर आया हुए हैं।

—धमरनाथजी सम्प्रान्त व्यक्ति हैं यदि मुझे कोई बात कहनी है तो मैं अपनी बात धीर कहीं कह सकती हूँ। इसकी दामा उनसे अवश्य मिल जायगी धीर यदि अपना हाथ ही हो तो उसे सम्पूर्ण कर देना चाहिए। धमरनाथ बाबू के साथ हमारे विचार नहीं मिलते इस कारण वे हमारे किसानों को हमारे विरुद्ध भड़कायेंगे इसमें उचित नहीं समझती।

धामेरुय ने उस व्यक्ति का नाम जानना चाहा जिसने धमरनाथ पर प्रहार किया था। पर धमरनाथ ने यह कहकर बताने से इनकार कर दिया कि इस कौतूहल को बमन करना ही पड़ेगा। धामेरुय बोली—यदि वे हमारे किसान न हों तो मैं नाम न पूछती।

—आप उन्हें सजा देना चाहती हैं और मैं यह समझता हूँ कि सजा देने से प्रतिकार नहीं होता ।

—अन्याय का प्रतिकार सजा से ही होता है ।

अमरनाथ बोला—मैं इस विषय पर आपसे ठर्क करना नहीं चाहता । इतना मैं जानता हूँ कि अन्याय और अज्ञान ये दोनों एक भीज नहीं हैं । सजा देकर अज्ञान का प्रतिकार नहीं होता । उसके लिए कुछ और ही बात चाहिए ।

अमरनाथ न पाड़ी बेर टककर कहा—उन्होंने हमें माय जरूर है, पर इस पर उन्हें सजा देने से बचकर मुक्ति और कुछ नहीं हो सकती । —कहकर अमरनाथ उठ खड़े हुए, और बसने के लिए उद्यत दिखाई पड़े ।

रे साहब न अकस्मात् कमकिरण से पूछा—क्यों कमल तुम्हारी क्या राय है ?

फिर रककर स्वयं ही अमरनाथ से बोले—अब तुम नहीं चाहते तो फिर हम क्यों भगड़ा करें ?

पर आलक्ष्य बोल उठी—बहड़ा तो इन्होंने खड़ा किया और अब उसका क्षमियाबा कौन मुचते ?

अमरनाथ ठिठककर खड़े हो गए, बोले—अच्छी बात है । यदि आप लोगों को मेरी बात पसन्द नहीं है तो अपने हंग से चलिए । मैं ठा सजा देना निरर्थक मानता हूँ ।

आलक्ष्य बोली—जो एक बाहरी व्यक्ति के लिए निरर्थक है, वह जमीदार के रूप में हमारे लिए निरर्थक आदम न हा इतना तो आप समझते हागे ।

कमकिरण बीच में बास पड़ा—हम अपनी जिम्मेदारी का अदन ही हायों मे रनेमे । एक बर्ड परसन को बीच में पड़ने की कोई बकरत नहीं है । क्यों मिस्टर रे आपकी क्या राय है ?

रे साहब सबका मुँह ताकने लगे । कुछ देर सोचकर बोले—अभी हम बात पर अन्तिम फैसला कर ही आसना पड़ेगा ऐसी कोई बात नहीं

है। बाद को मान्य होकर इस विषय पर विचार हो सकता है।

शुभ घमरनाथ निकल गए। उनके जाने पर धामेक्ष्य बामी—पिताजी जब तक घाप मौजूद हैं तब तक घाप ही जमींदारी के मामिक हैं। यदि घाप मह चाहते हैं कि मैं ही सब काम-काज देखू तो घाप मुझे इस बात के लिए न कहें कि कमी इधर खलू बामी उधर। इसमें तो यच्छा है कि पहल बीमा चल रहा था घब भी बीसा ही जसे।

पर मिस्टर ने ने कुछ नहीं कहा। इसका धर्म दूसरों ने भले ही कुछ न समझ हो पर धामेक्ष्य समझ गई। बोली—इससे उन्हें प्रोत्साहन मिलना है। रेश में जो बातावरण उत्पन्न हुआ है उसमें एकाएक कुछ ताम कुछ धीर ईमा बनकर बैठ गए हैं। न मानूम कैसे न लोग ऐसा समझ बैठे हैं कि जिनका कुछ है उनको मुफ्तान पहुँचाना याप जिनका कुछ नहीं है उनका भसा होना।

कमलकिरण जब तक घपने को रोके हुए था बोला—जैसे पिताजी की गाड़ी के काँच के बंधने तोड़ दिए गए।

धामेक्ष्य बोली—ऐसी बातों को सहन नहीं करना चाहिए।

कमलकिरण बोला—पिताजी की यही राय है।

धामेक्ष्य बोली—मुसीबत तो यही है कि हमारे पिताजी की यह राय नहीं है। पिताजी घाप तो जानते हैं कि इतने दिनों तक न देखने के कारण जमींदारी की सारी पद्धति में बंध लग चुका है। यदि मैं इसे साफ करना चाहूँ और कोई इस कारण धातम-हत्या कर भ तो मैं क्या कहूँ ? यदि ऐसा ही जलेया तो हम सौट जायें।

रे साहब बोले—पर घमरनाथ तो ऐसा नहीं है कि वह किसी को ध्यर्ष में विपत्ति में डाले।

कमलकिरण बोल उठा—बल्कि मैं तो यह समझता हूँ कि घमरनाथ की तरह अधिदित बहाती ब्राह्मण गाँव के लोगों को बड़काने के लिए

वह इतना ही कह पाया था कि उसने धामेक्ष्य के मुँह की धोर बेला ता उनकी बात बस्य हो गई। जब उत्तर प्रत्युत्तर की जो बाप धमरनाथ

क्य से चल रही थी वह रुक गई। कमसकिरण ने अपनी बातों की धामेक्य की धीर से जिस प्रतिक्रिया की घाघा की थी वह नहीं घाई। धव जो काठचीत हुई वह धमरलाप के कबित हस्तलेप से उत्पन्न परिस्थिति पर हुई। धामेक्य बोली—पिताजी कई बार धापने हमारा प्राप्य सयान माफ कर दिया।

मिस्टर र मुस्कराकर बोले—प्राप्य माने म्याय-समत नहीं यह तुम समझ लो बेटी। जो हमारा प्राप्य है वह किसानो के लिए म्याय-सगत देय नहीं भी हो सकता है। कमसकिरण इसका भर्त्स नहीं समझ सका पर धामेक्य समझ गई। सौभाग्य से बात दूसरी धीर मुझी धीर धामेक्य ने प्रस्ताव किया कि नाब से जमींदारी की याचा की जाय। रे साहब ने कहा—मैं घर पर रहूंगा धीर दूसरे लोय जायें।

एक दिन रे साहब धपने एक मित्र की बीमारी की खबर पाकर चल पड़े तो कमसकिरण की बहू इन्दु भी उनके साथ गई। दोनों पैदल चले। नाब के घर प्रावि देखकर इन्दु ने बहुत कौतूहल प्रदर्शित किया केवल यही नहीं वह बोस उठी कि उसे नाब का जीवन बहुत पसन्द है, यहाँ तक कि उसन कहा कि मैं नाब न रहता पसन्द करूँगी। इन्दु इसी तरह बहुत कुछ कहती रही पर रे साहब कभी उत्तर देते थे कभी नहीं देते थे। दोनों ने यह राय की कि रे साहब तो धपने मित्र के पास जायें धीर इन्दु भूम नामकर नाब धीर मँदान देखे। धसग होते समय रे साहब बोले—मँदान पार करन पर धमरलाप की पाठ्यासा मिलगी। यदि उधर निकल पड़ो तो धमरलाप से कहना कि मुझ्से मिल।

इन्दु उधर ही निकल पड़ी धीर धमरलाप से मिली। धमरलाप उसे धपने घर ले गए तो उनकी माँ तथा बहू ने उसका बड़ा स्वागत किया। इन्दु को य लोय बहुत ही धच्छे लये। कितन सरस धीर माफ-सुबरे से यधपि मठीब न।

इतना ही मिलकर शरदु बाबू धीर धामे न लिरा लये। यह उपम्यास चारवाहिक रूप से मामिक 'बमुमठी' में निकल रहा था। इस विषय पर

अनुमान सदाना व्यर्थ है कि शरत् बाबू इस उपन्यास में घामे क्या करते पर इतना तो निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि वे इस उपन्यास में वैयक्तिक तथा पारिवारिक बातों तक घामे को सीमित न रखकर नई जमीन तैयार कर रहे थे। स्पष्ट ही यह एक राजनीतिक उपन्यास होता। राजनीतिक भी ऐसा कि उसमें साम्यवाद का पूरा पुट दिखाई पड़ता है।

यह स्पष्ट है कि इस उपन्यास में शरत् बाबू जमींदारी प्रथा की निरर्थकता तथा उससे उत्पन्न धानस्य प्रमाद कुसुकारों का मंडामोड़ करने और इस प्रकार उनके जमे जाने में ही कस्याण है यह बात धरती तरह दिखाने पर तुम गये थे पर साथ ही वे उससे इतने विद्रिष्ट नहीं थे कि उसके उन्मूलन पहलुओं को भूल जाएं। तभी उनका विमल इतना सुन्दर बन पड़ा है और शब्द पृष्ठों के अन्दर ही हमारे सामने एक इन्द्रात्मक विमल अमर कर सामने आ जाता है। शरत् बाबू को जमींदार से मफ़गठ है विशेष कर उसका वह रूप जो कुमारी आनेक्य में मूर्त है उससे बूझा है पर साथ ही उन लोगों से भी उन्हें विद्रुष्णा है जो जमींदारी में स्वर्ध पल रहे हैं। इधर शरत् बाबू पर भावुकता का बोध लगाना एक आम बात ही नहीं है, कुछ नये सेखन छायाव समझते हैं कि इस प्रकार शरत् की प्रतिभा पर वह लाञ्छन लगाकर अपनी प्रतिभा पर चार चाँद लगा सकते हैं पर यह उनकी अहुरक्षिता है। शरत् मुख्यतः पुरुष और स्त्री के पारस्परिक सम्बन्धों के कथाकार थे पर पत्र के दावेदार, भय प्रश्न जागरण आदि में तो वह इतना घामे बढ़ चुके थे कि वे सेखन जो उन पर भावुकता का सेखन सवाकर साहित्य के कूडेबाने में डाल देना चाहते हैं वे धमी तक उनकी अँबाई के पास भी नहीं फरक सके।

साहित्य-सृजन पर शरत् के विचार

यों तो शरत्चन्द्र ने उपन्यास ही लिखे पर उन्होंने अपने 'देना-पाबना' नामक उपन्यास को १९२७ में नाटक का रूप दिया। इस नाटक पर रबीन्द्र घोष शरत् में कुछ पत्र-व्यवहार हुआ जो बहुत ही दिलचस्प है और जिससे इन दोनों महारचियों के साहित्य-सम्बन्धी विचारों पर अच्छी तरह प्रकाश पड़ता है।

शरत्चन्द्र ने 'देना-पाबना' पर आधारित नाटक 'पाइली' की एक प्रति रबीन्द्रनाथ को भेजी। रबीन्द्रनाथ ने उस पर लिखा—“तुम्हारी 'पोइली' मिसी। बंपना साहित्य में अच्छे नाटक नहीं हैं। मुझमें नाटक लिखने की छक्ति होती तो मैं अपना करता क्योंकि नाटक साहित्य का एक खेप्टा खंस है। मेरा विश्वास है कि तुममें नाटक लिखने की छक्ति है। जब भीतर की प्रकृति और बाहर की वास्तुति ये दोनों सही रूप से मिल जाती हैं तभी चरित्र-चित्रण सुन्दर होता है। मेरा विश्वास है कि यदि तुम्हारी मेहनती ठीक तरह से जने और इस रूप के माथ नाथ का तात-मस बीटा सके तो तुम बहुत कुछ कर सकते हो क्योंकि तुममें वंसी बुष्टि है चिन्तनधीन मन है इसके असावा इन देस के नाक-चरित्र क सम्बन्ध में तुम्हारी समिद्धता का क्षत्र भी विस्तृत है। पर यदि तुम वर्तमान माथ के दाबो और भीड़ की समिद्धि से छुटकारा न पा सको तो तुम्हारी बहु छक्ति प्रतिहत होगी। नयी महान् साहित्यों का परिप्रेक्षित सुन्दर विस्तृत हाता है, जो साहित्य उमस तात-मस रखर चम सकता है बही तिकाऊ होता है पर जब मान-पाठ के लोपो का कसरत बीबार बनकर उस मंकीमें बापरे में बीर कर लेता है तो बहु बुष्टि हाकर बनत्य हो पाता है।

तुमने 'पोइसी' में वर्तमान काम को सुध करमा चाहा है और इसका मुख्य भी तुम्हें मिला है पर तुमने अपनी व्यक्ति क मोरख को सुध कृच्छित किया है। तुमने जिस पोइसी का चित्रण किया है, वह भाव के युग की फर्माइशी ममपडम्य वस्तु है। वह भीतर और बाहर से सरल नहीं है। मैं यह नहीं कहता कि इस प्रकार की भैरवी नहीं हो सकती पर हा भी ता जिस भाषा और जिस ढांचे के अन्दर वह संयत होती वह आजकल के चलवार पड़े हुए चेहरों के अन्दर नहीं मिलती। जिस कहानी के अन्दर हम लोगों क मीमांसा की वास्तविक भैरवी आत्म प्रकाश कर सकती थी वह कहानी और ही होती। नर्भक के रूप में तुम्हारा कथम् यह था कि भैरवी को एकान्त सत्य बना देते न कि प्रायुक्तिक काम की चलती प्रायुक्ता मिमित मोकरजक कहानी की रचना करते।

मैं जानता हूँ कि तुम मेरी बात से नापख होये पर तुम्हारे प्रति मरी घडा होने क कारण ही मैंने सरल मन से अपनी राय बताई नहीं तो कोई बकरत नहीं थी। तुम साहित्य के प्रकाशक साधक हो यदि इन्द्र भगवान मामूली प्रसोभन बिसाकर तुम्हारा उपोसंध कर पाए ता उससे साहित्य को ही हानि पहुँचेगी। तुम वर्तमान युग से अर्ध्य सेकर सुध हो सकते हो पर सर्वकाल के लिए क्या छोड़ जाओगे ?

४ फरवरी १९३५।

—रबीन्द्रनाथ ठाकुर

इस प्रकार रबीन्द्रनाथ ने कई मौसिक बातें उठाई जो प्रत्येक साहित्यकार के लिए विचारणीय हैं एक तो यह कि वर्तमान की भाषा पर अविष्य का बलिदान नहीं करना चाहिये दूसरे जिस चरित्र का सृजन करना है कहानी उसके धनुष्य होनी चाहिये।

इसके उत्तर में घरतुल्य ने काफ़ी विस्तार के साथ एक पत्र लिखा जो इस प्रकार था— 'मुझे आपका पत्र मिला। बीमारी के कारण यथा समय उत्तर न दे पाये पर मैं अपराधी हो गया। मैंने पोइसी के सम्बन्ध में आपका मत अज्ञात और कृतकता के साथ पढ़ा किया है, पर मुझे भी वो

एक बात कहनी है क्योंकि यह केवल मेरा वैयक्तिक विषय नहीं है, बल्कि सामूहिक तौर पर बहुतों का मन में ऐसी बात घटित होती है। इनीमिग धापको सारी बात बताना जरूरी है।

मैंने यह नाटक अपने एक उपन्यास पर आधारित करके लिखा है। मैं उपन्यास में जितनी बातें कह पाया और चरित्र चित्रण के लिए जितने प्रकार की घटनाओं का समावेश कर पाया नाटक में उतना नहीं कर पाया। काव्य की दृष्टि से भी नाटक का विस्तार कम होता है और व्याप्ति की दृष्टि से भी इसका स्थान संकीर्ण होता है। इसमें मिलात समय बार बार मेरे मन पर यह भाव बना रहा कि ठीक नहीं है रहा है, फिर जब उपन्यास ही इसका आधार था तब जीवन-साक्ष्य महा हो सकता है मैं यह भी मान नहीं पाया। शायद उपन्यास से नाटक प्रस्तुत करने की चट्टा करने पर यह बात स्वाभाविक है एक तरफ से तो काम धांधल करने हो जाता है पर दूसरी तरफ प्रभु माया में बुद्धि भी हा जाती है और ऐसा हुआ भी है। और एक कारण है। इस जीवन में विभिन्न अवस्थाओं से होकर गुजरने समय बहुत-सा बर्तों सामान घाई इसी का धारण लोक-चरित्र के सम्बन्ध में सही अभिज्ञता घटाई है पर बहुत कुछ देखना और जानना साहित्यिक के लिए विघ्न भलाई है या नहीं इस सम्बन्ध में मेरे मन में सुन्दर उलझन हुआ है क्योंकि अभिज्ञता से सबसे घनिष्ठ प्राप्त ही नहीं जाती बल्कि कई बार घनिष्ठ का हर्षण भी हो जाता है फिर सामाजिक सब साहित्य का समय नहीं भी हो सकता है। शायद यह पुस्तक इसी का एक उदाहरण है। मैंने इस एक घरेलू घनिष्ठ रूप में जानी हुई वास्तविक घटना पर आधारित करके लिखा है।

पर यह मानना ही मेरे लिए विपरीत हुआ था। लिखते समय मैंने यह ज्ञान बराबर मुझमें जिरह करता रहा और इस प्रकार उमन में केवल मेरी कल्पना के धारण और गति का ही आधार बहूना बल्कि एक हृद तक बिगुल भी किया। समय के साथ कल्पना मिसालों की चट्टा करने पर शायद ऐसा ही हुआ है। सकार में जा बटना सबकुछ ही घटित हुई है उमक

यथातथ्य वर्णन से इतिहास की रचना हां सकती है, साहित्य नहीं रचित हो सकता। और मेरी पोइसी सत्य के साथ कल्पना का मिश्रण है। इस तरीके से जनता से तो यथेष्ट धावर प्राप्त हुआ पर धापसे मूल्य नहीं प्राप्त हुआ। इस प्रकार बाहर से मिली हुई सारी प्रशंसा बनार पड़ गई।

इसी प्रकार मेरी एक अन्य पुस्तक 'पत्नी-समाज' (देशाती समाज) है। इसकी किसी बहुत हुई और स्वाति भी यथेष्ट मिली फिर भी लोग इसकी बितनी ही प्रशंसा करते हैं, मैं मन ही मन उतना ही लज्जित होता हूँ, मैं जानता हूँ कि यह टिकाऊ नहीं है क्योंकि यह भी सत्य और मिथ्या मिश्रण है। मिथ्या बल्कि टिक सकती है पर सत्य की बुनियाद पर जो प्रसरण है उसके ठहने में डेर नहीं समती। यह बात ऐसी है कि एक-एक उसटी मानूम पड़ती है।

“ एक समय था जब मैं केवम चित्रकारी करता था। चित्र न इसका सिर और उसका पड़ तथा किसी का पैर एक करके प्रमूठ चीज खड़ी की जा सकती है क्योंकि वह कबल बाहर की वस्तु है धातु से बेचकर ही उस पर विचार हो सकता है पर साहित्य में चरित्र सृजन के मामले में यह बात नहीं चलने की। मनुष्य के मन की सारी खबरें पाना कठिन है वही धपने क्याम या प्रयोजन के अनुसार इसका कुछ और उसका कुछ और, कुछ सत्य कुछ कल्पना आदि की पैदबाबी करके लोगों को झुग किया जा सकता है पर कही पर बहुत बड़ा मोलमान रह जाता है और बाद को चलकर वह बोसमान पकड़ में आता है। क्या मानूम धायर इसीभिये आबकस वास्तविक प्रसार साहित्य की चलन पुरु हो गई है। उसमें डेर से लोय आते हैं सभी छोटे हैं सभी मर्य है सभी हीन हैं किसी में कोई बिदेपता नहीं है यानी जैसे कि संसार में देखा जाता है। फिर भी सारी पुस्तक पढ़कर यह प्रबल उठता है कि उससे क्या सम्म हुआ। कोई धायर कहे कि लाज तो कुछ नी नहीं है मों ही है बीच-बीच में धायर धत्यन्त साधारण मामूमी विषय का ब्यारेबार वर्णन और रस चित्रण रहुता है। उसकी भाषा और धाबन्बर देखने लायक होता है, पर

मन तृप्त नहीं होता तो भी शोष कहते हैं कि यही साहित्य है।

पोबसी नाटक के सम्बन्ध में आपने ठीक-ठीक क्या कहा है यह मैं समझ नहीं पाया। कबल इतना ही समझ पाया कि यह ठीक नहीं रहा और इस पर आपकी दृष्टि गई।

“ आपने परिश्लेष का उल्लेख किया है। चित्रकारी में दूरी के अनुसार बड़ी बीज छोटी गोक वस्तु बपनी बीजोर बीज सम्भी और छोबी बीज टैकी दिखाई पड़ती है। कितनी दूरी पर किस स्थिति में वस्तु का आकार प्रकार किस हद तक परिवर्तित होगा इसका भी एक नियम है। कमरा जैसे यन्त्र का भी इस नियम में छूटी नहीं मिलती पर साहित्य के मामले में इस तरह का कोई बँधा हुआ नियम या कानून नहीं है। सारी बातें लेखक की इच्छा और विचार-बुद्धि पर निर्भर करती हैं। आपने जो कहा और कितनी दूरी पर कहा गया होगा इस सम्बन्ध में कोई निर्देश नहीं है इसलिए चित्र का परिश्लेष और साहित्य का परिश्लेष एक-दूसरे से एक होना पर भी काय की दृष्टि में एक नहीं है। इनके समाना साहित्य का वर्तमान कास जितना बड़ा मस्य है भविष्य विभी प्रकार का भी ठीक उतना बड़ा साथ मही है। इतने दूरों से मरनारी के जिस एकनिष्ठ प्रेम का आसार मानकर काव्य लिखे गए हैं नतुप्य का इतनी तृप्ति मिसा है इतना धीमू बहाया गया है वह भी एक दिन सापद हास्यकर हो जाएगा। कम-से कम ऐसा हुआ असम्भव नहीं है, पर इतने कारण आज तो कल्पना में भी उसे ग्रहणीय मही माना जा सकता।

एक और प्रश्न उदाहरण है। रामायण में राम रावण के युद्ध के द्योरे में वृष्ट बगह भी है। रावण और बन्दरों न मिसकर किस प्रकार की लड़ाई की जिनमें कौन-सा अस्त्र मारा इस सम्बन्ध में मिलने ही नाम तथा कितने ही प्रकार के बयान प्राप्त है। जिसका हाथ कितना पैर और कितना मारा बट गया यह भी उपलब्ध नहीं हुआ है। युद्धक्षेत्र में यह द्योरा न तो छोटा है न तुच्छ है और सापद उम बमाने की भीड़ न कवि के निकट यह द्योरा मीमा भी या और पाकर मालों का ग्रहण

घान्त्य भी मिसा पर धात्र इतने दिनों के बाद मुद्रालोक में बुझावों बीरों का मुद्र-कौसल बिसकुल तुच्छ हो गया है। साहित्य के मुद्र बिसतृत परिप्रेक्षित से धायद धापने इमी प्रकार की किसी बात का इंपित किया है।

मैंने इसके पहल कभी नाटक नहीं लिखा था। अब वो एक नाटक लिखने की इच्छा है पर बाभाएँ बहुत हैं। मेरे उपन्यासों पर पाठक समाज समझती करता है उसका शोक भी प्रयास है पर नाटकों के परी शक नीम है यह समझता कठिन है। समझ बाने या बेबबूक यशक इसने हाईकोर्ट है या कोई घीर यह कोई नहीं जानता। समायक महा माएण से या जल्दी की तरह प्रतिष्ठित टाड साहब के रात्रस्थान से कपा तक लेकर नाटक मिसने पर इनकी परीक्षाओं में उत्तीर्ण तो हो सकते हैं पर धापसे डांट मिसेगी।

‘घन्त मे धापने मेरी शक्ति का उल्लेख करते हुए लिखा है—‘पर यदि तुम वर्तमान समय के बाबा घीर भीड़ की अभिरक्षि से छटकारा न पा सको तो तुम्हारी यह शक्ति प्रतिहत होगी।

धाप लड़-लड़ के कामों में व्यस्त रहते हैं फिर भी मरी बड़ी इच्छा है कि धापसे मिसकर मैं इन बातों का ठीक से जान पाऊँ। बात यह है कि वर्तमान भी बहुत बड़ी बस्तु है। उसका बाबा न मानू तो यह भी सजा देने की लैमार है।

‘धापकी अनुमति न होने पर मैं धापका समय मष्ट करने न सकीच का अनुभव करता हूँ। बिट्टी सिखने का मेरा डंग बहुत ही मड़मड़ है मैं किसी भी बात को ठीक तरह से सजाकर नहीं कह पाता। यदि मिसने क दोष के कारण कही पर कुछ अपराध हो गया हो तो उसक सिए क्षमा चाहता हूँ।

२६ फाल्गुन १३३६

—सेबक

शरत्चन्द्र बहूनाध्याय

इसके उत्तर में रबीन्द्रनाथ ठाकुर ने लिखा—

“मैं बुझार में पड़ा हूँ, फिर भी तुम्हारे पत्र का उत्तर दे रहा हूँ मुझे

इस का कि कहीं भरी धामोचना पढ़कर तुम नागत्र न हो आघा पर तुम्हारी चिट्ठी पढ़ कर मैं आश्चर्य हुआ ।

तुम न ही एक बात कह रहा है । तुम न प्रतिभा है इसीलिए मैं तुमसे माँग करता हूँ वह माँग साहित्य की ताफ से माँग है । बहुत-से मामलों में एक-एक युग के वर्तमान का भाग बनमान काम में ही समाप्त हो जाता है । राज्य-शासक भी इसी के अनुगत होते हैं पर साहित्य में प्रत्येक जाति चिरकाम की सम्पत्ति की रक्षा करती है । इस सम्पत्ति को सृजन करके की जितने क्षमता है व वर्तमान के किमी प्रयोग में न आने और उसका उपयोग न हो पड़े हम माँग कहते हैं चाहते हैं । जो लोग सत्तर से केवल वर्तमान काम की माँग की पूर्ति करने के लिए आये हैं उनकी मर्यादा घनी है । उनका प्रचुर परिमाण न मर्यादा बिनाई मिलती है । और उन्नत मानिकता माण्डलिकों तथा समा समाधियों में अपना धर्म रखा है । उन लोगों की मजबूत दृष्टि उन्नत के लिए तैयार की हुई थीं की लक्ष्मियों से चिरी मजबूत है यदि तुम वहाँ पर रहो तो हमसे तुम्हारी जाति बनी जानगी । तुमने लिखा है कि वर्तमान भी बहुत बड़ी वस्तु है वहाँ पर वह मजबूत ही बहुत बड़ी वस्तु है वहाँ अनुपस्थित काल में भी उनका प्रयोगाधिकार है । वर्तमान काम का एक बहुत बड़ा अंश है जो लक्षणवित्या का है कुछ मिसाल उनकी क्षमता कम नहीं है उनके माँग का प्राधान्य भी मर्यादा है और प्रादुर्भाव केमोक्षी के युग में वे भी साहित्य के दरबार में गया पढ़ पढ़कर अपनी माँग पेश करते रहते हैं । इस युग में इस माँग से बचकर निकल जाना एक बहुत कठिन समस्या हो गई है पर पहले के युगों में यह समस्या इनकी बटल नहीं थी । प्रादुर्भाव के युग की राजनीति समाजनीति धर्मनीति के प्रचलित नारे बराबर मूढ़ बन मूढ़ खनित प्रतिष्ठित हो रहे हैं । ये लोग इन नारों की सबब पुनरावृत्ति के लिए उभरते हैं । तुम्हारे मध्य साहित्यकारों का जैसे लोगों से कहना चाहिये कि तुम लोगों का नारा मेरा नाग नहीं है यदि हम तुम्हारे

विबंदे की विद्विधा न बनें तो सम्भव है कि तुम्हारा चाय चुमना हमें नसीब न हो पर भरा भोजन बृहत् काल और बृहत् बेध म है। अस्तित्व वासुदेव के जमान में उस समय के काम ने वासुदेव को प्रभुर पुरस्कार दिया था पर उस काल में जिस बेध पर दस्तखत किया था उस प्राधुनिक काल के बेध में कौंध नहीं किया जा सकता। ब्रह्मदेव ठरफ मैमनासिंह के वाचा-काव्य और लोक-साहित्य की मियाद अब भी अतम नहीं हुई है वह अधिधित लोगों की सहज भाषा में रचित है फिर भी उसकी भाषा चिरकाल की भाषा है। वासुदेव के श्लेष अनुप्रास की छिछनी कृत्रिमता में सत्य नहीं था पर मैमनासिंह की भाषा में सत्य था। प्राधुनिक काल के रोचक नारो ने वासुदेव के दल्प और अनुप्रासो को जगह से भी है और ये प्रतिबिम्ब साहित्य के सत्य को गल्ट कर रहे हैं। यह काई की तरह साहित्य के सारे जोतों को घबघट कर रहे हैं। मैंने तुम्हारी जो कहा निमां घादि पड़ी हैं, उनमें तुमने बिना किसी घायास के चिरकाल के सत्य को मूर्त किया है। भीड़ की बाधी तुम्हारी बाणी में प्रविष्ट होकर सत्य के चित्रण पर अपनी छाप नहीं मार सकी। उस समय तुम भीड़ से दूर थे पर इस समय तुम जो कुछ सिक्तते हो उसे पढ़ते हुए मुझे भय लगता है कि मैं कहीं यह घाबिकार न कर बीदू कि तुम्हारी लेखनी पर तुम्हारी जानकारी या घैर-जानकारी में भीड़ का भार बैठ गया है। यह इतनी बड़ी हानि है कि उसे मैं अपनी घाँक से दैख नहीं सकता।

तुम्हारे नाटक के जिस परिप्रेक्षित की बात मैंने बताई है वह नाटक के कथानक के सम्बन्ध में है, यानी जिस देशात में जिस वातावरण में सारी बटना बिबाई गई है उसकी भाषा चरित्र तथा व्यवहार में समुचित सामन्वस्य की रखा नहीं हुई ऐसा मेरा विश्वास है। यानी तुमने जो कुछ कहा जाहा है उसे यदि उसकी परिस्थितियां के साथ समत करने कहें तो उससे वह भाषा और बटना में दूसरे ही रूप में सामने आता मूल बात बनी रहती पर रूप बदल जाता। कला में विषय के साथ रूप का सामन्वस्य हो तभी वह सत्य होता है।

एक बात याद रखी कि मैंने तुम्हारे उन नाटक क सम्बन्ध में जो मत व्यक्त किया यदि वह तुम्हें असंगत जँचे तो उसे मन से एकत्र निकाल दो। तुम्हारी मूटि का धारण तुम्हारे अपने ही मन में है। यदि तुम उसकी रक्षा की है तो कुछ नहीं कहना है पर यदि भीड़ के भाड़े मुसाब में तुम्हारी सेवानी बिधित्त हुई हो तभी वह चिन्तनीय है।

‘इन दिनों मैं कमकल में हूँ। यदि किसी दिन भेंट हो तो घामने-घामने बैठकर घामोचना हो सकती है।

—तुम लोगों का

रबीन्द्र नाम ठाकुर’

११ मार्च १९२८

इन पत्रों से साहित्य-मूजन के सम्बन्ध में भारत क इन दो महारथियों क मत सामने आ जाते हैं। उसमें बार-बार भीड़ शब्द आया है जिसका मतलब भावव यही होगा कि जनता का सम्बन्ध धीरे सामयिक रूप धानी मेड़ियापछान। आब अनबाद के युग में इन पत्रों का बहुत अधिक महत्व है क्योंकि कहीं तक जनता से परिचायित होना चाहिये धीरे कहीं तक उसकी सामयिक अशुद्ध अभिव्यक्तियों से बचना चाहिये इन पत्रों में उम प्रश्न पर सत्यक का ध्यान केन्द्रित हो जाता है धीरे वह मठक गृहता है।

नाटककार क्यों नहीं

इन पत्र-व्यवहार के बाबजूद धरतूचन्द्र में अधिक नाटक नहीं लिखे धीरे क्यों नहीं लिखे इस पर उन्होंने एक पत्र में लिखा था— ‘तुम्हारा प्रश्न यह है कि मैं नाटक क्यों नहीं लिखता। शायद यह जिज्ञासा तुम्हारे मन में दो कारणों से आई। पहली बात तो यह है कि नाट्यकार धीरे दूसरे प्रश्नकारों क प्रश्नों को नाटक का रूप देने वाले योग्य चौधरी से हार ही में बाठावन’ पत्र में बंगला नाटक क सम्बन्ध में जो संतुष्ट प्रकाशित किया है उसमें तुम सम्पूर्ण रूप से सहमत नहीं हो सके हो। दूसरा कारण यह है कि तुम लोग निरन्तर जिन नाटकों का धमिनय देपते हो उनक भाव भाषा चरित्र निर्माण आदि का बिबेचन करने के बाद तुम सार्थक के मन में

यह बात उठी है कि सामय धरतृचन्द्र ने नाटक लिखते तो रंगमंच का बेहतर कुछ बदलना ।

“तुम्हारे प्रश्न के उत्तर में मेरी पहली बात यह है कि मैं नाटक नहीं लिखता इसका कारण है मेरी प्रसन्नता । दूसरी बात यह है कि यदि हम प्रसन्नता को न मानकर मैं नाटक लिखने पर जून भी बाँडेँ ता भी मजबूरी पूरी नहीं पड़ेगी । यह न समझो कि मैं यह बात केवल रणमंच की दृष्टि से ही कह रहा हूँ । समाज में इस बस्तु का प्रयोजन है पर एकमात्र प्रयोजन नहीं इस समय को मैं कभी नहीं भूसा । उपन्यास लिखने पर मासिक पत्रों के सम्पादन साप्ताहिक के साथ उसे ले जायेंगे और उपन्यास प्रकाशित करने के लिए प्रकाशक की कमी भी नहीं होगी कम से कम प्रकृतक नहीं हुई और उन उपन्यासों के पढ़ने के साथ भी मुझ मिलते रहे हैं । कहानी सीमार करना मुझे आता है कम से कम यह कसा मुझे लिखना दो यह कहकर किसी के दरबार पर जाने की दुर्मति नहीं हुई । पर नाटक की बात और है । रंगमंच के अधिकारी ही इसके सम्बन्ध में न्यायालय है यदि वे सिर हिलाकर कहें कि इस स्थान पर ऐकसन कम है इसके उसे नहीं लने या यह पुस्तक बस नहीं सकती तो उसे बसान का कोई उपाय नहीं है उसकी राय ही इस सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय है क्योंकि वे विशेषज्ञ हैं और समय देने बास दर्शकों के माड़ी मद्यक का उन्हें पता है । इस लिये जान-बूझकर उस घोषणा में सिर झालने में मुझे हिच किचाहट मामूम होती है ।

“सामय मैं नाटक लिख सकता हूँ क्योंकि नाटक की जो अत्यन्त आवश्यक बस्तु है और जो अच्छी न होने पर नाटक का प्रतिपाद किसी भी तरह रक्षण के दिक में उतर नहीं पाता उस कल्पककवन को लिखने का सम्पास मुझे है । ज्ञातपीठ जैसे करानी चाहिये तथा किठनी सरल और सीधी करने पर यह कम पर असर डालती है, यह कीसल मुझे न आता हा ऐसी बात नहीं । इसके अलावा चरित्र पर बटना-सिष्टि भी मैं कर सकता हूँ ऐसा मुझे विश्वास है । नाटक में घटना या सिचुएशन

धरत्वनन्द के पत्रों में जहाँ-तहाँ साहित्य-सूत्र के सम्बन्ध में धीर भी बहुत-सी महत्त्वपूर्ण बातें आई हैं जिनमें से कुछ हम उद्धृत करते हैं। उन्होंने १३ ११ १२ को रंगून से एक पत्र में लिखा था—“जो लोग चित्र बनाना नहीं जानते वे कृषी हाथ में लेकर यह सोचते हैं कि घोंच के सामने जो कुछ भी प्रायः उन्हें चित्रित कर डालें पर दीर्घ अभिप्राय के बाद उन्हें अन्त तक मान्य होता है कि यह सही बात नहीं है। बहुत-सी बड़ी चीजों को छोड़ना पड़ता है और बहुत कुछ दिखाने का मौक छोड़ना पड़ता है तब जाकर चित्र बनता है। कहना या चित्रित करने में न कहना धीर चित्रित न करना बहुत कठिन है। बहुत ध्यानसमय करना पड़ता है बहुत मोन वसन करना पड़ता है तब जाकर सही ढंग से कहना धीर चित्र बनाना जाता है।”

एक दूसरे पत्र में उन्होंने लिखा था— मेरे लिपन में कोई बिछेपता नहीं है फिर भी इतना ठीक रखता हूँ कि जो लिखता है उसके प्रायः अपने मन का ऐक्य रहे जो मैं सोचता हूँ, उसे ही मैं लिखना चाहता हूँ। बहु क्या समझेंगा यह क्या कहेंगा इस तरह मैं नहीं ठाकता। शायद इसी कारण से लोग बीच-बीच में मेरी रचनाएँ पसन्द करते हैं कभी-कभी नहीं भी पसन्द करते। फिर भी मैं हेय समझ कर लेखक का ध्यमान नहीं करता चाहते।

इसी न उन्होंने अपनी माया के सम्बन्ध में भी व्यक्त के साथ एक मजेदार बात कही जिसका मतलब यह है कि उन्होंने दुर्बोध्यता से बचने की कोशिश की है, पर यह देखने की बात है कि जिन घट्टों में वे इसे व्यक्त करते हैं—‘माया पर मेरा कोई अधिकार नहीं है ऐसा कहा जा सकता है। सम्ब-समार भी कम है। इसलिये मेरी रचना सरल होती है मुक्तिकर करके लिखना मेरे लिए असम्भव है। इस क्षेत्र में मेरी घट्टकता ही मेरे काम का रही है।’

इन्हीं पत्रों में से एक पत्र में उन्होंने लिखा—‘घोंचों में बड़े उन्हाह

मह नहीं कह सकता।”

यह बहुत ही महत्वपूर्ण बात है क्योंकि धीर भी सेंद्रकों से नहीं कहा है कि वे एक धसाठ शक्ति के हाथ में रहकर अपनी कृतियों की रचना करते हैं। इस सम्बन्ध में धीर अधिक म्यीरे में जाने की आवश्यकता नहीं है।

१९३१ के सत्रमग श्री हिमीपकुमार राय को लिखत हुए उन्होंने फिर एक बार इसी बात को बारबार शब्दों में कहा था जिसे वे बार-बार कहते रहे। उन्होंने लिखा— लिखना मुश्किल नहीं है न लिखकर बताने की शक्ति भी कम नहीं है यामी भीतर के उच्छ्वास धीर धारण की तरफ निर्गमक बहा म के जाए। मैं ही पाठक पर पूर्ण रूप से न छा पाऊ। उसको यह भी मीका मिले कि वह अपने भाव शक्ति धीर बुद्धि के द्वारा प्रसिद्धि ग्रंथ की पूर्ति कर लें। तुम्हारी रचना उसे इंगित धीर प्रामास ता हे ए पर उन पर बोझ न बन। जरापर सेन ने अपने किसी उपन्यास में मृत पुत्र के माँ-बाप की तरफ से धनेक पृष्ठों पर धीमू बहाए हैं मनीजा यह है कि पाठक ताकत रह गए उन्हे रात की कुरमत्त नहीं मिली। सब तो यह है कि रचना म धसंयम साहित्य की मर्बादा को नष्ट कर देता है। कमर्जी सुन्दर मिलते हैं पर सुन्दर न लिखना उन्हे नहीं आता। धीर एक तरह का धसंयम है जो 'ध की रचना में इष्टिगोचर होता है। वह मन्त्रा सिधता है विमायत बगीरह मया है पर वह एक मृत के लिए धी यह नहीं भूल पाता कि वह वितायत मया है। विमायत के सम्बन्ध में धमकी रचना में ऐसी एक धरधिकर शक्ति यद्यद धमृष्टपूर्वता विमाई पड़ती है कि पाठक का मन उत्पीड़ित हो जाता है। धनुस्पा देवी के उपन्यास में भी देखन म आता है कि बेद-वेदान्त उपनिषद्, पुगाय कानिदास मधभूति सब इसमें धुमने क लिए जीत ठममठला मचाने हुए हैं। हर शक्ति में रचयित्री की यह भावना दीप्त पड़ती है कि देवी मैं कितनी बड़ी बिदुपी हूँ मैंने कितना पढ़ा है कितनी जानकारी प्राप्त की है। इनकी शक्तिमयता विनी भी रूप में रचना के धम्बर पड़ती न जान।

पारत्बन्ध के पत्रों में जहाँ-तहाँ साहित्य-सूत्र के सम्बन्ध में और भी बहुत-सी महत्वपूर्ण बातें घाई हैं जिनमें से कुछ हम उद्धृत करते हैं। उन्होंने १२ ११ १२ को रंगून से एक पत्र में लिखा था— 'जो लोग चित्र बनाना नहीं जानते वे कृषी हाथ में लेकर यह साबित हैं कि घाँट के सामने जो कुछ भी घाय उसे चित्रित कर दें पर शीघ्र अभिमतता के बाद उन्हें घन्ट तक मामूम होता है कि यह सही बात नहीं है। बहुत-सी बड़ी चीजों को छोड़ना पड़ता है और बहुत कुछ दिखाने का सोम छोड़ना पड़ता है तब जाकर चित्र बनता है। कहना या चित्रित करना से न कहना और चित्रित न करना बहुत कठिन है। बहुत ध्यात्मसमय करना पड़ता है बहुत सोम समन करना पड़ता है तब जाकर सही ढंग से कहना और चित्र बनाना आता है।

एक दूसरे पत्र में उन्होंने लिखा था— 'मेरे सिमन में कोई बिरोधता नहीं है फिर भी इतना ठीक रहता हूँ कि जो लिखता है उसका साथ अपने मन का एक्य रहे जो मैं सोचता हूँ, उसे ही मैं लिखना चाहता हूँ। यह क्या समझेगा यह क्या कहूँगा इस तरफ मैं नहीं ठाकता। घायब इसी कारण से सोम बीच-बीच में मरी रचनाएँ पसन्द करने हैं कभी-कभी नहीं भी पसन्द करते। फिर भी वे ह्य समझ कर सेकक का अपमान नहीं करना चाहते।

इसी में उन्होंने अपनी भाषा के सम्बन्ध में भी व्यंग्य के साथ एक मजेदार बात कही जिसका मतलब यह है कि उन्होंने दुर्बोध्यता से बचने की कोशिश की है पर यह देखने की बात है कि जिन शब्दों में वे इसे व्यक्त करते हैं—'भाषा पर मेरा कोई अधिकार नहीं है ऐसा कहा जा सकता है। शब्द-समार भी कम है इसलिये मेरी रचना सरल होती है, मुक्तिस करक सिखना मेरे लिए प्रमम्भव है। इस क्षेत्र में मेरी प्रत्यक्षता ही मेरे काम का रही है।

इन्हीं पत्रों में से एक पत्र में उन्होंने लिखा— 'घोंटो मैं बड़े उस्ताद के साथ लिख रहा हूँ कि यह रचना सुन्दर होती पर क्या से क्या होगा

यह नहीं कह सकता।

यह बहुत ही महत्वपूर्ण बात है क्योंकि धीरे भी सलकों से नहीं कहा है कि वे एक प्रजात राक्ष के हाथ में रहकर अपनी कृतियों की रचना करते हैं। इस सम्बन्ध में धीरे अधिक धीरे में जाने की आवश्यकता नहीं है।

१९११ के समय श्री दिग्विजय कुमार राय का सिद्धे हुए उन्होंने फिर एक बार उसी बात को बोगदार सन्दों में कहा था जिस व बार-बार कहते रहे। उन्होंने लिखा— लिखना मुश्किल नहीं है न लिखकर बताने की शक्ति भी कम नहीं है यानी भीतर के उच्छ्वास धीरे प्रायेण की तरफ निर्बन्धक बहा न ल जाए। मैं ही पाठक पर पूर्ण रूप से न छा जाऊँ। उसको यह भी मीका मित्र कि वह अपने भाव शक्ति धीरे बुद्धि के द्वारा प्रतिलिखित घट की पूर्ति कर ल। तुम्हारी रचना उसे इयित धीरे प्रमास तो वे व पर उन पर बोझ न बन। जसधर सेन ने अपने किसी उपन्यास में मृत् पुन के मा-बाप की तरफ से घनेक पृष्ठों पर धामू बहाए हैं मतीजा यह है कि पाठक ताजने रह गए उन्हें रोने की फुरसत नहीं मिली। सच तो यह है कि रचना में असयम साहित्य की मर्यादा का मष्ट कर देता है। यमर्षी सुन्दर लिखते हैं पर सुन्दर न लिखना जगह नहीं पाता। धीरे एक तरह का असयम है जो 'घ' की रचना में वृष्टिगोचर होता है। वह अच्छा लिखता है विमायत बगैरह गया है पर वह एक मुहूर्त के लिए भी यह नहीं भूल पाता कि वह विमायत गया है। विमायत के सम्बन्ध में उसकी रचना में ऐसी एक धरबिद्धर भक्ति गद्गद प्रवृष्टपूर्वता दिखाई पड़ती है कि पाठक का मन उत्पीड़ित हो जाता है। अनुक्या देवी के उपन्यास में भी दसने में पाता है नि बेद-बेदान्त उपनिषद्, पुराण कानिदास मन्त्रभूति सब उसम बुमने के लिए बैसे ठसमठमा मन्वाने हुए हैं। हर पंक्ति में रचयित्री की यह भावना वीर्य पड़ती है कि देखा है किती बड़ी विबुषी ह मैंने कितीना पढ़ा है कितीनी जानकारी प्राप्त की है। इनकी प्रतिपाद्यता किसी भी रूप में रचना के धार पर पकती

वे इतने सरल रूप से धार्ये कि ऐसा मान्य है कि वे विष्णु स्वभाविक रूप से धार्ये हैं। इन्हीं रूप में सिद्धता बड़ा नारी कीर्ण है। यह सिद्धता नहीं जा सकता यह सीमापदा है। पाठक को अनादीय कर देने की इच्छा इतना पार न मारे कि उनकी जिजी कल्पना की कृपाक म कमी धा जाय। निम्न ममम इम तत्व को एक निमट भी भ्रुं कि मय। साथ ही बड़े विचार बड़े तत्व बड़ी नाचना बड़े वर्धनों को लेकर रचना करते। पानी गिर रहा है पत्ते हिल गये हैं मास फूल है धानी काभा है और वेवराणी जेठराणी के अगळे बहुषों में मममुटाव या प्रमात मुकूर्ती की कण्ठ दलता धानी कमाने में कितनी धलमारियाँ हैं, कितने छोफे हैं बीये म। कननी बलियाँ हैं और धरणी पर कितनी और किस किनारी की कुनी हुई सादियाँ मी है इन व्यौरों के बिना या चुके हैं और प्रबोधन भी समाप्त हा गया है। यह महज सिद्धता के मिस से पाठक को ठमना है।”

रचना-कौशल

प्रायाः १९३३ को सिमीपुमार राय को एक पत्र में उन्होंने लिखा था—‘भारतवर्ष के अक्टू १९३५ की संख्या में तुम्हारी ‘मौकर’ नामक कहानी पड़ी। कहानी की दृष्टि से यह उत्तरी भण्डी नहीं बन पड़ी पर एक बात बल रहा है कि तुममें एक बहुत सुन्दर वस्तु निकसित हो रही है यह है कपोपकपन। कहानी लिखन के कौशल या पद्यति के लाल कपोपकपन की धारा का जब तुम्हारी रचना में सम्पूर्ण ठामपेस बैठेगा तभी तुम बड़े साहित्यकार बनोगे।”

३० अगस्त १९३८ में उन्होंने उसी प्रश्न पर लिखा—“कपोपकपन छोटा होना चाहिये या मधुर होना चाहिये। किसी भी हातव में ऐसा न मान्य यदि कि अक्षरत से अबाधा एक हरफ भी कहा गया है। घाटि स्थिक काव का भीतरी बही रहना है। पहले सायद ऐसा लगे कि हाय में सारी बात कह नहीं पाया पाठक धार्ये बक्तव्य पकड़ न पाये पर अधिक नममाने में लेखक को कीर्त यर्ज है, ऐसा न दिखाई पड़े

उमरने न ? इसीलिए कुछ नाम यह कहते हैं कि तुम्हारी रचनाओं में भाव-विचार प्रकट आकार धारण करना है। जो पड़ना है उम यदि साक्षर उमरने का अवकाश न मिल तो उममें अलक की बुद्धि प्रमाणित नहीं होती तब पाठक चिठ जाता है।

इसी पत्र में उम्होत यह भी लिखा— क्या खीन इस बात का स्वीकार नहीं करत कि उपन्यास व उग्यि म मनुष्य को बहल-या वाने मुनने क लिए मजबूर किया जा सकता है। जिस हलका साहित्य कहत है क्या उसक प्रति उनम बहल बिग ग है

सगन् सामू न कम म कम एक मीर पर गया भी लिखा है कि किमा किमा रचना क लिए नाम उमरनेनी है उम्हान दिर्घपदुमार गय को एक पत्र म लिखा था— 'इसामे उमरने कम रहन हो कछ काम ममान कर लेने चाहिए। जैसे कहाना लिखत'। मैं कई बार देखा है कि कम उमरने में जो कुछ लिखा जा सकता है उममें म प्रविष्टा उमरने बहल पर नहीं लिया जा सकता तब उमरने क अनुसार साम्नीय दीर मनीष घाई भाने है मनुष्य म केवल लेखक ही नहीं ताना साम्नीषक नी जाना है। उमरने क साव-मय साम्नीषक बहल जाना है इसामे प्रविष्ट उमरने म उमरने लेखक लिखता चाहता है ता साम्नीषक उमकी कमम पकड़त मयता है घोर इन समय भा रचना मान बिद्या बुद्धि की दुष्टि म बाहु बिगनी बड़ी हो रम का दुष्टि म उमने कमी घाम लगती है। इसामे मग बिश्वास है कि यौवन पाव कर लेने के बाद जो व्यक्ति इन मष्टि का साम्नीषन करता है वह पसना करता है। मनुष्य की एक उमर होती है जिसक बाद काम्य या उपन्यास लिखना उचित नहीं है गिटापर कामा ही कठम है। बहावा मनुष्य का बुग देन की उमर है उम ममम मनुष्य का घानत वही बाने का घमिन्द करमा व्यय है।

इनक साथ ही उम्हान एक पत्र म यह भी लिखा है— 'यदि उमर काफी हो गई। स्वीकृताप नी बड़े हा बल कछ ऐसी रचना हानी है कि इसक बाद कामा उपन्यास-साहित्य का स्थान कुछ शक जायया।

इस बक्तव्य में उन्नत ब्राह्मी बात पर जोर न होकर अपने तथा रवीन्द्र के व्यक्तित्व पर जोर है। सौभाग्य से उन्होंने बंगला साहित्य के भाव्य के सम्बन्ध में जो चिन्ता की थी वह यत्न निकसी और इन दोनों महारथियों के बाद भी 'पंचेर पांचाली' के लेखक विमूढमूढक आदि कई उच्चस्तर के लेखक बंगला उपन्यास क्षेत्र में बने रहे। इधर बंगला के उपन्यास क्षेत्र में तबीयत प्रतिभाओं की बाढ़-सी आ गई है। मैंने 'बंगला साहित्य पत्र' में इनका कुछ प्योरा किया है पर यहाँ कुछ नाम तो पिनाए ही जा सकते हैं, जैसे तापसकर, प्रबोध साम्याल बतपूज 'साहस बीबी मुत्ताम' के विमल मित्र, सुबोध भोय सतीनाथ भाबुड़ी नरेन्द्र कुमार मित्र आकर इत्यादि।

सरत् बाबू ने उन्नत वर्गों में उन्नत के साथ साहित्य-रचना के तारतम्य का जो सिद्धान्त धारण रखा वह एक हृद तक नियम होने पर भी उन्नतों से अपवाद से स्वर्ण रवीन्द्रनाथ इससे अपवाद से और भी बहुत-से अपवाद हैं। इस बक्तव्य को विप्रकूल धासटिक रूप से लेने की उन्नत नहीं।

दो महारथियों में टकराव

सरलचन्द्र का उदय संयुक्त साहित्य में उस समय हुआ जब रबीन्द्र मध्य यवन में तप रहे थे। मध्यम वर्ग की कमता में धारक सरलचन्द्र अधिक प्रसिद्ध हो गये थे। जो कुछ भी हा सरलचन्द्र और रबीन्द्र में कई बार मनमुटाव की नीबत आई वह केवल वैयक्तिक बात नहीं बल्कि बहुत ही तक दोनों के साहित्य के धारक भी समग से इसलिए इस प्रकार का मतभेद स्वाभाविक था। इसी के साथ यह भी स्मरण रहे जैसा कि हम बाद को देखेंगे कि सरलचन्द्र अपने को सब तरह से रबीन्द्र भूली मानते थे।

दरत के कुछ पत्रों में इस मनमुटाव का प्रामाणिक इतिहास मिल है। २६ बी.गाल १३२६ (बंगला मन्) यानी १२२३ में उन्होंने अपने पत्र में रबीन्द्रनाथ को एक पत्र लिखा था— 'मदकों के मुँह से सुनने में थापा कि थाप मुझ से बहुत घसलुष्ट है। थाप उल्लेखना के समय कोबनग मीने थापके सम्बन्ध में कोई मूठी बात (मिथ्या) कही हो पर जो व्यक्ति थापके पास मेरे कथन का मत्यासत्य जानने के लिए गया था उसने भी कभी धरसभ नहीं किया। थाप भारत के प्रति इंग्लैण्ड के व्यवहार में दुश्मन हुए हैं और यह सारी बात वंजाब सम्बन्धी उन पत्र के कारण हुई। जमे मलिपन पर यह सब हो ही नहीं सकता—इन बातों को मीने उस समय ठीक किस रूप में कहा था यह मुझे याद नहीं है। मैं मान हीर पर गड़दर भूठी बातें नहीं कहता पर कहना एकदम असम्भव है एसा भी नहीं। कम से कम इतना तो मीने निश्चित रूप से कहा है कि इन बार विमायत से मोटदर थाप बहुत बड़ा गम है और बयाम के प्रति थापकी पहले वाली

झंडा की दृष्टि से देखता हूँ। वह मेरे दुस्स्थायीय है वह तो तुम जानती ही हो पर सामर्य लिखने की दृष्टि के कारण जो मैं कहता आया हूँ वह नहीं कह पाया धीर वृत्त ही धर्म हो गया। यदि कुछ दोष हुआ भी हो तो वह मेरी असमता का दोष है, मेरे हृदय का नहीं। नवीन लेखकों के प्रति मेरा घास्त्रिक स्नेह है। यह मैं जानता हूँ कि वे गतिमान करते हैं पर नव समाज में उन्हें धमकेय प्रतिपादित करने पर मुझे कष्ट पहुँचता है। उसके धनाका वह बहुत बड़ा साधन है जबकि यह कहा जाता है कि वे गरीब हैं इस कारण इन सभी बातों में पड़कर रचना करना चाहते हैं। मैं जानता हूँ विरोधी वक्त के लोग यही सब कहते छिपते हैं।

‘जब ‘पत्र के दावेदार’ जम्हा हो गया तो मैंने रबीन्द्रनाथ से कहा कि धाप यदि इसका प्रतिपाद करे तो उससे संसार के लोगों को यह मालूम हो जाय कि ब्रिटिश सरकार साहित्य के प्रति भविष्य कर रही है। धरत्वनन्द मेरी पुस्तक पर से जल्दी नहीं हटेगी धरत्वनन्द जैसे लोग नहीं हैं, पर दुनिया के लोगों को खबर तो हो जाती। उन्हें मैं पुस्तक भी दे आया। इस पर उन्होंने मुझे लिखा— (वहाँ धरत्वनन्द ने रबीन्द्रनाथ के पत्र से कुछ शब्द उद्धृत किए।)

इसके बाद उसी पत्र में धरत्वनन्द ने लिखा— ‘तुम सोच सकती हो कि बिना धरत्वनन्द के कोई किसी के प्रति इतनी बड़ी कद्रुक्ति कर सकता है? उन्होंने यह पत्र अपने क लिए लिया था पर मैं उसे छपा नहीं सका क्योंकि मैं जानता था कि कविधर का इतना बड़ा सर्टिफिकेट उसी समय स्टेट्समैन आदि धरत्वनन्दी घसकारों के द्वारा सारे संसार में तार भेजकर फैला दिया जायगा। नतीजा यह है कि हमारे देश के मुद्रक-मुद्रकियों को धरत्वनन्दों में जिस प्रकार बिना मुद्रकता जलाय वक्त में धरत्वनन्द कर रहा है, उसका बिन्दु जो धरत्वनन्द वक्त रहा है, वह धरत्वनन्द ही जायगा।

‘मैं ठीक नहीं कह सकता पर जब मैंने ‘साहित्य की रीति-नीति’ लिखा था तब ये बातें मेरे मन में थीं इसी कारण धरत्वनन्द कहीं-कहीं तीव्रता का बोझ बहुत मग्न था गया है। जो कुछ भी हो जो हो गया उसका ही

कोई उपाय नहीं है।

ऊपर जो पत्र-व्यवहार प्रकाशित किया गया है उससे यह स्पष्ट है कि दोनों में मन-मुटाव बहुत काफी बढ़ तक पहुँच गया था। हम इस भयङ्क में नहीं पड़ना चाहते कि इनमें कौन सही था और कौन गलत, पर इतना प्रबल्य कहें कि 'पप के शोषण' की बच्ची के विरुद्ध प्रतिवाद करना प्रतीकार करते हुए रबीन्द्रनाथ ने ब्रिटिश साम्राज्यवाद को प्रथम साम्राज्यवादों से कम बख्शार बताया यह और कुछ नहीं तो बहुत ही प्रसामयिक बात थी। यह बहुत से विद्वान मानते हैं कि ब्रिटिश साम्राज्यवाद इस प्रकार के दूसरे प्राकृतिक साम्राज्यवादों से कम बख्शार रहा है पर यदि यह सत्य भी था तो इसे कहने का यह मौका शरत् बाबू को मिलना बहुत स्वाभाविक था।

हम बाद के पत्रों में देखते हैं कि शरत्बन्धु धीरे-धीरे रबीन्द्रनाथ से दृष्ट गये यद्यपि वे सार्वजनिक रूप से रबीन्द्रनाथ को धराहते ही रहे। उन्हें ऐसा धामात जमा जिससे वे फिर उमर नहीं सके। तभी २० मार्च १९४० (बंगला सत्र) यानी १९३४ के लगभग उन्होंने सुप्रसिद्ध नाटककार श्री जी० एल० राय के सुपुत्र श्री विभीपकुमार राय को मिलते हुए यह उपदेश दिया— 'उपमा या उदाहरण कुछ भी रबीन्द्रनाथ की तरह निरर्थक और असम्बन्ध न हो और तर्क किसी बात से भी बाष्पाच्छादित न हो जाय, मनुष्य को प्रतिकारों से मुक्तिजित करने की शक्ति और है और मुनार की दुबान में जो केन्द्र को प्रतिकारों से मुक्तिजित करने की शक्ति और है। यह बात हर समय याद रखनी चाहिये। असंस्कृत भाषण का बोध कितना पीड़ादायक है यह बात सिर्फ पाठक ही समझते हैं।'

इस उद्देश्य पर कोई टिप्पणी करने की आवश्यकता नहीं है।

इसके लगभग एक साल बाद विभीपकुमार का ही पत्र मिलते हुए उन्होंने कुछ ऐसे ही भाषण कहे। उन दिनों विभीपकुमार शरत् बाबू के निष्कृति नामक मधु उपन्यास का संश्लेषी अनुवाद रीयार कर रहे थे और 'वीकान्त' के संश्लेषी अनुवाद करने की बात जम रही थी। उन्होंने इस पत्र

में लिखा—“रवीन्द्रनाथ मुझे इष्टोद्बुध कर देने ऐसी धारा में नहीं रखता वे मुझ पर प्रसन्न तो हैं नहीं। इसके अलावा उनके पास इतना समय भी कहाँ है? साहित्य-सेवा के कार्य में वे मेरे पुस्तकालयी हैं मैं उनसे कभी टक्कर नहीं हो सकता परन्तु मैंने धारा और मेरे प्रति उनकी विमुखता की कोई सीमा नहीं है इसलिये यह चेष्टा करना व्यर्थ है।”

इसके एक सप्ताह बाद उन्होंने एक पत्र में लिखा—“इसके अलावा मेरे मन में इस सम्बन्ध में कोई अफसोस सम्मुख ही इस बात का नहीं है और न उद्वेग है कि मुझसे बौन बड़ा और कौन छोटा है। यदि रवीन्द्रनाथ यह कह देते कि मेरी कोई भी रचना उपम्यास पर-आध्य नहीं है तो उससे सामयिक रूप से बेचना पहुँचने के प्रतिरिक्त और कुछ न होता। शायद यह विश्वास करना कठिन है और शायद ऐसा जैसे कि मैं बहुत अधिक बीमता दिखला रहा हूँ पर यही साक्ष्य मैंने सारी जिन्यायी की। इसीलिए किसी आत्ममन का भी मैं प्रतिवाद नहीं करता। जीवन में एकाध बार मैंने रवीन्द्रनाथ के विरुद्ध कुछ कहा था पर वह मेरी प्रकृति नहीं विरुद्ध थी बहुत से कारणों से शायद इसीलिये मैंने यह बतली दी थी।”

इन पत्रों से यह ज्ञात होता है कि शरद्वन्द्व को बराबर यह अफसोस बना रहा कि रवीन्द्रनाथ ने उनका धूलकर धावर नहीं किया। हम इस प्रश्न में जो पत्र उद्धृत कर चुके हैं तथा पटनाएँ बता चुके हैं उनसे यह बात स्पष्ट हो जाती है।

आरम्भ १९४० के लगभग फिर एक बार रवीन्द्रनाथ के सम्बन्ध में हम शरद्वन्द्व को एक पत्र में इस प्रकार लिखते हुए पाते हैं। उन्होंने श्री अनुमानन्द राय को लिखा—“तुमने परिषद पत्रिका में श्री विनोयकुमार राय को लिखित ‘रवीन्द्रनाथ के पत्र ‘साहित्य की माया’ के सम्बन्ध में मेरी राय जाननी चाही है यद्यपि यह पत्र व्यक्तिगत है फिर भी जब यह प्रकाशित हुआ है तो ऐसा अनुचित शायद किया जा सकता है पर कई बार पृष्ठ वाले पत्रों की प्रतिगत पत्रिका में यह जो लिखा जाता है कि कुछ

रपये भेज देगा उसी की तरह यदि अन्तिम पंथियों का असली बरतव्य यह हो कि योरोप अपने यत्न धन-शैलत छाप-उमंथों और विपुल मर्यादा के साथ जस्वी ही बूड़ेगा तो बहुत ही कु-स के साथ यह बात याद धायेगी कि अब उन्न काफी हो चुकी है शायब ही यह स्थिति देख जाने का मौका मुझे मिले ।

पर उन बातों के अतिरिक्त कबिबर ने और जिन सोयों के सम्बन्ध में निराशा के कारण पतवार छोड़ दी है तुम लोगों का सम्येह यह है कि उन सोयों में मेरी भी गिनती है । इस निबन्ध में कबिबर का अभियोग है कि वे (दूसरे लोग) प्रसन्न हाथी हैं वे बकवास करते हैं, पहलवानी दिखाते हैं, बसूरत करमात करने पर धामाबा हैं 'प्राप्तेम सास्व' करते हैं, इस लिये उनकी इत्यादि इत्यादि ।

ये बातें जाहे जिनके सम्बन्ध में कही गई हों न तो म सुन्दर हैं और न कामों की अक्ली लयती हैं । समय और विग्रह के बाताबरण के कारण मन में एक इरिटेसन पैदा होता है इससे बक्ता का उद्देश्य व्यर्थ हो जाता है और मोठा का मन भी बिगड़ लडा होता है । इसके साथ ही लोभ बिलाना भी बेकार है प्रतिबाध करना भी व्यर्थ है । मैंने कितनी बोली तोते की तरह रटी कब मैंने पहलवानी दिखासाई, कहीं बेम दिलाया कूड कबिबर के मिबट यह जिज्ञासा अबाधतर है । मुझे अपने बचपन की याद धाती है । बेम के मैदान में किमी ने यह कह दिया कि फलाने ने टट्टी पर पैर रख दिया बस फिर क्या है कहीं पर रख दिया किसने कहा किसने देखा यह टट्टी नहीं थी सोबर या यह सब कहना व्यर्थ हाता था पर धाये तो मैं धादि बिना नहमाये तथा मिर पर मंमा जल का छीटा दिये दर में दाकिर मही होने देनी थी । बस इतना ही कहा जाता था फलाने ने टट्टी पर पैर रख दिया । मेरी भी इस समय बही हालत है ।

साहित्य की भाषा ही क्यों कबिबर के ऐसे निबन्धों में तो अधिकांश का समझने की मुझ में बुद्धि नहीं है । उनका अपना उदाहरण में बस-कच्चे हाट-बाजार, हाथी बोड़ा जगु-हैवान सब धाते हैं पर यह समझ में नहीं

जाता कि मनुष्य की सामाजिक समस्याओं और तर-भारी के परस्पर सम्बन्ध पर विचार करते हुए ये क्यों घाते हैं और इनसे क्या प्रमाणित होता है? मुझे में अच्छा लगने पर भी वह युक्ति ठा नहीं होनी।

एक उदाहरण देता हूँ। कुछ दिन पहले हरिजनों के प्रति होने वाले धम्याय से बूझी होकर उन्होंने प्रवर्तक संघ के मति बाबू को एक पत्र लिखा था। उसमें उन्होंने यह सिकायत की थी कि ब्राह्मणों की पाली हुई बिस्नी मूठे मुँह से उसकी गोद में जाकर बैठ जाती है उसम झूठ नहीं होती और वह इस पर आपत्ति नहीं करती। बहुत सम्भव है कि वह आपत्ति नहीं करती पर इससे हरिजनों को कोई सुखिबा हुई? इससे क्या प्रमाणित हुआ? बिस्नी की युक्ति पर ऐसा तो ब्राह्मणी से नहीं कहा जा सकता कि चूँकि धर्मग्रन्थ निरूपण बीच बिस्नी जाकर तुम्हारी गोद में बैठी है और तुमने कोई आपत्ति नहीं की इसलिये धर्मग्रन्थ उत्पष्ट बीच में भी जाकर तुम्हारी गोद में बैठीया और तुम आपत्ति नहीं कर सकती। बिस्नी क्यों गोद में बैठी है पीछे क्यों वाली पर बैठते हैं इन सब तर्कों से मनुष्य के साथ मनुष्य के न्याय या धम्याय का विवेचन नहीं हो सकता। ये सब उपमाएं मुझे में अच्छी लगती हैं बटबीसी हैं, पर कसीटी पर कमने पर बहुत ही तुच्छ प्रमाणित होती हैं। × × धार्मिक काल के कम कार मानों की विभिन्न कारणों से बहुत से साग निम्ना करते हैं। रबीन्द्रनाथ भी करते हैं इसमें कोई दोष की बात नहीं है बल्कि यह फंडन हो गया है पर इस प्रतिनिधित्व वस्तु के सम्पर्क में जो लोग इच्छा या अनिच्छा से भात रहते हैं उनके कारण भी जटिल हा गये हैं उनकी जीवन-धामा के लीके भी बरस गये हैं और किसानों के जीवन से उनका जीवन हूबहू नहीं मिलता इस पर मैं ही कोई अफसोस करे, पर यदि कोई इन सोचों के जीवन की विभिन्न बटबाधों पर कहानी लिखे तो वह साहित्य क्यों नहीं होगा? हाँ कविबर भी ऐसा नहीं कहते कि वह साहित्य नहीं होया वे केवल इस बात पर आपत्ति करते हैं कि साहित्य की मात्रा का संभन न किया जाय पर इस मात्रा का निर्णय किस प्रकार होया? कहाँ से

होया या कट्टू भाषणों से होया ? कबिवर का कहना है कि हमका निषय साहित्य की चिरन्तन मूल नीति की कसौटी से होगा पर यह मूल नीति मसक की बुद्धि की प्रमिश्रता और रसोपसम्बि के धारण क घनाबा कोई और वस्तु है क्या ? चिरन्तन की बुद्धि सिर्फ जबर्जस्ती ही दी जा सकती है असमम यह मरीचिका मात्र है ।

कबिवर कहत हैं— उपन्यास-साहित्य की भी यही दशा है । मनुष्य क प्राण का रूप चिन्ता के स्तूप के नीचे दबा गया है । पर उसके जबाब में यदि कोई कहे कि उपन्यास साहित्य की यह दशा नहीं है । मनुष्य के प्राण का रूप चिन्तन के स्तूप में दबा नहीं है वह चिन्ता के सूर्यमोक में धीरे उज्ज्वल हो गया है तो उसे किस तक से रोका जा सकता है ? इसी के साथ-साथ एक और बात ध्यायकल प्रायः सुनन में धाती है उसमें रवीन्द्रनाथ ने भी हाथ बटाया है वह यह कि 'यदि कोई मनुष्य कहानी की मजलिस में धाय ता वह कहानी ही सुनना चाहगा बसतों कि वह मही विमाग हो । इस बचन को स्वीकार करत हुए भी यदि पाठक इस पर कहें कि हाँ हम मही विमाग है पर जमाना बदल गया है धीरे हमारी उम्र भी बढ़ी है इसलिये राजकुमार और बेंगमा बेंगमी की कहानी से हमारा पट नहीं भरता तो यह मही कहा जा सकता कि यह उत्तर बहुत गुस्ताखी भरा है क घनायास ही ऐसा वह मकत है कि कहानी में चिन्तन यक्ति की छाप पढ़ने पर वह परित्याग्य महीं होती यह विद्युत् कहानी मिलने क लिए मसक का चिन्तनमक्ति विसरित करन की जम्गल नहीं है ।

'कबिवर ने महाभारत और रामायण का उल्लेख करत हुए भीष्म धीरे राम क चरित्र की धामोपमा करके यह दिलमाया है कि रटी-रटान् बोधी क कारण दानों चरित्र उभर महीं पाए । इस पर मैं धासाचना मही करूँगा क्योंकि क दोनों में कबल बाध्य-व्यय है बल्कि धर्म-मुक्तकों भी है

घोर पापक कुछ इतिहास भी हैं वे दो चरित्र महत्व साधारण उपन्यास के बजाय हुए चरित्र भी हो सकते हैं इसलिए उन्हें साधारण काव्य— उपन्यास के पत्र से नापते हुए मैं विचरिचिता हूँ।

कविबर के पत्र में 'इष्टलेख' शब्द का बार-बार प्रयोग हुआ है। ऐसा मानूँ होता है जैसे कविबर बिद्या और बुद्धि दोनों ही धर्मों में इस शब्द को ले रहे हैं 'प्राबलेम' शब्द का भी यही हास है। उपन्यास में तरह- तरह के 'प्राबलेम' रहते हैं व्यक्तिगत नीतियत सामाजिक सांसारिक इसके प्रसादा कहानी का प्रपत्ता प्राबुलेम होता है बहु प्नाट का प्राबलेम है इसी की गाँठ सबसे बटिम होती है। कुमारसम्भव का प्राबलेम उत्तरकाण्ड में राम का प्राबलेम डाखर हाउस में मोरा का प्राबलेम या योमायोग में कमु का प्राबलेम एक तरह के नहीं हैं। जब 'योगायोग' उपन्यास 'विचित्रा' में भारावाहिक रूप से प्रकाशित हो रहा था घोर प्रथ्याय के बाद प्रथ्याय में कुमु हयामा मचाती जा रही थी ता मैं वह मोच ही नहीं पा रहा था कि दुर्घप प्रबल पराक्रान्त मनुसुदन के साथ उसके टन-भाफ-बार का अन्त किस प्रकार होया ? पर कौन जानता था कि समस्या इतनी मामूली थी घोर लैबी डाक्टर एक मिनट में घाकर उसकी मीमांसा कर बेंनी। हमारे बलघरदाबा का भी प्राबलेम फूटी धाँकों नहीं भाता। उनकी एक पुस्तक में इसी तरह एक धारमी ने बहुत भारी समस्या की मृष्टि की थी पर उसकी मीमांसा एक दूसरे ही उपाय से हो गई। एक धसमी नाग ने घाकर प्लफला कर उसे काट लिया मने दाबा से पूजा कि गई यह क्या हुआ। इस पर उन्होंने कहा—'धर्मों इसमें क्या बात है क्या साँप कभी किसी को नहीं काटता ?

अन्त में एक बात घोर कहनी है। रबीन्द्रनाथ ने लिखा है—'एक जमान में इबसेन के नाटकों की बड़ी कद्र थी पर उसी बीच में क्या उनका रंग कछ-कूछ पीका नहीं पड़ गया ? दाब को क्या वे धाँकों से बिस्कुल प्रोभल नहीं हो पावेंगे ? —प्रोभल हो सकते हैं पर एक धनु मान मात्र है प्रमाच नहीं।

अद्भुत व्यक्तित्व

धरतृचन्द्र का व्यक्तित्व बहुत ही चरमूठ था। इसके कुछ व्यौरे पहले भी चुके हैं जिनसे पता चलता है कि उन्होंने किस प्रकार साहित्य-सभा की धीर उन पर क्या-क्या प्रभाव पड़े। इतत धम्माम में कुछ छुटकर व्यौरे दिये जा रहे हैं जो विसमस्य होने के साथ ही उनके साहित्य पर रोसनी बामते हैं।

धोरी से एक सुद्धिया की सहायता

२६ ९ २५ का हाबड़ा के धपने पाँव से उन्होंने काशी की एक सुद्धिया का पत्र लिखा था जिससे पता चलता है कि वे किस प्रकार उस सुद्धिया की सहायता करते थे। यह सुद्धिया किसी सम्भालत घर की कन्या धीर बबू थी, पर बाम विधवा थी। हरिदास धास्त्री के धनुवार यह धण्ठी पढ़ी मिली थी धीर बकिमचन्द्र तथा नबीनचन्द्र के नम्बाम में बहुत-सी बातें कहा करती थी। बद्धिया मासपुषा ठपार करती थी धीर लोपों की क्लिमाठी थी। धन्धिम धिनो में धीरों धरतृब हा धर्य थी इमलिए पढ़ नहीं पाती थी धरतृचन्द्र मेरे धरिबे में उसकी कछ सहायता करते थे।

उसे धरतृ बामू मा कह करके सम्मोषित करते थे। धरतृ बाबू ने पत्र में लिखा था—तुमने घर बदलकर धण्ठा ही किया। क्या यह घर तुम्हें पमम्ब है? यदि न हो ता हो-एक रपया किराया ज्यादा देने पर धीर भी धण्ठा पर मिम सकता है। तुम किराये क लिए बिलता न करो क्योंकि हरिदास यह रपया देगा। तुम में वे किराया भी नहीं लेबे।

हरिदास धास्त्री ने इतत पर लिखा है कि 'धसस में मैं कुछ भी नहीं देना था धरतृचन्द्र ही मुझे धीध में रतृकर इम महिल्या की सहायता किया

करते थे ।

गरीब की बचा-बाखू

१२ फाब्रव १९३३ को उन्होंने अपने गाँव से एक पत्रमें लिखा था—
‘भानी-बामी में एक मस्साह का इलाज करते आ रहा हूँ । सारे घरों में टिककर भायोडीन लगाकर ‘भानिका’ पाने की व्यवस्था करके सेंक सवाने का प्रबन्ध कर दिया है । कम रात को उसकी नाम डूब जाने के कारण उस पर से नाथ बह गई थी ।

कुसे की मृत्यु पर शोक

अपने कल की मृत्यु पर उनकी खिताब शाक हुआ था और उस पर खिताब बीस पत्र लिखा था वह भी शत्रु बाबू के ही योग्य था । उन्होंने २८-४-२५ को झाबड़ा के अग्रत गाँव से लिखा था—‘तबियत ठीक नहीं है । मेरी बच नहीं रहा । गत बृहस्पतिवार के पहलू के बृहस्पतिवार का मैं लंबे डेका से यहाँ पहुँचा तभी उस बैलबलिया अस्पताल से मोटर बर बर से आया । घाँट ही बह बहूत बीमार हो गया । डाक्टरों ने कहा—बहुत तेज मेस्ट्राबटिस है । लगभग सात दिन साठ रात मैं बिना आए और छोड़ उसकी सेवा करता रहा फिर भी बृहस्पतिवार को प्रातः काल ६ बजे उसका देहान्त हो गया । अन्तिम दिन उसे बहुत कष्ट रहा । बुधवार को मैंने उसे अर्धवस्ती बड़ी बचा खिलाने की बेप्टा की मैंने बमबे से मुँह में बचा डालने की बहुत बेप्टा की पर बचा घेठ में नहीं गई । उसने मुझे क मारे मुझे काट लिखा । उस दिन घाँटी रात मेरे घने के पास मुँह रख कर वह किस कुटी ठरूँ पठा रहा । प्रातःकाल वह रोना बन्ध हुआ । वह मेरा २४ मधे का सगी था इस दुनिया में केवल उमी ने मुझे पहचाना था । अब उसने जाट लिया और सब लोग डर गये तब मुझे एबीन्द्रमाय की वह पंक्ति बारबार याद आने लगी—‘तुम्हारे प्रेम में आकाश है अखिलता नहीं है । उसके जाटने में आकाश का बर

अवहेमना नहीं थी। इसके पहले इतनी व्यथा मुझे कभी नहीं मिली। डाक्टर आदि कई मित्रों ने इलाज करने के लिए कहा यानी पायल कुत्ता काटे तो वा इलाज हाना चाहिए वह इलाज होना जरूरी था। २० इंचकामो में घात्र १० इंचकाम अंठम हुए १२ बाकी है वह भी पूरे होंगे। मनुष्य को जिज्ञासा ही पड़ेगा क्योंकि Your life is too valuable पर देखा जाय कि इस मृत्युवान जीवन का अन्त किम प्रकार होता है।”

गाँव वालों की सहायता से विपत्ति

इसी प्रकार उनक हृदय का परिचय गाँव में रहने समय गाँव वालों की सहायता करने के कारण उन पर जो विपत्तियाँ आई उनसे भी मिलता है।

१९३ के लगभग एक पत्र में उन्होंने लिखा—“गाँव में आकर रहने का अर्थ मिना मिस रहा है यानी बीकानी घोर पीड़ितारी मामलों में पैस मया है घोर अन्न काफ़ी पीड़-पुष कर रहा है। ३ मास तक मजे में मिलित्त निबिफार रूप में रहा पर आसदबता को यह महन नहीं हुआ इमनिमे के मिन पर सबाह हो गए। बड़े जमींदारों से मस ही कोई पार पा जाए, पर स्वामीय अस्पन्न सुत्र जोषबागों का दबाव न्यकर हाता है बहुत पुराने जमाने से मोगों के पास देवोत्तर जमीन जमी आई थी पर जो-बाग मस से बने हुए जोषबाग को यह महन नहीं हुआ। गरीब किसान गं कर हमारे पास आए तो मैं चुन पड़ा। मैंने यह बना दिया कि मैं इममें पड़ गया है तो छाड़ूंगा नहीं इसके बाद पीड़ितारी हुई। जमो जाने का पर अमट बडा हा है मोष रहा है कि यह किमी तरह मगम हा तो गाँव छाड़ कर भागूँ। मृम मिना कर बाहर महा जा सकता है।”

एक अन्य पत्र में भी इसी का त्रिक मिलता है। अमम मिना है कि मैं स्वयं अमिनुक्त ता नहीं बना पर दीदी के देवर का मृम अमिनुक्त

करते थे।

गरीब की दवा-बारू

१२ अगस्त १९३३ को उन्होंने अपने माँ से एक पत्र में लिखा था—
‘धमी-धमी मैं एक मस्साह का इलाज करके था रहा हूँ। सारे शरीर
में टिककर आयोडीन लगाकर ‘आनिका’ घाने की व्यवस्था करके सेंक
सगाने का प्रबन्ध कर दिया है। कम रात को उसकी नाव डूब जाने के
कारण उस पर से नाव बह गई थी।

कुत्ते की मृत्यु पर शोक

अपने कुत्ते की मृत्यु पर उनको जितना शोक हुआ था और उस पर
जितना वीर्य पत्र लिखा था वह भी गरुड बाबू के ही योग्य था। उन्होंने
२८ ४ २३ को हावड़ा के अपने माँ से लिखा था—‘तबियत ठीक नहीं
है। मेला अब नहीं रहा। गठ बृहस्पतिवार के पहले के बृहस्पतिवार का
में सबेरे डाका से यहाँ पहुँचा तभी उसे बेलगछिया अस्पताल से मोटर
पर घर से आया। प्रात ही वह बहुत बीमार हा गया। डाक्टरों ने
कहा—बहुत तेज वेस्टाइटिस है। लगभग सात दिन सात रात में बिना
लाए धीरे सोए उसकी सेवा करता रहा फिर भी बृहस्पतिवार को प्रात
काम ६ बजे उसका देहान्त हो गया। अन्तिम दिन उसे बहुत कष्ट रहा।
बुधवार को मैंने उसे जबर्दस्ती कच्ची दवा खिलाने की चेष्टा की मैंने
अमके से मुँह में दवा डालने की बहुत चेष्टा की पर दवा पैट में नहीं
गई। उसने गुस्से के मारे मुझे काट लिया। उस दिन सारी रात मरे गम
के पास मुँह रख कर वह दिन बुरी तरह राता रहा। प्रात-काल वह
रोगा बन्ध हुआ। वह मेरा २४ बच्चे का सगी था इस दुनिया में केवल
उमी ने मुझे पहचाना था। जब उसने जाट लिया और सब लोग डर गये
तब मुझे रबीन्द्रनाथ की वह पंक्ति बाप्यार याद आन गयी—‘तुम्हारे
प्रम में आघात है अबहेलना नहीं है। उसका काटने में आघात था पर

करहेनना नहीं थी। इनके पहले इतनी धन्य मुझे कभी नहीं मिली।
 डॉक्टर घाई कई नित्रों ने इलाज करके के लिए कहा यानी पागल कुत्ता
 फाँटे तो जो इलाज हाना चाहिए वह इलाज होना जरूरी था। २८
 इंचकर्मों में मात्र १० इंचकर्म सतम हुए, १= बाकी हैं वह भी पूरे
 गे। ननुप्य का बिमाना ही पड़ेगा क्योंकि Your life is too
 valuable, पर क्या ज्ञान कि इस मृत्युवान जीवन का अन्त किस प्रकार
 होगा है।”

गाँव वालों की सहायता से विपत्ति

इसी प्रकार उनके हृदय का परिचय गाँव में रहने समय गाँव वालों
 की सहायता करने के कारण उन पर जो विपत्तियाँ आईं उनमें भी
 निमग्न है।

१९३ के समय एक पत्र में उन्होंने लिखा—“गाँव में घाबर रहने
 का अच्छा मिमा मिल रहा है यानी बीकानी घीर चौकवादी मामलों में
 येन गया है घीर घब काटी दीह-दुप कर रहा है। ३ मास तक मज में
 निमित्त विधिकार रूप में रहा पर घामदेवठा को यह महल नहीं हुआ
 इसलिये के गिर पर सबाग हा गए। बड़े जमीनदारों से मस ही काई पार
 पा जाए, पर स्थानीय धर्मम लुड जोगदारों का बबाक भयकर होता है
 बहुत पुराने जमान से लोगों के पाम देवालय जमीन जली घाई थी पर
 बा-बाग माल से बन हुए जोगदार को यह महल नहीं हुआ। गरीब
 बिमान रा कर इनारे पाम घाए तो मैं सुन पना। मैंने यह बठा दिया
 कि मैं इनमें पड़ गया है ता छाड़ूया नहीं इनके बाद चौकवादी हुई।
 जमा जाने दो पर झमट बटा हो है मोष रहा है कि यह जिमी ठरू
 मम हा ता गाँव छोड़ कर भायूँ। कुम मिना कर गहन महा जा मकता
 है।”

एक अन्य पत्र में भी इसी का बिक निपता है। उसमें लिखा है कि
 “मैं स्वयं धर्मियुक्त तो नहीं बना पर बीपी के देबर का मूम धर्मियुक्त
 है।”

करार बिये जाने के कारण अस्थान्ति भी कम नहीं हुई। लिखना-पढ़ना तो लतम सा हो रहा है।

अफीम का व्यसन

शरत्चन्द्र कभी अपने जीवन की बातों को छिपाने के प्राची नहीं थे। वे अफीम खाते थे और बराबर इस सम्बन्ध में लोगों से कहते थे कि मैं अफीम खाता हूँ। १८-३ १४ को एक पत्र में उन्होंने लिखा था—“मैं मयंकन अफीमखी हूँ। तिस पर खूनी पेचिस है। कुछ भी हा इस देश में मीगास्टिन फल से मह रोग आराम हो जाता है जब मैं उसे खा रहा हूँ, पेचिस लगभग जाक है।

५ १ १३ को एक दूसरे पत्र में लिखा—“मुझे इतना दुःख घायब इसलिये मिला कि मैंने अफीम छोड़ने की चेष्टा की। जब मैं कभी अफीम छोड़ने का नाम नहीं मूंगा। जब अच्छी तरह अफीम फिर से शुरू किया तभी पर अच्छा हुआ। जब बोड़ी मात्रा और बढ़ाई तो घायब हाव भी ठीक हो जाए, अफीम कम करने के कारण दिमाग खाली-खा हो गया था फिर धीरे-धीरे भरता जा रहा है। क्या बीज है। घायब लोगों को भी शुरू करना चाहिये। मैं समझता हूँ कि हर शरीफ घायबी को अफीम खाना चाहिए।

१९३१ के लगभग शरत् बाबू बहुत बीमार थे तब भी उन्होंने लिखा था—“पर पुकार जा रही है। पाषेय भी तैयार है। सोते-सोते और जपते-जागते पढ़ना शुरू करता हूँ। बहुत दिनों का अम्यास है। बहुत अफीम रक्त-मांस में मिला हुआ है। बहुतों के निकट हार मानी है पर मैंने घायकारी के लोगों का हारना था। इसलिए भरोसा है कि नीब में भी पाषेय का रस मूँह से बह कर अमीन पर नहीं गिरेगा।”

भोजन विज्ञासी

शरत् बाबू लकड़े भोजन-विज्ञासी भी थे। इस बात को उन्होंने पचा-

राजी देवी को मिले गये ३० बंशाल १९२८ के पत्र में इस प्रकार लिखा है— 'एक तो ब्राह्मण है तिस पर बूढ़ा इसलिये कोई मुझे यत्नपूर्वक खिलाये इसे मैं बहुत पसन्द करता हूँ यह मेरी रचनाओं में बार-बार आया है और लोग यह समझते हैं कि इसमें मैंने अपनी बात ही कही है।

पर उनकी इन्दि बौद्धिक भोज्य में विशेष थी। बहुत कम लोग जानते हैं कि राज्य बाबू चित्रकला में विसर्ज्य रहते थे।

चित्रकारी की साधना

राज्यचन्द्र उपन्यासकार बने पर उन्होंने बहुत तरह की साधना की थी जिसका परिचय उनके पत्रों से मिलता है। २२-१-१२ को पत्र मिलते हुए उन्होंने लिखा था— 'तुम्हें एक और खबर देनी है, जब तीन साल पहले घड़कन की बीमारी का पहला लक्षण सामने आया तो मैंने पहना छोड़कर घायस पेंटिंग शुरू किया। मठ तीन सालों में मैंने बहुत से घायस पेंटिग बनाये थे जो जस गये हैं बस चित्रकारी की सामग्रियाँ बच गई हैं। अब यह बताओ कि मैं किस माइन में जाऊँ? तीन जाइयें हैं— उपन्यास इतिहास और चित्रकारी। यह बताओ कि कौन-सा फिर से शुरू करूँ ?

उनकी इस चित्रकारी के बारे में बर्मा में रहने वाले उनके मित्रों ने बहुत कुछ लिखा है। उनके प्रथम चित्र का नाम 'राजप-मम्बोदरी' था पर उनके चित्रों में 'महादेवता' अधिक प्रसिद्ध हुआ था। उनके रंगत के मित्र योगेश्वर नाथ सरकार ने लिखा है कि उनका सप्रथम चित्र 'राजप मम्बोदरी' कुछ प्रसिद्ध था पर 'महादेवता' उस दोष से मुक्त था। साथ ही प्रतिरिक्त रोगनी जानने से बहुत उज्ज्वल था ऐसा भी नहीं। धामोष और छाया का सम्बन्ध इनमें इस तरह परिष्कृत हुआ था कि यह बिसतुन ही अपरिपक्व कृति हा ऐसा नहीं कहा जा सकता बल्कि उसमें गरीर बिद्या का ज्ञान परिप्रेक्षित और पृथग्भूमि का आह्विया मधी विद्यमान था। कलाकार का रंग सम्बन्धी ज्ञान भी कम था ऐसा नहीं कहा जा सकता।

कुममिताकर निसर्ग और मनुष्य का चित्र एक साथ मिलकर बँधा ही हुआ था वैसे होना चाहिए और 'उपस्थिमी महाप्रेता का चित्र प्रकृति के कल्पनाशील पुत्र शरद्वन्द्व की कृपा से निकल कर सामने आया था। वर्षों के दिनों में नदी का किनारा बँबसा भागूम हो रहा है, उस पार मेमो के भार से झुका घाकास और भी स्पष्ट था इसी की एक बगस से मजाया हुआ सूर्य कुछ ठाक-भौंक रहा है। नदी तट पर पेड़ के नीचे बास जोसे सघस्माता उपस्थिमी महाप्रेता है, माधो रोटी हुई प्रकृति देवी का ही एक बीठा-आमता चित्र है।'

२५ जुलाई १९१३ को उन्होंने फिर लिखा—'मैं वेष्टिय करता हूँ घायल वेष्टिय भी समझता हूँ और इस सम्बन्ध में मैंने बहुत काफ़ी पुस्तकें पढ़ी हैं। उसी पत्र में उन्होंने लिखा—'मैं एक घाक घाल टूट हूँ संघीत चित्र बर्षन काष्म नाटक, उपन्यास सभी विषयों में थोड़ा-थोड़ा आगता हूँ। १—१३ को उन्होंने फिर एक पत्र में लिखा है कि बुक है कि 'प्रमुख चित्रकार का मुसचित्र नहीं देखा' नहीं तो इस तरह से उस पर तुम्हारी पत्रिका में टिप्पणियाँ से सकता था जिससे मामूम होता कि यह किसी चित्र व्यवसायी की लिखी हुई है। उसी पत्र में फिर लिखा है कि चित्र पर राय बनी करना सीत की स्वर लिपि का दोप-युग बताना वैज्ञानिक आलोचना तथा साहित्यिक आलोचना भी मैं कर सकता हूँ फिर ब्यम् के साथ लिखा—'हाँ मेरे बस की बात यह नहीं है कि ठाम्रतिष्ठित बतवैह पर विर्णु।'

पहले जिस महाप्रेता चित्र का बर्षन आया है उसके सम्बन्ध में १०-१-१३ को फिर लिखा—'मेरा प्रसमाप्त 'महाप्रेता' घायल वेष्टिय फिर समाप्त होने की ओर था रहा है।'

संगीत-प्रेम

संघीत में भी उनकी विशेष रुचि थी। उन्होंने श्री विलीयमकुमार राज

को २२ मार्च १९३३ में लिखा था—“तुम्हारी पुस्तक और छोट-मा पत्र लिखा। २४ पंटे में पुस्तक बढ़कर समाप्त कर दी। बहुत अच्छी लगी। पर दो एक कमियाँ भी हैं। भारत के बड़े-बड़े मकानों और बजानवालों में अपना नाम न बलकर मैं कुछ बुद्धिमान कुप्रा पर यह मैं निश्चित रूप से जानता हूँ कि यह तुम्हारी इच्छाकृत भूम नहीं है ध्यान न देने के कारण ही हो गई है और इसमें भी संशय नहीं कि भविष्य में तुम इन भूम को सुधार दोगे। राय बहादुर मजूमदार महाशय क माए हुए ‘रंगी जवा मुटा-मुगो’ गीत का तुमने उल्लेख नहीं किया है वह भी होना चाहिए। वे भी बुझी हुए हाँसे ऐसा मेरा बिदवाय है। यह वा रही पुस्तक में जा कमी है उसकी बात पर एक मतभेद भी है तुमने पूजनीय रवीन्द्र नाथ का एक उद्धरण वा किया है—‘हम लोग जनता के प्रति भडा नहीं रखत इसीलिए उनक लिए बाहर क प्रीगन में बना-बबना की व्यवस्था करत है और उन्हें सम्भेन नहीं परोमते। इत्यादि-इत्यादि। यह बात तुमने न अच्छी समझी है और इनसे संलग्न की मानसिक उन्नयता और निरपेक्षता भी सामने आती है पर असन में इतनी समत बात कोई हो नहीं सकती। शिक्षा सम्पत्ता और संस्कृति के लिए सन्धस ही चाहिए, बना-बबना विमाने की बजा बरन पर सम पट ही बुवेगा और जनता मान छोटे भाग है वे बना-बबना पर हो प्राइव करत है।

विज्ञान में अमिश्चि

उन्हें विज्ञान से भी बहुत प्रेम था। वे बराबर विज्ञान की पुस्तकें पढ़ा करते थे और उनमें रस लेते थे। १९१५ में भारतवर्ष-पत्र में ‘जड़ जगत’ नामक एक लेख छपा था जिस पर उन्होंने पत्र के प्रकाशक को २१-१२-१९१७ को लिखा था— अच्छा एक बात है यदि ‘जड़ जगत’ नामक लेख का कोई प्रतिबाह करना चाह मान सीखिये मेरी अपनी ही ही’

१ शरद रावू कर्कर धरवा बरिब मतेवा हेवी क नाम से भी लिखते थे।

से मैं कुछ सिखा भूँ तो क्या भाप उस प्रतिभा को छापेंगे ? धरतृचन्द्र भाप हम पर सारी बातें सोच सौजिये । जर्मनी के सभी पंडितों ने यह नहीं माना है कि सिम्बल या कल्पना की प्रतिभा को छानने रण कर ही सब कम कम रहा है । यह तो मैंने एक उदाहरण दिया आखिर उनकी राय का कुछ मूल्य तो है ही इसके बसावा हेल्म होस्टज ने स्टैण्डर्ड के सम्बन्ध में उतना ही कहा जितना मेजर ने दिखाया है ? क्या सब ने उसे मान लिया था ? भाप ही बताइए न ? धीर यह तो सिर्फ पदार्थ विद्या की बात हुई ।”

उपक इस विज्ञान-प्रेम के सम्बन्ध में प्रत्यक्ष बहियों के भी कई संस्मरण हैं । प्रेमोद्भ मित्र ने धरतृचन्द्र के सम्बन्ध में एक संस्मरण में लिखा है—“सुदूर ब्रह्मदेश से आकर कहानी के इस जादूगर ने एकएक एक घुम प्रयाण में अकिञ्च धीर अमलकृत कर दिया धीर सब तोप उन्हीं के द्वारा सृष्ट बहियों के सकेत का अनुसरण करते हुए उन्हें पहचानने की चेष्टा करने लगे । सतों, उपेन्द्र जैसे यहाँ तक कि बेबदास में भी हमने उनको खानने की चेष्टा की इती के साप-साप हमने उनके भित्तु कुत्ते की बात भी सुनी थी । उनके कमरे में एक तरफ बम्बूक टेंगी थी दूसरी तरफ खाद्य भान्सा तो बलमारियों में विज्ञान की अपभ्रित पुस्तकें थी ।”

धरतृचन्द्र ने एक पत्र में राजारानी देवी को लिखा था—‘घसल में धीरी में कोई साहित्यकार नहीं हूँ मेरे लिए तो साहित्य-सृजन बँधे ही है जैसे एम० एच०डी० पास करके नकामत करना । साहित्य में मुझे कभी भी उतना ध्यान नहीं मिला जितना विज्ञान में मिला । इती के लिए धाबक में तैयार ही हुआ था पर वहाँ के केर के कारण सब कुछ बदल कर ही रहा । सोचता हूँ कि यदि फिर कभी जन्म हो तो ऐसी भूल न हो ।”

हम पर टीका करते हुए श्री गोपासचन्द्र राव ने लिखा है कि—‘साहित्य में उन्हें ध्यान नहीं मिलता था यह तो सहज रसिकता थी पर विज्ञान

में भी उन्हें प्राणम्य मिलता था इसमें कोई सन्देह नहीं क्योंकि उन्होंने कभी विज्ञान के बहुत से ग्रन्थ पढ़े थे। इसके अलावा सभी समय उनकी प्रसमारियों में वैज्ञानिक ग्रन्थ राम रहते थे।

वर्ष्णव साहित्य में निष्णात्

प्रारम्भ से ही शरत् बाबू को वैष्णव साहित्य से बड़ा प्रेम रहा। १५-११ १२ को एक पत्र में अपने प्रकाशक को लिखा था— 'आपने हम 'वैष्णव चरितामृत' पढ़ने के लिए दिया था पर उसे मैंने सौटाया नहीं। घात समय याद ही नहीं पड़ा। इसके बाद यहाँ जसा थाया। पुसिस ने खीच-साचकर उसकी बन्धि मेरी सब पुस्तकों की ऐसी हासत कर बी है कि य धब बिकने लायक नहीं रहीं। जिस पर जाने काहे के बाय लग गय हैं। सुसौबत तो यह है कि इसका धाम बहुत है और दूसरे की पुस्तकों हैं मैं बहुत लग्नित हूँ पर कोई उपाय भी नहीं बीबता। इसने अलावा और भी बहुत से वैष्णव ग्रन्थ पढ़ने के लिए दिया था। इन सारी किताबों का कितनी बार पढ़ चुका हूँ और रोज ही पढ़ता हूँ यह मैं नहीं कह सकता। बात तो यही थी कि ये सौटा बी जायें।

पौंगापन्य का विरोध

शरत्-साहित्य में बराबर पौंगापन्य के विरुद्ध लिखा गया है। बसात के एक ग्रन्थ स्वनामधन्य महापुरुष श्री धरत्बिन्द के लिप्यों के प्रति शरत् बाबू के मन में कभी अशा नहीं रही यह सनक कुछ पत्रों में बहुत स्पष्ट रूप से सामने आता है। दिल्लीपट्टुमार राम को १३ १ २६ को एक पत्र में उन्होंने लिखा— मैं सुनता हूँ कि 'वारीन्द्र' जिस किसी पैड़ का पत्ता नाब क नामन एपड़वर जिस फून की भी गम्भ मूचना चाहो मुधा सबता है। उपेन्द्र' का कहना है कि समन यह पुर श्री धरत्बिन्द से भार लिया है।

१. श्री धरत्बिन्द के छोटे भाई स्व. सुदमिन्द्र धरत्बिन्दारा का (1877-1897) नाम।

२. सके २ श्री सुदमिन्द्र धरत्बिन्द (1) के।

घाते समय तुम भी इसे सीख लेना। एकाएक धरविन्द मानेंगे नहीं पर तुम भी पीछे पड़े रहना। कुछ दिनों तक उनकी 'सन्ध्यामन की बामुरी' की तारीफ के पुस बाँच देना और हर समय उस पुस्तक को हाथ में रखना बीच बीच में यह कहना कि इतने दिनों तक तुमने यह पुस्तक नहीं पढ़ी इसका बड़ा अफसोस है बहुत सम्भव है कि इतने ही से तुम यह विभूति मार पाओगे। उत्तर भारत में भूमत समय यह हर बहुत काम आयेगा। सुना है कि अजिमेकरण मिट्टी को भीमी बना सकता है। बहुत देर तक मिट्टी भीमी नहीं बनी रहती पर पाँच-साठ घंटे तक भीनी की तरह देखने में और खाने में हो जाती है। इसे भी निश्चित रूप से सीखने की चेष्टा करना। एकाएक रास्ते में प्रवास में खपा-पीसा कम पक बाय तो समझ पय न बस? इसे सीख ही लेना है। अजिमेकरण सरस और अजिमे पाइमो है। यदि एकदम ही सिखाने से इनकार कर दे तो मूठ और चुड़ैलों की कहानियाँ कहते रहना और कसम खाकर कहना कि तुमने अपनी भाँज से चुड़ैल देखी है यह किबा कि बस सोचना नहीं पड़ेगा बिना किसी आवास के ही पुर हाथ लग जायगा। और यदि तुमने वे दोनों बातें सीख ली तो फिर उस आश्रम में मल्ल मारने की जरूरत क्या है?"

इनो पत्र में 'पुनरच' करके फिर उन्होंने लिखा था— इन बातों डुरी को सीखना ही है, पीछे-बेनीके बहुत काम आयेगे। जो कुछ भी हो अच्छी धन आधो। तुम मेरा विश्वास करो सन्ध्यामन होने में धन कोई मुल्त नहीं रह गया।"

इसके सप्ताह ही साल बाद ४ कार्तिक १९३८ (बंयला सन्) में सरत् बाबू ने एक पत्र में लिखा— श्री धरविन्द के सम्बन्ध में मैंने कहीं यह बात नहीं कही। उन पर बेधवासियों की बड़ी धरुा है क्या मैं ही इससे धनम हूँ? पर आश्रमवासियों पर मेरा मत सुवसन्न नहीं है। कुछ तो 'त— की बाटा से और कुछ दूसरे आश्रमवासियों के सम्बन्ध में मुझे जो व्यक्तिगत जानकारी है उससे मेरे मन में यह धारणा उत्पन्न हुई

है। इसके असावा तुम्हारा ध्यायम में जाता मुझे बहुत अक्षरा। जब तुम आई. सी. एस. या कानून नहीं पढ़े तब भी अक्षरा या पर जब तुम संगीत और साहित्य को अपना लिया तो वह लोभ दूर हो गया। मैंने सोचा था सब लोग नौकरी करेगे और हाकिम या बैरिस्टर के रूप में लोगों को बेन बेचते रहेगे यह क्यों? तुम्हें रोटी-दान की चिन्ता नहीं है, यदि भारत की कमा और सिल्व को विदेशियों की प्राप्ति में बाधा सको इसके गतानुगतिक मार्ग से अपनी बुद्धि से एक नया मार्ग विकास सको तो क्या यह देश के लिए कल्याण या औरन की वस्तु नहीं होगी? तुम्हीं से सुना था कि विदेश में 'सिम्फनी' नाम की एक वस्तु है यह बहुत बड़ी बात है वह सचमुच ही बड़ी है और तुम अपने देश के संगीत में उसे जाना चाहते हो। इसके बाद मैंने एकाएक सुना कि तुम सब कुछ छोड़कर बेराबी हो गये। एकाएक ऐसा जान पड़ा जैसे मेरी बड़ी भारी वैयक्तिक हानि हुई है।

"मैं सुनता हूँ कि अनिसवरण मिट्टी को भीनी बना सकता है। क्या यह बात सही है कि ध्यायम की मारी भीनी बड़ी सम्प्राई करता है? मुझे इस पर विश्वास नहीं है क्यों कि यदि उसे यह गुण मामूम होता तो फिर वह ध्यायम में रहता ही क्यों है कलकत्ता में धाकर जब स भीनी की एक दुकान खोल सकता था।

बारीश्रुमार में अक्षर भेंट होती है। वह कहता है कि वह अब अक्षर मिट्टी के आस में है। इतनी बड़ी पाश्चिमीयों के बीच उनकी धारणा आज भी पिछड़े से नहीं निकली यह उनका अहोभाव है पर तुम लोगों की 'मदर' के सम्बन्ध उसने गम्भीर अज्ञान दिया है। वह कहता है मैंने आदर्शयज्ञक मनुष्य रूप में नहीं जाना। कहता है कि उनकी मूर्ख दृष्टि एक अद्भुत बात है। वह एक तरफ बहुत ही महन्ती हैं दूसरी तरफ अनुशासन के सम्बन्ध में भी बहुत गतक हैं साथ ही बुद्धि अक्षर है। इन धारणा की हर बात उनकी धारणा के सामने रहनी है। उनके धारणा या उपदेश के अतिरिक्त वहाँ कुछ भी नहीं हो सकता। इसीलिए बाहर में

एकएक जो लोग बात हैं वे उनके सम्बन्ध में तरह-तरह की उम्मीद-सीधी पारना लेकर सौंठते हैं ।'

इसी पत्र में उन्होंने पुनरावृत्त करके ये शब्द लिखे थे— 'मनिलवरण के द्वारा चीनी बनाने की खबर कहीं तक सही है यह जकर मिलना । यदि गीला सको तो जाया की चीनी का बायकाट बहुत आसानी से किया जा सकता है वह बेस का एक महत् काव है ।

इसके तीन साप्ताहिक ३ मास १३६१ को उन्होंने एक पत्र में लिखा— 'श्री परबिन्दू के हाम की निखी हुई बिट्टी में मन्मथुबंकर रख दो । यह एक रत्न है ।'

यहाँ चाहे घरों में यह बात बिना जाए कि इन दिनों 'आकाश' के प्रबन्धी अनुवाद की बातचीत चम रही थी बिलीपकुमार राव अनुवाद करने वाले थे और परबिन्दू ने यह बिन्दुयाम दिखाया था कि वे उस अनुवाद का मौख देवे । कम-से-कम ऐसी कुछ आशा थी । शरद्वन्द्व की परबिन्दू की विद्वत्ता और प्रबन्धी ज्ञान के सम्बन्ध में बहुत प्रबन्धी तरह जानते थे ।

शरद्वन्द्व ने उक्त पत्र में ही लिखा था— 'जब श्री परबिन्दू स्वयं उसे देख लेने का संकल्प कर चुके हैं तो अनुवाद तो प्रबन्धी ही होगा पर पुस्तक (निष्कृति) में ऐसा क्या हुआ है मुझे नहीं भामूम । शरीर श्री परबिन्दू का यह प्रबन्धी लकी यह मैं नहीं जानता । कम-से-कम न लमरी तो मैं न तो विस्मित होता और न खुन्न ही होता । जब तुम 'आकाश' का प्रचार करावे तभी मैं आशा करूँगा कि सामय परिचय के लोग एक बंभला कबाकार को भ्रष्टा की दृष्टि से देख सकेंगे । यदि तुममें उद्योग कायम रहा और श्री परबिन्दू का आशीर्वाद रहा तो यह प्रबन्धी नहीं कि एक दिन यह सम्भव ही आए । यही आशा रखता हूँ ।

श्री परबिन्दू की लभ्य की प्रार्थना सधमुच ही तुम्हारे लगी । इसमें कोई संशय नहीं कि वे एक बहुत बड़े कवि हैं ।'

बंगला साहित्य और मुसलमान

यद्यपि बंगला साहित्य में मुसलमान लेखकों की कमी नहीं रहा है फिर भी इस क्षेत्र में ब्रिताने हिन्दू धर्म से मुसलमान नहीं था। इस सम्बन्ध में कई समस्याएँ हैं। श्रीमती जहानारा बीमरी को एक पत्र लिखते हुए भारत बाबू ने इस सम्बन्ध में कुछ प्रश्नों पर रोचनी वाली थी। उन्होंने लिखा था— 'तुम अपनी साप्ताहिक पत्रिका में कुछ लिखने के लिए अनुरोध किया है। मैं सोच रहा था कि साहित्य के अर्थ रूप पठन सीमा तक धारि पर जब तक बोझी बहुत आसाचना हुई है पर एक दिशा में लुप्त कर किसी ने कुछ नहीं कहा वह है साहित्य के प्रयाजन तथा उसको कम्पासकारी शक्ति के सम्बन्ध में। धारद इस बात का बहुत न मोग स्वीकार करते कि साहित्य रस के अरिप में पाठक के चित्त में जैसे मुक्तिमत्त आनन्द की मृष्टि होती है उसी तरह वह मनुष्य के अनेक अन्त निहित कुसम्भारा की जड़ों पर भा जोर कर सकता है उसी के फलस्वरूप मनुष्य महान होता है उसको इच्छा उदार होती है उसका महिष्णु तथा दीम मन साहित्य रस की गर्जन सम्पत्तियों से वेदबन्धन हो जाता है। पर बंगाल के एक बड़े हिस्से में उसका अस्तित्वम देखा जा रहा है। साहित्य मृष्टि के साथ-साथ यहाँ शोक और बदना उत्तरात्तर धीम बढ़ती ही जा रही है। मैं तुम्हारे मुसलमान समाज की बात कह रहा हूँ यह भी देख रहा हूँ कि कुछ शोक गुस्से के मारे भाषा को ही विह्वल करना चाहते हैं यह नहीं कि इसके लिए उनका पाम बहान नहीं हैं, पर शोक मान्य होने पर वे स्वयं ही दण्डे से विह्वल बहाने से अधिक कुछ भी नहीं है। जिस कारण से भी हो इतने दिनों तक बंगाल के हिन्दू ही साहित्य-वर्षों करते आये हैं मुसलमान समाज गुरीयवास तक इस तरह से उदासीन था पर साधना का फल था होता ही है अनन्तिले बाधा देवता न इनको भी कर दिया है। मुझे यह साहित्य-रसिक मुसलमान साहित्यिकों की बात मुझ में है पर किसी दिन भी वह विरक्त नहीं हो सका। इसी लिए किर्मा-किर्मा न इतना

नाम दिया है हिन्दू साहित्य पर धफ्तोस कि अभिव्यक्ति को मुचित नहीं कहा जा सकता यद्यपि कहा जा सकता है कि कुछ साहित्यकारों ने मुसलमान चरित्र चित्रित किया है और कहीं-कहीं इतने बड़े विराट् समाज के सुख-दुख का कुछ ध्यौरा भी दिया है फिर कैसे उनकी सहानुभूति मिले और कैसे उनका हृदय छु सके ? हृदय छूना तो दूर रहा बल्कि विपरीत परिणाम ही हुआ है फलस्वरूप जो हानि हुई है उसके प्रतिकार का रास्ता भी खोजना पड़ेगा ।

कुछ समय पहले मेरे एक महीन मुसलिम मित्र ने इस प्रकार का धफ्तोस व्यक्त किया था ।—मे स्वयं साहित्यसेवी है विद्वान् अध्यापक है घाब भी उनके हृदय को साम्प्रदायिक मस्तिष्कता यत्ना नहीं कर सकी और न उनकी दृष्टि ही भुँघरी हो सकी बोलते हिन्दू-मुसलमान ये दो बृहत् जातियाँ हैं । एक ही देश में एक ही वातावरण में एक ही पड़ोस में रहते हैं धारम्य एक ही भाषा बोलते हैं पर इतने बिलग और बैधाने है कि सांघत पर धारधर्य मासूम होता है । संघार और बीजन धारध के प्रयोजन में बाहर का नेग-देग कुछ-कुछ है पर भीतर का नेग-देग एकदम गदारुड है कहा जाय तो कोई धरमुक्ति नहीं होगी । ऐसा नवी हुषा इस मकेपका का प्रयोजन नहीं है पर धाब इस विष्लेख का धरुड और इस दुबकर जाई को मिटाना ही बड़ेपा नहीं तो किसी का फस्मान नहीं है ।

मैंने कहा—मैं इस बात को मानता हूँ पर इस धसाध्य साघन का तपाय क्या है ?

उन्होंने कहा—केवल एक है धीर बह है साहित्य धाप मोय हमें बीज भीजिये स्नेह और सहानुभूति है हमारी बात कहिये केवल हिन्दुधों के लिए हिन्दू साहित्य की रचना न कीजिये । मुसलमान पाठकों की बात जरा याद रखिये । धाप देखेंगे कि बाहर मेर जितना भी धविक धिकार्य पड़े फिर भी बोलों की धिराधा न एक ही धागन्द और बैदना का धुन बहता है ।

मैंने कहा—यह मुझे मासूम है पर धनुराय के साथ धिराध, प्रबंधा

के साथ तिरस्कार, अन्धी के साथ बुरी बात कहना साहित्य का अपरिहार्य अंग है। इसे तुम न तो ग्रहण करोगे और न खमा करोगे। चायद ऐसे बंड की व्यवस्था करोगे जिसे सोचने पर भी रोंगटे लड़े हो जाते हैं, इससे जो कुछ है वह कम-से-कम निरापद तो है।

इसके बाद हम दोनों कुछ देर तक चुप रहे, अन्त में मैंने कहा—तुम लोगों में चायद कोई-कोई कहे कि हम कायर हैं तुम लोग बीर हो। तुम लोग हिन्दू की क्रम से निन्दा बर्दाश्त नहीं करोगे और प्रतिशोध भी जो सोये, वह हृदय बर्से का होगा। यह भी मानना है कि व्यक्तिगत रूप से तुम लोगों को बहादुर मानने में हमें आपत्ति नहीं है। तुम लोगों के सम्बन्ध में हम लोगों को भय और संकोच सचमुच अधिक है पर यह भी यथाता है कि यदि कभी तुम लोगों की बीरत्व की धारणा बढती तो देशाय तुम्ही लोग सबसे अधिक हाथि उठा चुके हो।

तरुण मित्र दुस्री हुए बोले—क्या इस प्रकार असहयोग हमें सा चसेगा ?

मैंने कहा—नहीं हमें सा नहीं चसेगा क्योंकि जो लोग साहित्य के सेवक हैं उनकी जाति और सम्प्रदाय असम नहीं है, वे मूलतः और आन्तरिक रूप से एक हैं, इस सत्य की उपसम्भि करके उस अबाधित सामयिक लार्डे को तुम्हें पाटना पड़ेगा।

मित्र ने कहा—अब से यही चेप्टा कर्सेगा।

मैंने कहा—करना। अपनी चेप्टा पर जगतीन्दर का आशीर्वाद प्रति दिन अनुभव करोय।

समाज-सहित्य

धरदुषण्ड राजनीतिक धन के अतिरिक्त सामाजिक क्षेत्र में भी अपने ढग से ही चसते थे। २६ ६ १६ को एक पत्र में उन्होंने अपने प्रकाशक को लिखा— आप चायद जानत हों कि इस शुक्रवार से बाद के शुक्रवार को मेरी मांजी की धारी है। इसमें सारी जिम्मेदारी मुझी पर है और येरी

सारी बिम्बेदारी घाप पर । इतने दिनों तक मैं घापको बताया नहीं कि घपन गाँव में मैं समाज से बहिष्कृत हूँ इसीलिए ब्याह-सादी के मौके पर मुझे जाना नहीं चाहिये । और इस पर मैं नहीं सोचता हूँ क्योंकि वे लोग भी यही चाहते हैं कि मैं स्पये वू पर हुप्ट रूप से वे यह चाहत हैं कि मैं न जाऊँ । ४०० स्पये की कमी पड़ रही है । मुझे यह खबर चाहिये ।

इस पर श्रीगोपालबन्धु राम ने यह टिप्पणी जोड़ी है—“सरत्बन्धु न मेग्निपुर जिले के कृष्णदास धबिकारी की कन्या हिरण्यमयी देवी से घापी की थी । उन्होने ब्याह के समय गाँव-रिस्लेदारों को खबर नहीं दी इसीलिए उस ब्याह की बात बहुत कम लोग जानते थे । जब सरत्बन्धु रंगूम से गाँव घर लौटे तब भी कुछ लोग उस बात पर घटकस मिझाते थे कि हिरण्यमयी देवी पता नहीं कहीं की किस जाति की हैं पर सरत् बाबू ने यह घाबत थी कि कोई मूठ बीसे तो वे उसका प्रतिवाद नहीं करते थे और बिना कुछ कहे मजा लेते थे । उनके इत स्वभाव का प्यारवा उठाकर ऐसे लोगो ने घन्त तक उन्हें गाँव घर के समाज से निकाम दिया था ।”

कालानुक्रमक ग्रन्थ-तालिका

१९१३	मिठम्बर	बङ्गदिवि	(उपग्याप्त)
१९१४	मई	बिराजतहृ	()
	जुलाई	बिन्दुर छेपे तथा	
		अग्याम्य गल्प	(गल्प समष्टि)
	अगस्त	परिचीता	(गल्प)
	मिठम्बर	पञ्चित महालय	(उपग्याप्त)
१९१५	दिसम्बर	मज्जविदि तथा	
		अग्याम्य गल्प	(गल्प समष्टि)
१९१६	जनवरी	पल्मी-अमात्र	(उपग्याप्त)
	मार्च	अन्द्रनाथ	(उपग्याप्त)
	जून	बेङ्गुळर विल	(गल्प)
	दिसम्बर	अरुणार्थीया	(गल्प)
१९१७	फरवरी	वीराम्भु—अयमपत्र	(उपग्याप्त)
	जून	देवशान	()
	जुलाई	मिष्टुष्टि	(गल्प)
	मिठम्बर	कापीनाथ	(गल्प समष्टि)
	दिसम्बर	अग्निहोत्र	(उपग्याप्त)
१९१८	फरवरी	स्वामी	(गल्प समष्टि)
	२ मिठम्बर	दत्ता	(उपग्याप्त)
	२६ मिठम्बर	वीरानन्द-द्वितीयपत्र	(उपग्याप्त)
१९२०	जनवरी	उदि	(गल्प समष्टि)

	मार्च	गृहबाह	(उपन्यास)
	अक्टूबर	बामुनेर मेये	(")
१९२३	अप्रैल	नारीग मुस्य	(सन्दर्भ)
	अगस्त	देना-याचना	(उपन्यास)
१९२४	अक्टूबर	नब-विधान	(')
१९२५	मार्च	हरिसयमी	(गल्प समष्टि)
	अगस्त	पयेरवाबी	(उपन्यास)
१९२७	अप्रैल	धीकान्त—तृतीयावर्ष	(उपन्यास)
	अगस्त	पोडवी	(देना-याचना का नाट्य रूपान्तर)
१९२८	अगस्त	रमा	(पस्ती-समाज का नाट्य रूप)
१९२९	अप्रैल	उस्सैर बिरोह	(सन्दर्भ)
१९३१	मई	छिप प्रस्त	(उपन्यास)
१९३२	अगस्त	स्वदेश और साहित्य	(सन्दर्भ संग्रह)

राजनीति :—भाषार कथा (भाषण हाबड़ा जिला कांग्रेस कमेटी २४ जुलाई १९२९) स्वराज्य साधनाय नारी (भाषण शिवपुर इस्टी-ट्यूट पीप १९२८) शिक्षार बिरोध (१९२८ में गौड़ीय सर्वबिद्या धामतन में पठित) स्मृति कथा (देराबन्धु के सम्मन्ध में) अग्नि मन्दन (१९२८ के जून में देराबन्धु को दिया गया)।

साहित्य :—अविष्यत् वंग-साहित्य (बगिछास छाबा साहित्य परिषद् का अमितलनत भाषण ज्येष्ठ १९३३) गृह विष्य सम्वाद ('अमुना' फरव्रुन १९२०) साहित्य और नीति (नबिया छाबा साहित्य परिषद् के वार्षिक अविबेधान में दिया गया भाषण १० अगस्त १९३१) साहित्य घाट और दुर्नीति (१९३१ अक्टूबर मास में मुंधी र्वज में सम्पन्न बबीय-साहित्य-सम्मेलन के साहित्य छाबा के समापति के रूप में दिया गया भाषण) भारतीय उच्च संघीति ('भारतवर्ष')

फरवरी १९३१) आधुनिक साहित्य के अन्तर्गत (भाषण दिवसपुर इन्स्टीट्यूट १९ आपाठ १९३०) साहित्य के रीति और नीति ('वस-बाजी' आदिबन १९३४) अन्तिमभाषण (१९३१ भाषण में १९३१ जन्मदिन के उपलक्ष्य में यूनीवर्सिटी इन्स्टीट्यूट) अन्तिमभाषण (१९३० में ५३वीं जन्मतिथि के उपलक्ष्य में प्रेसीडेन्सी कासेज बंकिम चरतु समिति में) यतीन्द्र सम्बर्धना रोप प्रदान (मुमन्ध भवन की धीमती सेन को लिखित) रबीन्द्रनाथ (१९३० में रबीन्द्र जयन्ती के उपलक्ष्य में पठित)।

१९३३	मार्च	धीकान्त चतुर्धर्षण (उपन्यास)
१९३४	मार्च	अनुराधा सती और परेस (गल्प समष्टि)
	अगस्त	बिजयबहू (नाट्य रूप)
	दिसम्बर	बिजया ('बता' का नाट्य रूप)
१९३५	फरवरी	बिजयास (उपन्यास)

(मृत्यु के बाद प्रकाशित)

१९३०	मार्च	चरतुचन्द्र को छात्र समाज (भाषण समष्टि)
	अप्रैल	द्वेषबभार गल्प (तबकों के लिए गल्प समष्टि)
	जून	धुमदा (उपन्यास)
१९३१	जून	रोपर परिषय (")
१९४०	फरवरी	चरतुचन्द्र पत्रावली

